मेरी आफ्रिका यात्रा

(यात्रा के सूक्ष्म और दिलचस्प वर्णनों के साथ
जीवन की हर एक समस्या पर हुई मर्मस्पर्शी
चर्चाओं का संग्रह)

: लेखक :

"स्वामी सत्यभक्त"

(सत्यसमाज संस्थापक)

... प्रकाशक ...

सत्याश्रम वर्धा (मध्यप्रदेश)

जुमी ११९५५ इतिहास संवत्

जुलाई १९५५ ई.

मूल्य —

सजिल्द चार रुपये

विषय-सूची

प्रकाशक—लालजी भाई सत्यस्नेही
मंत्री—सत्याश्रम वर्धा

मुद्रक—रघुनन्दन प्रसाद विनीत
मैनेजर—सत्येश्वर प्रि. प्रेस वर्धा



विचार मग्न स्वामी सत्यभक्तजी



सौ. वीणादेवी सत्यभक्त

प्रास्ताविक

सत्याश्रम वर्धा के कुलगुरु युग महर्षि स्वामी श्री सत्यभक्त जी ने सत्येश्वर की अनन्त साधना और चिन्तन मनन के बाद जो सत्य और तथ्य पाया है उसीका यह सारांश है कि विश्वमात्र का एक मानवधर्म, एक मानव जाति, एक मानवराष्ट्र, एक मानव भाषा आदि का व्यवहारिक रूप सत्यसमाज के रूपमें दिखाई दिया है।

सत्यभक्त साहित्य के अध्ययन के पश्चात व एकाधिक बार स्वामीजी के संपर्क में आने के बाद उनकी लेखन शक्ति, वक्तृत्व व कृत्यकला, तार्किकता, शंका-समाधान आदि की सिद्धियाँ देखकर मैं काफी प्रभावित हुआ।

आज विश्वमात्र के धर्म, राजनीति, जातीयता, रंगभेद, राष्ट्रभेद सामाजिक रूढ़ियाँ आदि के झगड़े मनुष्यमात्र का एक मानवधर्म, एक मानव जाति एक विश्व सरकार, एक मानवभाषा आदि के निर्माण में बाधक साबित हो रहे हैं।

इधर आधुनिक युग की वैज्ञानिक प्रगति ने आज सारे विश्वको एक छोटा बाजार सा बना दिया है। किसी भी कोने की एक छोटी-सी घटना चाहे वह अच्छी हो या बुरी सारी दुनिया पर असर डालती है। यातायात की प्रगति ने मनुष्य के तनको इतना पास पास ला दिया है कि अगर परस्पर मन मिलाने के लिये हमारे पास कोई विचारपूर्ण, उदार और व्यावहारिक योजना न हो तो आज विश्वमात्र के साथ हमारा सम्बन्ध होनेपर भी सामंजस्य स्थापित नहीं होसकता। युग पैगम्बर 'स्वामी श्री सत्यभक्त के द्वारा स्थापित सत्यसमाज' इसी प्रकार की सविवेक समन्वय की एक विशाल अन्तर राष्ट्रीय योजना है।

पूर्व आफ्रिका में मेरा कुटुम्ब व घर होने के कारण वहां से मेरा सम्बन्ध है। मैंने सोचा कि स्वामीजी के सत्यसंदेशों को व्यवहार में लाने का सर्वाधिक उपयुक्तस्थल आफ्रिका है, क्योंकि वहां एशियाई, युरोपीय और आफ्रिकन एक साथ रह रहे हैं। परस्पर सामंजस्य न होने के कारण एक साथ रहते हुए भी तेल पानी की तरह वे अलग अलग हैं। किसी प्रकार यह मार्ग यदि उन्हें दिखाया जाय तो वहाँ बसे हुए सभी का भला होसकता है। और वहाँ बहती हुई यह तीन देशों की संस्कृति मिलकर मानवता का एक संगम तीर्थ बनजाय।

इसी हेतु आफ्रिका स्थित मेरे ज्येष्ठ भ्राता श्री जीवनलाल जी से पत्र द्वारा परामर्श कर श्री स्वामीजी को आफ्रिका की परिस्थितियों से अवगत कराया और सत्यप्रचारार्थ आफ्रिका चलने का अनुरोध किया। स्वामीजी ने अपनी स्वीकृति दी। तदनुसार ७ दिसम्बर १९५१ को हम सबने करंजा जहाज से बम्बई बन्दरगाह से आफ्रिका के लिये प्रस्थान किया।

आफ्रिका पहुंचने पर विभिन्न संस्थाओं के नेताओंने वहां की परिस्थितियों से स्वामीजी को और भी अवगत कराया। हकीकत को जानने के बाद विविध स्थानों पर स्वामीजी ने जो प्रवचन, चर्चा आदि किये उनका विवरण भी इस पुस्तक में सम्मिलित है। इसप्रकार यह पुस्तक न केवल प्रवास वर्णन की दृष्टि से ही महत्व की है किन्तु ज्ञानचर्चा की दृष्टि से भी महत्व की है।

आफ्रिकनों के बीचमें भी स्वामीजी के एकाधिक प्रवचन हुए। उनके बीच आपने कहा कि सभ्यता और बुद्धि के लिये विश्वकी किसी जाति ने ठेका नहीं लिया है। बुद्धि आदि की दृष्टि से आफ्रिकनों, एशियाइ, और अंग्रेजों में कोई फर्क नहीं हैं। हां! यह बात दूसरी है कि आफ्रिकनों को अभी विकास का पर्याप्त समय और साधन नहीं मिला है उसके मिलने पर संसार की किसी भी सभ्य जातिसे आफ्रिकन पीछे नहीं रहेंगे इस बातका मुझे पूरा विश्वास है।

रंगभेद का जिक्र करते हुए आपने कहा कि यह भेद नस्ल और भौगोलिक कारणों पर अवलंबित है। एक ही जाति के विभिन्न प्रान्तों में बसे हुए भारतीयों में काले, गोरे, गेरवे सभी रंग के आदमी पाये जाते हैं। बाकी ईश्वर ने अपनी सब संतानों में एक रंग का लाल खून ही बहाया है। इस प्रकार सब का भीतरी रंग एक ही है। रंगभेद के नामपर मानव जाति की एकता को नष्ट नहीं किया जा सकता। रंगभेद के नामपर भेदभाव रखना न केवल मानवता का ही अपमान करना है किन्तु ईश्वर का भी अपमान करना है।

हँसी के बीच स्वामीजी ने कहा कि खास करके भारतीय तो कभी भी काले रंगसे घृणा नहीं कर सकते क्योंकि उनके विष्णु भगवान स्वयं काले (श्याम) हैं। पूज्य श्री स्वामीजी के प्रवचन के प्रत्युत्तर में आत्मविभोर होकर के आफ्रिकनों ने यह अभिलाषा प्रगट की कि मानव जाति की एकता में हम कोई प्रयत्न बाकी नहीं रक्खेंगे। हमें आप न भूलें। स्वामीजी को एक मानपत्र भी भेंट दिया। प्रेमावेश में मग्न होकर के आफ्रिकन महिलाओं ने ताल व गीत के साथ अपना कलामय गोमो (नृत्य) दिखाया। और बिदाई के समय स्वामीजी की मोटरकार को फूल और फलोंसे भर दिया और सकुशल यात्रा होने के नारों से जंगल को गुंजायमान कर दिया।

आफ्रिकन के साथ सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित करने में शासक जाति अंग्रेज संकोच करे यह स्वाभाविक है। यद्यपि ईसाई मिशनरियां आफ्रिकनों की खूब सेवा करती है, फल स्वरूप लाखों आफ्रिकन ईसाई भी बने हैं, फिर भी मानवता की दृष्टि से वह आफ्रिकनों के साथ समानता का व्यवहार नहीं करतीं।

इस दिशा में भारतीयों का तो कोई कार्यक्रम ही नहीं है। घर में नाम (नौकर) के अतिरिक्त आफ्रिकनों के साथ उनका कोई सांस्कृतिक सम्बन्ध नहीं है। यों दो एक भारतीय उद्योग पतियों ने आफ्रिकनों के लिये कुछ खर्च किया है किन्तु यह व्यक्तिगत है। सांस्कृतिक और सामूहिक दृष्टि से

वह नगण्य है। भविष्य में आफ्रिकनों के साथ भारतीय घुल मिलकर कैसे रह सकेंगे यह एक समस्या है।

भारत के स्वतन्त्र होने के बाद यहां के कुछ साधु, संन्यासी स्वामी धर्माचार्यों ने वहां पहुंचकर शांति के बीच धर्म के नामपर खूब साम्प्रदायिक विद्वेष का वातावरण फैलाया और विभिन्न प्रकार के चन्दे आदि एकत्रित कर अपना अपना उल्लू सीधा किया।

आफ्रिका की वर्तमान परिस्थितियों को हृदयंगम करते हुये और भविष्य का ख्याल करके भारतीयों को वहां किस प्रकार सामंजस्य स्थापित करना चाहिये आदि बातों पर अभी तक किसी ने भी योग्य मार्गदर्शन नहीं कराया।

यद्यपि आफ्रिका में बसे हुये भारतीय रहन सहन आदि की दृष्टि से तो अप टू डेट हैं, व्यावसायिक योग्यता है, बैंक बैलेंस है किन्तु आश्चर्य और लज्जा की बात यह है कि इसके अतिरिक्त उसमें बौद्धिक विकास की दृष्टि से कोई आवश्यक परिवर्तन नहीं हुआ है। उनके अन्ध विश्वास, विवाह आदि के लिये जातिपांति के पचड़े, अन्य घरेलू रूढ़ियां आदि ज्यों की त्यों ही है। वे विवेक पूर्ण सुधार की बात भी मानने को तैयार नहीं यद्यपि प्रगति के नाम पर अविवेक पूर्ण कुछ सुधार किया है। आफ्रिका में भारतीयों को भविष्य की दृष्टि से यह एक चिन्ता की बात है।

श्री स्वामीजी को तो सत्य का सन्देश देना था। उनकी ऐहिक समस्याओं का समाधान करना था। किसी को किसी भी प्रकार से खुश होनेवाली बात कहकर लोगों को गुमराह नहीं करना था। उपरोक्त सब समस्याओं पर स्वामीजी ने इतना पर्याप्त कहा है कि आफ्रिका का भविष्य और इतिहास स्वामीजी के सत्य संदेशों की कद्र करेगा। और उसपर अमल करके ही प्रवासी बन्धु आफ्रिकनों के मन और भूमिपर अपना स्नेह पूर्ण वर्चस्व स्थापित कर सकते हैं। स्वार्थ, परमार्थ के साथ न्याय का भी यही तकाजा है।

इस जगह यह कहना पड़ेगा कि मुस्लिमों ने इस दिशा में काफी

काम किया है। लाखों आफ्रिकनों के साथ उन्होंने सांस्कृतिक व धार्मिक सम्बन्ध स्थापित कर उन्हें इस्लाम का अनुयायी बनाया है। इनकी संस्थाएं लाखों शिलिंग के खर्च से यह सब स्वार्थ, परमार्थ का काम करती हैं।

यद्यपि हिन्द पाकिस्तान बटवारे के बाद आफ्रिका में बसे हुए भारत के प्रवासी हिन्दू मुसलियों ने आपस में अकारण अपने दिल तोड़ दिया है। उस समय की यहां की चमकी हुई साम्प्रदायिक दंगों की ज्वालाओं ने समुद्र पार बसे हुए लोगों के दिलों को भी जला दिया। इस परिस्थिति का नाजायज फायदा उठाने के लिये दोनों पक्षों के कुछ शैतानों ने सांप्रदायिक विद्वेष की ज्वाला में और पेट्रोल ही छिड़काने का काम किया। और अपने अपने व्यक्तिगत स्वार्थोंपर समष्टिगत स्वार्थोंका खूब बलिदान कराया। यहां तक कि किसी समय के भारतीय मुसलिम अब भारतीय कहलाना पसन्द नहीं करते। वहीं बैठे बैठे बने हुए पाकिस्तानी आदि सब को संबोधन करने के लिये अब एशियाई शब्द प्रयोग किया जाता है।

यद्यपि यहांपर मुझे आफ्रिका की सारी समस्याओं पर प्रकाश नहीं डालना है किन्तु ऐसी विषम परिस्थिति में श्री स्वामीजी ने यहां किसप्रकार निःपक्षता, नीर्भीकता, न्याय प्रियता संमिश्रित सत्य सन्देश दिया है इस ओर पाठक का ध्यान मैं आकर्षित करना चाहता हूँ।

परम्परागत जमें हुए विश्वासों की पर्वाह न करके जनमत की अवहेलना कर, जनहित की ही बात कहना असाधारण त्याग का काम है। धन, जन, यश पूजा प्रतिष्ठा आदि की पर्वाह करने वाले यहां की समस्याओं को सुलझा तो सकते ही नहीं किन्तु उनके लिये यहां के उलझे हुए मसलों को छूना भी अपने स्वार्थ हनन के खतरे से खाली नहीं है।

उपरोक्त सब समस्याओं पर श्री स्वामीजी ने अपनी विश्लेषणात्मक, तार्किक और पैनी बुद्धि द्वारा खूब प्रकाश डाला है। इस पुस्तक की अपनी यह विशेषता है कि इसमें यात्रा सम्बन्धी छोटी छोटी बातों से लेकर गहरी से गहरी ज्ञानचर्चा भी अंकित है। यों भी आफिरका की सिर्फ प्राकृतिकता ही

देखने स्वामीजी गये भी नहीं थे। उन्हें तो वहां बसे हुए लोगों की प्रकृति का अध्ययन कर उनका मार्ग प्रशस्त करना था और वह किया। साधन के और समय के अनुसार जो कुछ भी वहां होसका उसका विवरण इसमें निहित है।

इस दिशा में अभी भारत सरकार का भी काफी कर्तव्य है। किन्तु उनका भी ध्यान अभी इस ओर पर्याप्त नहीं है। यद्यपि भारत सरकार की वैदेशिक नीति से आफ्रिकनों को काफी सन्तोष है किन्तु वहां के बसे हुए भारतीयों द्वारा कोरे व्यावहारिक कार्यक्रम के अभाव में भारत की नीति व आदर्शों से ही सारा काम नहीं होसकता। अभी भारत सरकार व प्रवासी भारतीयों के लिये वहां सांस्कृतिक दिशा में असीम काम पड़ा हुआ है। सत्यसमाज जैसी आन्तर्राष्ट्रीय संस्था भी इस दिशा में उन्हें आवश्यक सहयोग कर सकती है।

प्रवास की दृष्टि से साधन और समय के अभाव में हमारी यात्रा एक साधारण व्यक्ति की हैसियत से कुछ अधिक नहीं थी। यही कारण के इसके पाठक को साधारण स्तर के यात्री रूप में यात्रा का सारा वर्णन पढ़ने को मिलेगा इस दृष्टि से भी पुस्तक की उपयोगिता बढ़ी है।

हमारी इस फकीरी यात्रा में जिन लोगों ने सत्येश्वर की सेवा में हाथ बटाया है उनकी सस्मृति यहां अंकित कर उनके प्रति मैं कृतज्ञता व साधुवाद व्यक्त करता हूं।

सर्व प्रथम आफ्रिका यात्रा का अधिकांश श्रेय मेरे बड़े भाई श्री जीवनलालजी (म्बारा) को है जिन्होंने परमिट से लेकर स्वामीजी के साथ हजारों मील का भ्रमण किया हर प्रकार यात्रा की, अंत तक तन मन और धन से सहयोग किया। जिंजा में आयोजित सार्वदेशिक सत्यसमाज का अष्टम अधिवेशन, सर्वधर्म सम्मेलन आदि उन्हीं की प्रेरणा का साकार स्वरूप था। आपकी सत्यश्रद्धा के कुछ संस्मरण तो हृदय पर अंकित होगये हैं।

दूसरा श्रेय जिंजा के श्री नरसिंहदास जी कोठिया व [illegible]

मुक्ता बहिन को है। आफ्रिका यात्रा में हमारा अधिकांश समय कई कारणों से जिंजा में ही बीता। उन दिनों नील नदी तटका कोरोनेशन पार्क ज्ञान प्रवाह का केन्द्र बनगया था। जिंजावास दरम्यान आदि रहने का अधिकांश प्रबन्ध श्री नरसिंह भाई के निवास स्थानपर ही रहता था। जो स्नेह, उदारता, गंभीरता आदि गुणों से संमिश्रित आप दंपत्ति की सेवा चिरस्मरणीय रहेगी। आपके सहयोगी भ्राता श्री हरिलाल भी जोगिया ने यातायात आदि व्यवस्थाओं में सहयोग किया।

तीसरा श्रेय है जिंजा के प्रमुख बेरिष्टर श्री भट्टजी व श्री विशाखा जी को। अपने अपने ढगसे दोनों ने पर्याप्त सेवाएँ दी आफ्रिका यात्रा पुस्तक जोकि ज्ञानयात्रा सी बनगई है पाठक गण आगे देखेंगे कि इसका कुछ श्रेय श्री भट्टजी को है जिनके प्रश्नों के खुलासों में पुस्तक का इतना कलेवर आफ्रिकनों के बीच स्वामीजी के प्रवचनों का आयोजन श्री भट्टजी ही करते थे। सैद्धान्तिक मतभेद रहते हुए भी उदारतापूर्वक आपके सक्रिय सहयोग ने आश्चर्य और आकर्षण पैदा कर दिया।

श्री नटवरलाल जी परीख (जिंजा) ने तो न केवल प्रवचन का ही लाभ उठाया किन्तु सत्यसमाज के रंगमें काफी रंग कर सक्रियता धारण की। आज भी वहां सक्रिय कार्य करते हुए निरंतर पत्रोत्तर आदि द्वारा सत्याश्रम (वर्धा) संपर्क रक्खे हुए हैं। सत्यसाहित्यों का गुजराती अनुवाद भी आप करते रहते है। आपको साधुवाद।

जिंजा के बाद कंपाला के श्री करसनजी भाई का स्नेह हम अभीतक नहीं भूले हैं। वे भी हमें नहीं भूले हैं आतिथ्य सत्कार का आपका गुण असाधारण है। गुजराती में स्वामीजी के साहित्यों का गुजराती अनुवाद का प्रस्ताव सर्वप्रथम आपने ही रक्खा था और उसके लिये सक्रिय सहयोग भी किया।

मसाका के श्री काकुभाई, श्री जे. वस्तु जोठिया आदि ने सत्य-प्रचार का कार्य बडी दिलचस्पी से किया प्रतिवर्ष सत्यभक्त जयन्ति आदि का

कार्यक्रम बड़े उत्साह के साथ करते हैं।

कुटासे के श्री विक्रमजी भाईने भी काफी अनुराग के साथ अपनी सेवाएं प्रदान की अभी भी सत्याश्रम वर्धा से आपका संपर्क कायम है।

यों छोटे मोटे अनेक सहयोगी ऐसे हैं जिनका उल्लेख यहां नहीं हो पाया है उनका जिक्र पाठकगण इसी यात्रा विवरण में पढ़ेंगे ही वे सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

ज्ञानचर्चा व यात्रावर्णन दोनों दृष्टि से यह पुस्तक सभी के काम की है असाधारण है, फिर भी अधिकांश चर्चा आफ्रिका से सम्बन्धित है। अफ्रिकामें गुजराती भाषा का बाहुल्य है। प्रचार, प्रसार व उपयोग की दृष्टिसे कोई सज्जन, संस्था व प्रकाशक इस पुस्तक का गुजराती, अंग्रेजी का अन्यभाषा में अनुवाद प्रकाशित कराना चाहें तो प्रकाशक मन्त्री सत्याश्रम वर्धा से अनुमति लेकर प्रकाशित करासकते हैं।

कोलों ३ अंका ११९५५
ता. २८-३-१९५५

लालजीभाई सत्यस्नेही.



लालजी भाई सत्यस्नेही



सुधीरकुमार सत्याम (उम्र ९ वर्ष)

❋ कविता-कुंज ❋

स्वामी सत्यभक्तजी के आफ्रिका यात्रा के समय और वहां प्रचार करते समय, तथा वहां से लौटने पर अनुरागियों ने अनेक भक्तिभाव-पूर्ण कविताएँ बनाई थीं, वे यहां दी जाती हैं। स्वामीजी की आफ्रिका यात्रा सत्यप्रचार की दृष्टि से कितनी महत्वपूर्ण है इसका अन्दाज इन कविताओं से लगता है।

—प्रकाशक,

—: आये :—

[रचयिता :—वैद्य प्रकाशपुञ्ज जी, सत्यालंकार, अयोध्या]

पत्रों में, 'संगम' में डुबकी लेने से सभी कृतार्थ हुये,
दुनिया में आने का फल पाने में यति ! आप समर्थ हुये।
यों आये भूमि अनेक रिफार्मर, पर ऐसा ईश्वर न मिला,
अद्‌भुत, अनुपम उद्धार-कार्य में विश्व-विभूति यथार्थ हुये।

चल पड़े आफ्रिका चरण चिरन्तन पृथ्वी को पलटाने को,
दुनिया तम में खोई-साई, दे उसे प्रकाश जगाने को।
जग में बुराइयाँ जो चलतीं, उनका भेदन कर जाने को—
तुम पैगम्बर बन कर आये हो दुनिया नई बनाने को।

है विश्व एक परिवार तुम्हारा, है संसार तुम्हारा घर;
हैं पुत्र और पुत्री समान हैं मित्र कुटुम्बी नारी-नर।
ब्रज रूपी विश्व बचाने को तुम बने जगत के गिरिवरधर,
जग-कल्मष-कालकूट पीने को हो सशक्त गौरी शंकर।

तुम भोग योग के भूषण हो, अनुराग त्याग सब से न्यारा;
बहतीं तुममें गंगा, वोल्गा, औ टेम्स, नील-सरिता धारा।

एशियन, आफ्रिकन, युरोपियन संस्कृतियाँ तुममें लहरातीं,
सब 'सत्यसमाज-सिन्धु'में मिलकर 'मानव-संस्कृति' बनजातीं।

तुम आर्य-अनार्य भेद का छेदन कर युग के भगवान बने,
तुम एक साथ ही 'बुद्ध' और 'क्राइस्ट' 'मार्क्स' मतिमान बने।
मानवता-रूपी-'सीता के हित मानव-'राम' प्रधान बने;
हो 'कनफ्यूसियस' 'मुहम्मद' या, क्या हो 'जरथुस्त महान बने?

तात्विक जानें तुम सब ही हो, सबके आचरण भरे तुममें,
व्यापक मनुष्यता के सारे व्यवहार-रूप निखरे तुम में।
मानो तुम 'सत्य' लिये पैदा हो, 'सत्य-स्वरूप' ढरे तुम में,
'जग-मानव-धर्म' लिये आये तुम, 'अघ-अनुताप' तरे तुम में।

मन्दिर, मसजिद गिरजा आदिक कर रहे एक आचारों से,
काशी, मक्का, औ' जेरुसलम हो रहे एक जयकारों से।
जगदीश्वर, अल्ला, गाड यहां वंदित समान सत्कारों से,
मानवादर्श दिखलाते तुम निज शुद्ध-बुद्ध-व्यवहारों से।

तुम जो लिखते-करते-करते वह "शास्त्र शस्त्र" बनजाता है,
तब कथनी, करनी और लेखनी में सादृश्य दिखाता है।
सत्कवि यह भक्त "प्रकाशपुञ्ज" लिख लिखकर भी न अघाता है,
युगदेव! आपकी सूझों पर जग का दिमाग चकराता है।

सत्याश्रम-वर्धा, भारत से सन्देश सुनाने दुनिया में—
तुम निकल पड़े पार्षदों-सहित, शुभ ध्यान दिलाने दुनियामें।
निद्रा-तन्द्रा में पड़े जनों को चले जगाने दुनिया में,
'आये मानव को मानवता का पाठ पढ़ाने दुनिया में।

उसका ही फल है आज आफ्रिका तुम पर हृदय उछाल रहा,
तब 'अन्तस्तल' का 'सत्य' आज बन सबके लिये मशाल रहा।
केवल है शस्त्र अहिंसा का, बस वही तुम्हारा ढाल रहा;
तब हाथों में कब पिस्टल, या तलवार रहा, करवाल रहा?

तुम सबको अपना मान रहे जगको अपना घर जाना है,
सब के प्रेमिल मनपर ही तुमको अपनी कुटी बनाना है !
इस जग का कोना कोना ही यतिवर ! तब ठौर ठिकाना है,
यह 'रौरव-नरक' हटाना है, वह 'गौरव-स्वर्ग बुलाना है

जिन कार्य-कारणों से 'जग दुखमय' उनको दूर भगाना है,
'सुखमय जीवन' क्यों हुआ नहीं ?-इसका निदान बतलाना है।
बतलाना ही क्या ? स्वयं कार्य करके 'जग सुख' सरसाना है,
इस ही निमित्त हर देश-देश में भी यह जाना आना है।

तब 'सत्यसमाज'-मिशन सर्वोत्तम जगमें सुख लावेगा ही,
जो स्वर्ग गगन ऊपर, भू-पर वह स्वयं उतर आवेगा ही !
यह लोक अगर जो बन जावे, भय-नरक न रहजावेगा ही,
इस पर हो सब बनना निर्भर; अन्यथा न बन पावेगा ही !

आकबत के लिये जो कुछ करते महज महजबी स्वाँग लिये,
इससे कब तर सकते भाई ? बिन त्याग और अनुराग लिये।
ये पूजा और पुजापे तो हैं परम्परा की टाँग लिये;
शुचि सद्विवेक, सत्कर्मों मे तुम बढ़ो सुकृति को आग लिये।

केवल सुकर्म रूपी पावक को फैलाने की देरी है,
उस अग्नि कुंड में मन की, तन की, जले पाप की ढेरी है।
फिर लोक स्वर्ग, परलोक स्वर्ग, सम्पूर्ण सिद्धियां चेरी हैं;
स्वामीजी विश्व विजय में आकर लगा रहे यह फेरी हैं

लाखों वर्षों की बिगड़ी दुनिया को यदि नूतन बनना है,
तो इस पैगम्बर की अमोघ शिक्षाओं पर ही चलना है।
खुलजायँ 'सत्यमन्दिर' दिशि दिशि उससे अपरशको हनना है;
सद्गुरु स्वामी को देख; लेख से नरक दैत्य को दलना है

आफ्रिका-यात्रा की बिदाई में

[रचयिताः— वैद्य प्रकाशपुञ्ज जी संचालक-सत्यसमाज-अयोध्या]

प्रणम्य स्वामीजी, माताजी आदि के साथ लालजी भाई की आफ्रिका यात्रा को लेकर विवेचनात्मक बिदाई की पठनीय पंक्तियाँ।

युग-पैगम्बर की सेवा में सुखदाई,
जा रहे आफ्रिका भक्त लालजी भाई।
यह सत्यसमाज-अयोध्या भेंट चढ़ाता,
इस यात्रा का साफल्य सदैव मनाता।
ऋषि सत्यभक्त जो सत्य-दूत हैं निश्छल,
उनकी सुभक्ति में लगे हृदयतल अविचल।
मुम्बासा बन्दरगाह धन्य हो जाये,
युगत्राता, युगत्रात्री पर बलि-बलि जाये।
प्रिय प्रान्त युगांडा आदि खड़े स्वागत को,
हैं देश-देश के लोग खड़े स्वागत को।
यों पूर्व आफ्रिका में वह है तैयारी,
हैं मचल रहे दर्शन को सब नर-नारी।
स्वागत करने की होड़ लगी जन जन में,
बस गये युगात्मा स्वामीजी मन-मन में।
आफ्रिका निवासी और प्रवासी जन से,
अनुरोध यहां हम करते निज बन्धुन से।
यह 'युग-दम्पति' जब अभिनव मन्त्र सुनायें—
सुनकर न सिर्फ सब मन्त्र-मुग्ध हो जायें।
प्रत्युत समन्वयी तान श्रवण कर जागें,
संसार नया करने में मन अनुरागें।
हों मनुज एक संस्कृति भी एक बनायें,

हो परमाराध्य त्रिवेक, उसी को ध्यायें ।
पा विश्वसंत को मन का मैल मिटायें,
'सत्यामृत' की धारा जग बीच बहायें ।
हो 'मानवभाषा' एक व्याप्त भूतल में,
वैषम्य-विषाक्त-प्रदोष मिटें पल-पल में ।
सब हिल-मिल दिल में एकरूपता लायें,
हो सामञ्जस्य—अभिन्न हृदय सरसायें ।
इस देश—भेद से भेद न आने देवें,
जग-कौटुम्बिक बन कर भवसागर खेवें ।
फिर स्वर्ग-मोक्ष सब खेलेंगे घर-घर में,
वे कब तक लटके रह सकते अम्बर में ?
इसलिये सत्य का दूत आफ्रिका जाता,
सुन लें नव-पैगम्बर पैगाम सुनाता ।
यह पाहन से भी कड़ा, कुसुम से कोमल,
हरने जाता कालुष्य भरा मन का मल ।
इसकी ध्वनि गूँज उठे युग की धरती में,
सत्साहित्यों के सुमन खिलें परती में ।
कोई न किया वह करे महामानव यह,
पलटे अफ्रीका और एशिया दुर्वह ।
पलटे समग्र दुनिया की काया दुःसह,
यह रहे जगत में अमित अमरता को गह ।
पृथ्वी का अमर सुपुत्र, हृदय का स्वामी,
कर दे मानव मण्डल को निज अनुगामी ।
गुरु 'सत्यभक्त' से 'सत्य-भक्ति' लेवे जग,
इस वरा धरा का दिव्यानन हो जगमग ।
जो नरक बना—मन में कैवल्य विराजे,
सत्येश्वर की ही प्रभा विभामय छाजे ।

हो 'मनुष्यता देवी' दिशि दिशि की प्रहरी;
　　　　है जगा रहा युगयती नींद से गहरी।
जाने कबसे सोया है विश्व हमारा,
　　　　परलोक स्वर्ग-भाग्यों का लिये सहारा।
यह लोक स्वर्ग हो, तभी स्वर्ग वह सच्चा,
　　　　अन्यथा शेखचिल्ली का ही वह बच्चा।
कल्पना स्वर्ग की हो यथार्थ में परिणित,
　　　　इस हेतु हुये हैं युग स्वामी उद्यत चित।
इस भाँति भाग्य भी जग सकता जगने से,
　　　　कलिकाल भगेगा कर्मों में लगने से।
यह करने को ही जग में आप पधारे,
　　　　नर-नारायण के रूप मनुज तन धारे।
आपका मिशन जग-तारण कर छोड़ेगा,
　　　　सब आधि-व्याधियाँ वारण कर छोड़ेगा।
होगा संसार नया यह ध्रुव निश्चित है,
　　　　वैसा युगर्षि का सारा कृत्य उदित है।
प्रिय सत्यसमाज अवध का गद्गद होकर,
　　　　लालजी भाइ को भेज रहा है सत्वर।
होवे अभियान सफल जग-तम हरने में,
　　　　फिर इधर लगे हम रहें कार्य करने में।
हैं एक ओर हम देते प्रेम-विदाई,
　　　　दूसरी ओर लें खुल कर हृदय-बधाई।
इतना कह कर, फिर-फिर कर रहे बिदा हैं,
　　　　इस युग-पथ पर बलिजाते, स्वयं फिदा हैं !!

—※—※—

—: भव्य-भावनाञ्जलि :—

(रचयिता:– वैद्य प्रकाशपुञ्ज जी संचालक-सत्यसमाज अयोध्या)

'आफ्रिका देश' की डगर डगर। तुम घूम रहे हो नगर-नगर।
जीवन की उठती लोल लहर। छू लेते हो झट अन्तरतर॥
युग-पैगम्बर! तव श्वास-श्वास में, 'सत्य' और 'शिव' है 'सुन्दर'!
व्यापक मानवता का हामी। तुम सा पाया न सत्यकामी।
तुम चल पड़े जिस मग स्वामी। मानव बनते पग-अनुगामी॥
पर दानव के सरको मानों छू जाता है कोई विषधर!
तुम सचमुच ही पैगम्बर हो। हो बुद्ध, मसी, तीर्थंकर हो।
तुम रवि, शशि, दिव्य कलाधर हो। तुम कालकूट प्रलयंकर हो॥
हो योग-भोग में गिरिवरधर। हो गरल-सुधामें श्री शंकर!
तुम जिधर चलो जग चल देगा। मानव दानव को दल देगा।
यह मिशन तुम्हारा बल देगा। जग में आने का फल देगा॥
यह हर मसलों के हल करने का, देगा व्यवहारिक सुस्तर!
आफ्रिका भूमि की बूझ नई। पितु 'सत्यभक्त' की सूझ नई।
माता 'वीणा' की कूज नई। जल, थल, अम्बर में गूँज गई॥
'नीग्रो', 'आफ्रीकन, और 'इण्डियन, सब में वाणी हुई अमर!
हे, अमृत पुरुष! तव अमृत बोल। पद वैभव में जिनका न मोल।
सुनते हैं सारे आँख खोल। दे रहे आप वह अमिय घोल॥
सब छक-छक पीते 'सत्यामृत' मानव जीवन-रस का 'मिक्श्चर!
हो रहा युगोदय देर नहीं। ये रह सकते अन्धेर नहीं।
युग बदल न दे, वह देर नहीं। क्यों कहते हुआ सबेर नहीं॥
है विश्वमंच पर प्रकट हुआ। शुचि सत्यसमाज, निकर दिनकर!
यह विश्व एक हो जायेगा। 'मानव भाषा अपनायेगा।
संस्कृति को एक बनायेगा। दुश्चिताई, द्रोह दुराबेगा॥

'धर्मालय' की नीवें पड़ीं, 'सत्याश्रम के आदर्शों पर!
यह मिशन फैलता जाता है। जो 'सत्यसमाज' कहाता है।
नव सत्यलोक दिखलाता है। जग 'सत्यभक्त' गुण गाता है।
'कलियुग' कर मलते भाग चला, आई 'सतयुग' की नई लहर!
मानवता अब उमगेगी ही। पोषण की वृत्ति गहेगी ही।
शोषण की भित्ति ढहेगी ही। दूषणता नहीं रहेगी ही।
आ रहा 'नया संसार' सामने, जागृत जिसकी ज्योति प्रखर!
दुनियावालों को बढ़ना है। उस मंजिल पर ही चढ़ना है।
जीवन के पन्ने पढ़ना है। इस विद्यालय से कढ़ना है।
'स्वामी' के सत्साहित्य और 'संगम' से झरते हैं निर्झर!
इन झरनों में सुस्नान करें। निज मन को सब अम्लान करें।
रोगों का आत्म-निदान करें। जग-क्लेशों का अवसान करें।
यह 'दुखमय' विश्व बने 'सुखमय' हो स्वर्गोपम, नाचें किन्नर!
अन्तिम जिज्ञासा एक यही। है हृदय-पिपासा एक यही।
अन्तर-अभिलाषा एक यही। सत्कवि की आशा एक यही।
'आफ्रिका'-धरा से सत्य-पताका। उड़े दिशाञ्चल के ऊपर।

" लो दूर देश में सन्त चला "

--: ले. साहित्यरत्न मन्नालालजी दिवाकर राजनीतिरत्न--बदनावर :--

लो दूर देश में सन्त चला,
जहां विषमता गूँज रही है मानवने मानव नहिं जाना
काले गोरे ऊंच नीच का जहां भेद छाया है नाना,
पशुबल के अत्याचारों को देख जहां फटती है छाती
जहां श्रमिक की चीत्कारों पर गोरी सत्ता है इठलाती
उस निरीह क्रन्दनकी ध्वनिपर गौतम कुटिया छोड़ चला,
लो दूर देश में सन्त चला।

उन दीनों की मूक वेदना राष्ट्रसंघ ने भी ठुकराई,
मानवता ने बर्बरता की फिर इक नई चुनौती पाई,
भारतके शासक गणने भी जिसपर अपने मुंहकी खाई,
अरे तपस्वी इस उलझन में कैसे तुमने राह बनाई,
सब सुख त्याग, ले दंड पाणि, यह तीर्थंकर का तप निकला
लो दूर देश में सन्त चला।

क्या कहा कि तुमने जगमें सब हैं मानव मानव एक समान,
क्या कहा कि तुमने अब होजावे आँसू आहों का अवसान,
एक तत्व ले, एक ध्येय ले, एक नया संसार बनावें,
मानव-तनमें मानव-मन हो, मानवता को गले लगावें,
यही स्वप्न साकार बनाने नवयुग पैगम्बर निकला,
लो दूर देश में सन्त चला।

अफ्रीका ही नहीं किंतु अब इस दुनिया को राह दिखाने,
आज चले हो तुम ऋषिवर, अब पृथ्वी पर ही स्वर्ग बसाने,
लो श्रद्धांजलि यह भी लेलो, मूक हृदय का अभिनन्दन यह,
संत प्रवरके चरणकमल में जनता-जनका है वन्दन यह,
श्रद्धाके दो फूल चढ़ाने यह अन्तस्तल भी मचला,
लो दूर देश में सन्त चला

.... विदाई गान ....

ऋषिवर ! हमें भूल मत जाना,
मन-मधुवन की प्रेमलता को नित्य आप सहलाना,
तव करुणासे सिंचित जिसमें खिले सुमन हैं नाना,
ऋषिवर हमें भूल मत जाना।
क्यों अतीत पर मानव रोता, उसका धैर्य बँधाना,

भीगीं पलकों के मोतीका मूल्य आज दे जाना।
ऋषिवर हमें भूल मत जाना।

विश्व विषमता दूर हटाकर मानवता है लाना,
जहाँ कहीं जाओ सद्गुरु तुम सरस सुधा बरसाना,
ऋषिवर, हमें भूल मत जाना।

मूक हृदय का अभिनन्दन, हे पितृदेव ! ले जाना,
निज शिशु पर से कर सरोजकी छाया नहीं हटाना,
ऋषिवर ! हमें भूल मत जाना।

चरण रजः—
मन्नालाल दिवाकर

.... पदार्पण ....

[रचयिता:—वैद्य प्रकाशपुञ्ज जी सत्यालंकार, अयोध्या]

सागर की लहरों पर आकर-सागर की लहरों पर आया,
भारतसे आफ्रिका देश तक, निज अभिनव सन्देश गुंजाया
आफरीकन, इंडियन, एशियन, युरोपियन तक ने सुनपाया,
सुनने वाले सुने यथोचित, जो न सुने सौभाग्य गँवाया !

इस प्रकार वह 'सत्येश्वर' का 'सत्य-दूत' धरती को मथकर—
अमल-कमल-सा खिलकर आया उदधि-उत्तुंग ऊर्मि के रथपर।
जो पीसके सुलभ 'सत्यामृत' उन्हें लगाता आया पथपर,
व्यवहारों की छाप छोड़ आया जीवन के इतिपर, अथपर।

स्वर्ग लोक से प्रभु का चाकर आया भू-तल को सुलझाने,
भ्रष्ट जगत को स्पष्ट रूप दे-हुलै यथार्थ, यथेष्ट बनाने।
जरा-धरा को नव्य-दृष्टि दे, सानुकूल सत्पथ पर लाने—
लिया जन्म वह मुक्त-महामानव जन-जन की मुक्ति कराने।

नये विश्वकी एक 'इकाई' बने, 'द्वैत' का निष्कासन हो,
मानव में 'अद्वैत' विराजे-मानवतावद अन्तर्मन हो।
इसीलिये यह है जो—भाषा शंका या न कहीं उलझन हो,
भाषा' एक, एक 'संस्कृति' हो, सत्यमंदिरों का स्थापन हो।
सत्य मिशन का उत्पादन कर योगी कौंधा 'सत्याश्रम' में,
जहां-जहां डग पड़ते उसके ज्योति जलाते चलते तम में।
निज सत्यों-तथ्यों से उसने आग लगादी एटम बम में,
देश देश की शांति समन्वित, उसके जीवन क्रम उद्यममें।
उसका 'सत्यसमाज' दिशाञ्चल में, मन प्राणोंके उद्गम में,
'कुतुबनुमा' बनकर आया है दुनियावालों के दिग्भ्रम में।
नवजीवन-रस डाल रहा है विकृत जगत्के अन्तस्तम में।
उसके मर्म हैं रहे निःसृत इस में, तुम में, सबमें समर्म।
दुनिया के दुख दर्दों का तिलगीर बनो युग का सन्यासी,
बनता जाता देश-देश के जन-मन का अन्तःपुर-वासी।
आफ्रीका में भी बीजारोपण कर 'सत्यभक्त' गुण-राशी—
यहाँ-वहां कर दिया भूमि को जेरुसलम औ' मक्का काशी
उस आदर्श-रूपके जीवन को निज मन-मन्दिर में धारें,
'सद्गुरु' 'स्वामी सत्यभक्त' के गुण-गण की आरती उतारें।
वह अनुपम पैगम्बर, उसके पैगामों की प्रबल पुकारें—
नरक बनानेवाले जग-जीवन को बार-बार धिक्कारें।
उन सात्विक धिक्कारों में सात्विक मनुहारों को सुन पायें—
तो धरती हो ऋद्धि-सिद्धि की, समृद्धियाँ सारी छा जायें।
बने 'सत्यमन्दिर'-मानव-उर, सत्य-ब्रह्म उस में बिठलायें,
'सत्येश्वर' की झाँकी में ही दैनिक कार्य-कलाप चलायें!
इस प्रकार वह 'सत्यभक्त' जो डूबे जग को तार रहा है—
उनके उस वृत्तान्त सन्त पर कवि कविता लिख वार रहा है!
जो, कृतज्ञता के धागे में श्रद्धा-सुमन-सँवार रहा है,
पुण्य पदार्पण पर किस प्रेषित कर अपना उद्गार रहा है।

.... समर्पण ....

आफ्रिका निवासियों को

प्यारे आफ्रिका निवासियो !

मैं मानवता का सन्देश लेकर आपके यहां आया। मैंने देखा कि आपका महाद्वीप एशिया यूरोप आफ्रिकाकी संस्कृतियों की क्रीड़ा भूमि होने से मानवताका संगमस्थल होने योग्य है। विश्वमानवताका जो मेरा स्वप्न है वह यहीं साकार होसकता है। इसलिये चार माह में आप लोगोंमें रहा और जीवनकी चिकित्सा करनेवाले मीठे तीखे कडुए सभी तरह के सन्देश आपको दिये और जीवन के हर पहलू पर प्रकाश डाला। आप लोगों में मैं जिस प्रकार रहा और आपके कल्याण के लिये जो कुछ कहा वह सब इस पुस्तक में संकलित है। सभी देश के लोग इससे लाभ उठा सकते हैं परन्तु सबसे अधिक लाभ उठा सकते हैं आप। मैंने जो कुछ कहा, वह सब आप न सुनपाये हों या याद न रख पाये हों, या उसपर गहराई से विचार न किया हो तो इस संकलन से आप यह सब कर सकते हैं ? और स्वपरकल्याण करते हुए आफ्रिका को मानवता का संगम-स्थल बना सकते हैं। इसलिये लीजिये ! यह विवरण ग्रन्थ आप को ही समर्पित करता हूं।

७ बुधी ११९५५ इ. सं. आपका हितैषी

२९–५–५५ सत्यभक्त

मेरी आफिरका यात्रा

भारत में हर साल हजारों मील की यात्रा करता हूं। यात्रा के दिन या उसके एकाध दिन पहिले कुछ तैयारी भी करता कराना हूँ। परन्तु देश-यात्रा और विदेश यात्रा की तैयारी में जमीन आसमान का अन्तर है, यह बात आफ्रिका यात्रा के समय ही अनुभव में आई।

विदेश यात्रा के लिये पहाड़ के समान चार बड़ी बड़ी बाधाओं को दूर करना पड़ता है। वे चारों पहाड़ हैं। १-परमिट, २-पासपोर्ट, ३-इंजेक्शन, ४-रिजर्वेशन।

जो लोग सरकार कहलाते हैं या सरकार में रौबदाब रखते हैं या किसी तरह से सरकार के अपने आदमी हैं उनके लिये ये बाधाएँ कोई महत्व नहीं रखतीं। वे तो मानो हवा में उड़कर चारों पहाड़ एक छलांग में पार कर जाते हैं। पर साधारण नागरिक को ये चारों पहाड़ पैदल पार करने के समान महीनों में पार करना पड़ते हैं। और मैंने इसी तरह पार किये।

यों राष्ट्रपति से लेकर मामूली मिनिष्टर या सेक्रेटरी तक बहुत से लोग मुझे काफी अच्छी तरह जानते हैं। और दौड़धूप करता तो इन सम्बन्धों का उपयोग करसकता था, पर इस तरह की प्रकृति न होने से साधारण नागरिक की परेशानियों का अनुभव करना ही ठीक समझा।

१- परमिट

पहिला पहाड़ परमिट का है। जिस देश में हमें जाना हो उस देश की सरकार से पहिले परमिट (अनुमतिपत्र) मंगाना पड़ता है। उसे दिखाये बिना उस देश की सीमा में नहीं घुसने दिया जाता। चूंकि लालजीभाई अयोध्या के दोनों बड़े भाइयों की तरफ से हमें निमन्त्रण था और वे युगांडा (पूर्व-आफ्रिका) में रहते हैं इसलिये युगांडा सरकार का परमिट उनने भिजवाया था। परमिट प्राप्त करने की अड़चनों का मुझे अनुभव नहीं है पर वह परमिट छः माह में आया था इसीसे उसकी अड़चनों का अन्दाज लगाया जासकता है। २५०० शिलिंग की जमानत देना, ठहरने के लिये मकान खाली करना आदि अनेक झंझटें उसमें हैं।

मेरी और वीणादेवी की इच्छा हुई कि अगर साथ में लालजीभाई की पत्नी सौ. काशीबाई तथा सत्याश्रम के पुराने सदस्य विज्ञानचन्द्र आफ्रिका यात्रा में साथ रहें तो अच्छा। लालजीभाई ने इसके लिये कोशिश की। उनके भाई, कई बार इसके लिये कम्पाला (युगांडा की राजधानी) गये पर जाते जाते तक परमिट न आपाया। आफ्रिका जाने के लिये भारतीयों को कितनी अड़चन होती है इसका अन्दाज इसीसे लगाया जासकता है।

२- पासपोर्ट

दूसरा पहाड़ पासपोर्ट का है। गत वर्ष श्री काका कालेलकर आफ्रिका गये थे अपनी यात्रा के बारे में उनने गुजराती में पुस्तक लिखी थी। प्रेमीजी ने वह पुस्तक मेरे पास भेजदी थी। उसमें उनने लिखा था कि अपनी सरकार होगई है इसलिये पासपोर्ट में कोई अड़चन नहीं हुई। निःसन्देह उन्हें कोई अड़चन नहीं हुई पर इससे जनता की अड़चनों में कुछ कमी हुई है ऐसा नहीं हुआ। कदाचित् अड़चनें बढ़ी ही हैं। हां ! हर एक सरकार कुछ न कुछ लोगों के लिये अपनी सरकार होती है, अंग्रेजी सरकार भी कुछ रायबहादुर

खांबहादुर आदि के लिये अपनी सरकार थी, इसी तरह कांग्रेसी सरकार भी कुछ लोगों के लिये अपनी सरकार है, पर जनता के लिये अपनी होने की मंजिल अभी क्षितिज के उस पार है।

साधारणतः पासपोर्ट पन्द्रह दिन में मिलजाता है। पर कुछ परिस्थितियाँ ऐसी बनती गईं कि मुझे पासपोर्ट प्राप्त करने में डेढ़ माह लगगया। जिन शहरों में पासपोर्ट के मामले दो चार वर्ष में एकाध बार आते हैं वहां के अफसर लोग पासपोर्ट के विधि विधान के बारे में कुछ नहीं जानते। वर्धा की सब कचहरियों में सिर्फ एक व्यक्ति ऐसे थे जो पासपोर्ट के बारे में कुछ जानते थे।

पासपोर्ट के विधि विधान की खास खास बातें ये हैं।

क—२× २॥। इंच के दो फोटो पेश करना।

ख—१०) के पोस्टल स्टाम्प के साथ पासपोर्ट का फार्म भरकर देना। इस में इन सब बातों का उल्लेख रहता है कि जन्म कब का और कहां का है, यहां कब से रहते हैं, विदेश किसलिये जारहे हैं, शरीरकी ऊंचाई क्या है, आंखों का और बालों का रंग कैसा है, शरीर में कोइ खास चिन्ह हो तो वह इत्यादि।

ग—यात्री विदेश में जाकर वहां का खर्च उठा सकता है इस बात को प्रमाणित करने के लिये किसी धनवान आदमी से दो रुपये के स्टाम्प पर जमानत लेना पड़ती है। इसके लिये उन धनवान आदमी को कमसे कम पांचहजार की जायदाद प्रमाणित करना पड़ती है। जानपहिचान के द्वारा विश्वास होजाय तो भी जमानत देने की योग्यता मानली जाती है।

घ—विदेशी सरकार से मिले हुए परमिट की प्रमाणित नकल भी अर्जी के साथ देना पड़ती है। इसके लिये कोई आफीसर मूल परमिट के साथ नकल को अक्षर अक्षर मिलाकर कचहरी की मुहर लगा देता है।

[अफसर को पूरी जानकारी न होने से पहिले उनका प्रस्ताव था कि मूल परमिट ही अर्जी के साथ लगादिये जायें। पर मैंने इतराज करते हुए कहा कि ६–७ माह में जो परमिट इतनी कठिनाई से आया उसे लाल फीतेमें फसाना तो खतरे से खाली नहीं है। तब फिर नियम कानूनों की खोज हुई और पता लगा कि उसकी प्रमाणित कापी ही काफी है। यों लालजी भाई ने मेरे परमिट का फोटो भी उतार कर भेजदिया था पर उसकी जरूरत नहीं समझी गई।

पासपोर्ट के विधि विधान की ये मुख्य मुख्य बातें हैं। परन्तु इन सब को ठीक ठीक जाननेवाला वर्धा कचहरी में कोई नहीं था। एक असिस्टेंट सुपरिन्टेन्डेन्ट थे जिन्हें कुछ जानकारी थी। कुछ भूलते भालते फायलें देख देख कर उन्होंने यह सब काम पूरा कराया।

१६ सितम्बर ५१ को हम सब लोग इस विधि विधान को पूरा करने के लिये कचहरी गये। आश्रम के पास रहनेवाले श्री. बागल वकील ने इस विधि विधान में पूरा सहयोग दिया। पर गलती से मजिष्ट्रेट के हस्ताक्षर फ़ोटो के ऊपर होगये। जब कि फोटो के पीछे होना चाहिये थे। इसलिये दूसरे फोटो की जरूरत पड़ी। मेरे और वीणादेवी के फोटो ही आवश्यक थे शिशु सुधीर के नहीं। खैर! उसी दिन फिर फोटो उतरवाये गये और दूसरे दिन (२० सितम्बर) को फिर कचहरी गये।

पर दूसरे दिन वे जानकार महाशय दौरे पर चले गये थे इसलिये किसी तरह दूसरे एक आफीसर से काम कराया गया। मुझसे कहदिया गया कि आज ही ये सब कागज नागपुर भेजदिये जायँगे और १०–१२ दिन में पासपोर्ट आजायगा। मैं निश्चिन्त होकर घर चला आया।

पासपोर्ट आया है कि नहीं इसकी पूछताछ मैंने १०–१२ दिन बाद (३ अक्टूबर) को कराई। पर मालूम हुआ कि जानकार महाशय के दौरे पर चले जाने से कार्रवाई में कुछ कमी रहगई है। तब चार अक्टूबर को मैं

फिर कचहरी गया। वीणादेवी को, सुधीर को, श्री चिरंजीलालजी को भी लेगया। श्री बागल वकील थे ही। असि. सुपरिन्टेन्डेन्ट ने बहुत खेद प्रगट किया कि मेरे दौरे पर चले जाने से आपके पासपोर्ट की कारवाई में १०-१२ दिन की व्यर्थ देर होगई। उनने बड़ी सतर्कता से बाकी कारकाई पूरी करादी। और कहा कि मैं आज ही आपके सब कागज नागपुर भेज देता हूं।

मैंने पूछा कि अब पुलिस की जांच की तो जरूरत नहीं हैं? बोले- जी नहीं, अब तो कचहरी में काफी जांच होगई है। मैं तो कागज नागपुर आज भेज देता हूँ।

दूसरे दिन पुछवाया तो पता लगा कि कागज नागपुर भेजदिये गये। में निश्चिन्त होगया। पर १५ दिन बाद १६ अक्टूबर को जब पासपोर्ट के बारे में पुछवाया तो पता लगा कि यहां से जो कागज भेजे गये थे उनमें पुलिस विभाग की रिपोर्ट दर्ज नहीं है इसलिये नागपुर से पुलिस की जांच की मांग आई है। अब जब पुलिस जांच कर लेगी तब उसकी रिपोर्ट जाने पर पासपोर्ट आयेगा। पर दो तीन दिन पुलिस का कोई आदमी जांच करने आया नहीं। खोज कराने पर पता लगा कि नागपुर की सूचना डी. एस. पी. के बंगले पर भेजदी गई है। पर इस समय डी. एस. पी. दौरे पर हैं, उनके आते ही जांच होजायगी। खैर! दौरे से आते ही उनने तुरन्त कारवाई की और २४ अक्टूबर को सी. आई. डी. इन्सपेक्टर आये।

काफी नम्रता के साथ उनने वे तीनों प्रश्न मुझसे पूछे जो नागपुर सरकार ने भेजे थे।

१— आपको युगांडा में कौन जानता है?

२— क्या आप वहां किसी धर्म के प्रचार के लिये जाते हैं?

३— क्या भारत सेवा संघ से आपका ताल्लुक है?

पहिले प्रश्न के उत्तर में मैंने लालजी भाई के दोनों भाइयों के पते लिखा दिये—

वल्लभदासजी पो. बा. नं. १३१ म्बाले (युगांडा)

जीवनलालजी पो. बा. नं. ५६ म्बरारा ,,

दूसरे प्रश्न के उत्तर में कहा-मैं किसी खास धर्म (संप्रदाय) को नहीं मानता, मैं धर्मसमभावी हूँ इसलिये किसी खास धर्म के प्रचार का मेरे सामने सवाल ही नहीं उठता ।

तीसरे प्रश्न के उत्तर में मैंने बिलकुल अजानकारी प्रगट की, क्योंकि मुझे पता ही नहीं था कि भारत सेवा संघ कौनसी संस्था है, उसके क्या उद्देश हैं और उसके क्या विधि विधान हैं ? और कहां है ?

सी. आई. डी इन्सपेक्टर मेरे नाम से काफी परिचित और प्रभावित थे, प्रश्नों के उत्तर भी उन्हें सन्तोषजनक मिलगये थे । उनने जल्दी से जल्दी वह रिपोर्ट पेश करदी और २७ अक्टूबर को वे कागज नागपुर पहुँच भी गये । पर २८ ता. से दस दिनके लिये दिवाली की छुट्टी होगई इसलिये ७ नवंबर तक के लिये कार्रवाई फिर रुकगई । अब मुझे चिन्ता होने लगी कि कहीं २३ नवंबर का जहाज न चूक जाय । मैंने प्रो. हीरालालजी नागपुर को भी लिख दिया था कि वे सेक्रेट्रियेट से सम्बन्ध जोड़कर कार्रवाई जल्दी करायें । उनने पूरी कोशिश की । इसके सिवाय यलोफीवर के इंजेक्शन आदि की जानकारी के बारे में भी उनसे मदद मिली । पर दिवाली की छुट्टी होजाने से यह तय होगया कि ७ नवम्बर के पहिले पासपोर्ट नहीं मिल सकता ।

२७ अक्टूबर के शामको सिटी इन्सपेक्टर आये । उनने भी वे ही तीन प्रश्न पूछे । और मैंने वे ही उत्तर दिये । पर साथ ही यह भी कहा कि कल से तो छुट्टी है अब आपकी रिपोर्ट कब जायगी ?

वे बोले—मैं अभी जाकर रिपोर्ट तैयार करता हूं और रात में ही डी. एस. पी. साहब को रिपोर्ट देदूंगा । सम्भवतः उनने ऐसा ही किया ।

उधर ७ नवम्बर को सेक्रेट्रियेट खुलते ही प्रो. हीरालाल जी ने सेक्रेट्रियेट में पता लगाया और मालूम हुआ दो एक दिन में पासपोर्ट रवाना

कर दिया जायगा। प्रो. साहब ने मुझे ७ को ही पत्र द्वारा सूचना दे दी जो ८ ता. को दो बजे आश्रम में आई पर मैं सुबह आठ बजे ही नागपुर रवाना हो चुका था।

सेक्रेट्रियेट में पहुंचा तो उनने पासपोर्ट तैयार कराकर दे दिया। इस तरह करीब ५० दिनमें पासपोर्ट मिला, और इसके लिये श्री चिरंजीलालजी बड़जाते, श्री बागल वकील, श्री प्रो. हीरालालजी, श्री शम्भूजी पढ़ोले आदि ने काफी कोशिश की। यह बात जरूर है कि किसी अफसर ने जानबूझकर या लापर्वाही से कहीं ढील नहीं की, व्यवहार भी सब का ठीक रहा। जो कुछ देर हुई उसका कारण छुट्टियाँ, दौरा, तथा अनुभव-हीनता थी।

लालजी भाई के पासपोर्ट में अवश्य काफी लापर्वाही और अड़ंगेबाजी से काम लिया गया। जिस आफिस में क़ागज पहुंचे कि गोते खागये। लालजी भाई को स्वयं जाकर धक्का देना पड़ा तब वे कागज आगे बढ़पाये। इसके लिये दसों बार तो उन्हें फैजाबाद जाना पड़ा और चार बार लखनऊ जाना पड़ा, हर बार नये नये अड़ंगे खड़े कर दिये जाते थे। एक ही बार में सब बाधाएँ पेश करदी जातीं तो उन्हें जल्दी दूर कर दिया जाता। पर हर बार कह दिया जाता कि बस अब कोई अड़चन नहीं है, पर पासपोर्ट लेने जाओ कि एक नया अड़ंगा फिर मौजूद।

किसी किसी ने लालजी भाई की फोटोग्राफरी से भी लाभ उठाना चाहा।

इस तरह उन्हें सवा दो माह की परेशानी और दौड़धूपका खर्च उठाने पर १७ नवम्बर की शाम को पासपोर्ट मिलसका।

पर उनकी इस देरी का परिणाम यह हुआ कि २३ नवम्बर के जहाज में जगह न मिल सकी।

बिदा करने के लिये बापूलालजी सोनी उदयपुर से आये उन्हें निराश होकर १० दिन रहकर जाना पड़ा। पं सूरजचन्द सत्यप्रेमी, श्री चुन्नीलालजी कोटेचा, नगराजजी पूनमिया, चांदमलजी बार्शी से बिदा देने के लिये बम्बई आये पर उन्हें भी निराश होकर लौटना पड़ा। इस प्रकार लालजी

भाई के पासपोर्ट में देर लगादी जानेसे अनेक आदमियों को परेशान होना पड़ा सैकड़ों रुपयों की बर्बादी हुई, और इससे भी बुरी बात यह हुई कि नैरोबी (केन्या) के जिस सम्मेलन में १४ दिसम्बर को मैं उपस्थित होसकता उसमें उपस्थित न होसका।

शासन तन्त्र में जो लापर्वाही और रिश्वतखोरी घुसी हुई है उसे दूर करने के लिये सरकार का ध्यान नहीं के बराबर है। जब सरकार की पवित्रता की ही जुहरत नहीं है तब साधारण आफीसरों के सुधार की क्या आशा की जासकती है। अगर रिश्वत लेने के तरीकों का भंडाफोड़ करते हुए और जनता को जो कठिनाइयाँ उठाना पडती हैं उनका विवरण देते हुए सरकारी कर्मचारियों को चेतावनी दी जाती रहे और जनता को भी इनकी सूचना मिलती रहे और इन चेतावनियों का साहित्य भी जनता के हाथ में सरकार के द्वारा पहुंचाया जाय तो रिश्वतखोरी और लापर्वाही पर इतना अंकुश पड़ सकता है कि वह नामशेष होजाय या नाम मात्र को रह जाय। पर इसके पहिले सरकार कहलाने वालों को अपनी पवित्रता का पूरा विश्वास दिलाना पड़ेगा। यह असंभव तो नहीं है पर ··· ··· ··· ।

३— इंजेक्शन

मैंने इंजेक्शन जीवन में कभी किसी प्रकार के नहीं लिये थे। पर काका कालेलकरजी की पुस्तक में पढ़ा था कि तीन इंजेक्शन लेना जरूरी है। मलेरिया, चेचक, और यलोफीवर (पीला बुखार) मैंने उन्हें चिट्ठी लिखकर भी पूछा तो उत्तर मिला कि किसी भी तरह इनसे बचा नहीं जासकता। और इसके लिये सरकार के किसी उच्च अधिकारी से अन्तर्राष्ट्रीय फार्म पर प्रमाणपत्र लेना पड़ता है। इसलिये मैं वर्धा के सिविल सर्जन से मिला। उनने कहा— मलेरिया के इंजेक्शन की तो कोई जरूरत नहीं है न इसका कोई निश्चित इंजेक्शन होता है। यलोफीवर के इंजेक्शन की भी यहां से कोई जरूरत नहीं है क्योंकि वह बीमारी इस देश में नहीं होती। बंबई में ही उसके इंजेक्शन लगते

है। चेचक का कोई इंजेक्शन नहीं होता किन्तु टीका लगाया जाता है। सो वह म्युन्युसपल कमेटी की तरफ से लगाया जाता है। हां! कालरा का इंजेक्शन जरूरी है। पीछे और जांच करने से मालूम हुआ कि सिविल सर्जन का कहना ही ठीक है। इसलिये हम सब ने २४ अक्टूबर को चेचक के टीके लगवाये। दो तीन दिन बाद कालरा का आधा इंजेक्शन और लिया, फिर एक हफ्ते बाद कालरा का आधा इंजेक्शन और लिया। चेचक के टीके का निरीक्षण कराके सिविलसर्जन से अन्तर्राष्ट्रीय फार्म पर प्रमाण पत्र लेलिये। लालजीभाई को इसमें भी थोड़ी विशेष परेशानी हुई। ठीक समयपर फैजाबाद के हैल्थ आफीसर ने चेचक के टीके को अपर्याप्त बतलाया और फिर दूसरे बार टीका लगवाकर प्रमाणपत्र दिया। इससे भी ठीक समयपर यात्रा करने में बाधा पड़गई।

४- रिजर्वेशन

यात्रा करने के पहिले जहाज में जगह पाने के लिये जगह रिजर्व करा ली जाती है। लालजी भाई ने मेकेञी कम्पनी, और थामस कुक से पत्र-व्यवहार किया था। अन्त में मेकेञी कम्पनी से ही पत्र व्यवहार हुआ। पर जब तक पासपोर्ट नहीं मिलता तब तक बर्थ रिजर्व नहीं किये जाते। इसलिये जब जगह रिजर्व होसकती थी तब पासपोर्ट नहीं था और जब पासपोर्ट मिला तब फर्स्ट सेकिण्ड और इंटर क्लास की सारी जगहें भर गई थीं। यह एक चिन्ता होगई कि यदि ८ दिसम्बर का जहाज न पकड़ा जाय तो बाद में जाने से परमिट की अवधि समाप्त होजाती। इसलिये कम्पनी को लिख दिया कि थर्ड क्लासकी जगह तो हमारे लिये रखिये ही, और अगर सेकिण्ड या इंटर का कोई यात्री समय पर न आसके तो उसका बर्थ हमारे लिये रखिये।

लालजी भाई २८ नवम्बर को शामको वर्धा आगये थे। अयोध्या के उत्साही सत्यसमाजी श्री बद्रीप्रसाद भी बिदा देने के लिये आये थे। वर्धा में आवश्यक तैयारी करके हम सब २ तारीख की रात्रि को बंबई के लिये

रवाना होगये। ३ को दिनमें तीसरे पहर बंबई पहुँचे। स्टेशन पर पाठक जी, विरधीचन्द रामकिशोर चम्पाबाई आदि उपस्थित थे। डेरे पर (प्रेमीजी के घर) पहुंचने पर पहिला कार्य कंपनी से टेलीफोन से बातचीत करना था, वह किया।

ता. चार के ११ बजे कोट में बन्दरगाह के पास कंपनी के विशाल कार्यालय में गये। दो तीन जगह पूछताछ करने पर ठीक जगह पहुंच गये। इस कार्यमें पाठकजी ने काफी मदद की। वहां पासपोर्ट परमिट और बीमारी सम्बन्धी प्रमाणपत्रों की जांच हुई। तब टिकिट देनेवाले के पास भेजे गये। वहां भी इन सब चीजों की जांच हुई।

पर यहां एक नुक्स निकाली गई कि पासपोर्ट में एक जगह वीणादेवी का पहिला नाम (विवाह के पहिले का ही नाम) दर्ज है वर्तमान नाम नहीं। मैंने कहा कि इस जगह यही नाम मांगा गया है इसलिये यही नाम दिया गया है बाकी फोटो के नीचे उनका वर्तमान नाम है ही। पर उन्हें पूरा सन्तोष नहीं हुआ। फिर पहिले स्थान पर आये। वहां सलाह हुई। मैंने फिर उसी बातपर जोर दिया। फिर वे लोग किसी तीसरे के पास गये। वहां से सन्तुष्ट होकर आये। इसके बाद एक काम और निकला।

टिकिट देनेवाले ने कहा कि यहां से थोड़ी दूर पर एक और आफिस है वहां से आप 'नोऑब्जेक्शन' का सर्टिफिकेट लाइये। उसके बाद टिकिट मिल जायगा। खैर! थोड़ी देर में वह आफिस भी मिल गया। लिफ्ट में कैद होकर वहां पहुंचे। वहां काफी भीड़ थी। एक छपा हुआ फार्म भरा गया। जिसमें सब बातों के साथ खर्च का इन्तजाम किया जाता है आदि बातें पूछी गई थीं। यहां भी पासपोर्ट परमिट बीमारी के प्रमाणपत्रों की जांच हुई। लालजी भाई को तो नोऑब्जेक्शन सर्टिफिकेट दे दिया गया, पर मुझसे कहा गया कि आप स्वामी हैं कुलगुरु हैं इसलिये आपको इस सर्टिफिकेट की जरूरत नहीं है।

मैंने पूछा---मेरे साथ इस रियायत का कारण क्या?

वह बाई हसने लगी। बोली आप गुरु हैं इसलिये आपके बारे में ओब्जेक्शन का सवाल ही नहीं उठता। जो मैं कहती हूं वह आप वहां कह दीजिये फिर वे आपको टिकिट दे देंगे। ऐसा ही किया गया और टिकिट मिल-गया।

गुरुओं के लिये यह रियायत क्यों है यह नहीं जानपाया। यहां जो जांच हुई वह पहिले भी होचुकी थी, यहां जो विशेष बात पूछी गई थी वह थी खर्च के इन्तजाम की, शायद इस आफिस में यही बात विशेष रूपमें पूछी जाती होगी। पर गुरुओं को खर्च की क्या चिन्ता! जगह जगह के गृहस्थ उनके खजानची ही हैं यह बात कंपनी मानती होगी। संभव है इसीलिये इस ओब्जेशन के प्रश्न से उन्हें छुट्टी मिलती होगी।

टिकिट तो मिलगई। पर मिली थर्ड क्लास की ही। ऊपर क्लास की सब जगहें भरी हुई थीं। फिर भी उनसे इतना आग्रह कर दिया कि अन्त तक भी यदि कोई वर्थ खाली मिलजाय तो हमें देदें। उनने ६ ता. के शामको उत्तर देने का वचन दिया।

थर्ड क्लास के टिकिट मिलने का कुछ खेद तो हुआ पर उससे भी अधिक प्रसन्नता हुई टिकिट मिलने की। क्योंकि उसके साथ यात्रा के बीचमें आड़े आनेवाले चारों पहाड़ समाप्तप्राय होगये थे। टिकिट को दर इस प्रकार है—

थर्ड क्लास	१२५) रु.
इन्टर	२३[illegible]) रु.
सेकिण्ड	[illegible]५) रु.
फर्स्ट	[illegible]

बच्चों का किराया १ वर्ष तक फ्री. १ से ३ तक [illegible], ३ से १२ तक आधा, बाद में पूरा।

यह किराया बम्बई से मुम्बासा तक का है और इसमें भोजन का

चार्ज शामिल नहीं है ।

क्योंकि जहाज में उल्टियाँ बहुत होती हैं इसलिये रुचिके अनुसार भोजन की सुविधा रहे इसलिये हम लोगों ने अपने हाथसे ही भोजन बनाने का विचार कर लिया था । जहाज की तरफ से शाकाहार का चार्ज निम्नलिखित है ।

थर्ड क्लास	२९)
सेकिण्ड	७५)
फर्स्ट क्लास	१२५)

उल्टियाँ रोकने के लिये निम्बू अदरख आदि रख लेना आवश्यक है।

२— हमारा जहाज

ता. ६ दिसम्बर ५१ को लालजीभाई और बद्रीप्रसाद अयोध्या को विक्टोरिया गार्डन और म्यूजियम दिखाने के लिये दोनो स्थान देखे और कम्पनी के आफिस में जाकर फिर इस बात की खोज की कि सेकिण्ड क्लास के बर्थ मिल जायँ, पर न मिले । जाना तो अनिवार्य था ही, इसलिये यही मानकर सन्तोष किया कि थर्ड कलस की यात्रा का अनुभव भी कर लिया जाय ।

ता. ६ को रात में १० बजे तक तैयारी होती रही । पेटियों में ताला डालना ही जरूरी नहीं था किन्तु उन्हें रस्सियों से जकड़ना और हर अदत पर पक्का सा नाम लिखना भी जरूरी था । लालजीभाई का कहना था कि सैकड़ों पेटी बिस्तरों को एक विशाल जाल में डालकर क्रेन के जरियें सामान पहुंचाया जाता है । और उससे ट्रंक कभी कभी टूट जाते हैं । यद्यपि बम्बई में जहाज प्लेटफार्म से लगता है इसलिये यात्रियों का सामान कुली लोग सिरपर रखकर लेजाते हैं इसलिये यहां टूटने फूटने का डर नहीं रहता । पर पोर-बन्दर पर सामान जाल में डालकर ही पहुंचाया जाता है । प्रायः सभी यात्रियों ने सामान इसीप्रकार रस्सियों से बांध लिया था ।

दो मोटरों में सारा सामान भरकर तथा आठ आदमी बैठकर अलेक्जेण्ड्रा डाक पर पहुंचे। बाकी पहुंचनेवाले ट्राम आदि से वहां पहुंचे। सामान का तथा यात्रियों का किराया ७) दिया गया। जाते ही प्रवेशद्वार पर पांच बड़े बड़े अदतों का किराया १०) कम्पनी ने वसूल किया। इसके बाद भीतर हालमें लेजानेवाले कुली ने ५) तय किये। इसके बाद जहाजपर ठीक स्थान तक सामान पहुँचाने वाले कुली ने ८) तय किये। यद्यपि ये जहाज की तरफ से फ्री कुली थे पर अच्छी जगह ढूंढ देते, पहिले से जाकर अपना चादर बिछा देने आदि के नामपर ये काफी रुपये लेलेते हैं। और इससे जगह भी अच्छी मिलजाती है और हमें भी मिली। खैर!

जब डाक पर पहुँचे तब काफीभीड़ थी और पुरुषों तथा स्त्रियों का क्यू लगा हुआ था, दोनों के प्रवेश द्वार अलग अलग थे। पासपोर्ट परमिट की जांचके साथ स्वास्थ्य सम्बन्धी जांच की जाती थी। चेचक का टीका देखा जाता था। मेरा और वीणादेवी तथा सुधीर का पासपोर्ट एक ही था इसलिये जब मेरी जांच होगई तब लालजीभाई के जरिये वह पासपोर्ट उनके पास भेजदिया गया। वहां के अधिकारियों तथा पुलिस ने यह व्यवस्था करदी।

तीन तीन जगह यह जांच होने पर हम ऐसे हाल में पहुंचे जहां सामान की जांच की जाती थी। हमारे पहुँचने के थोड़ी देर बाद कुली ने हमारा सामान पहुँचा दिया। सोलह अदत गिन लिये गये। इसके बाद थोड़ी दूर पर टेबुलों की लाइन लगी हुई थी। जहां सामान खोल खोलकर देखा जाता था।

यह क्रिया बड़ी दुःखप्रद है। पेटियों में ढंग से लगाया हुआ सामान बुरी तरह बिखर जाता है और वह बिखरा हुआ सामान दूसरी तरफ लाकर जल्दी जल्दी में ठूंस ठांसकर भरना पड़ता है। किसी भी क्लास का यात्री हो उसकी ऐसी ही जांच होती है। वीणादेवी की जांच देर से होपाई थी इसलिये वे देर से पहुंचीं इसलिये जांच का कार्य मुझे तथा लालजी भाई को कराना पड़ा। गलती से एक पेटी की चाबी वीणादेवी के पास ही रहगई

थीं इसलिये उसकी जांच देर से हुई ।

इस जांच में सब से अधिक चिन्ता की बात यह हुई कि पुस्तकों के दोनों बंडल रोक दिये । विज्ञानचन्द वगैरह हाल के बाहर थे ही, उनको मैंने कह दिया कि यदि बंडल वापिस करना पड़े तो तुम लोग लेजाकर बुक-पोष्ट से भेज देना । आश्चर्य यह कि बुक-पोष्ट से किताबें सरलता से चली जाती हैं और साथ की रोकी जाती हैं । मैं करीब १५०) की पुस्तकें पहिले ही रजिष्टर्ड बुक-पोष्ट से डरबन (दक्षिण आफ्रिका) तथा करीब ४००) की पुस्तकें युगांडा (पूर्व आफ्रिका) भिजवा चुका था । भविष्य में भी ऐसा ही करना उचित समझा ।

खैर ! अधिकारियों से पूछने पर मालूम हुआ कि धर्मकी पुस्तकें लेजाने की मनाई नहीं है । तब एक उच्च अधिकारी के पास जाकर कहागया कि ये धर्म की पुस्तकें हैं । पहिले तो उसने विश्वास न किया, पर जब कुछ पुस्तकें उसे दिखाईं, सत्यामृत मानव-धर्म-शास्त्र का मतलब समझाया, तब वह समझा । सम्भव है मेरे रंगे कपड़ों से भी यह बात समझने में मदद मिली हो । पर उसने सत्यामृत दृष्टिकांड पढ़ने को मांग लिया और कहा कि आपको इतराज न हो तो दें, नहीं तो नहीं । मैंने देदिया । तुरन्त ही उसने कुछ पढ़ा । और जब पुस्तकों के बंडल हम लोग खींचने लगे तब बोला ये सचाई के धर्म की किताबें हैं इन्हें सन्मान से उठाइये । उसके इस विश्वास तथा विनय से मुझे प्रसन्नता हुई ।

इसके बाद ये बन्डल भी कुली के द्वारा जहाज में भेजदिये गये । वीणादेवी भी सुधीर को लेकर जहाज में चलीगईं । मैं और लालजी हालके बाहर आये । विज्ञानचन्द आदि के साथ कुछ फोटो लिये गये और हम लोग जहाज में गये ।

प्लेटफार्म से जहाज में जाने के लिये जीने की तरह एक बड़ी भारी सीढ़ी लगी हुई थी । सीढ़ी के प्रवेश द्वार पर टिकिट देखागया और उसके साथ लगी हुई चिट फाड़लीगई । फिर सीढ़ी के अन्त में अर्थात जहाज के

द्वार पर भी टिकिट देखीगई और उसका कुछ अंश फाड़ लिया गया। इस तरह जहाज में प्रवेश हुआ।

हमारे जहाज का नाम करंजा था। यह नया जहाज था। काफी अच्छा मालूम हुआ। जहाज ऊपर नीचे पांच छः खंडों का होता है। सब से नीचे के खंडों में तो मशीन रहती है और माल रहता है। ये जलतल से नीचे तक होते हैं। उसके ऊपर रहने के तलघर होते हैं। पर नीचे से नीचे तलघर भी पानी के लेवल के आसपास ही रहते हैं। उसकी दीवार में ऊपर जो झरोखे रहते हैं वे पानी से काफी उंचे रहते हैं। इसके ऊपर का खण्ड भी कहने के लिये तलघर ही कहलाता है। हालांकि यह पानी से काफी ऊँचा रहता है। और यात्रियों के चढ़ने उतरने के दरवाजे भी इसमें रहते हैं। और पानी के ऊपर सीढ़ी द्वारा चढ़कर ही यहां आना होता है। फिर भी इसे तलघर इसलिये कहना चाहिये कि आम तौरपर इसमें खिड़कियाँ नहीं होतीं इसलिये कुछ स्थानों को छोड़कर बैठे बैठे बाहर देखा नहीं जासकता। इसके लिये दरवाजों तक जाना पड़ता है। हम लोग इसी खण्ड में थे। जो पानी से काफी ऊंचा था।

इसके ऊपर डेक था। इसके दोनों तरफ थर्ड क्लास के यात्री रहते थे और बीच में सेकिण्ड क्लास के यात्रियों के केबिन थे। इनके ऊपर फर्स्ट क्लास के यात्रियों के केबिन थे। तलघर में भी सैकड़ों की संख्या में सेकिण्ड क्लास के केबिन थे। इन्टर के लिये भी कुछ केबिन थे। सेकिण्ड क्लास में दो दो वर्थ थे। जब कि इन्टर क्लास में चार वर्थ ऊपर और चार नीचे इसप्रकार आठ आठ वर्थ थे। अगर थर्ड क्लास में अच्छी जगह मिलजाय तो इन्टर उसके आगे फीका पड़जायगा। हमें जो जगह मिलगई थी उसकी अपेक्षा मैं इन्टर को पसन्द नहीं करता।

थर्ड क्लास के यात्रियों को तीन तरह के स्थान रहने को मिलते हैं। १–चबूतरों पर, २–झूलों पर, ३–जमीन पर।

१—जहाज में पांच स्थान ऐसे थे जिनमें से जहाज के ऊपर से

लेकर नीचे तक सामान पहुंचाया जाता था। इन स्थानों को चौक समझना चाहिये। हर खण्ड में बीम डालकर और उनपर मोटे मोटे पाटिये बिछाकर ये चौक बनादिये जाते हैं। और आसपास की जगह से ये ऊंचे होते हैं इसलिये ये बड़े भारी चबूतरे से बन जाते हैं। इनपर यात्री रहते हैं। रहने की दृष्टि से ये चबूतरे सब से अच्छे हैं। परन्तु जब किसी बन्दरगाह पर जहाज में सामान लादा जाता है तब इनपर रहनेवालों को सारा सामान हटाकर अलग होजाना पड़ता है। उस समय इनके पाटिये और मोटे मोटे लोहे के बीम हटा लिये जाते हैं। इसप्रकार ऊपर से नीचे तक सारे तल के चौक मिट जाते हैं। और क्रेन द्वारा जहाज की तली तक सामान पहुंचाया जाता है। पोरबन्दर पर कुछ चौक खोले गये थे। पर वहां सामान थोड़ा ही था इसलिये तीन चार घंटे में ही बन्द कर दिये गये। हमारा चौक यहां खोला ही नहीं गया। कराची में जहाज करीब २४ घंटे रुका और सबेरे ८ बजे से लेकर शामके ७ बजे तक हमारा चौक खुला रहा इसलिये काफी तकलीफ मालूम हुई। जब कि दूसरे चौक रात के १०-११ बजे तक खुले रहे इसलिये उनके यात्रियों को रात में सोने में भी तकलीफ हुई।

कोई कोई जहाज मुम्बई से सीधे मुम्बासा जाते हैं, कोई पोरबन्दर होकर मुम्बासा जाते हैं, और कोई पोरबन्दर और कराची होकर मुंबासा जाते हैं। महीने में एक बार जहाज कराची होकर मुम्बासा जाता है। हमारा यह जहाज भी पोरबन्दर और कराची होकर मुंबासा जानेवाला था, और वहां से दारेस्लाम आदि होता हुआ डरबन। इसलिये जगह जगह इन चबूतरों को खोले जाने की सम्भावना थी। इसप्रकार हफ्ते में एकाध बार इसपर बैठे यात्रियों की परेशानी थी। अन्यथा थर्ड क्लास के यात्रियों के ठहरने के लिये ये सब से अच्छे स्थान थे।

ठहरने के दूसरे स्थान हैं एक तरह के झूले। ये रेलगाड़ी के ऊपर क्लास के ऊपर वर्थ की तरह लटकते हैं। पर ये काफी विशाल होते हैं। दीवाल से छः सात फुट दूर तक निकले रहते हैं। इनपर जगह मिलजाय तो यात्रा के अन्त तक सामान वगैरह हटाने की जरूरत नहीं पड़ती। पर इनपर

बार बार चढ़ने उतरने की दिक्कत है, और इनपर सिर्फ लेटा या बैठा जासकता है खड़ा नहीं हुआ जासकता। किसी किसी झूले के पास झरोखा होता है जिसमें से समुद्र देखा जासकता है।

तीसरा स्थान साधारण जमीन है। जिनको चबूतरे पर या झूले पर स्थान नहीं मिलता वे डेक पर या तलघरों में जहां जमीन मिलती है वहीं अपना सामान तथा बिस्तर जमा लेते हैं। बहुत से लोग मुड़नेवाला पलंग लाते हैं। मुड़ने पर सिरहाने रखने लायक बहुत छोटासा बनजाता है। वजनदार भी नहीं होता। प्रवासियों के बड़े काम की चीज मालूम हुई। मालूम हुआ कि बम्बई में यह करीब पन्द्रह रुपये में मिलता है। यात्रा में रुई का गद्दा न रखकर यह पलंग रखलिया जाय तो कोमल शय्या तथा उंचाई पर आसन, दोनों काम चल सकते हैं। चबूतरे पर जगह मिलजाने से हमें यद्यपि इसकी जरूरत नहीं मालूम हुई पर इसका साथ रहना अच्छा ही है।

हवाका इन्तजाम

जहाज में हवाका इन्तजाम बहुत बढ़ियां था। तलघर में तथा हर जगह हवादानियाँ बनी हुई थीं जिनमें से काफी वेग से हवा आती थी। हमारे हिस्सेमें दो हवादानियाँ पड़ी थीं। जिनके द्वारा इतनी अच्छी हवा आती थी जैसी ट्रेन में भी नहीं मिलती। ऊपर नीचे दायें बायें इनका मुंह भी फिराया जाता है। जब ठंड मालूम हो तब इनका मुंह ऊपर को कर देना चाहिये। चाहे ऊपर रहो चाहे नीचे से नीचे तलघरों में, इनकी बदौलत हवा का सब जगह करीब करीब बराबर आराम है। हां! जिनका बिस्तर इनके मुंह के पीछे की ओर हो उन्हें इनका सीधा झोंका नहीं मिलता, पर साफ हवा तो सब जगह हो जाती है। बिजली के पंखे की अपेक्षा ये हवादानियाँ ज्यादा अच्छी हैं।

प्रकाश

तलघरों में दिनरात बिजली की बत्तियाँ जलती रहती हैं इसलिये प्रकाश की कमी नहीं मालूम होती। इसके अतिरिक्त तलघरों में झरोखों से भी

काफी प्रकाश मिलता है। बल्कि कभी कभी तो बिस्तरों पर धूप भी पड़ती है। खुले समुद्र में किसी पहाड़ आदि की ओट तो मिलती नहीं, इसलिये प्रकाश सीधा जहाज पर आता है।

सफाई

जहाज में सफाई की जितनी योजना की जाती है उतनी घरों में या ट्रेनों में नहीं की जाती। प्रतिदिन दो बार झाड़ू लगती ही है साथ ही एक बार अच्छी तरह जहाज धोया जाता है। धोने का अच्छा तरीका है। झाड़कर पहिले सोडा साबुन मिला हुआ पानी छिड़कते हैं, फिर नारियल के बड़े बड़े कूचों से फर्श को रगड़ते हैं, फिर पानी की तेज धारा से फर्श को खूब धोते हैं। फिर रबर के बड़े भारी झाड़नुमा ब्रुश से जमीन पोंछ देते हैं इस समय फर्श पर रहनेवालों को अपना सामान जरूर हटाना पड़ता है पर इस सफाई से गंदगी और बीमारी से काफी बचाव होता है।

संडास

जहाज में संडास काफी अच्छे होते हैं ऐसी यांत्रिक योजना की गई है कि दो दो मिनिट में जोरदार पानी से वे धुलते रहते हैं और मल समुद्र में पहुंचता रहता है। कभी कभी कोई कोई नादान इधर उधर मल गिरादें तो अवश्य कुछ गंदगी होजाती है पर वह भी कुछ समय बाद धोदी जाती है।

स्नानागार

स्नानागार में एक खारे पानी का नल, एक फव्वारा एक मीठे पानी का नल, (समुद्र के पानी की भाफ से मीठा पानी काफी बनता है।) तथा एक दर्पण रहता है। स्नानागार में यदि कोई दूसरे लोग काम कर रहे हों तो नहाने की जगह एक मोटा पर्दा डाला रहता है। स्त्रियों के स्नानागार में कपड़ा पहिरने को अलग कमरा बना रहता है। अपर क्लासों की व्यवस्था और अच्छी रहती है।

भोजन

साधारणतः भोजन की व्यवस्था जहाज की तरफ से होती है। जिनका चार्ज टिकिट के साथ लेलिया जाता है। मुंबई से मुम्बासा तक के भोजन के दाम थर्ड क्लास में २१) सेकिंड में ७५) और फर्स्ट में १२५) रु. है। थर्ड क्लास में सुबह चाय, नाश्ता, ९ बजे रोटी दाल शाक भात निम्बू प्याज, तीसरे पहर फिर चाय और शामको सुबह सरीखा भोजन। शामको रोटी के बदले पुड़ी मिलती है। मांसाहारियों को मांस भी मिलता है। उनकी चौसी अलग है।

साधारणतः थर्ड क्लास का भोजन भी देखने में ठीक मालूम होता है। फिर भी किसी को रोटी पसन्द नहीं आती, किसी को चाय ठीक नहीं मालूम होती, किसी को शाक में स्वाद नहीं आता, किसी को नई चीज खाने की इच्छा होती है जो नहीं मिलती, इस तरह शिकायत तो रहती है, फिर भी किसी तरह काम चलता है। सेकिण्ड क्लास आदि में भोजन कुछ और अच्छा है। उसमें मिष्टान्न तथा फल आदि भी मिलते हैं।

जो लोग भोजन न लेना चाहें वे अपना भोजन कर सकते हैं। उन्हें भोजन का चार्ज नहीं देना पड़ता। हम लोगों ने भोजन के दाम नहीं दिये थे। आटा दाल चावल नमक मसाला, अचार निम्बू कोथमीर अदरक आलू टिंडोरा टमाटर मोसम्बी चिकू केले खारक बादाम किसमिस अंजीर शक्कर चाय दूध के डब्बे फ्रूटसाल्ट हारलिक्स लड्डू सेव आदि नाना पक्वान्न, सिगड़ी कोयला प्राइमस तेल की कुप्पी रोटी बनाने के बर्तन चकला बेलन बालटी लोटे गिलास, कटोरियाँ थालियाँ, आदि काफी सामान लेलिया था। जहाज में काफी सामान लेजाने की गुंजाइश रहती है इसलिये यह सब सामान बहुत नहीं समझा जाता। इनमें से प्राइमस और घासलेट लेना बेकार हुआ क्योंकि प्राइमस जलाने की मनाई है।

रसोई बनाने के लिये डेक के ऊपरी भाग पर दोनों ओर कुछ कमरे बने होते हैं। उन कमरों में फर्श सिमिट का होता है। उनमें रोटी आदि बनाई जासकती है। पर जहाज के ये नुक्कड़ के हिस्से अन्य स्थानों की अपेक्षा हिलते अधिक हैं इसलिये कभी कभी रसोई बनाने में दिक्कत जाती है। सिगड़ीपर पकता हुआ पदार्थ गिरजाता है। इसलिये सम्हलकर काम करने की जरूरत रहती है।

जिनने टिकिट के साथ भोजन के दाम न भरें हों और भोजन भी न बना सकते हों, या किसी दिन बनाने की इच्छा न हो वे जहाज के रसोई घर से थाली चाय आदि खरीद सकते हैं। थर्ड क्लास की थाली १॥) में मिलती है। चाय का प्याला चार आने में। पर किसी तरह पेट भरना ही इसे कह सकते हैं। एक दिन हमने भी थालियाँ मंगाई पर किसी काम की साबित न हुई। अन्त में भोजन बनाना ही पड़ा। पर भोजन बनाने की जगह इतनी कम है कि दस पांच कुटुंबों से अधिक भोजन बनानेवाले हों तो जगह ही न मिले। इसलिये साधारणतः जहाज का भोजन करना अनिवार्यसा होजाता है।

साधारणतः जहाजों में प्रायः सभी चीजें बिकती हैं पर इस जहाज में इतनी सुविधा नहीं थी। भोजनशाला से तैयार खाद्य सामग्री मिलसकती थी। सोडा लेमन भी मिलसकता था। धोबी का कारखाना जरूर शानदार था। साधारणतः एक कपड़े की धुलाई एक रुपया थी। नाई भी था जो आठ आने में दाढ़ी और एक रुपये में पूरे बाल बना देता था।

३— प्रस्थान

७ दिसम्बर के ११ बजे के करीब हम लोग जहाज में आगये थे। एक घंटे में बिस्तर आदि जमाकर जहाज के गली कूचों को समझने के लिये भ्रमण किया। जिस तल पर हम लोग ठहरे थे उसी पर जहाज के इस किनारे से उस किनारे तक दो रास्ते थे। इन्हीं रास्तों के किनारें, एंजिन के

द्वार, भोजनशालाएँ रसोईघर तथा यात्रियों के निवास स्थान थे। यों सेकिण्ड क्लास के दोनों तरफ भी लम्बी लम्बी गेलरियाँ थीं। मैं घंटे घंटे बाद इन गलियों में तथा दोनों तरफ के डेकों पर चक्कर मार आता था। इससे जहाज के रास्ते और स्थान जल्दी समझ में आगये थे। ३॥ बजे के करीब मैं इसी तरह चक्कर मार रहा था कि प्लेटफार्म पर से एक सिपाहीने मुझसे कहा कि प्लेटफ़ार्म के उस तरफ आपको कोई बुलाता है। मैं तुरन्त ही जहाज के पिछ्वाड़े भाग पर आया। देखा तो प्लेटफ़ार्मपर सूरजचन्द खड़े हैं। उनसे मालूम हुआ कि मेरा अंतिम पत्र जब वार्धा पहुंचा उस समय वे दौरे पर थे। पत्र में यह सूचना थी कि जहाज आठ तारीख के बदले सात को ही रवाना होगा। दौरे से लौटने पर छः की रात को उन्हें यह पत्र मिला। एक बार सब लोग मुझे बिदा देने के लिये बम्बई आ चुके थे, और दूसरी बार की ठीक सूचना उन्हें छः की रात को मिली जब कि सात को ही जहाज चलने वाला था। सब लोग हिम्मत हार गये। किसी को मिलने की आशा न थी। पर सूरजचन्द ने हिम्मत न हारी। वे रात को ३ बजे की गाड़ी से रवाना हुए, और २॥ बजे दिन को बोरी बन्दर स्टेशन आपहुचे। स्टेशन से सीधे वे अलेकजण्ड्रा डाक पहुंचे। पर जहाज के छूटने का समय होने से उन्हें जहाज में आने का पास न मिल सका। तब उनने प्लेटफार्म पर से ही मुझे पुकारना शुरु किया। पर गांव के भीतर किसी मकान में बैठे हुए आदमी को गांव के बाहर से पुकारने का जो अर्थ होता है उससे अधिक अर्थ न हुआ।

सैकड़ों मील की यात्रा करके जहाज को पाकर भी मुझसे न मिल सकने की सम्भावना से ही सूरजचन्द की आंखों में आंसू आगये। जहाज छूटने का समय बिलकुल पास आगया था। निराशा सूरजचन्द को जकड़ रही थी और सूरजचन्द अटूट श्रद्धा से अपना प्रयत्न कर रहे थे। इतने में जहाज के अंतिम भाग के डेक पर मैं सूरजचन्द को दिखाई दिया। प्लेटफार्म के एक सिपाही से उनने मुझे खबर करने का अनुरोध किया। सिपाही ने मेरे केशरिया चादर से मुझे पहिचानकर सूचना दी। मैं तुरन्त जहाज के पिछले भाग डेक पर आया। एक दूसरे को देखते ही हृदय में हर्ष और आनन्द

उमड़ आया। सूरजचन्द का हृदय हर्ष ही हर्ष से भरा था जब कि मेरे हृदय में हर्ष के साथ आश्चर्य भी था। कुछ बातचीत के बाद मैं जहाज के अन्दर आया और लालजी भाई, वीणादेवी तथा सुधीर को डेक पर लेगया। करीब आधा घंटा बातचीत को मिल गया। इतने में जहाज हिला और किनारे से दूर होने लगा। जब तक ठीक नजर पहुंचती रही हम लोग डेक पर खड़े रहे। बिदा होते होते सूरजचन्द ने कहा कि आप छः माह के विचार से जारहे है। पर इस यात्रा में वर्ष डेढ़ वर्ष लगेगा। वियोग के समय वियोग को लम्बा बनाने की बात कहना ठीक नहीं समझा जाता, पर श्रीफलके इन जटों के भीतर जो सत्यसमाज के विशाल प्रचार की गिरी छिपी हुई थी उसके स्मरण से ही मन मीठा होगया। और बदले में सूरजचन्द के प्रति आशीर्वाद की वर्षा होने लगी।

कुछ देर तक हम लोग बम्बई का किनारा ही देखते रहे। इसके लिये जहाज के बिलकुल पिछवाड़े भाग पर, जो खलासियों के लिये रिजर्व था, खड़े रहे। इतने में एक खास दृश्य पर मेरा ध्यान गया। जहाज की मशीन चलने से उसके विशाल पंखों के कारण समुद्र तल में काफी खलभल मचती थी। उसमे सैकड़ों मछलियाँ मर जाती थीं और मिट्टी उमड़कर ऊपर आजाती थी। और फेन ही फेन दिखाई देने लगता था। इससे जहाज के पीछे मीलों तक सड़कसी दिखाई देने लगती थी इस सड़क के ऊपर समुद्री पक्षियों के झुंड मडराते थे और मछलियाँ पकड़ कर खाते थे। मीलों तक इसप्रकार ये पक्षी जहाज का पीछा करते रहे। कभी कभी यह सड़क क्षितिज तक लम्बी दिखाई देती थी। काफी देर तक हम लोग दूरबीन लिये हुए जमीन का किनारा देखते रहे। डर था कि उल्टियाँ होंगी पर न हुईं।

समुद्र यात्रा में उल्टियाँ हुआ करती हैं यह आम बात है। एक सज्जन ने कहा था कि पहिले दिन कुछ न खाना चाहिये, तब उल्टियाँ न होगीं, दूसरे का कहना था कि खाली पेट में उल्टी ज्यादः भरती है। कौनसी बात ठीक है इसका निर्णय न होसका इसलिये सोचा थोड़ा थोड़ा भोजन करना

चाहिये और निम्बू खाते चलना चाहिये।

पर उल्टी न हुई। पहिले सोचा कि जमीन किनारे जहाज चलरहा है इसलिये जहाज बहुत नहीं हिलता, इसलिये उल्टी नही होरही है। पर जमीन से सैकड़ों मील की दूरी पर भी जहाज में किसी को उल्टी नहीं हुई दिसम्बर में समुद्र शांत रहता है इसलिये जहाज अधिक नहीं हिलता डेक पर दोनों नुक्कड़ों पर तो अवश्य जहाज ऊपर नीचे उछलतासा मालूम होता था पर मेरे चबूतरे पर तो मुझे बहुत शांति मालूम होती थी। कुछ कम्पन तथा धड़पड़ की आवाज तो अवश्य आती थी पर ऐसी हालत तो किसी रेल्वेस्टेशन के प्लाटफार्म पर भी होती है जब उसके पास से कोई गाड़ी गुजरती है। मुझे तो ऐसा मालूम होता था मानों किसी विशाल राजभवन में कोई मेला लगा है और उस मेले में हम लोग एक हिस्से में ठहरे हैं। और पास में कोई बड़ा कारखाना चल रहा है जिससे भवन धड़धड़ कर रहा हैं। इससे ज्यादः और कोई परेशानी नहीं मालूम हुई।

पोरबन्दर में

खैर! ७ ता. को रात होने पर मैं सोगया, सुबह जल्दी नींद खुली। काठियावाड़ का किनारा नजर आरहा था। मैं दूरबीन लिये किनारा देख रहा था। यहां किनारा उथला होने से बड़े जहाज दूर ही रहते हैं। लालजी भाई को आशा थी कि उनके भाई या बहिनोई मिलने आयेंगे। यात्रियों को लेकर जो छोटे छोटे स्टीमर जहाज के पास आरहे थे उन्हें दूरबीन लगालगाकर काफी देखा पर कोई दिखाई न दिया। समझ लिया कि जहाज बम्बई से ८ के बदले ७ को ही रवाना होगया इसलिये किसी को खबर नहीं मिली।

निराश होकर हम लोग इधर उधर घूमने लगे। आते हुए यात्री और उनका सामान आदि देखने लगे। उससमय डेक पर भीड़ काफी थी। इतने में एक व्यक्ति ने मेरे पैर छुए। इस अपरिचित दुनिया में कौन भक्त

निकलपड़ा, यह अचरज में कर ही रहा था कि उनने मेरे पैर छूकर सिर ऊपर किया, मैंने आश्चर्य और प्रसन्नता से देखा कि ये तो लालजीभाई के बहिनोई श्री मोहनलालजी हैं जो पोरबन्दर में रहते हैं। जो अयोध्या में मुझे मिले थे और कई दिन साथ रहे थे। पासमें लालजी के बड़ेभाई श्री नारायणदास जी खड़े थे। परिचय हुआ, सब मिलकर डेरे पर आये। वहां लालजी मिले। इस भेंट से सब को आनन्द हुआ। वहां के खास पक्वान्न खाजली की टोकनी भेंट में मिली। पोरबन्दर के यात्री एक नये तलघर में ठहरा दिये गये।

करीब १२॥ बजे दिनको (ता. ८) जहाज कराची के लिये रवाना हुआ। यहां से भी जर्मान दिखती रही। जहाज काठियावाड़ के प्राय द्वीप के किनारे किनारे जारहा था। सम्भव है रात में कच्छ का किनारा दृष्टिपथ में आया हो। पर उससमय रात थी। कुछ मालूम न हुआ।

सबेरे जब कराची में पांच बजे मैं उठा तब देखा कि कराची का बन्दरगाह पास में है। मालूम हुआ कि जहाज तीन बजे रात से ही लंगर डाले पड़ा है। सबेरे प्लेटफार्म के किनारे लगा। यहां कोई हिन्दू नहीं दिखाई दिया। यहां २५ हजार पेटियाँ पिंडखजूर की लादी गई। जिससे दिनभर सारे चबूतरे खुले रहे। हमारा चबूतरा भी शाम तक खुला रहा। किसी किसी का रातको बारह बजे तक खुला इस कारण से यात्रियों को काफी तकलीफ हुई। सब से अच्छी जगह पाने का कुछ बदला चुकाना पड़ा।

साधारणतः कोई यात्री न तो शहर में जा सकता था न कोई विक्रेता यहां आपाता था। प्लेटफार्म पर एक अंगूरवाला बैठा था, जो ढाई रुपये सेर अंगूर बेंच रहा था। एक टोकनी में दो रस्सियाँ बंधी थी। एक का छोड़ जहाजवालों के हाथ में था दूसरी का दूकानदार के हाथ में। यहां से रुपये रख दिये जाते वहां से अंगुर आजाते। हमने भी कुछ अंगूर खरीदे। कुछ दाड़िम भी लिये।

यहां भी बहुत यात्री चढ़े। जिनके लिये एक तलघर खोला गया जो हमारे स्थान से एक मंजिल नीचे था। उन यात्रियों से मालूम हुआ कि

कराची शहर में दस आना सेर अंगूर है। बन्दरगाह पर हमें ढाई रुपये सेर मिले थे। और वर्धा में ये चमन के अंगूर आठ से दस रुपये सेर तक मिलते थे। मालूम हुआ कि पाकिस्तान में गेहूं पांच सेर का है। आर्थिक मामले में खासकर खाद्य सामग्री के मामले में भारत की दशा याद कर मन कराह गया। रुपये का अवमूल्यन भी इस महंगाई का कारण है जिसे भारत सरकार के धुरंधर नहीं समझ पारहे थे। और भी कारण थे।

कराची का बन्दरगाह काफी विशाल और सुरक्षित है। चारों तरफ जमीन से घिरा हुआ वह एक जलद्वीप या छोटी झील सा मालूम होता था। चार वर्ष पहिले प्रवचनों के लिये निमन्त्रित होकर जानेवाला था। पर दंगों के कारण न जासका। आज वह कराची न था। शहर आज न देख पाया पर बंदरगाह देख लिया।

समुद्र के अनुभव

समुद्र यात्रा का सब से कडुआ अनुभव उल्टियों का है। पर ऋतु अनुकूल थी समुद्र शांत था इसलिये यह अनुभव नहीं के बराबर ही हुआ। ११ दिसम्बर के शाम तक तो किसी को कोई बाधा नहीं हुई। किन्तु शाम के बाद, जहाज काफी डोला, और कुछ लोगों को उल्टियाँ भी हुईं। पर मुझे उल्टी होते होते रुकी। निम्बू का पुराना अचार इस समय बहुत काम आया जो हम काफी मात्रा में लेगये थे। १२ ता. के दुपहर से जहाज का हिलना डुलना काफी कम होगया और हमें भी कुछ आदत पड़गई। ता. १५ को भी जहाज कुछ विशेष मात्रा में हिला। पर उल्टियाँ नहीं हुईं।

सात दिन तक जमीन के दर्शन नहीं हुए। जहाज के डेक पर दो गमलों में कुछ पौधे थे उनके सिवाय सात दिन तक कोई झाड़ नहीं दिखा। जहाज पर कुछ भेंड़े थीं उनके सिवाय कोई जानवर नहीं दिखा, मच्छीखोर समुद्रीपक्षी कभी कभी दिखाई दिये इसके सिवाय कोई पक्षी नहीं दिखाई दिया, एक यात्री के पास पिंजड़े में दो तोते थे वे जरूर दिखे। हर समय क्षितिज

[illegible] पानी ही पानी था। उठती बैठती लहरों से हमारे [illegible] और इसकी [illegible] तथा [illegible] में पानी बिखरी दिखाई पड़ा एक ही दृश्य [illegible] [illegible] नहीं था। पर घूमने के [illegible] किन्तु पाँच बजे [illegible] [illegible] यही दृश्य देखा जाता था।

पृथ्वी की गोलाई का अनुभव समुद्र में बहुत अच्छी तरह होता है। ऐसा मालूम होता है कि क्षितिज तक पानी ऊँचा ऊँचा होता गया है, और फिर इस तरफ ढल आता है। गेंद की तरह गोल पृथ्वी में ही ऐसा दृश्य दिखाई दे सकता है। चपटी पृथ्वी में नहीं। जैन शास्त्रों में लवण समुद्र को बीच में ऊँचा और किनारे पर नीचा माना है; उसका कारण यही दृश्य है। पृथ्वी की गोलाई का तो उन्हें पता नहीं था इसलिये यह अटपटी कल्पना उन्हें करना पड़ी थी।

समुद्र के भीतर भी जलचरों का एक विशाल संसार है पर वे दिखाई नहीं दिये। इस भीमकाय जहाज से डरकर ही वे पास नहीं आये। हाँ, कई बार उड़ती हुई मछलियाँ जरूर दिखीं। ये मछलियाँ काफी छोटी थीं जो जहाज की टक्कर से बचने के लिये उड़कर दूर भाग जाती थीं।

जब जहाज भूमध्य रेखा के पास पहुँचता है तब ध्रुवतारा क्षितिज पर दिखाई देता है, यह दृश्य देखने की मेरी बड़ी इच्छा थी पर न देख सका। क्योंकि हर रात में क्षितिज बादलों से घिरा हुआ रहा।

प्रार्थना और प्रवचन

प्रातः प्रतिदिन सुबह शाम प्रार्थना होती रही। लालजीभाई हारमोनियम भी लाये थे इसलिये वे हारमोनियम पर प्रार्थना करते थे। [illegible] को [illegible] भोजनालय में मेरा एक प्रवचन भी हुआ जिसमें मैंने कहा कि जहाज की यात्रा जिस प्रकार हम लोग एक कुटुम्बी से बनकर करते हैं उसी तरह जीवन की यात्रा भी मिलजुलकर करें तो जीवन में स्वर्ग दिखाई देने लगे।

मुहम्मद जयन्ती

बारह दिसम्बर, मुहम्मद जयन्ती का दिन था, इसलिये [illegible] भोजनालय में मुहम्मद जयन्ती मनाई गई। मुझ [illegible] वालों की [illegible] इस्लाम पर मेरा अच्छा प्रवचन हुआ। मुसलमानों ने [illegible] की। दूसरे लोग भी कुछ मुसलमान तारीफ करने आये। [illegible] भी हुए थे तथा एक मौलवी यात्री ने भी कुछ भाषण दिया था। [illegible] बातें भी काफी हुई थी।

एक यात्री की मृत्यु

१२ दिसम्बर को हृदय की गति बन्द होजाने से एक यात्री की मृत्यु होगई। इस तरह चित्त में काफी विषाद छागया। डेक पर एक [illegible] में लाश रखदी गई। १३ ता. के सुबह उसके लिये विधान हुए, [illegible] पाठ हुआ। ५-७ मिनिटों के लिये जहाज समुद्र में रोक दिया गया। फिर सम्मान के साथ लाश समुद्र में उतार दी गई। [illegible] बाँध दिया गया था जिससे [illegible] लिये। जहाज के सब अफसर और डाक्टर [illegible] थे।

जहाज में एक डाक्टर और दवाखाना भी रहता है [illegible] के लिये [illegible] तथा [illegible] के लिये [illegible] हजारों की संख्या में रहते हैं। दो-तीन दिन बाद सब यात्रियों के पासपोर्ट तथा परमिट ले लिये गये थे पीछे टिकिट भी ले लिये गये, पासपोर्ट और परमिट १४ ता. को वापिस कर दिये गये, और टिकिटों के बदले एक नया प्रमाण-पत्र दे दिया गया जिसमें यात्रियों के लिये कुछ सूचनाएँ थीं।

४ — मुम्बासा बन्दरगाह पर

१४ दिसम्बर के सबेरे [illegible] जहाज मुम्बासा [illegible] [illegible] [illegible] में प्रवेश कर गया है। [illegible]

उधर पड़े थे। जहाज के आधे से अधिक यात्री यहां उतरने वाले थे। करीब ९०० यात्री यहां उतरे थे। जहाज में धमाल मची हुई थी, सब अपना सामान बांधने और कपड़े बदलने में लगे हुए थे। ऐसा मालूम होता था कि ८-९ बजे तक सब यात्री घर पहुंच जायगे। पर जब तक मानव राष्ट्र नहीं बना है तब तक साधारण यात्री के लिये विदेश यात्रा की परेशानियाँ पुनर्जन्म की परेशानियों से कुछ ही कम कही जासकती हैं।

थोड़ी देर में सूचना मिली कि सब यात्रियों की जांच होगी और उसके लिये फर्स्ट क्लास के डेक पर जाना पड़ेगा। बस सैकड़ों यात्रियों की भीड़ लगगई। कुछ लाइन लगगई थी। स्त्रियों को और उनके बच्चों तथा घरवालों को साथ रक्खा गया। बच्चों की परेशानी थी। कोई मूतता था कोई खूब रोता था कोई पानी के लिये चिल्लाता था, कोई भीड़ से घबराता था, सब के शरीर पसीने से तर। इस तरह कई घंटे तक यह परेशानी रही। तब स्वास्थ्य सम्बन्धी जांच हुई। किसी का चेचक के टीके का निशान ठीक नहीं दिखाई देता था इसलिये फिर टीका लगाया गया। जीवाणुवाद के अनुसार बचाव का यह प्रयत्न निरर्थक के साथ बहुत परेशानी पैदा करनेवाला तथा अमुक अंशों में अपमानजनक भी है।

इस क्रिया के साथ फिर दूसरे बार ये क्रियाएं इमिग्रेशन सर्टिफिकेट के लिये दुहराई गईं। पहिली ही बार स्त्रियों बच्चों का कचूमर बनगया था। दूसरी बार फिर जब येही परेशानियाँ घंटों तक हुई तब तो ऐसा मालूम हुआ कि इस प्रयत्न में कुछ की लाश न बनजाय। खैर! इन दो नरक यातनाओं में से निकलने पर जहाज किनारे पर लगाया गया। सबेरे से बारह बजे तक यह क्रियाकर्म होता रहा। यदि थर्ड क्लास के यात्रियों को आदमी समझाजाय तो इस तरह यातना देने की कोई जरूरत न हो। यात्रियों के स्थान पर जाकर ही यह क्रिया सरलता से निबटाई जासकती है। पर यात्रियों के लिये आफीसर नहीं होते आफीसर के लिये यात्री होते हैं। आज की सरकारें इसी सिद्धान्त पर काम करतीं हैं।

खैर ! जब जहाज किनारे पर लगगया तब हब्शी कुलियों की भीड़ जहाज में घुसपड़ी । ये फ्री कुली कहलाते हैं जो कि जहाजी कम्पनी की तरफ से रक्खे जाते हैं । कम्पनी इसका चार्ज यहां लेती है जो कि फी अदद २५ सेंट (करीब ढाई आने) होता है । पर जहाज मे निकालकर प्लेटफार्म पर सामान पटक देने के बदले में ही एक कुली ने आठ सिलिंग लेलिये । उससमय सिलिंग हमारे पास थे नहीं, इसलिये पांच रुपये देकर छुट्टी पाई ।

इसके बाद सामान ट्रकों में ठूंसकर कस्टम हाउस लाया गया, वहां से हाथ ठेलों में लादकर कस्टम की इमारत के भीतर पहुंचाया गया । ज्यों ही ठेला पहुंचा कि यात्री उसपर टूट पड़े, अपना अपना सामान खींचने लगे । इस प्रयत्न में किसी का सामान कहीं, किसी का कहीं, इस प्रकार जहाज से निकला हुआ सामान ढूंढ़ने या पाने में दो-तीन या चार घंटे तक लग जाते हैं । *सामान का गुमजाना भी सम्भव है । क्योंकि सामान की कोई रसीद किसी के* पास नहीं होती । खैर ! हमारा सामान भी इधर उधर बिखर गया था । चौदह अदद थे काफी परेशानी के बाद वे ढूंढे गये । इसके बाद अददों का चार्ज देने के लिये टिकिट लिये गये, उसपर एक सर्टिफिकेट मिला, इसमें भी घंटे दो घंटे का समय लग जाता है ।

इसके बाद सामान खोलकर दिखाने का भयंकर कार्यक्रम उसी तरह शुरु होता है जिस प्रकार बम्बई में हुआ था ।

जहाज से उतरते ही यहां के प्रसिद्ध कार्यकर्ता श्री डा. कर्वे को लालजीभाई ने फोन कर दिया था । उन्हें बम्बई से हमारी रवानगी का हवाई पत्र नहीं मिला था । इसलिये वे नहीं आपाये । फोन मिलते ही वे आये, कुछ प्रबन्ध कराकर चले गये । हमारा सामान मिलते ही उन्हें फिर फोन कर दिया गया । वे फिर आये । और हम सब को अपनी मोटर में बिठलाकर लेगये । सामान बुलाने का भी उनने प्रबन्ध कर दिया । और हम लोग एक अच्छे स्थान में ठहरा दिये गये । डा. कर्वे की मदद न मिली होती तो हमारी परेशानी बहुत बढ़गई होती । और अगर उन्हें हमारा पत्र मिल गया होता तो

न जाने कितनी परेशानियों से और बचा होता। खैर ! जनता के दुःखों और परेशानियों को अनुभव के साथ समझने का अवसर मिला, इसी लाभ में सन्तोष किया।

हमारा परमिट युगांडा का था परन्तु युगांडा जाने के लिये केन्या में से गुजरना पड़ता है। जहाज से उतरने पर करीब छः सौ मील रेल द्वारा जाने पर युगांडा में प्रवेश होता है। इसलिये साधारण मिलने जुलने की दृष्टि से दो तीन दिन मुंबासा और दो तीन दिन नैरोबी (केन्या की राजधानी) में ठहरने का विचार था।

मुंबासा में हमारी कोई जान पहिचान नहीं थी किन्तु डा. कर्वे के सहयोग के कारण सब व्यवस्था होगई थी। ता. १६ दिसम्बर के शाम को हिन्दू यूनियन के एक काफी बड़े कमरे में ठहर कर आराम से रात गुजारी। १७ ता. के सबेरे ही डा. कर्वे मोटरकार लेकर आये, पर तब तक हम बाहर जाने के लिये तैयार नहीं हुए थे, इसलिये ८॥ बजे फिर आये। आपने यहां का प्रसिद्ध पांड्या हास्पटिल दिखाया, जिसके संचालक आप ही हैं। कुछ अन्य प्रतिष्ठित सज्जनों से भी मिलना जुलना तथा चर्चा हुई।

इस चर्चा से पता लगा कि केन्या में हिन्दू मुसलमानों में भयंकर तनातनी है। यहां भी सरकार ने यहां की असेम्बली में जो थोड़े से स्थान भारतीयों को दिये हैं उनका बटवारा कर दिया गया है। अभी तक हिन्दू मुसलमानों के स्थान सम्मिलित थे अब हिन्दू मुसलमानों में पृथक निर्वाचन और पृथक प्रतिनिधित्व का विष बो दिया गया है।

मैंने चाहा कि यहां के कुछ मुसलमानों से मिला जाय पर सभी ने कहा कि यह बेकार है। अब हिन्दू मुसलमान नहीं मिल सकते। बल्कि एक प्रतिष्ठित सज्जन ने तो यहां तक कहा कि हिन्दू मुसलिम एकता की बातें करके आप मुसलमानों को तो पा ही न सकेंगे किन्तु हिन्दुओं को भी खोदेंगे। खैर ! पाने खोजाने की बात से तो मुझे कोई निराशा नहीं हुई क्योंकि मुझे सत्येश्वर

के खोजाने के सिवाय और किसी के खोजाने की विशेष चिन्ता नहीं है। किन्तु इतना मैं समझ गया कि भेदभाव का विष खूब गहरा असर कर गया है। और एक दो दिन में इस विषय में न तो कुछ किया ही जासकता था न परिस्थिति को ठीक समझा ही जासकता था। किसकी भूल कितनी है इस बात को समझने के लिये दो दो चार चार बार दोनों दलों के लोगों से मिलना जरूरी था। पर तब मेरे पास समय नहीं था। परमिट की अवधि समाप्त न होजाय इसके लिये युगांडा में जल्दी से जल्दी प्रवेश करना जरूरी था। लौटते समय ही इस समस्यापर गहराई से विचार करने का निर्णय किया। तब तक दूसरे स्थानों का अनुभव भी इकट्ठा होजाने की सहूलियत भी थी।

बातचीत से इस बात का पता लगा कि यहां भारत के धर्म गुरुओं के विषय में एक तरह की घृणा है। क्योंकि भारत से अनेक धर्मगुरु यहां आये और लाखों रुपया बटोरकर, अन्धश्रद्धा और झगड़े बढ़ाकर चले गये। मेरे विषय में भी लोगों को शंका थी, जो कि बड़े आदर सन्मान के साथ घुमा फिराकर नरम शब्दों में प्रगट की जाती थी। मैंने उन्हें विश्वास दिलाया कि मैं चन्दा बटोरने नहीं आया हूँ। पर ये लोग इतने बार दूध से जल चुके थे कि छाछ भी फूक फूक कर पीते थे। बड़ी मुश्किल से इन्हें मेरी बातपर विश्वास हुआ।

१७ दिसम्बर के दुपहर को जब हम लोग घूम फिर कर लौटे तब डेरे पर म्बरारा (युगांडा) से स्वागत तथा सहयोग के लिये आये हुये श्री जीवनलाल जी (लालजीभाई के बड़े भाई) मिले। मुंबासा से म्बरारा करीब एक हजार मील है और कम्पाला के आगे दो सौ मील तक तो रेल भी नहीं है। वहां से आप पधारे थे। कुछ दिनों में ही पता लग गया कि सत्यसमाज के रंग में आप काफी रंगे हुए हैं। और उसके प्रचार के लिये तन मन धन समय आदि की काफी कुर्बानी के लिये तैयार हैं और उत्साह के साथ हर तरह का कष्ट उठाने को तैयार हैं। आपके आजाने से प्रवास के प्रबन्ध सम्बन्धी चिन्ताएँ और भी दूर होगईं। यों लालजी भाई तो हर तरह की जिम्मेदारी अच्छी तरह निबाह ही रहे थे पर अब एक से दो होगये।

१८ दिसम्बर ५१ को डा. कर्वे जी ने पांडया हास्पटिल की नई इमारत दिखाई। करीब बारह लाख शिलिंग से यह इमारत बनकर तैयार हुई है। डा. कर्वे यहां के प्रसिद्ध समाज सेवक हैं। वे इस हास्पटिल को अपनी आनरेरी सेवा देरहे हैं।

शामको ५-४५ से ६-४५ तक हिन्दू यूनियन के व्याख्यान भवन में मेरा प्रवचन हुआ। सत्यसमाज के प्रायः सभी मुद्दों पर मैंने प्रकाश डाला। इस प्रवचन से बहुत से लोगों के बहुतसे भ्रम दूर हुए। सत्यसमाज के सिद्धांतों के परिचय के बाद मैंने यह भी कहा कि भारत से जो लोग यहां लूटने के लिये आये उसके लिये मैं शर्मिन्दा या दुःखी हूँ पर इतना ही दुःख इस बात का भी है कि आपने विवेक का परिचय नहीं दिया। जब आप लुटने को तैयार हैं तो लूटनेवाले क्यों चूकेंगे ? इसलिये आप विवेक से काम लीजिये। पात्रापात्र का विचार रखिये। अध्यक्ष ने प्रवचन की खूब तारीफ की और लौटते समय मुंबासा को अधिक लाभ मिलेगा ऐसी इच्छा व्यक्त की।

यहां का हिन्दू यूनियन एक अच्छी संस्था है। यहां एक शिवमंदिर है, स्कूल है, धर्मशाला है, व्याख्यान भवन तथा वाचनालय है। यहां के मैनेजर और पुजारी बहुत सज्जन और प्रेमी व्यक्ति हैं। आपके यहां हमारे भोजन की व्यवस्था थी। आप दम्पति इतने आदर प्रेम और आग्रह से भोजन कराते थे कि ऐसी घटनाएँ असाधारण ही कही जायँगी। आपने किसी तरह की अपरिचितता का अनुभव नहीं होने दिया।

मुंबासा बड़ा शहर है। पर जनसंख्या करीब एक लाख ही है। आफ्रिका अभी बीरान है इसलिये गांव नगरों की जनसंख्या यहां काफी कम रहती है।

मुंबासा बन्दरगाह बहुत अच्छा है। यहां पर समुद्र महानदी की तरह थल के भीतर प्रवेश कर गया है। इसलिये दर्जनों जहाज यहां सुरक्षितता के साथ लंगर डाले पड़े रहसकते हैं।

५- रेलयात्रा

आफ्रिका में रेलगाड़ियाँ मीटर गेज की हैं। भारत सरीखी बड़ी लाईन यहां नहीं है। फिर भी गाड़ियाँ अच्छी हैं। इन्टर क्लास यहां नहीं है और फर्स्ट सेकिण्ड में कोई अन्तर नहीं मालूम हुआ। साधारणतः भारतीय लोग थर्ड क्लास में सफर नहीं करते। सेकिण्ड में जगह न मिलनेपर कुछ भारतीय थर्ड में सफर करते हैं।

गाड़ियाँ यहां बहुत कम है। मुंबासा से नैरोबी तक एक गाड़ी प्रति-दिन जाती है पर उसके आगे हफ्ते में सिर्फ दो गाड़ियाँ जाती हैं। ये गाड़ियाँ रविवार को और बुधवार को साढ़े चार बजे जाती हैं। इन्हीं दो दिनों में थर्ड क्लास की भी एक गाड़ी शाम को ५ बजे जाती है। इसलिये फर्स्ट सेकिण्ड क्लास में जगह मुश्किल से मिलती है। वह तो भाग्य ही कहना चाहिये कि १७ ता. को हमारे लिये एक सेकिण्ड क्लास का कम्पार्टमेंट रिजर्व होगया था।

यहां की रेलगाड़ियों में पंखे नहीं होते। मुंबासा के आगे ठंड इतनी होती है कि पंखों की जरूरत ही नहीं है। नवम्बर दिसम्बर आदि यहां गर्मी के महीने हैं पर ठंड के दिनों में जितनी ठंड वर्धा में पड़ती है वैसी यहां गर्मी के दिनों में पड़ती है। शीत ऋतु की-अप्रेल आदि की-ठंड तो काफी अधिक रहती है।

अभी पूर्व आफ्रिका में रेल के रास्ते बहुत कम हैं। मुंबासा से नैरोबी होते हुए कम्पाला तक एक लम्बी लाइन है। थोड़ीसी ब्रेंच लाइनें हैं। बाकी जंगल पड़ा है। रेलवे लाइन के आसपास से मोटर का रास्ता जाता है। इसी के किनारे किनारे गांव या नगर हैं। गांवों या नगरों में आफ्रिकन लोग नहीं रहते। वे जंगलों में रहते हैं। गांव में किसी भारतीय के नौकर की हैसियत से उसके घर सो सकते हैं। अन्यथा गांव भारतीयों के घरों से ही बनते हैं। १०—१५ घर होने से ही गांव बनजाता है। म्बाले युगांडा का तीसरे नंबर का शहर कहाजाता है पर जनसंख्या चार-पांच हजार से अधिक नहीं है।

जन संख्या कम होने पर भी नगर नगर ही है । सैकड़ों मोटरें, सुन्दर सड़कें और चौराहे, बड़े बड़े भवन और बंगलों की कतारें, पार्क बिजली नल बाजार बेंक आदि सभी बातें बड़े शहरों के अनुरूप होती हैं । यहां जन-संख्या के अनुपात में मोटरकारों की संख्या इतनी अधिक है कि अमेरिका को छोड़कर शायद ही किसी मुल्क में इतनी मोटरें हों । भारतीयों के आधेके करीब घरों में मोटरें हैं । इसलिए रेल के यातायात की कमी लोग मोटरों से पूरी कर लिया करते हैं ।

फर्स्ट सेकिण्ड क्लास के पैसंजरों का सामान अलग डब्बों में रख दिया जाता है । अपने पास बिस्तर या खाने पीने का सामान छोड़कर अधिक सामान नहीं रखने दिया जाता । इसलिए उतरने के बाद सामान के लिए घंटा आधा घंटा रुकना पड़ता है । और पेटियों को रस्सी से बांध लेना भी जरूरी समझा जाता है ।

सेकिण्ड क्लास का किराया थर्ड क्लास से चौगुने के करीब होता है । मुंबासा से नैरोबी ३३० मील है इसका किराया सेकिण्ड का करीब ४६ शिलिंग है जब कि थर्ड का १२॥ शिलिंग ।

यहां रेलवे लाइनें बहुत कम होनेसे रेलवे टाइम टेबुल का उपयोग लोग कम करते हैं । मुंबासा और नैरोबी सरीखे स्टेशनों पर भी वह न मिला ।

हम लोग ता. ११ दिसम्बर ५१ को शाम को गाड़ीमें बैठे । वीणा-देवी और सुधीर की तबियत मुंबासा में खराब होगई थी । डा. कर्वे ने दवा दी थी उससे लाभ भी हुआ था पर गाड़ी में बैठते समय वीणादेवी को १०२ डिग्री बुखार था ।

गाड़ी शामको ४॥ बजे निकली । वनश्री देखने लायक थी । चारों तरफ हरयाली ही हरयाली थी । यहां बस्ती बहुत कम होनेसे गांव बहुत नहीं दिखते । बिलकुल गोलाकर झोपड़े दस दस पांच पांच की संख्या में कहीं

कहीं दिखाई दे जाते हैं। पालतू गायें, भेड़ें आदि के झुंड भी दिखाई दे जाते हैं। जंगली हरिण आदि भी दिखाई दिये। भैंस यहां पालतू नहीं हो पाई है। भैंसा शेर के समान ही भयंकर समझा जाता है इसलिये यहां गाय का ही दूध घी मिलता है। भैंस का घी दूध यहां नहीं मिलता। न गायों के झुंड में कहीं भैंस दिखाई देती है।

रेल द्वारा हम लोग उंचाई पर जारहे थे। नैरोबी करीब साढ़े पांच हजार फुट की उँचाई पर है। रास्ते में पहाड़ ही पहाड़ हैं। बोगदे भी हैं।

६– नैरोबी में

युगांडा जाते हुए हमें एक ट्रेन के लिये नैरोबी उतरना था। पर यहां से आगे सोमवार और गुरुवार को ही एक एक गाड़ी कम्पाला की ओर जाती है इसलिये एक ट्रेन के लिये ठहरने का अर्थ होता है आधा सप्ताह। खैर! २० दिसम्बर ५१ को सुबह ८॥ बजे हमारी गाड़ी नैरोबी पहुँची। स्टेशन पर श्री डा. पटवर्धन, श्रीमती सीतादेवी (श्री चेतनलालजी की पत्नी) क्रिपुमु से आये हुए श्री जयराम सुन्दर जी, श्री गिरधरलाल जी तथा कुछ और सम्भ्रान्त महिलाएँ उपस्थित थीं। यहां कच्छी हिन्दू यूनियन के भवन में ठहराये गये, भोजनादि का इन्तजाम श्री गिरधरलाल जी तथा चेतनलाल जी के यहां हुआ। वीणादेवी तथा सुधीर तो काफी बीमार थे पर मेरी तबियत भी कुछ खराब थी। पर वह ऐसी न थी कि उससे कोई काम रुक सके।

नैरोबी, केन्या की राजधानी और पूर्व आफ्रिका का सबसे बड़ा शहर है जो ४० वर्गमील में फैला हुआ है। जनसंख्या डेढ़ दो लाख के करीब है। काफी उंचाई पर होने से यहां ठंड काफी पड़ती है। मोटरें आदि बहुत अधिक हैं। जितने घर हैं उतनी ही मोटरें हैं। शहर काफी सुन्दर और साफ है। हरियाली तो यहां सभी जगह है। भारत सरकार के हाइकमिश्नर का आफिस भी यहीं है। एक छोटासा अजायबघर भी है। यहां से थोड़ी दूर पर एक ऐसा जंगल है जहां शिकार नहीं किया जाता। सिंहादि यहां खुले

घूमते हैं। मोटर में बन्द होकर इस जगह की सैर की जाती है।

२० दिसम्बर को शाम को दस पांच मिनिट तक एक मीटिंग में अपने विचारों का परिचय दिया।

२१ ता. को तबियत खराब रही। कुछ लोगों से चर्चा हुई। हिन्दू यूनियन की तरफ से मेरे प्रवचन की सूचना के पेम्फलेट बांटे गये।

२२ दिसम्बर को हाइकमिश्नर का भवन देखा। हाइकमिश्नर श्री पंत पेरिस गये हुए थे। राजा रामेश्वर राव उनकी जगह काम करते थे। उनसे बातें हुई। मैंने यहां के भारतीयों के बारे में अपनी नीति बतलाते हुए कहा कि लड़की शादी हो जाने पर जब ससुराल चली जाती है तब पीहर से उसका प्रेम तो रहता है पर कर्तव्य की सारी जिम्मेदारी उसकी ससुराल में रहती है और उसे हर तरह ससुराल के हितों में मिला देना पड़ता है। इसी तरह यहां के भारतीयों से मैं कहना चाहता हूँ कि आप लोग पूरी तरह आफ्रिका के हित में अपने हित मिला दीजिये। पूरी तरह आफ्रिका के नागरिक बन जाइये।

मेरी बात से खासकर उपमा से राजा साहब बहुत प्रभावित और प्रसन्न हुए। बोले-यही हमारी नीति है। भारत सरकार का भी यही कहना है। हम लोग तो मर्यादा में बँधे हुए हैं इसलिये खुल्लमखुल्ला कुछ कह नहीं सकते पर आप कह सकते हैं। आप अवश्य इन बातों का प्रचार कीजिये। मेरी एकता की बातों से भी उनने प्रसन्नता प्रगट की।

इसके बाद इन्फर्मेशन आफिसर श्री शहाणे मिले। आपको मेरा और मेरे विचारों का परिचय पहिले ही मिल चुका था। १८ दिसम्बर को मुंबासा में मेरा जो प्रवचन हुआ था वह आपकी पत्नी ने सुना था। उनके जरिये श्री शहाणे ने मेरा परिचय पा लिया था। आपने मेरे विचारों की काफी तारीफ की। यहां के हिन्दू मुसलिम भेद के बारे में भी वे मेरे विचार से सहमत थे। इस झगड़े में आपने जो बात कही वह निष्पक्ष थी। हिन्दुओं

का दोष उनने स्वीकार किया। इससे मेरे ध्यान में वह बात आगई कि मेरे पास लोगों ने इकतरफी बातें कहीं हैं। हालांकि इकतरफी बातोंपर मैंने विश्वास नहीं किया पर दोनों तरफ की बातें सुनने की उत्सुकता अवश्य थी। उसकी झांकी श्री शहाणे की बातों से मिली।

शामको १॥ घंटे तक मेरा प्रवचन हुआ। मेरे प्रवचन के बाद अध्यक्ष ने कहा-एकता की बात बहुत लोग कहते हैं, हम लोगों के मन में भी कभी कभी लहर आती है पर वह लहर ही होती है। पर एकता का ऐसा ठोस सच्चा और व्यावहारिक प्रयत्न करनेवाले स्वामीजी हमने जीवन में पहिली-बार ही देखे हैं।

२३ दिसम्बर को भी इसी जगह मेरा प्रवचन हुआ।

यहां का अजायबघर भी देखा।

आफ्रिकन लोग

आफ्रिकन लोगों के बारे में तब तक थोड़ी बहुत जानकारी होगई थी। इनका रंग काफी काला होता है, पर भारत में भी दक्षिण भारत में करीब करीब इतने काले लोग दिखाई दे जाते हैं।

पहिले मेरा खयाल था कि ये लोग कद में भारतीयों की अपेक्षा छोटे होते हैं। पर यह बात नहीं है। इनका कद भारतीयों से मिलता जुलता है। कई आफ्रिकन मुझसे भी ऊंचे थे।

इनकी सबसे बड़ी और विचित्र विशेषता है सिर के बाल। न जाने क्या बात है कि किसी भी आफ्रिकन के सिर के बाल नहीं बढ़ते। स्त्री हो या पुरुष, सबके सिर में छोटे छोटे बाल मुड़कर रहजाते हैं। मुड़े हुए छोटे छोटे बाल खोपड़ी से चिपटे रहते हैं। पुरुषों के सिर तो उतने नहीं मालूम होते पर स्त्रियों के सिर में बाल न होने से विदेशियों को बहुत कुरूपता मालूम होती है। संसार भर की मानव जाति की अपेक्षा बालों के बारे में इनमें यह विशेषता है।

आफ्रिकन लोग बाहरी लोगों के सम्पर्क में आने के पहिले बिलकुल नंगे रहते थे। स्त्री हो या पुरुष कोई कपड़ा नहीं पहिनता था। जब शहर बसगये तब कानून की विवशता के कारण वे लोग गांव में आनेपर केलेके पत्ते आदि लपेट लिया करते थे और गांव के बाहर जाते ही अलग कर दिया करते थे। पर अब ये लोग सूट बूट पहिनते हैं। रंग बिरंगे कपड़े पहिनते हैं। अब नग्नता दिखाई नहीं देती।

पहिले ये लोग बहुत भोले थे। बेंचना खरीदना न जानते थे। जब इन्हें मजदूरी में शिलिंग मिलते थे तब ये न समझते थे कि इनसे क्या खरीदा जाय। इसलिए दूकानदार के पास जाकर ये शिलिंग देकर खड़े होजाते थे। दूकानदार जो इन्हें दे वह लेलेते थे। धीरे धीरे ये चीजों की उपयोगिता समझने लगे और अब यह भोलापन चला गया है।

इनका मुख्य भोजन है एक तरह का केला, जो उबालकर खाया जाता है, जो पकता नहीं है। इसे मटोकी कहते हैं, पकनेवाले केले को डीजी कहते है। इसके सिवाय गायों को पालते हैं, उनका दूध वगैरह भी पीते हैं। मांस कभी कभी खाते हैं। अब पश्चिम के लोगों के सम्पर्क से ये मांस अधिक खाने लगे हैं। गाय भी अधिक मारने लगे हैं। इसलिये अब दूध की कमी मालूम होने लगी है। फिर भी भारत की अपेक्षा यहां दूध अच्छा और काफी मिलता है। अन्य खाद्य सामग्री भी यहां सस्ती और काफी है। अभी यहां विजेटेबल घी का प्रवेश नहीं हुआ है न भैंस पालतू हुई है इसलिये शुद्ध गोदुग्ध और गोघृत आदि यहां सुलभ है।

चोरी और झूठ बोलने की इनकी आदत बहुत ज्यादा है। सुना है कि पहिले इनमें इतनी अधिक मात्रा में ये दोष नहीं थे। पर विदेशियों के सम्पर्क से बढ़गये हैं और बहुत अधिक होगये हैं।

इन लोगों में जातीय संगठन या एकात्मता काफी है। खासकर भारतीयों के विरुद्ध बहुत जल्दी संगठित होजाते हैं। सुना है कि ईसाई मिशनरी

इन्हें भारतीयों के विरुद्ध उभाड़ते रहते हैं । पर इन सब बातों से भारतीयों को कोई उल्लेखनीय कष्ट नही है ।

प्राय: हर एक भारतीय के घर में एक आफ्रिकन नौकर रहता है जो कपड़े धोता है, वर्तन मलता है, घर की सफाई करता है। इस तरह काफी काम करता है । उसे पचास साठ शिलिंग महीना देना पड़ता है, इसके सिवाय बचा हुआ खाना भी उसे मिलता है। आफ्रिकन स्त्रियाँ इसतरह घरों में नौकरी नही करतीं । कहीं कहीं दूकानों पर भी आफ्रिकन नौकर काम करते हैं । नर्स वगैरह के हाथ के नीचे आफ्रिकन स्त्रियाँ काम करती हैं ।

आफ्रिकन लोगों में धीरे धीरे शिक्षा का प्रचार भी होरहा है । पुलिस के सिपाही तो प्राय: ये ही लोग होते हैं पर युगांडा में तो मजिस्ट्रेट आदि के पदों पर ये लोग पहुंचे हुए हैं । हालां कि अभी ये अपवाद ही हैं ।

इन लोगों में अब चेतना का जागरण काफी होरहा है। ये लोग अब नेटिव नीग्रो या हब्शी कहलाना पसन्द नहीं करते, इन शब्दों से चिढ़ते हैं, अपने को ये आफ्रिकन कहते हैं और यही कहलाना चाहते हैं। गैरआफ्रिकनों के सामने अब ये लोग इस तरह के तर्क भी पेश करने लगे हैं कि हमारी तुम्हारी चमड़ी के रंग में फर्क हुआ तो क्या हुआ, किन्तु खून का रंग तो एकसा है । मतलब यह कि बराबरी का दावा करने की चेतना इनकी जाग गई है ।

राजनैतिक मांग भी ये करने लगे हैं। यूनो के पेरिस अधिवेशन में इनके नेता मि. कोइना गये थे वहां उनने मांग की थी कि केन्या में जो आफ्रिकनों के साथ राजनैतिक अन्याय होरहा है वह दूर होना चाहिये। वहां व्यवस्थापिका सभा में ७६० यूरोपीयों के पीछे एक प्रतिनिधि हैं। जब कि ८७५१८७ आफ्रिकनों के पीछे एक प्रतिनिधि है ।

इन लोगों को यह आशा है कि एक न एक दिन हम इस देश के शासक बनेंगे । युगांडा में तो आफ्रिकन राजा ही है। हालांकि शासन का

सारा अधिकार यूरोपियनों के हाथ में है। राजा की हालत तो वही है जो ईस्ट इंडिया कम्पनी के नीचे बहादुर शाह की थी।

यद्यपि आफ्रिकन लोगों का सामूहिक विकास इतना नहीं होपाया है कि ये आज शासन का सारा भार चला सकें पर शीघ्र ही वह विकास होजायगा। और संसार की जैसी गतिविधि है उसके अनुसार यहां जनतन्त्र का विकास एकाध पीढ़ी में ही होजायगा।

आफ्रिकन लोग कर्मठ बहुत हैं। फिर भी सदियों से इनने जंगली और ग्राम्यवादी जीवन ही व्यतीत किया है इसलिये मजदूरी आदि के लिये जरा कठिनाई से तैयार होते हैं। पहिले और कहीं कहीं आज भी मजदूरी कराने के लिये मारपीट आदि से भी काम लेना पड़ता था। केवल मजदूरी के पैसों के लिये मजदूरी करने को ये राजी नहीं होते थे। पर अब वृत्ति बदल गई है।

कपास आदि के मौसम के समय शहर में मजदूर नहीं मिलते। भारत में भी खेती के मौसम के समय ऐसा होता है।

आफ्रिकन नौकरों को ब्वाय कहते हैं, बोई इसका अपभ्रंश है। यह यह शब्द अंग्रेजों का चलाया हुआ है, जो अपने मौलिक अर्थ से दूर जापड़ा है।

हर एक आफ्रिकन को प्रतिवर्ष २५-३० शिलिंग टेक्स सरकार को देना ही पड़ता है। इस टेक्स के लिये ही इनने काम करना सीखा। यह टेक्स भारतीयों को प्रतिव्यक्ति ८० शिलिंग देना पड़ता है। यूरोपीय भी देते हैं।

आफ्रिकन लोगों की भाषा स्वाहिली है। अर्थात् यह भाषा उनके बहुभाग में समझी जाती है। यों दसदस बीसबीस कोस के अन्तर पर उनकी बोलियाँ इतनी बदल जाती हैं कि एक बोलीवाला दूसरे की बोली बिलकुल नहीं समझपाता।

यहां की सरकार स्वाहिली भाषा में पत्र भी निकालती है पर उसकी

लिपि रोमन रहती है। कोई भाषा रोमन लिपि में लिखी जाय यह उसका दुर्भाग्य ही है। क्योंकि रोमन लिपि किसी भी भाषा के उच्चारणों को शुद्ध नहीं लिख सकती। एक ही लिखावट दसपांच तरह से पढ़ी जाय यह उसकी अनिश्चितता है। पर अंग्रेजी राज्य होने से रोमन लिपि में स्वाहिली भाषा लिखी जाती है। इसकी अपेक्षा तो नागरी या गुजराती में लिखना सौगुना अच्छा था। यदि भारतीय लोग इस तरफ ध्यान देते, स्वाहिली भाषा में दस पांच अच्छी पुस्तकें बनवाकर और नागरी या गुजराती में छपवाकर प्रचार करते तो इससे काफी स्वपर कल्याण होता। अब भी यह कार्य किया जा-सकता है।

स्वाहिली भाषा की गिनती सरल है। उसमें ग्यारह बारह आदि शब्दों के लिये नये शब्द नहीं बनाना पड़ते। एक से दस तक गिनती याद करने से बाकी गिनती भी याद होजाती है। हां! बीस तीस आदि के लिये अलग शब्द है। एक-मोजा, दो-वीरी, तीन-ठाटू, चार-हन्ने, पांच-थान्नू, छः-सीटा, सात-साबा, आठ-नान्ने, नव-टीसा, दश-कूमी। ग्यारह-कूमीना मोजा। बीस-इसनो। आदि।

नैरोबी के प्रवचन का सार

ता. २२-१२-५१

धर्म और राज्यशासन जीवन को व्यवस्थित करने में अपने अपने ढंग से काम करते हैं। राज्यशासन आदमी के जानवरपन को प्रगट नहीं होने देना चाहता जबकि धर्म आदमी में जानवरपन रहने नहीं देना चाहता। मनुष्यमें धर्म न हो तो अच्छे से अच्छे कानून व्यवस्था नहीं कर सकते। क्योंकि शासकों की ईमानदारी के बिना कानून बेकार है। यही कारण है कि अच्छेसे अच्छे राज्यपदों पर प्रतिष्ठित कराते समय धार्मिकता के आधार पर लोगों को कसम खाना पड़ती है। इसलिये जीवन में धार्मिकता लाना जरूरी है।

पर आज धर्म के नाम पर राष्ट्रों के या समाज के टुकड़े होगये हैं,

धर्म जोड़ने का काम छोड़कर तोड़ने का काम कर रहा है। पर इसका कारण धर्म नहीं, किन्तु धर्म में लगी हुई अहंकार की आग है। चन्दन ठंडा होने पर भी उसकी आग ठंडी नहीं होती। धर्म ठंडा होने पर भी अहंकार की आग लगने पर वह दूसरे पापों की तरह जलाने लगता है। इसलिए धर्म का उपयोग अहंकार के लिए न करना चाहिये, किन्तु प्रेम एकता सेवा आदि के लिए करना चाहिये।

हम जब पैदा होते हैं तब पैदा होने के पहिले सब धर्मों सब जातियों और देशों में से सबसे अच्छे धर्म जाति या राष्ट्र का चुनाव नहीं करते, न सब से अच्छा बाप ढूंढ़ते है, अकस्मात ही पैदा होजाते हैं तब इनके नामपर घमंड करने का क्या अर्थ है? हमें धर्म जाति राष्ट्र के पक्षपात से ऊपर उठकर ही सबके विषय में विचार करना चाहिये।

निष्पक्ष विचार करने पर हमें मालूम होगा कि सभी धर्म पूज्य हैं। भले ही किसी धर्म की कुछ या आधी, या आधी से भी अधिक बातें हम न मानें, फिर भी वह धर्म हमारे लिए पूज्य ही है। क्योंकि जिससमय वह पैदा हुआ था, वहां उससमय वह मनुष्य जाति को आगे ही लाया। उस देश-काल को देखकर ही हमें उसकी कीमत आंकना चाहिये। अर्जुन को आज भी हम बहादुर कहते हैं, हालां कि उसका धनुषबाण लेकर तोपों टैंकों या बमों के आगे लड़ने नहीं जाते। धर्म के बाहरी रूप देश काल के अनुसार बदलते रहते हैं। उनकी आत्मा ही अमर होती है। उसीपर हमें ध्यान देकर सब धर्मों में एक आत्मा का दर्शन कर सब का आदर करना चाहिये। और उनके बाहरी विधि विधानों को विवेक के छन्ने से छानकर स्वीकार करना चाहिये।

धर्मसमभाव का सन्देश प्रायः हर धर्म में पाया जाता है। हिन्दू धर्म तो हर जनता के सैकड़ों देवताओं का समन्वय करता है। विविधता में समन्वय का वह बहुत अच्छा नमूना है। गीता के अनुसार जगत की हर एक विभूति परमात्मा के तेज का अंश है। जगत् का अर्थ केवल भारतवर्ष नहीं है, सारे महाद्वीप या सारा ब्रह्मांड है, तब हिन्दू धर्म किस देश की विभूति से

इनकार कर सकता है ? और इसलाम तो क़ुरान के द्वारा खुले शब्दों में कहता है कि हर कौम और हर मुल्क के पैगम्बर अल्लाह के पैगम्बर हैं। तब मुसलमान भारत के पैगम्बरों से इनकार कैसे कर सकता है ? अगर लोग अपने धर्म के सच्चे अनुयायी बनजाँय तो भी उन्हें धर्मसमभावी बनना पड़ेगा। हां ! इतना अन्तर वे रखसकते हैं कि अपने धर्म के पैगम्बर या अवतार तीर्थंकर को वे बाप कहें और दूसरे धर्म के पैगम्बर अवतार आदि को चाचा काका आदि। इससे शिष्टाचार भी निभेगा, सचाई का पालन भी होगा। और सब धर्मों के स्वाद का आनन्द भी मिलेगा। मानव जाति सुखी होगी।

हमें यह भूलना न चाहिये कि धर्म मनुष्य जाति की भलाई के लिये है। अवतार आदि तभी होते हैं जब मनुष्य जाति दुखी होती है। इसलिये धर्म की कसौटी मनुष्य जाति की सुखशान्ति और भलाई है, अमुक दार्शनिक मान्यताएँ या विधिविधान नहीं। अगर ईश्वर मानकर मनुष्य सदाचारी नहीं बनता, ईमानदार नहीं बनता, सिर्फ पूजा आदि से खुश करके पाप करने की छुट्टी ही लेना चाहता है तो ईश्वरवादी भी नास्तिक ही है। ईश्वरवाद हो या अनीश्वरवाद हो, सब से हमें यही शिक्षा लेना है कि हम अंधेरे में भी पाप न करें। यही धर्म है। और इसी धर्म से हम ईश्वरवाद अनीश्वरवाद आदि सभी वादों का समन्वय कर सकते हैं। ऐतिहासिक परिस्थितियों तथा जीवन की उपयोगिता को ध्यान में रखकर अगर हम धर्मों पर नजर डालें तो हमें धर्मों में विरोध दिखाई न देगा। जुदे जुदे रोगियों को जुदी जुदी दवा देने से जैसे चिकित्सा में विरोध नहीं होता उसी तरह जीवन की चिकित्सा रूप धर्मों में भी विरोध नहीं है।

फिर भी हम इस परिस्थति को भुला नहीं सकते कि धर्मों ने हिन्द के टुकड़े किये हैं, और पूर्व आफ्रिका में भी यह आग लग चुकी है बल्कि धधक रही है। ऐसे लोग यहां काफी संख्या में हैं जो एकता को असम्भव समझते हैं। पर हिन्द के पुराने इतिहास पर नजर डालने से आपकी निराशा दूर होजायगी। हिन्द में एक दिन आर्य अनार्य एक दूसरे के खून के प्यासे

थे। शिवभक्त अनार्य शिवजीके बलपर विष्णुभक्तोंपर टूट पड़ते थे। और विष्णुजी अवतार लेकर शिवभक्तों को मारडालते थे। ऐसे वृत्तांत हिन्दू धर्मग्रंथों में भरे पड़े हैं। शिव और विष्णु या शैव और वैष्णव एक दूसरे के दुश्मन थे। पर आज शिव परम वैष्णव है विष्णु परम शैव है। एक दिन इस सम्मिलन को लोग असम्भव समझते थे पर हिन्दू धर्म के रूपमें वह सम्भव हुआ। आज हिन्दू धर्म इस्लाम ईसाई धर्म आदि के सम्मिलन को लोग असम्भव समझते हैं पर यह भी सम्भव होगा। फिर सम्भव असम्भव की चिन्ता क्यों करना चाहिये—हमें तो सत्य असत्य की चिन्ता करना है। जो सत्य है कल्याण-कर हैं वह कितना भी कठिन हो हमें उसके लिये कोशिश करना है। दुनिया में अगर सभी लोग सत्यवादी न बनें तो भी सत्य बोलने का ही प्रचार करना उचित है।

सत्यसमाज मानव के विकास में आशावादी है। संसार के सब धर्म समन्वित होकर एक होंगे, सब में एक जातीयता आयगी। मनुष्य मात्र का एक राष्ट्र होगा। पर इसके लिये प्रयत्न करना होगा। सत्यसमाज उसी प्रयत्न के लिये बनाया गया एक संगठन है। इसीलिये वर्धा में मैंने सर्वधर्म समन्वय को व्यावहारिक रूप देने के लिये एक सत्यमंदिर या धर्मालय बनवाया है जिसमें सब धर्मों की मूर्त्तियाँ एक वेदी पर हैं। नैरोबी में भी आप ऐसा एक मन्दिर बनवायें जिससे समन्वय व्यावहारिक रूप धारण करे। उदार बातों से ही काम नहीं चलता, उसके लिये कोई मूर्त्तिमन्त व्यवहार भी चाहिये। सत्यसमाज को आप समझें और उसकी योजना को अमल में लायें।

७– म्बाले में

नैरोबी से म्बाले आने के लिये भी बर्थ मिलने में काफी दिक्कत थी। पर श्री चेतनलाल जी के प्रयत्न से हल होगई। पहिले चार आदमियों के लिये तीन ही बर्थ मिले पर मौके पर चार के लिये चार बर्थ का पूरा केबिन रिजर्व होगया। नैरोबी से रवाना होते समय भी वीणादेवी की तबियत

कुछ खराब ही थी। सुधीर की भी ठीक न थी। पर केबिन रिजर्व होने से आराम करने में कोई दिक्कत न हुई। नैरोबी काफी ऊंचाई पर (करीब साढ़े-पांच हजार फुट) है पर आगे हमारी गाड़ी और उंचाई पर आड़ी-टेढ़ी होती हुई बढ़ रही थी। एक जगह तो कई मील का चक्कर लगाकर गाड़ी वहीं की वहीं कुछ उंचाई पर आगई। टेढ़ें तो इतनी थीं कि कई बार गाड़ी अंग्रेजी के एस (S) अक्षर की शक्ल में आजाती थी। इलाका पहाड़ी है। कभी कभी तो बादल किसी पहाड़ी की तलहटी में भरे हुए दिखाई देते थे। कहीं कहीं पहाड़ी नाले मिलते थे जिनके किनारे आफ्रिकन लोग नहाते धोते नजर आते थे। मालूम हुआ कि ये ही यहां की नदियाँ हैं। बड़ी नदियाँ यहां नहीं होतीं। इन नदियों की गहराई मुश्किल से तीनचार इंच होगी, और चौड़ाई तीनचार फुट। बीच बीच में आफ्रिकनों के गोल झोंपड़े, मक्की के छोटे छोटे खेत भी दिखाई देते थे। कहीं कहीं पहाड़ों के बीच में बड़े बड़े तालाब बनगये थे। इतनी हरियाली और ठंडक होने पर भी यहां के निवासी इतने काले क्यों हुए यह आश्चर्य की बात है! रास्ते में तो नव हजार फुट की ऊंचाई तक गाड़ी पहुंच गई थी पर नींद में हमें कुछ पता न लगा। यह ऊंची जमीन यूरोपियन लोगों ने अपने हाथ में करली है। यद्यपि वे उसका अभी उपयोग नहीं कर पाते परन्तु किसी गैरयूरोपियन को देने के लिये वे तैयार नहीं हैं।

सबेरे ६। बजे गाड़ी टोरोरो पहुंची। यह जंकशन है और इधर से म्बाले के लिये एक ब्रांच लाइन जाती है। पर जल्दी पहुँचने के लिहाज से श्री वल्लभदासजी दो मोटरें लेकर यहां आगये थे। म्बाले यहां से तीस मील है। टोरोरो के एक दो भाई भी स्टेशन पर हाजिर थे। उनके अनुरोध से उनके घर दूधचाय आदि का कार्यक्रम हुआ। वहां से मोटरों में बैठकर ८॥ बजे करीब म्बाले आगये। २५ दिसम्बर होने से बड़े दिन का त्योहार था। सैकड़ों की संख्या में आफ्रिकन स्त्री-पुरुष रंग-बिरंगी पोशाकें पहिनें पैदल या साइकिलों पर चर्च की तरफ जाते हुए दिखाई दिये। मालूम हुआ कि अस्सी फीसदी आफ्रिकन लोग ईसाई होगये हैं, कुछ मुसलमान होगये हैं, कुछ पुराने धर्मों में हैं। धर्म के नामपर भेदभाव की राह में बढ़नेवाली आफ्रिकन जनता

को सत्यसमाज की दीक्षा ही एक बना सकती है। रास्तेभर में इसी विचार में रहा।

म्वाले में ठहरने का स्थान पाटीदार समाज के विशाल भवन में किया गया था। यह इमारत इस नगर में सब से बड़ी मालूम हुई। यहां बोर्डिंग है, पब्लिक लाइब्रेरी है, विशाल व्याख्यान-भवन है। श्री जसभाईजी पटैल इसके मुख्य प्रबन्धक हैं। आप बैरिष्टर हैं, श्रीमान हैं, उदार तथा सुधारक हैं। वृद्ध होकर भी तरुणों सरीखा उत्साह रखते हैं। समाजसेवा में अपनी सारी शक्ति लगाते हैं।

बल्लभदासजी लालजीभाई के बड़े भाई हैं। म्वाले में उनका अपना बंगला है। खाने खिलाने के काफी शौकीन हैं। हम सबके भोजनादि की व्यवस्था यहां थी। लालजीभाई तो इस यात्रा के संचालक थे ही, जीवनलालजी भी अपना व्यापार-धंधा छोड़कर मुंबासा पहुंच । ये थे और तब से साथ ही थे। बल्लभदासजी भी पूरा सहयोग देरहे थे। तीनों भाइयों की सेवा, उनके कुटुंबियों की सेवा-परायणता, आदर, स्नेह आदि के कारण म्वाले घर सरीखा मालूम होने लगा था।

यों ही यहां पांच छः दिन रुकने का विचार था पर वीणादेवी की बीमारी ने और भी अधिक रुकने को विवश कर दिया। वीणादेवी और सुधीर दोनों ही मलेरिया के शिकार थे। १०२ या १०३ डिग्री तक बुखार आजाता था।

ज्यादा दिन रुकने के कारण यहां एक व्याख्यान माला की योजना बनाली गई थी। पेम्फलेट भी छपवाकर वितरण करा दिया गया था। तारीखवार मेरे इसप्रकार प्रवचन हुए। हर दिन लालजीभाई हारमोनियम पर सत्यसमाजी गीत गाते थे।

२५ दिसम्बर ५१ को व्याख्यानभवन में कुछ चर्चा तथा एक-दूसरे का परिचय हुआ। नगर के संभ्रान्त व्यक्ति उपस्थित थे। कुछ प्रश्नोत्तर भी हुए।

रात्रि में एक जगह रामायण-पाठ मंडली में प्रवचन किया, जहां इस बात पर प्रकाश डाला कि रामजी के जीवन से आज के लोग क्या शिक्षा लेसकते हैं। आर्य अनार्य मेल के लिये उनका प्रयत्न, गृहकलह न होनेदेने के लिये राज्यका भी त्याग, प्रजा की इच्छा के आगे अपने अधिकारों पर अपेक्षा, आदि उनके जीवन की विशेषता बताते हुए कहा कि अवतार को ईश्वर मानकर सिर्फ पूजा की सामग्री न बनाना चाहिये, किन्तु उसका अनुकरण करना चाहिये। अवतार पूजा कराने के लिये नहीं पर लोगों को जीवन का पाठ पढ़ाने के लिये होते हैं, इत्यादि।

ता. २६ से प्रतिदिन शाम को ५॥ बजे से प्रवचन हुए। पीछे से शंका-समाधान भी हुआ।

२६-१२-५१—धर्मों का इतिहास, विकास और समन्वय तथा सत्यमन्दिर की योजना।

२७-१२-५१-सभी धर्मों के महात्माओं के जीवन पर प्रकाश।

२८-१२-५१-प्रवासियों की समस्या का समाधान।

२९-१२-५१-धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष का जीवन में स्थान।

३०-१२-५१ विवेक। देव शास्त्र, गुरु और लोकाचार के विषय में विवेक की आवश्यकता।

३१-१२-५१ धर्म और विज्ञान का समन्वय।

१-१-५२ मानवमात्र की एक जाति, एक धर्म एक राष्ट्र की बात असम्भव नहीं है, वह होगी। आफ्रिका की परिस्थिति में सत्यसमाज का विशेष उपयोग आदि।

२-१-५२ जीवन एक कला है। इसपर प्रकाश डालते हुए सत्य-समाज के सिद्धांतों को व्यवहारिक रूप देने से किस प्रकार जीवन-कला में सफलता मिलसकती है, इसपर विवेचन किया।

पहिले पहल श्री शंकरभाई ने सत्यसमाज की अनुमोदक सदस्यता का फार्म भरा और आपने एक छोटासा भाषण देकर उपस्थित लोगों से सत्य-समाजी बनने की अपील की। इस सभा में ही चौदह सज्जनों ने सत्यसमाज के फार्म भरे।

रात्रि में लालजीभाई के संगीत का कार्यक्रम था। उस समय वयोवृद्ध बैरिष्टर जसभाईजी ने लालजीभाई की तारीफ की और सत्यसमाज के सिद्धांतों का सब को परिचय दिया।

बैरिष्टर श्री जसभाई जी पटेल का भाषण

प्यारे भाइयो तथा प्रिय विद्यार्थी गण,

आप लोगों को यह बताते हुवे बड़ा ही हर्ष होता है कि आपको अभी अभी शास्त्रीय संगीत सुनानेवाले श्री लालजीभाई आपके लिये कोई गैर नहीं हैं, वह आपके म्वाले के और आपके स्कूल के ही एक भूतपूर्व विद्यार्थी हैं, पिछले कुछ सालों से उन्होंने हिन्द में शास्त्रीय संगीत का अध्ययन किया और इस वक्त बेचरल आफ म्युजीक याने 'संगीत विशारद' की उपाधि प्राप्त कर जो गुण उन्होंने प्राप्त किया उसका प्रदर्शन अभी आपके सामने प्रदर्शित किया है। यह हुई उनके विद्यागुण की बात, लेकिन उससे भी एक और महत्व की बात है।

पिछले सात आठ दिनोंसे आपने पू. स्वामी श्री सत्यभक्त जी का प्रवचन सुना, आपने उस विश्वसंत के हृदयकी वेद ना सुनी होगी, इतने दिनों में उन्होंने आपको यह बात समझा समझा करके बताई कि विश्वका एक राष्ट्र, एक मानव जाति एक भाषा वगैरह कैसे बनसकता है। शैतानों और हैवानों ने आज इस स्वर्गोपम दुनिया को नरक बना रखा है उसे फिर किस तरह से

स्वर्ग बनाया जा सकता है। दुनिया में राष्ट्रीयता के नामपर, जातीयता के नामपर, संस्कृति और धर्म के नाम पर मनुष्य मनुष्य में जो भेद बनाये गये हैं उसको मिटाकर मनुष्य को कैसा मार्ग अपनाना चाहिये। ये सारी बातें पू. स्वामी जी ने आपको इतने दिन दरम्यान बताई—

उसमें भी सौभाग्य की बात यह कि पू. स्वामी जी यहां ऐसे मौके पर पधारे हैं जब कि एक धार्मिक कार्य के लिये आप सब एक प्रयत्न करके, ड्रामा खेल के म्वाले में एक मन्दिर बनाना चाहते हैं। ऐसे मौके पर पू. स्वामी जी ने आपको यह भली भांति बता दिया है कि धर्म मनुष्य के दिलों को जोड़ने के लिये होता है, तोड़ने के लिये नहीं, जातीयता के भेदभावों को भुलाने के लिये होता है, उसे बढ़ाने के लिये नहीं। पू. स्वामीजी के ऐसे उदार विचारों को ख्याल में रखकर सब काम आपको करना है। आज प्रत्येक काम, सारे विश्वपर नजर रखकरके ही किया जासकता है, और ऐसे कार्य ही अमर रह सकते हैं, जो कि सारी मानव जाति के लिये एक आदर्श और कल्याणकारी मार्ग बन सकें।

अन्त में आपको यह बताऊँगा कि इन लालजीभाई ने ही पू. स्वामी जी को यहां आने के लिये प्रेरित किया और स्वयं उन्हें लेकर यहां आये।

आफ्रिका में आने के बाद भी यह हम सबके लिये और सौभाग्य की बात है। चूं कि श्री लालजी भाई का कुटुम्ब तथा मकान यहाँ है इसलिये सीधे वह यहाँ आये और इसप्रकार पू. स्वामीजी का लाभ सर्वप्रथम हम सबको मिला।

आपके गांव का, आपकी स्कूल के एक भूतपूर्व विद्यार्थी आज ऐसे साधु, फकीर के साथ घूम घूम कर अपनी सेवाएँ देता है जो कि सारे विश्वको अपना घर समझता है, सब मनुष्य को अपने जातिका समझता है, सत्यको ही अपना धर्म समझता है, विश्व की सेवाको ही अपनी साधुता समझता है, दुनिया दुःखों को ही अपना दुःख समझता है।

आज हमारे आपके लिये यह गौरव की बात है और लालजीभाई की माफिक आप सबको ऐसे प्रत्येक कार्य में अपना हाथ बटाना है जिससे सारी मानव जाति का कल्याण होता हो। अन्त में हम लालजीभाई के इस भगीरथ पयत्न के लिये धन्यवाद के साथ शुभाशिष देते हैं।

८– प्रवासियों की समस्या

(म्वाले में दिये गये एक प्रवचन का सार)

भारतीयों के लिए विदेश-प्रवास की बात नई नहीं है। पुराने युग में जावा सुमात्रा तक भारतीय जाकर बसे थे और वहां राजवंश स्थापित किये थे। जैन शास्त्रों से तो साफ मालूम होता है कि फारस यहां के वैश्य समाज के व्यापार के लिए आन जाने-जाने की रोजमर्रा की जगह था। फिर भी बीच में ऐसा समय आया जब विदेश यात्रा पाप समझी जाने लगी और बहुत से लोगों को विदेश यात्रा के कारण जाति से निकलना पड़ा या कठोर प्रायश्चित्त लेना पड़ा। पर इस मूढ़ता पर भारतीयों ने विजय पाई है इसका प्रमाण आफ्रिका में बसे हुए लाखों भारतीय हैं। और पूर्व आफ्रिका में तो उनकी अवस्था काफी सन्तोषजनक कही जासकती है। यहां उनके पास धन भी है और इज्जत भी है।

फिर भी यहां उनके सामने संकट है जो धीरे धीरे निकट आरहा है। आफ्रिका मानव समाज की तीनों धाराओं का संगमस्थल है। यहां एशि-याई, यूरोपीय और आफ्रिकन लोग एकत्रित हुए हैं पर अभी इनका समन्वय नहीं होपाया है इसलिये संगम तीर्थ नहीं बनपाया है। तीनों में परस्पर विरोध हैं। आफ्रिकनों का तो यह देश ही है। यूरोपीय यहां शासक हैं। पर भार-तीयों के पास न शासकता है न देशीयता इसलिये इनके सामने यह समस्या है कि ये यहां किस हैसियत से रहें। अभी तक हिन्दुस्थानी लोग अपनी चतु-रता व्यापार दक्षता सेवा आदि के बलपर टिके रहे पर आगे कुछ अन्य सम-स्याएँ सामने आरही हैं।

जब तक भारत पराधीन था तब तक इसकी स्वतन्त्र नागरिकता नहीं थी। विदेश में ये ब्रिटिश नागरिक माने जाते थे। पर भारत के स्वतन्त्र होते ही भारतीयों की स्वतन्त्र नागरिकता होगई। अब पूर्व आफ्रिका की सरकार ने यहां हिन्दुस्थानियों के सामने यह प्रश्न रख दिया कि तुम या तो भारत के नागरिक रहो या पूर्व आफ्रिका के नागरिक बनो। अब तुम दोनों की नागरिकता नहीं रख सकते। अप्रेल सन् १९५२ तक इसका निर्णय भारतीयों को कर लेना है। इस विषय में बातचीत करने पर मुझे पता लगा है कि बहुत से लोग यहां की नागरिकता छोड़कर भारतीय नागरिक होने की घोषणा करने वाले हैं। क्योंकि उन्हें डर है कि यदि कभी यहां के लोगों ने इन्हें भगा दिया तो ये कहीं के न रहेंगे। भारत का द्वार इनके लिये बन्द होजायगा और यहां ये रह न सकेंगे तब कहां जायेंगे ?

पर मुझे यह रास्ता आत्मघातक मालूम होता है। भारतीयों के पास यहां करोड़ों की सम्पत्ति है। अच्छे अच्छे बंगले हैं दूकानें है पूंजी है। कई तो यहां जन्म से या २०-३०-४० वर्ष से रहते हैं। ऐसी हालत में यहां की नागरिकता छोड़ना एक तरह से सर्वस्व गमाने की तैयारी करना है इसलिये मेरा तो कहना है कि आप लोग बेखटके यहां के नागरिक बनजायँ। और ईमानदारी से पूरी तरह नागरिक बनजायँ। मेरी इन बातों पर विचार करें।

१— ज्यों ही आपने यह घोषित किया कि आप पूर्व आफ्रिका के नागरिक नहीं हैं त्यों ही आपको निकालने की और लूटने की तैयारी होने लगेगी। विदेशियों के पास जमीन मकान आदि स्थावर सम्पत्ति क्यों रहे। इन्हें नौकरी क्यों दी जाय आदि बीसों अड़ंगे डाले जायँगे। स्थायी रूपमें विदेशियों को रहने का अधिकार क्यों दिया जायगा। शासनतन्त्र में बोलने का अधिकार भी न रहेगा।

२— अगर भारत से कभी संघर्ष हुआ तो विदेशी के नाते भारतीय तुरन्त कैद कर लिये जायँगे और उनकी सम्पत्ति भी जब्त करली जायगी।

३— यहां के नागरिक बनजाने पर यहां से निकालने का किसी को

अधिकार न रहेगा। अगर कभी दुर्भाग्य से उन्हें निकालने की किसी ने कोशिश की और भारतीयों को निकलने के लिये विवश होना पड़ा तो भारत इतना निर्दय नहीं हो सकता कि इसप्रकार अपनी सन्तान को जगह न दे। उस दिन की आप चिन्ता न करें।

४—लड़की ससुराल में जब चली जाती है तब पीहर में उसका कुछ अधिकार नहीं रहता, सूतक भी ससुराल का लगता है, पर प्रेम का अधिकार बना रहता है, प्रवासियों की भी यही स्थिति है। भारत में राजनीतिक अधिकार भले ही न रहे पर धर्म समाज आदि की दृष्टि से प्रेम का अधिकार तो रहेगा ही जो किसी भी अवसर पर काम आयगा।

५—भारत के साथ धार्मिक सम्बन्ध का ही आप प्रदर्शन करें राजनैतिक सम्बन्धों का नहीं। आप यहां भारत के धार्मिक त्यौहार मनावें, धर्मदेवों और धर्मगुरुओं के चित्रादि रक्खें उनकी जयन्ती आदि मनावें, पर राजनैतिक व्यक्तियों की जयन्ती या राजनैतिक त्यौहार न मनावें, उनके चित्रादि को महत्त्व न दें। आप रक्षाबंधन दिवाली आदि मनावें, पर स्वतंत्रता दिवस नहीं। राजनीति में आप पूरी तरह पूर्व आफ्रिका के नागरिक के समान व्यवहार करें। और यहीं की राजनीति में दिलचस्पी लें।

६—आपकी आर्थिक स्थिति जैसी यहां है वैसी भारतमें नहीं रह सकती। भारत में आज अन्नका अभाव है, प्रतिमील ३०० आदमियों का बोझ है, व्यापार की भी दशा ठीक नहीं है, ऐसी हालत में वहां जाकर न तो आप अपनी भलाई कर सकते हैं, न भारत की।

७—यहां आपको आफ्रिकन लोगों से अच्छे सम्बन्ध रखना है और यूरोपीयों से भी विरोध नहीं करना है। इस मामले में चतुरतापूर्ण संगठित नीति की जरूरत है। यूरोपीयों के विरोध का परिणाम, डरबन की दुर्घटना की पुनरावृत्ति होगी, वे लोग ऊपर से तटस्थ रहकर भीतर से आफ्रिकन जनता को भड़काकर आपके सर्वनाश का प्रयत्न करेंगे। और आफ्रिकन जनता से

विरोध तो जिस डालपर बैठे उसी को काटने के समान होगा। आप इन दोनों से कुछ सामाजिक सम्बन्ध बढ़ाइये। अपने उत्सवों में यूरोपीयों को भी बुलाइये और शिक्षित आफ्रिकनों को भी, या कभी सब आफ्रिकनों को और कभी सब यूरोपियनों को। बारी बारी से दोनों के साथ सामाजिक और धार्मिक सम्बन्ध जोड़िये। सत्यसमाज का धर्मसमभाव का सिद्धान्त, उसका व्यावहारिक रूप, समभावी मन्दिर, सभी धर्मों के सम्मिलित उत्सव आदि इस विषय में आपकी काफी मदद कर सकते हैं। सत्यसमाज का जातिसमभाव भी उपयोगी है। मतलब यह कि दोनों तरह की जनता से आने-जाने का सम्पर्क बढ़ाइये। अवसर पर यह नीति काफी काम आयगी, और इससे आपकी स्थिति मजबूत तथा अच्छी होगी।

८—मुझे इस बात से बड़ा दुःख हुआ है कि पूर्व आफ्रिका में, खासकर केन्या में, हिन्दू मुसलमानों के सम्बन्ध काफी बिगड़ गये हैं और राजनीतिक क्षेत्र में एक दूसरे के काफी विरोधी होगये हैं। भूल किस की ज्यादा है और किसकी पहिली है इस विषय की चर्चा नहीं करता, पर दोनों को अपनी भूल समझकर एकता का प्रयत्न करना चाहिये।

हिन्द में हिन्दू मुसलमानों ने लड़कर देश के चार टुकड़े कराये, लाखों मरवाये, करोड़ों भगवाये और अर्बों की सम्पत्ति नष्ट की। इस दुर्दशा का बीज था पृथक निर्वाचन। अब यह विषबीज आपकी भूल से आफ्रिका में भी बोया जारहा है। एक बार पृथक प्रतिनिधित्व सहन किया जासकता है पर पृथक निर्वाचन तो सर्वनाश का ही बीज है, इससे बचिये। और दोनों फिर मिलने का रास्ता निकालिये। मैं किसी को मनाने या चापलूसी करने की बात नहीं कहता, परंतु सत्य और न्याय के आधार पर मिलने की बात कहता हूँ। सत्यसमाज में सत्य के आधार पर समभाव है, न्याय की मांग है, किसी की चापलूसी नहीं। आप दूरदर्शी बनकर अपने और सब के कल्याण के लिये प्रयत्न कीजिये।

हिन्द में तो हिन्दू मुसलमानों ने लड़कर देश का बटवारा करालिया, और दोनों ने अपनी अपनी जगह करने के लिये राज्य पा लिये, पर यहां तो आप देश का बटवारा नहीं कर सकते, यहां तो आप अपने ही सर्वनाश के लिये दूसरों के हाथ के अस्त्र ही बन सकते हैं। इसलिये इस तरफ ध्यान दीजिये। राजनैतिक समझौता और धार्मिक समन्वय कर अपने को संगठित बनाइये, अपना स्थान मजबूत बनाइये! किसी की कुनीति के शिकार न बनिये!

आप दृढ़ संकल्प कीजिये कि आपको इसी देश के नागरिक बनना है और मिलजुलकर रहना है। इसमें आपका और सभी का कल्याण है। सत्यसमाज के द्वारा आपको इस नीति पर चलने में काफी मदद मिलेगी।

९— टोरोरो (युगांडा) में

ता. ३-१-५२ की शाम को हम कार द्वारा टोरोरो आगये और वल्लभदासजी के निवास भवन में ठहरे। ये यहां प्रतिष्ठित श्रीमान हैं। धर्म में रुचि है। श्री कल्याणजी भाई ने अन्य व्यवस्थाओं में पूरी जिम्मेदारी से भाग लिया।

आते ही यहां ६ बजे से पब्लिक भाषण हुआ। जिसमें मैंने एकता और सत्यसमाज पर कहा। हिन्दू तो प्रसन्न हुए ही, पर एक मुसलमान भाई ने भी काफी प्रसन्नता प्रगट की। रात्रि में ९ बजे से डेरे पर भी एक मीटिंग हुई जिसमें मैंने ढाई घंटे तक प्रश्नों के उत्तर दिये जिससे लोग प्रभावित तो हुए ही साथ ही कुछ विचारों में भी क्रांति हुई।

ता. ४-१-५२ को भी शामको प्रवचन हुआ जिसमें संसार की सुखक्षमता विकासशीलता और इस कार्य में सत्यसमाज के उपयोग के बारे में कहा। रात्रि में फिर डेरे पर मीटिंग हुई जिसमें ९ बजे से १२ बजे तक प्रश्नों के उत्तर दिये। तब वल्लभदासजी बोले—टोरोरो जंक्शन होने से प्रायः सभी भारतीय प्रचारक यहां आकर जाते हैं, मैं लम्बे जमाने से यहां रहता हूं

पर आज तक आप सरीखे महान ज्ञानी नहीं देखे। और सब ने भी इसीसे मिलते-जुलते उद्गार निकाले।

यहाँ दो दिन ठहरने का ही कार्यक्रम था पर लोगों ने जाने न दिया। प्रवचन और चर्चा सुनने का लोभ तो था ही, पर अपने घर भोजन कराने का भी लोभ था। [illegible] थीं, फिर भी अन्तिम दिन दो घरों में भोजन करना पड़ा था। इस प्रकार लोगों के प्रेम के कारण यहां [illegible] दिन रुकना पड़ा।

ता. ५-७-५२ को दिनमें आसपासके स्थान घूमें। शामको प्रवचन हुआ जिसमें [illegible] पर कहा। रात्रिमें ९॥ से १२ तक चर्चा हुई। सत्यसमाज के सदस्य बने। इसप्रकार सत्यसमाज की स्थापना हुई। श्री वल्लभदासजी अध्यक्ष और श्री [illegible]दासजी मंत्री बने।

ता. ६ को भी बाहरी स्थान घूमें। शामको यहां के धर्मस्थान देखे। यहां अभी कोई मंदिर नहीं है पर दो जगह अलग कमरों में चित्रादि लगाकर वेदियाँ बनाई हैं जहां लोग प्रार्थना भजनपूजन आदि करते हैं। इसप्रकार एक सनातन धर्म मंदिर है, एक स्वामी नारायण मंदिर। स्वामी नारायण मंदिर में मैंने प्रवचन किया जिसमें बताया कि भजन पूजन आदि के द्वारा जीवन की पवित्रता की प्रेरणा लेना चाहिये, अन्यथा उसका कोई अर्थ न होगा। परमात्मा को केवल मीठे शब्दों से फुसलाया नहीं जा सकता। सनातन मंदिरवाले तो मेरे प्रवचन में हर दिन आते ही थे।

ता. ७ को भी शाम को प्रवचन तथा विस्तार से चर्चा हुई। कुछ संगम के ग्राहक बनाये गये। लोगों ने साहित्य भी लिया। सत्यसमाज के विषयमें उत्साह भी प्रगट किया।

१०—आफ्रिका में हिन्दुस्थानी

इतने दिनों में आफ्रिका में हिन्दुस्थानियों की परिस्थिति का काफी अध्ययन होगया था। उनकी आर्थिक स्थिति काफी अच्छी है, सभी बंगलों में रहते हैं अधिकांश के पास मोटरें हैं, सभी के घरों में आफ्रिकन नौकर हैं जो बर्तन कपड़े झाड़ने बुहारने का काम करता है। यूरोपियन लोग इनके प्रतिस्पर्द्धी हैं, और आफ्रिकनों को इनके विरुद्ध भड़काने की कोशिश करते हैं। उनके हाथ में राजसत्ता है इसलिये रौबदाब भी काफी है। वे अपने मकान भारतीयों से अलग बनाते हैं फिर भी ऐसा मालूम होता है कि भारतीयों के सामने यूरोपियन टिक नहीं सकते। और बहुत सम्भव है कि पूर्व आफ्रिका से यूरोपियनों को उखड़ना पड़े। इसका मुख्य कारण यह है कि यूरोपियन लोग प्रायः सरकारी अफसर बनकर ही यहां रहते हैं। न उनके खुद के मकान होते हैं न खुद का व्यापार, इसका फल यह होगा कि राजसत्ता बदलने पर उनको यहां से उखड़ना पड़ेगा।

कुछ यूरोपियन व्यापारी भी हैं, पर भारतीयों की अपेक्षा वे मुनाफा अधिक लेते हैं, इसलिये उनका काम जम नहीं पाता।

इसके सिवाय आफ्रिकनों के साथ उनका व्यवहार भी जरा कड़ा रहता है। व्यापारी होकर भी यूरोपियन यह नहीं भूलता कि वह शासक जाति का है इसलिये व्यापारी में जो प्रेमलता दिखाई देना चाहिये वह उसमें नहीं दिखाई देती। भारतीय व्यापारी किसी भी समय आवश्यक होनेपर आफ्रिकन को सौदा देगा, एक साथ बहुत से ग्राहक आजायेंगे तो भी सभी को साथ निवटाने की कोशिश करेगा, जब कि अंग्रेज व्यापारी उनको कड़ाई के साथ क्यू में खड़े होने को कहेगा और एक मिनिट की भी देरी सहन न करेगा। इन सब बातों से आफ्रिकन लोग यूरोपियन व्यापारी की अपेक्षा भारतीय को पसन्द करते हैं।

केन्या की अपेक्षा युगांडा में भारतीयों की स्थिति अधिक अच्छी है। केन्या में यूरोपियनों ने लाखों एकड़ अच्छी अच्छी-जमीन अपने हिस्से में लेली है और जमींदार बनगये हैं जब कि केन्या में मकान की जमीन के सिवाय भारतीयों के पास कोई जमीन नहीं है। नि.सन्देह केन्या में इस कारण से आफ्रिकनों में अंग्रेजोंके प्रति असन्तोष है और आफ्रिकन जनता उस जमीन की मांग कर रही है जो अंग्रेजों के पास बेकार पड़ी हुई है। कभी न कभी अंग्रेजों का इस जमीन का बहुभाग आफ्रिकनों को देना पड़ेगा फिर भी अंग्रेज लोग बहुत-से यूरोपियनों को खाली जमीनों में बसा लेंगे। और यन्त्र की सहायता से काफी खेती भी करा लेंगे। इसप्रकार केन्या में कुछ अंग्रेजों के बसे रहने की सम्भावना है। भारतीय यहां व्यापार के बलपर ही टिके रहेंगे।

युगांडा में हालत दूसरी है। यह एक रक्षित राज्य है जिसका राजा आफ्रिकन है जिसे यहां कबाका कहते हैं। यह मेंगों (कम्पाला) में रहता है। यद्यपि इसके हाथ में सत्ता कुछ नहीं है, सारा कारबार अंग्रेज करते हैं फिर भी कहने-सुनने को राजा यही है। पहिले इसके जरिये भारतीयों को हजारों एकड़ जमीन मिलचुकी है जहां वे गन्ने आदि की खेती कराते हैं, शक्कर की मिलें हैं और भी कारखाने हैं। इसप्रकार भारतीयों की जड़ यहां केन्या की अपेक्षा गहरी है। यद्यपि यूरोपियन लोग, खासकर ईसाई धर्मगुरु, आफ्रिकनों को भारतीयों के विरुद्ध भड़काते हैं और कभी कभी कुछ आफ्रिकन भारतीयों के विरुद्ध कुछ ऊधम भी मचा देते हैं पर ऐसी घटनाएँ अपवाद ही हैं। साधारणतः आफ्रिकनों का रुख अंग्रेजों की अपेक्षा भारतीयों से अच्छा है। इस विषय का एक दिलचस्प संस्मरण भारतीयों ने मुझे सुनाया।

एक बार एक आफ्रिकन सरदार से अंग्रेजों ने भारतीयों के विरुद्ध शोषण का आरोप लगाया। उस सरदार ने तुरन्त ही दस शिलिंग का नोट निकालकर एक नौकर को दिया और कहा कि किसी यूरोपियन दूकान से इसका कोई कपड़ा लेआओ। वह कपड़ा लेआया। फिर कहा इसी तरह का कपड़ा भारतीय की दूकान से लेआओ। नौकर वहां से भी कपड़ा लेआया,

पर भारतीय की दूकान पर उसे तीन शिलिंग कम देना पड़े। तब उस सरदार ने अंग्रेज से कहा कि देखा आपने कि कौन शोषण कर रहा है? अभी तो भारतीय व्यापारी हैं तब भी अंग्रेज इतना ठगते हैं जब भारतीय न रहेंगे तब न मालूम अंग्रेज यहां क्या करेंगे?

इससे पता लगता है कि भारतीयों की स्थिति अच्छी है। इससे अंग्रेज उन्हें मकान बनाने तक के लिये जमीनें देने में आनाकानी करते हैं। शहरों में घास के मैदान पड़े हैं जिनका घास जलाना पड़ता है पर वहां भारतीयों को मकान बनाने को जगह पाने में काफी दिक्कत होती है। फिर भी यहां किसी नगर का अर्थ होता है भारतीयों के बंगलों का समूह। अगर सरकार जमीनें दे तो भारतीय दूने मकान बनवा डालें।

फिर भी भारतीयों का भविष्य इतना ही अच्छा न रहेगा। धीरे धीरे आफ्रिकन व्यापारी भी तैयार हो रहे हैं जो नाममात्र के मुनाफे पर व्यापार करते हैं। आज नहीं तो कल वे व्यापार के सभी क्षेत्रों में प्रवेश पाजायँगे ऐसी हालत में भारतीयों को थोड़ी दिक्कत जायगी। फिर भी आफ्रिका में व्यापार उद्योग कृषि आदि का कार्य बढ़ाने की इतनी गुंजाइश है कि पीढ़ियों तक उनकी स्थिति काफी अच्छी बनी रहेगी। उनकी पूंजी तथा लम्बा अनुभव भी उनकी स्थिति सम्हालने में मददगार होगा। अंग्रेज यहां गमले के झाड़ हैं जो शासनसत्ता के जलसिंचन से हरे भरे बने हुये हैं जब कि भारतीयों ने अपनी जड़ें जमीन के भीतर फैलादीं हैं। भविष्यसंकट की सम्भावना अब भी है पर आशा है वे उससे पार होजायँगे।

आफ्रिका की जमीन

आफ्रिका की जमीन अभी कुमारी कन्या सरीखी है जिसकी सारी शक्ति सुरक्षित है और जिसके विकास करने की गुंजाइश है। अभी तक इस जमीन पर हल नहीं चला है। आफ्रिकन लोग हाथ से खोदखादकर केलों के वन लगा लेते हैं। कपास भी यहां काफी और अच्छी होती है। आम पपीते संत्रा मोसम्मी अनन्नास अमरूद आदि काफी परिमाण में मिलते हैं। वर्षा वर्ष

में कई बार और प्रायः सदा होती रहती हैं इसलिये सदा चारों तरफ हरियाली ही हरियाली दिखाई देती है। जंगल कहीं कहीं इतने घने हैं कि आदमियों का उनमें से गुजरना अशक्य-सा है। पहिले पढ़ा था कि यहां जंगल ऐसे पाये जाते हैं कि बन्दरों को छोड़कर उनमें से किसी का गुजरना कठिन है। बन्दर झाड़ों के ऊपर से ही गुजर सकते हैं। ऐसे घने जंगल रेल में से भी दिखाई दिये।

गायें यहां काफी होनेपर भी बैल का उपयोग कुछ नहीं होता। वह मारकर खालिया जाता है। अगर भारत सरीखे हल बखर का रिवाज यहां डाला जाय तो बैलों का भी उपयोग हो। और खेती भी विशाल परिमाण में होने लगे। पर आफ्रिकन लोग अभी बैलों से काम लेना नहीं जानते। अगर भारतीय किसानों को यहां बसने का अवकाश मिले तो वे यहां की खेती का काफी विकास कर डालें। अभी यहां की जमीन का सत्व निचुड़ा नहीं है इस-लिये खाद डालने की जरूरत नहीं पड़ती। हरएक झाड़ काफी बड़ा हो जाता है। घास भी यहां खूब बड़ा बड़ा होता है, जिसे जलाकर नष्ट करना पड़ता है। घास का यहां कोई मूल्य नहीं। भारत में जब कि पशुओं के लिये घास नहीं है तब यहां घास के लिये पशु नहीं हैं। करोड़ों की जनसंख्या बढ़-जाने पर भी यहां की जमीन को कोई बोझ न मालूम होगा।

यहां की सत्वशाली जमीन तथा ऋतु की विशेषता के कारण यहां फल-फूलों की बड़ी प्रचुरता तथा विशेषता है। पानी देने की यहां जरूरत नहीं पड़ती यहां तक कि यहां कहीं कुए भी नहीं हैं। शहरों में नल लगवाये हैं। जंगल में झरने तथा तालाब हैं। पानी का काम उन्हीं से चल जाता है, सदा वर्षा होती रहने से पानी की तकलीफ नहीं मालूम होती, न सिंचाई की जरूरत होती है। गन्ने को भी पानी नहीं देना पड़ता।

आम यहां बारह माह आता है। एक ही आम के वृक्ष में जहां बड़े बड़े आम लगे रहते हैं वहां नया मौर भी आता रहता है। ऐसा अद्भुत दृश्य देखकर चकित होजाना पड़ता है। आमों के नीचे आम पड़े रहते हैं पर कोई

उठानेवाला नहीं होता। हम लोग एक बाग में गये। वहां बहुत से आम के झाड़ थे जिनके नीचे भारत के कलमी आमों के बराबर बड़े बड़े आम पड़े हुए थे, जो कि कच्चे थे। झाड़ में कहीं कहीं पका आम भी दिखाई देता था। उसे गिराने के लिये हमने कच्चे आमों का उपयोग पत्थर की तरह किया। बेचारे आमों की यह दशा देखकर मुझे उन पर बड़ा तरस आया। भारत में ऐसे आम रुपये में तीन-चार के हिसाब से बिके होते। यहां वे पत्थर की तरह फल गिराने के काम में लाये जाते थे।

यहां पपीते भी खूब आते हैं और काफी बड़े होते हैं। जैसा पपीता वर्धा में रुपया बारह आने में मिलेगा वैसा यहां तीन-चार पैसे में मिलता है। मालूम होता है कि पपीते की कोई कीमत नहीं है सिर्फ लाने की मजदूरी दी गई है। एक पपीते का झाड़ मैंने इतना मोटा और ऊंचा देखा कि जिसकी मैं भारत में कल्पना भी नहीं कर सकता था। उस झाड़ की पींड़ (धड़) इतना मोटा था कि उसका घेरा पांच फुट था। और ऊपर जाकर उसमें ६–७ शाखाएं निकल पड़ी थीं। भारत में पपीते में इस प्रकार शाखाएं नहीं होतीं। मैंने दो चार बार ही वहां न-तीन शाखाएँ देखी हैं।

एक जगह ऐसी तीखी मिर्च देखी कि चखे बिना जिसके तीक्ष्ण तीखेपन की कल्पना न होती। वह मिर्च लवंग से छोटी थी। मैंने उसे दांत से काटकर तुरंत थूंक दिया, उसका कोई भी अंश खाया नहीं, पर जीभ से छू जाने के कारण ही घंटे भर तक मारा मुँह झन्नाता रहा। सुना कि कोई अगर वह मिर्च खाजाय तो रातभर बेचैनी के कारण सोना मुश्किल होजाय।

यहां एक गुलाब जामुन का बड़ा विचित्र झाड़ देखा। इसका फल पोला होता है पर खाने में मीठा होता है और खाने पर ऐसा लगता है कि गुलाब जल से भींगी हुई कोई सुगंधित चीज खाई है।

यहां फूलों की भी बहुतायत है। और ऐसे रंगे बिरंगे फूल होते हैं कि देखते रहने को जी चाहता है। स्टेशनों के प्लेटफार्म तो ऐसे फूलों से बहुत सुन्दर मालूम होते हैं। हां ! भारतीयों के शब्दों में ऐसे फूल विलासकी

होते हैं अर्थात् उनमें गन्ध नहीं होती। फिर भी आंखों को आनन्द काफी मिलजाता है।

यहां की मिट्टी ज्यादातर लाल है। पर कहीं कहीं मैंने इकदम काली और पीली मिट्टी भी देखी है।

गन्ना यहां बारह माह होता है। युगंडा में हजारों एकड़ जमीन में भारतीयों के द्वारा गन्ने की खेती की जाती है और उससे वे शक्कर भी बनाते हैं। भारत में शक्कर के कारखाने मौसम पर ही चलते हैं। और साल में बाकी समय बन्द रहते हैं। क्योंकि फसल के अमुक समय के सिवाय गन्ना नहीं मिल सकता। पर यहां बारह माह गन्ना निकलता है।

भारतीयों ने अपनी जमीन के कई भाग किये हैं। किसी भाग में गन्ना बोया जारहा है, तो किसी में बढ़ रहा है तो किसी में कट रहा है इस तरह सदा शक्करमिल को गन्ना मिलता रहता है।

यहां ऋतुओं का सुन्दर समन्वय हुआ है। कहीं कहीं तो हाल यह है कि सुबह शीत ऋतु सरीखी ठंड पड़ती है, दुपहर को गर्मी की ऋतु के समान गर्मी, और शाम को वर्षा। ऋतुओं का समन्वय और जमीन के ससत्व होने के कारण यहां का उत्पादन देखकर जमीन को बार बार चूमने को जी चाहता है। अगर मनुष्य में मनुष्यता, विश्वकुटुम्बिता का भाव हो, रंगराष्ट्र का भेद न हो, तो अफ्रिका की भूमि स्वर्गावतरण के अवकाश से अधिक उपयुक्त है।

बस्तियाँ

यूरोपीयों की बस्तियाँ अलग हैं जिनमें भारतीय अपने बंगले नहीं बनवासकते। भारतीयों की बस्तियाँ अलग हैं यहां आफ्रिकन लोग अपने मकान नहीं बना सकते। पर शहर का मुख्य भाग यही होता है। यहीं बाजार होते हैं। बैंक आदि भी यहीं होते हैं। आफ्रिकन लोग जंगल में या गांवों में अपनी झोंपड़ियाँ बनाकर रहते हैं। इनकी झोंपड़ियाँ अनाज रखने के ढोले के समान बिलकुल गोल रहती हैं। अनाज के लिये भी वे ऐसे ही

ढोले बनाते हैं। फर्क इतना ही, कि झोपड़ियाँ ढोले से बड़ी होती हैं और जमीन पर रहती हैं उनमें एक द्वार होता है जब कि अनाज के ढोले लकड़ी के खंभों पर कुछ ऊंचे बनाये जाते हैं और झोपड़ियों से छोटे होते हैं। अब कोई कोई आफ्रिकन चौकोन झोपड़ियाँ भी बनाते हैं। कोई कोई पक्के मकान भी बनाने लगे हैं।

भारतीय लोग बंगलों में रहते हैं। जो बिलकुल आधुनिक ढंग के होते हैं। सुन्दर दीवानखाना शयनागार स्नानागार भोजनालय भंडार नौकर का कमरा आदि सभी की व्यवस्था अच्छी होती है। सभी घरों में अच्छा फर्नीचर होता है। रेडियो, नल और बिजली भी सभी के घर में होते हैं। आंगन भी काफी बड़ा हरएक घर में होता है। रंगीन सिमिट का सुन्दर फर्श स्नानागार में गर्म पानी और ठंडे पानी के नल, आदि सब आधुनिक ढंग के होते हैं। पानी बिजली के करेन्ट से गर्म किया जाता है जिसकी टंकी स्नानागार में ऊपर रहती है। यहां दुमंजिले मकान कुछ कम होते हैं। मकान के लिये प्लाट काफी बड़े १००×१०० या १००×१५० के मिलते हैं इसलिये दुमंजिला बनवाने की जरूरत नहीं होती। पर छप्पर के नीचे लोहे की जाली में सिमट का एक इंच मोटा ऐसा फर्श-सा बनादिया जाता है कि यही मालूम होता है कि यह ऊपर के मंजिल की छत है। यह काम यहां बहुत ही सुन्दर होता है। भारत में ऐसा सिलिंग नहीं देखा जाता। खिड़कियाँ भी बड़ी सुन्दर होती हैं। लोहे के सीकचे कलापूर्ण ढंग के तो होते ही हैं साथ ही बाहर क ओर मोटे कांच के किवाड़ लगे होते हैं और भीतर की ओर जाली के किवाड़। जाली के किवाड़ में दुहरी जाली लगी रहती है। एक मोटी जाली मजबूती की दृष्टि से, और पतली जाली मच्छर रोकने के लिये। नीले कपड़े के पर्दे रहते हैं। दरवाजे काफी फेन्सी और मजबूत होते हैं। दीवारें सिमिट की होती हैं या ईंट चूने की। इनमें खूटियाँ रखने का रिवाज नहीं है। भारत में हजारों में एकाध घर इस ढंग का होता है जब कि यहां प्रायः सभी भारतीय ऐसे ही बंगलों में रहते हैं।

छाता यहां किसी के घर में नहीं देखा। वर्षा सदा होनेपर भी लोग इसका उपयोग नहीं करते। क्योंकि वर्षा की झड़ी नहीं लगती। थोड़ी देर में रुक जाती हैं। मोटरों में आना जाना होने से भी छाता नहीं लगता।

यहां की सरकार भी अच्छे मकान बनाने के लिये विवश करती हैं। ३० फीसदी जमीन खाली छुड़वाती हैं, अब आधी जमीन खाली छुड़वाने का नियम हैं। दीवाल की मोटाई, उसमें कितनी सिमिंट पड़ेगी, किस प्रकार कमरे बनेंगे, उनमें कितनी खिड़कियाँ रहेंगी, मकान में कितना रुपया लगाया जायगा आदि सब बातों की सूचना, मकान के नक्शे के साथ बनाकर देना पड़ती है। सरकार जब नकशा पास कर देती है तब कोई मकान बनवासकता हैं। अगर कोई गड़बड़ी करे तो सरकार बनी हुई दीवारें गिरवा देती हैं। प्रायः सभी मकान ठेकेदारों से बनवाने का रिवाज हैं।

यूरोपीयों के बंगले कुछ दूर दूर होते हैं। जो बाहर से भारतीयों के *बंगलों के समान ही मालूम हुए।*

यहां भारतीयों का रहन रहन यूरोपीयों के समान ही हैं। उनके भवन तथा सड़कें आदि सुंदर स्वच्छ और विशाल हैं।

सस्ताई और महँगाई

आफ्रिका में भी सभी देशों की तरह महंगाई बढ़ी हैं। कई बातों में बहुत अधिक बढ़ी हैं। फिर भी भारत की अपेक्षा अभी यहां खाद्य-सामग्री सुलभ और सस्ती हैं। अच्छा शुद्ध गाय का घी दो सवा दो रुपये पौंड मिल-जाता है। गेहूं का आटा भी दो सेर से ऊपर है। केला पपीता आम अनन्नास मोसम्मी संत्रा आदि काफी सस्ते हैं। बम्बई में जो लाल केला एक रुपया दर्जन मिलता है वह यहां दो ढाई आने मिलजाता है। अन्य फल भी सस्ते हैं जिनके बारे में पहिले लिखचुका हूँ। पेट्रोल एक रुपये ग्यारह आने गेलन मनचाहा मिलजाता है। भारत में घासलेट का करीब वही दाम है।

फिर भी यहां मजदूरी महँगी है वेतन अधिक देना पड़ता है। भारतीय लोग साधारण मजदूरी नहीं करते, मुनीमी मास्टरी आदि करते हैं। इनका कम से कम वेतन तीन सौ रुपया माह होता है अर्थात चार-पांचसौ शिलिंग महीना। भारतीयों का जो यहां जीवनस्तर है उसे देखते हुए यह वेतन यहां कम ही समझा जाता है। होश्यार आदमी को सात-आठसौ या हजार शिलिंग मासिक वेतन देना पड़ता है। मकान भाड़ा दो-ढाई सौ शिलिंग महीना निकल जाता है। पुराने मकान जिनके पास हैं वे जरूर साठ-सत्तर शिलिंग भाड़े के मकानों में रहते हैं पर उसी ढंग के नये मकानों का भाड़ा दो-तीनसौ शिलिंग मासिक देना पड़ता है। मकान प्राप्त करने के लिये कभी कभी चार-पांच हजार शिलिंग पगड़ी भी देना पड़ती है। और मकान मालिक भी यह पगड़ी लेते हैं। कभी कभी यह पगड़ी चालीस हजार शिलिंग तक पहुंच जाती है।

भारतीयों के लिये मकानभाड़े का काफी खर्च है। और प्रायः हर भारतीय के घर में एक आफ्रिकन नौकर रहता ही है उसका वेतन ४५–५० शिलिंग मासिक होता है। बचा-खुचा खाने को भी दिया जाता है। यह खर्च भी अनिवार्य सा है।

भारत से खाद्य सामग्री सस्ती होने पर भी नौकर यहां अपेक्षाकृत अधिक वेतन लेते हैं। ४५ से ६० शिलिंग (३० से ४० रुपये) लेलेते हैं फिर भी उनके शरीर पर चिथड़े ही दिखाई देते हैं। मजदूरी भी हर जगह अधिक है। मुम्बासा बन्दरगाह से हिन्दू यूनियन तक ठेलेमें हमारा सामान लेजाने के उपलक्ष्यमें १४ शिलिंग देना पड़े थे। स्टेशनपर कुली भी शिलिंगों से मजदूरी लेते हैं फिर भी उनके शरीर पर चिथड़े रहते हैं। इसका मुख्य कारण शराब का व्यसन है।

प्रायः हर आफ्रिकन शराब पीता है भारतीय भी काफी संख्या में शराब पीते हैं। करोड़ों शिलिंगों की शराब इंग्लेण्ड से आती है। हल्की शराब यहां भी बनती है। इस कारण अन्न-सामग्री सस्ती होने पर भी मजदूरी महँगी है।

आफ्रिकन स्त्रियाँ नगरों में मजदूरी नहीं करतीं, जंगल में अपने झोंपड़ों में रहती हैं अपनी खेती की देखरेख करती हैं। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ अच्छी और कीमती पोशाक पहिनती हैं। रंग बिरंगी चटकदार पोशाक वे काफी पहिनती हैं। वे रेशमी कपड़ों का व्यवहार भी काफी करती हैं। ऐसा मालूम होता है कि पुरुष अपनी स्त्रियों को सजाने का ध्यान अधिक रखते हैं। उनका वेतन शराब में और स्त्रियों के कपड़ों में अधिक खर्च होता है।

यहां भारतीय नारी महँगाई से काफी असन्तुष्ट है। उसके मुँह से यह उद्‌गार बार बार निकलता है—

आफ्रिकानी कमाणी।
आफ्रिकामां समाणी॥

अर्थात् आफ्रिका की कमाई आफ्रिका में समाप्त होजाती है। फिर भी भारत की अपेक्षा वह यहां काफी सम्पन्न और सुखी है। यह वह भी स्वीकार करती है कि महँगाई तो है पर कमाई के आगे वह अखरती नहीं है। एक श्रीमान भाई ने तो यहां तक कहा था कि ऐसा सम्पन्न देश छोड़कर इंडिया में मरने कौन जायगा? (भारतीयों के मुंह से यहां भारत शब्द नहीं निकलता है इंडिया शब्द ही निकलता है। स्त्रियाँ भी इंडिया इंडियन आदि ही बोलती हैं।)

भोजन

आफ्रिकन लोग ज्यादातर मटोकी खाते हैं। यह एक कच्चा केला है जो कभी नहीं पकता। इसके छिलके निकालकर उबालते हैं फिर नमक मिलाकर खाते हैं स्वाद लेने की दृष्टि से एक घर में मैंने यह उबलवाया था। खाने में फीका तो था, पर बुरा नहीं मालूम हुआ। दूसरा तरीका इसके छिलके सहित केले के पत्ते में लपेटकर भाफ से पकाना है। यह उससे अच्छा होता है।

आफ्रिकन लोग अब भारतीयों और यूरोपीयों के सम्पर्क से सब कुछ खाने लगे हैं। पर इसका असर उनके शरीर पर अच्छा नहीं हुआ है।

उनकी सहिष्णुता घटी है। यद्यपि अभी भी काफी है। आफ्रिकन आदमी तीन आदमियों का भोजन एक दिनमें खासकता है और न मिले तो तीन दिन तक भूखे रहकर काम कर सकता है।

युगांडा में मच्छर काफी थे जो सफाई के कारण बहुत कम हो गये हैं इससे मलेरिया भी घटा है। पर जब मच्छर अधिक थे तब भी आफ्रिकनों का वे कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते थे। वे जंगलों में नंगे पड़े रहते थे। सम्भव है अब इतनी सहिष्णुता उनमें न रहे। पर साथ ही इतनी सहिष्णुता की उन्हें जरूरत भी न रहेगी।

भारतीयों का भोजन काफी अच्छा होता है। घी दूध तेल शाक सब्जी शक्कर आदि प्राय: हर एक के घर में व्यवहार में लाये जाते हैं। वहां बाजार में गेहूँ नहीं आटा मिलता है जो मैदा के समान होने से कुछ भारी होता है।

भारत में खाने का समय हमारे लिये भिन्न था। हम सदा सुबह सात बजे दूध, १० बजे भोजन, फिर शामको ५॥ बजे भोजन करते थे। पर यहां सुबह दूध चाय के साथ नाश्ता, दुपहर में एक बजे भोजन, और रात में ८-६ बजे भोजन किया जाता है। दिन में १ या दो बजे भोजन करने से हम शामको ५ बजे भोजन कर न सकते थे, और रात में भोजन करते नहीं थे इसलिये दिन में एक बार ही भोजन करने लगे। नाश्ता करने की आदत न होने पर भी कुछ दिन बाद से कुछ नाश्ता लेने लगे। शाम को कुछ फल दूध लेते थे।

भोजन परोसने का रिवाज यहां नहीं है। सब लोग भोजन को बैठ जाते हैं और सब तरह की सामग्री बीच में रख दी जाती है। दूसरे हाथ से इच्छानुसार लोग लेते रहते हैं। सामग्री हाथों हाथ इधर से उधर जाती आती रहती है। बीचबीच में नया-नया सामान रसोई घर में से आता है। जूते यहां चौके में या भोजन के स्थानपर आते रहते हैं। कुछ लोग जूते पहिने भोजन कर लेते हैं।

दिनचर्या

भारत में जिसप्रकार दूकानदार सुबह से रात के ९–१० बजे तक व्यापार में जुना रहता है वैसा यहां नहीं जुता रहता। यहां सारा कामकाज शामको साढ़े पांच बजे बन्द होजाता है। और सब लोग फुरसत में होजाते हैं। साधारणतः लोग सुबह जल्दी उठकर स्नानादि से निवृत्त होकर नाश्ता करते हैं और नव के पहिले काम पर निकल जाते हैं। फिर एक बजे भोजन को आते हैं फिर दो बजे चले जाते हैं। बारह के बाद दो बजे तक करीब दूकानें बन्द रहती हैं। दो के बाद ५॥ बजे तक फिर काम होता है। ५॥ बजे से सब आफिस और सारा बाजार बन्द होजाता है। सिर्फ कुछ होटल वगैरह खुले रहते हैं। भारत में बाजार शामको ही जोर से भरते हैं जब कि यहां बिलकुल खाली होजाते हैं। सभाओं का समय यहां आम तौर पर पौने छः बजे रक्खा जाता है। ५॥ बजे काम बन्द करके लोग सीधे सभा में आते हैं या सिनेमा जाते हैं, कोई घूमने जाते हैं। ज्यादातर मोटर में घूमते हैं। पेट्रोल सस्ता है, मोटर दो-तीन घर के बीच में एक रहती ही है। जरूरत पड़ने पर पड़ोसियों से मोटर सरलता से मिल सकती है।

घूम फिरकर लोग लौटते हैं, खाना खाते हैं, रेडिओ सुनते हैं, फिर सोजाते हैं। इस प्रकार काम के समय काम, आराम के समय आराम, ऐसा व्यवस्थित जीवन है। बाजार का समय बंधा होने से किसी का नुकसान नहीं होता क्योंकि खरीदने वाले उस समय में ही खरीद लेते हैं।

नारियों की दिनचर्या भारत सरीखी ही है। रसोई का काम वे करती हैं। बर्तन कपड़े, झाड़ना आदि का काम नौकर करता है। कपड़ों पर इस्त्री हर दिन की जाती है। गर्मी बिजली से लीजाती है। नौकर का बहुतसा समय इसी काम में जाता है। सब मिलाकर उसे काफी काम करना पड़ता है।

टेक्स

पूर्व आफ्रिका में काफी टेक्स हैं। सब से विचित्र टेक्स है मुंडकर। हर कमाऊ आदमी को एक तरह से जिन्दे रहने का टेक्स देना पड़ता है। जंगल में रहनेवाले आफ्रिकन को भी २५ या ३० शिलिंग हर साल देना ही पड़ते हैं। भले ही वह बिलकुल बूढ़ा ही क्यों न हो। घर में जितने पुरुष हों हर एक को टेक्स अलग अलग देना पड़ता है। बच्चों पर यह टेक्स नहीं है। न कमानेवाली स्त्री पर भी नहीं।

भारतीयों को यह टेक्स प्रत्येक व्यक्ति के हिसाब से साठ-साठ शिलिंग देना पड़ता है। बीस शिलिंग का टेक्स शिक्षण के लिये देना पड़ता है। इसप्रकार फी आदमी अस्सी शिलिंग सालाना टेक्स है। ऐसा ही टेक्स यूरोपियनों को देना पड़ता है। इतना अधिक मुंडकर संसार में कहीं न होगा।

सम्भवतः इस टेक्स की शुरुआत का कारण यह होगा कि आफ्रिकन लोग किसी के यहां मजदूरी करने को राजी न होते होंगे। जंगल में खाद्य-सामग्री काफी थी तब क्यों मजदूरी करने जाते। परन्तु जब उनपर टेक्स लगाया गया तब टेक्स के लिये शिलिंगों की उन्हें जरूरत पड़ी। और शिलिंगों के लिये मजदूरी करना पड़ी। फिर शिलिंगों से चीजें मिलने लगीं इससे उनका लोभ बढ़ा। इस प्रकार इस मुंडकर ने आफ्रिकन लोगों को काम का आदमी बना दिया। अब सरकार की आमदनी का यह सब से बड़ा जरिया बनगया है इसलिये वह स्थायी होगया है।

नगरों में जमीन का टेक्स भी यहां काफी है। जमीन का दाम भी सरकार काफी लेती है साथ ही सालाना टेक्स भी काफी होता है। जमीन के प्लाट का पांच छः सौ शिलिंग सालाना टेक्स होता है।

इनकम टेक्स आदि भी यहां काफी हैं।

सरकार का व्यापार

यहां सरकार व्यापारी भी है और इससे उसकी आमदनी उस क्षेत्र के सब व्यापारियों की मिली-जुली आमदनी से भी अधिक होजाती है। बहुतसा विदेशी व्यापार सरकार ही करती है। आफ्रिकन लोग कपास पैदा करते हैं। वे कण्ट्रोल भाव पर भारतीयों को बेंचते हैं। भारतीय लोग जीनप्रेस द्वारा बिनोले निकालकर गांठ बँधवाते हैं। फिर कण्ट्रोल भाव पर सरकार उनको लेलेती है। फिर सरकार काफी मुनाफे से रुई का विदेशों के लिये निर्यात करती है। कभी कभी सरकार दुगने-तिगुने दामपर बेंचती है। सरकार की आमदनी का यह भी एक जरिया है।

कभी कभी कोई कोई यूरोपियन कण्ट्रोल भाव को लेकर भारतीयों के विरुद्ध आफ्रिकनों को भड़काते हैं। सरकारी कण्ट्रोल होने से भारतीय लोग कण्ट्रोल भावसे आफ्रिकनों से कपास खरीदते हैं, तब कई यूरोपियन, खासकर पादरी, उन्हें भड़काते हैं कि इंडियन लोग तुम्हें बहुत कम दाम देते हैं। पर अब आफ्रिकन लोग भी असलियत समझ गये हैं इसलिये ऐसी बातों से वे लोग नहीं भड़कते। क्या ही अच्छा होता कि मानवता की तीनों धाराएँ मिल-जुलकर यहां काम करतीं। एक दूसरे को भड़काने की कोशिश न करें किन्तु तीनों मिलकर काम करें तो सभी का भला हो। अपनी योग्यता और सेवा के अनुसार तीनों की यहां जरूरत है, काफी गुंजाइश है। मेरी इच्छा सबके समन्वय की है, प्रेम और ईमान का सन्देश देने की है।

११-जिंजा में

ता. ८-१-५९ को सवेरे छः बजे जिंजा के लिये गाड़ी पकड़ना थी। सुभीता तो मोटरकार से आने में ही था परन्तु पिछले दिनों अतिवर्षा के कारण रास्ते में मीलों तक पानी भरा था इसलिये रेल से आना ही ठीक समझा। बहुत जल्दी करने पर भी हम लोग जब पहुंचे तब गाड़ी आचुकी थी। हमें सेकिण्ड क्लास के पूरे कम्पार्टमेंट की जरूरत थी जो गाड़ी में कहीं खाली न था।

तब गार्ड ने फर्स्टक्लास का एक छोटा कम्पार्टमेंट खाली करा दिया। दिन होने से सोने की जरूरत नहीं थी इसलिये आराम से गुजर होगई। रास्ता रमणीय था। मीलों तक फैले हुए केले के खेत, सुन्दर फूल, जमीन को अंधेरे से ढके हुए घोर वन, पानी से प्लावित सिर से ऊंची घनी वनस्पतियों से परपूर्ण मीलों लम्बी चौड़ी जमीन, क्षितिजतक दिखाई देने वाले मीलों लम्बे गन्ने के खेत आदि सभी दृश्य मोहक थे। खूब सस्ते केले सन्त्रे पपीते स्टेशनों पर मिलते थे। नाश्ते के लिये यह सब बहुत बढ़ियाँ सामग्री थी।

दिनको १२॥ बजे हमारी गाड़ी जिंजा पहुँची। गाड़ी दस मिनिट पहिले पहुंची जब कि साधारणतः दस-बीस मिनिट लेट ही पहुंचा करती थी। घर की मोटर होने से प्रायः सब लोग समय पर ही आते हैं। इसलिये प्लेटफार्म पर स्वागत के लिये किसी को न पाकर कुछ आश्चर्य हुआ। परन्तु दस मिनिट रुकनेपर स्वागत वाले आगये। स्टेशन से मोटर में रवाना होनेपर स्वागत वालों की दूसरी भी मोटर मिली। हम लोग लालजी भाई के भानेज श्री हरिलालजी जोगिया के बंगले पर ठहरे।

जिंजा युगांडा के दूसरे नम्बर का शहर है यहां हिन्दुस्थानियों की जनसंख्या करीब दस हजार है। यह संसार की सबसे बड़ी झील विक्टोरिया झील के किनारे बसा है। इसे मीठे पानी का समुद्र कहना चाहिये। इसमें स्टीमर चलते है जो युगांडा, केन्या, और टांगानिका के दूसरे शहरों को जाते हैं। जिंजा के किनारे यह झील पर्वतों में घुसी हुई है इसलिये समुद्र के समान दिखाई नहीं देती परन्तु नौकाएँ जब आगे बढ़ती हैं तब समुद्र के समान दिखाई देने लगती है।

नील नदी की जन्मभूमि

नील नदी संसार की विख्यात नदियों में से है। मिश्र देश के लिये यह प्राण के समान है। यह विक्टोरिया झील से निकलकर युगांडा में बहती है फिर सूदान में प्रवेश करती है। सूदान के इस किनारे से उस किनारे तक

उसके अन्तस्तल को प्लावित करती हुई सैकड़ों मील बहकर मिश्र में प्रवेश करती है। मिश्र में तो यह देवी की तरह पूजी जाती है। इसे मिश्र की ही नहीं आफ्रिका की गंगा कहना चाहिये। गंगा के जल में जो पवित्रता और कृमिहीनता है वह तो संसार की किसी नदी में नहीं है पर विशालता लोक-हितैषिता पूज्यता में नील नदी गंगा से कम नहीं है। जिंजा इसकी जन्मभूमि है। वास्तव में तो कहना यह चाहिये कि नील नदी के उद्गम के पास यह शहर बसाया गया है। मैंने बड़ी श्रद्धा और आनन्द के साथ नील नदी का उद्गमस्थान देखा।

यहां के पत्थर देखने से पता लगा कि ये साधारण पत्थर नहीं हैं पत्थर मिली हुई लोहे की शिलाएँ हैं। इस कारण यहां रेत नहीं दिखाई देती।

नदियों के उद्गमस्थान मैंने बहुत कम ही देखे हैं। ज्यादःतर नदियाँ पहाड़ों से निकलती हैं और अपने जन्मस्थान में मामूली नाली या नाले सरीखी होती हैं। ताप्ती नदी का उद्गम मैंने देखा है। यह मूलतापी के एक तालाब से निकली है पर उद्गमपर एक नाली के समान है जो गर्मी के दिनों में सूखी पड़ी रहती है। पर नील नदी तो गर्भ से ही श्रीमन्त है। वह संसार के सब से महान सरोवर की कन्या होने से गर्भ श्रीमन्त कहने लायक ही है।

झील से जन्म लेते समय यह चौड़े प्रपातों के रूप में गिरती है। जिससे दिग्दिगन्त शब्दायमान होजाते हैं। पैदा होते समय से ही यह जिस प्रकार भीषण तांडव नृत्य करती है, उसे अगर निकट से थोड़ी देर तक देखा जाय तो चक्कर आजाय। आसपास काफी दूर तक जलकण भाफ की तरह हवा में फैल जाते हैं।

इस प्रपात में आत्महत्या करके या आकस्मिक रूप में कई आदमी मर चुके हैं। इसलिये आजकल प्रपात के पास किसी को जाने नहीं दिया जाता। इसलिये हमने भी पहिले दिन काफी दूर से ही प्रपात देखा। यद्यपि

उसकी विशालता तथा भीषणता का अन्दाज तो लग गया परन्तु उसके सौंदर्य का तथा भीषणता का पूरा दर्शन नहीं हुआ। फिर दूसरे दिन भी नीलोद्गम भूमि के दर्शन के लिये गये। कलकी तरह आज भी दो मोटरकारों में हम लोग १०-१२ आदमी थे। आज पहिरेदार से किसी तरह अनुमति लेकर उद्गम के पास पहुंचे। और बड़ी देर तक जगह जगह से उस भीषण सौंदर्य को आंखों से पीते रहे।

भेड़ाघाट पर नर्मदा का विश्वविख्यात प्रपात देखा है। निःसन्देह उसका सौंदर्य अद्भुत है और संगमर्मर के खड़े पहाड़ों ने तो उसके दृश्यों को और सुन्दर तथा भयंकर बनादिया है। पर नर्मदा वहां किशोरी है अर्थात् अपनी जन्मभूमि से काफी दूर आचुकी है जब कि जिंजा में नीलनदी नवजात शिशु की हालत में है। इस अवस्था में यह जितनी महान है जैसी अठखेलियाँ करती है उसे देखकर हृदय आनन्द से भर जाता है। शैशव में ही यौवन का उन्माद दिखाई देता है। वास्तव में इसे देवी कहना उचित ही है। देवियाँ जन्म से ही युवतियाँ होती हैं। तभी तो यह जन्म के समय ही अपने नृत्य से यौवन का उन्माद दिखलाती है। इसके कई प्रपात बनगये हैं। बीच के प्रपातों पर जो भयंकर रूपमें विशाल परिमाण में पानी उछलता है तब ऐसा मालूम होता है कि देवी अपने तांडव नृत्य के समय अपना लहँगा उछाल रही है। सचमुच बड़ा विशाल और अद्भुत दृश्य है।

नीलोद्गम से थोड़ी दूर चलकर एक बांध बनाया जारहा है। जिसका बजट चार अरब रुपयों का है। यह बांध सन् १९५५ तक तैयार होनेवाला है इससे जो कृत्रिम प्रपात बनेंगे उनसे इतनी बिजली मिलेगी जो सारे पूर्व आफ्रिका के काम आयगी उस समय यह बड़ा औद्योगिक नगर बनजायगा।

बांध बांधते समय थोड़ी देर को यह नदी रोक दीजायगी। पत्थर के बड़े-बड़े खम्भे बनाकर नदी की धारा में गिरा दिये जाते हैं। १९ ता. को उसपार जाकर यह सब देखा। यहां भी नदी का दृश्य अद्भुत और भयंकर

है। यों नदी का रोकना है तो बड़ा कठिन, क्योंकि उसका रुका हुआ पानी चारों तरफ फैलकर तबाही मचासकता है पर यहां उद्गम के स्थानपर रोकना इतना कठिन नहीं है, क्योंकि हजारों मील की झील कुछ समय तक रुके हुए पानी के समाने के लिये काफी है। बांध बँधजाने पर नील नदी उद्योगों की जननी भी बन जायगी।

किबोका

विक्टोरिया झील में एक विचित्र प्राणी पाया जाता है जिसे किबोका कहते हैं। इसे बिना सूंड का पानी का हाथी कहना चाहिये। इसके पैर छोटे होते हैं इसलिये यह हाथी बराबर ऊँचा नहीं होपाता अन्यथा कलेवर इसका हाथी सरीखा ही होता है। चमड़ा इसका इतना मजबूत होता है कि इसपर गोली का या भाला आदि का कोई असर नहीं होता। चमड़ा मोटा भी होता है और मजबूत भी। यहां तक कि इसके चमड़े को काटकर हाथ में लेने की मजबूत स्टिक बनाई जाती है। इसीसे इसकी मजबूती और मुटाई का पता लग सकता है। सिर में गोली लगने से ही यह मरता है बाकी शरीर पर गोली का कोई असर नहीं होता।

इतना मजबूत और विशाल होनेपर भी यह बहुत सीधा होता है। किसी को सताता नहीं है। हां! अगर पानी में इसके साथ छेड़खानी की जाय तो यह नाव को टक्कर मारकर उलट सकता है। पर ऐसी घटनाएँ प्रायः होती नहीं हैं।

इतना मजबूत और विशाल जलचर होनेपर भी यह मांस नहीं खाता। घास खाता है। और चरने के लिये रात में झील के किनारे जमीन पर आजाता है। बीच बीच में छोटे-छोटे द्वीप पाये जाते हैं जिनमें कोई नहीं रहता, घना जंगल ही उनमें है वहां भी चरने के लिये किबोका पहुंचते हैं। पानी में कोई घास हो तो वह भी खाते हैं।

आदमियों के डर से दिन में यह बाहर नहीं निकलता किन्तु काफी

रात होनेपर झुंड के झुंड बाहर निकलते हैं। और जिंजा निवासी अपनी मोटरों पर बैठ-बैठकर रात में किबोका दर्शन को जाते हैं।

एक दिन मैं भी कुछ अन्य लोगों के साथ झील के किनारे गया। दो मोटरें साथ में थीं। सन्ध्या का समय था। दिन का उजेला था। इतने में एक किबोका बाहर निकला। हम सबने दिन में ही किबोका देखा। कुछ लोगों ने कहा कि हम बीस वर्ष से यहां रहते हैं पर दिन में कभी किबोका नहीं देखपाये, पर आज आपके साथ दिन के प्रकाश में किबोका देखने को मिला। पर सब उसके पास जाने को दौड़े इसलिये वह पानी में चला गया।

झील में मगर आदि बहुत हैं इसलिये झील के पानी के पास कोई नहीं जाता। नहाना आदि की तो बात ही दूर है। पर किबोका को मगरों का क्या डर, वह शाकाहारी होनेपर भी मांसाहारी जलचरों का राजा है। किबोका नाम भी कबाका से मिलता-जुलता है, यहां राजा को कबाका कहते हैं। ये किबोका आफ्रिका के दूसरे भागों में भी पाये जाते हैं। जिंजा में तो पार्क में भी घूमने और चरने निकल जाते है। इंडियन पार्क में रात के समय झुंड के झुंड किबोका देखे जासकते हैं।

जिंजा में प्रचार कार्य

मेरे साथ न तो साम्पदायिकता थी जिससे कहीं जाते ही उस सम्प्रदाय के लोगों का सहयोग मिलजाता, न मैं किसी श्रीमान का मेहमान था कि उसके व्यक्तित्व और साधनों का प्रचार में उपयोग होता, और न कोई राजनैतिक पद का महत्व या सहयोग था जिससे लोग जल्दी सहयोग देने लगें, इसलिये किसी शहर में एक दो दिन सभा वगैरह की योजना में ही निकल जाते थे। इधर प्रचारकों के बारे में भ्रम इतना है कि यों ही ऐसी बातों से लोग उदासीन होगये हैं। इस कठिन परिस्थिति में आफ्रिका में सत्यप्रचार कार्य करना पड़ा। कर्मयोग ही सब से बड़ा सहारा था।

हम लोग ता. ८-१-५२ को जिंजा आगये थे पर पहिला प्रवचन हुआ ११ ता. को । ९ ता. को पेम्फलेट छपा जिसमें १० ता. से पांच दिनतक प्रवचनों का कार्यक्रम छपाया गया था । पर १० ता. को काफी वर्षा होती रही इसलिये उस दिन का प्रवचन न होसका । इसके बाद ११ ता. से १५ ता. तक प्रतिदिन प्रवचन तथा चर्चा सभाएँ हुईं । कार्यक्रम का संक्षिप्त विवरण यह था ।

ता. ११-१-५२ शामको ६ से ७। तक प्रवचन किया । मुंबासा नैरोबी म्बाले टोरोरो की अपेक्षा उपस्थिति अधिक थी । विषय था " आफ्रिका में एशियाइयों की समस्या " .

ता. १२-१-५२ । विषय-क्या धर्म लड़ाते हैं । धर्म समभाव पर प्रकाश डाला । उपस्थिति कल से अधिक थी । उसके बाद दो मील पैदल घूमा । साथमें यहां के प्रतिष्ठित और शिक्षित व्यक्तियों का समूह था । रास्ते भर काफी चर्चा हुई जिससे विविध विषयों पर प्रकाश पड़ा ।

ता. १३-१-५२ । विषय-दुनिया एक कैसे बने । प्रवचन के बाद प्रश्नोत्तर हुए, उसका अच्छा असर पड़ा ।

चर्चा में आफ्रिकन लोगों के बारे में, कांग्रेस, हिन्दू संस्कृति, गृह कलह आदि पर काफी विस्तार से विवेचन किया ।

ता. १४-१-५२ को वैरिष्टर भट्टजी के साथ यहां के दोनों स्कूल देखे । छ ब सौलह सौ भारतीय बालक-बालिकाएँ पढ़ते हैं । स्कूल शानदार हैं । किताबें और स्टेशनरी स्कूल की तरफसे दीजाती है । हेडमास्टर एक सिक्ख हैं, जो बाहरी वेषसे ही सिक्ख हैं यों बातोंसे काफी धर्मसमभावी मालूम हुए । यहां उर्दू भी पढ़ाई जाती है, हिन्दी शुरु होने वाली है । गुजराती मुख्य है , अंग्रेजी तो राज्यभाषा होने के कारण सर्वप्रधान है ही । मास्टरों की कमी

भी काफी जरूरत है ।

हेडमास्टर श्री लालसिंह जी ने कहा कि भारत से यदि योग्य मास्टर यहां आयें तो सरकार पांचसौ शिलिंग महीना देगी । रहने के लिये मकान की व्यवस्था भी करेगी । पांच वर्ष बाद देश जाने के लिये सारे कुटुंब के आने जाने का सेकिण्ड क्लास का किराया तथा पांच माह की छुट्टी देगी ।

आफ्रिका में भारतीयों का रहन-सहन का जो तरीका है उसे देखते हुए पांचसौ शिलिंग कम ही हैं, पर इसमें गुजर अच्छी तरह होसकती है । भारतमें शिक्षित लोग जैसे बेकार हैं उसे देखते हुए वे यहां आयें तो इससे सभी का भला है ।

आमको पार्क में ' समाज का कायाकल्प ' पर प्रवचन किया । जिसमें सत्यसमाज के सिद्धान्त और उसकी संघटना समझाई गई ।

प्रतिदिन की तरह ८॥ से १०॥ तक आनन्द कोटेज में चर्चा हुई । जिसमें प्रश्नों के अनुसार आर्य-अनार्य सभ्यता, मोहन जोदड़ो, मिश्र यूनान आदि के सम्बन्ध में कहा, प्राणिशास्त्र का विवेचन भी किया । सत्यमन्दिर आदि के विषय में भी कहा ।

ता. १५-१-५२ ' विवेकी कैसे बनें ' इस विषय पर विवेचन किया । इसमें शास्त्र और देवों की परीक्षा कैसे करना आदि पर विवेचन किया । अन्धविश्वासों पर प्रहार किया ।

घूमते समय भी चर्चा हुई ।

रात्रि में आनन्द कोटेज में आत्मा परलोक स्वर्ग नरक प्रेतवाद आदि पर काफी विवेचन किया गया । सत्यसमाज का प्रवेश-पत्र समझाया । कुछ मेम्बर बने ।

ता. १६-१-५२ को प्रवचन में गुरुओं तथा लोकाचार के बारे में प्रकाश डाला । सद्गुरु की जरूरत तथा ढोंगी गुरुओं का विवेचन किया । लोकाचार के सुधार की बातें भी कहीं ।

घूमते समय आज कुछ और सम्भ्रान्त व्यक्ति थे । कुछ प्रश्नों के उत्तर दिये ।



जिजा में नील नदी के तटपर
स्वामी सत्यभक्तजी व जीवनलालजी

रात्रिमें ८॥ से १०॥ तक आनन्द कोटेज में प्रश्नों के उत्तर दिये जिसमें आत्मवाद परलोक द्वैत-अद्वैत आदि पर कहा। सत्यसमाज के बारेमें भी कहा गया।

ता. १७-१-५२ को प्रवचन में धर्म अर्थ काम मोक्ष पर विवेचन किया। पीछे सत्यसमाज पर विवेचन किया। कुछ सदस्य बनें।

घूमते समय भी प्रश्नों के उत्तर दिये।

रात्रिमें आनन्द कोटेज में प्रश्नों के उत्तर दिये। तथा चारों योगोंपर विवेचन किया।

ता. १८-१-५२ को शामको हिन्दू महिला मण्डल के व्याख्यान भवनमें महिलाओं के सामने सवा घंटा प्रवचन हुआ; जिसमें जातिपांति के बन्धन ढीले करने, रूढियों की परीक्षा करने, धर्मसमभाव आदि पर विवेचन करके नारियों की विशेष जिम्मेदारी पर जोर दिया।

इसके बाद ६ बजे से प्रतिदिन की तरह आमसभा में प्रवचन किया। जिसमें संसार को सुखमय और विकासशील मानकर नया संसार बनाने की प्रेरणा की।

एक बहिन की इच्छा के अनुसार राम और कृष्ण के जीवन पर नये ढंग से विवेचन किया।

इसके बाद घूमने गये। आज और भी अधिक आदमी साथ थे। महाभारत के समय की समाज व्यवस्था, डार्विन का विकासवाद, चन्द्रलोक की यात्रा, उसकी सम्भवता असम्भवता, तारों की दूरी आदि बातों पर प्रश्नों के अनुसार विवेचन किया।

लौटकर आनन्द कोटेज में प्रतिदिन की तरह चर्चा हुई, जिसमें प्रश्नों के अनुसार भूत-पिशाच, मन्त्र-तन्त्र हिंसा-अहिंसा आदि के बारे में विस्तार से

विवेचन किया।

ता. १९-१-५२ को हाइस्कूल में प्रवचन हुआ। उसमें धर्मसमभाव मानव की एकता, विद्यार्थियों पर नये संसार के रचना की जिम्मेदारी आदि पर विवेचन किया। एक विद्यार्थी ने इसलाम का दूसरे धर्मों से कैसे मेल होसकता है इसपर प्रश्न पूछा। इसके उत्तर में वास्तविक इसलाम क्या है, उसके मूर्त्ति-विरोध का क्या रहस्य है आदि विस्तार से विवेचन किया।

तीसरे पहर यहां के मामी (जिंजा जिले के आफ्रिकन राजा) के सेक्रेटरी, एक बाई और एक भाई के साथ मिलने आये। पहिले यहां के एक सत्यसमाजी श्री लालजीभाई पट्टनी ने दुभाषिये का काम किया, फिर बैरिष्टर भट्टजी आगये उनने दुभाषिये का काम किया और मेरे विचार समझाये। सेक्रेटरी आदि ने बहुत प्रसन्नता प्रगट की। सत्यसमाज का फार्म लिया। और आफ्रिकनों को सत्यसमाजी बनाने की इच्छा प्रगट की।

शाम को डेरे पर ही १०॥ बजे तक चर्चा हुई जिसमें जैन बौद्धों की काफी बातोंका खुलासा किया।

१२—आफ्रिकन और भारतीय

युगांडा में आफ्रिकन लोग केन्या की अपेक्षा कुछ अधिक विकसित हैं। क्योंकि इनके राजघराने अभी तक चले आरहे हैं। राज्य संचालन का काम भी ये लोग करते हैं। बहुत से लोग अंग्रेजी पढ़लिखकर इंग्लेण्ड वगैरह भी हो आये हैं। भारतीयों से दर्जी का बढ़ई का तथा अन्य कार्य सभी प्रान्तों के आफ्रिकनों ने सीखलिये हैं, राजनैतिक चेतना भी काफी पैदा होगई है। अब व्यवहार भी बदलगया है यद्यपि आफ्रिकन लोग अभी भी भारतीयों के घरों में मजदूरी करते हैं पर अब उनकी दीनता घटती जारही है। और यथाशक्य बराबरी का भाव उनमें पैदा होता जारहा है और बहुत जगह जैसे को तैसा जवाब देने की वृत्ति पैदा होगई है।

शाकभाजीवाले आफ्रिकनों के पास जब कोई आफ्रिकन कोई चीज खरीदने जाता है तब उसे सेन्ट में देदेते हैं परन्तु जब कोई भारतीय आता है तब बीस सेन्ट मांगते हैं। जब इसकेलिये उनसे कुछ कहा जाता है तब वे साफ कहते हैं कि तुम भी हमारे साथ ऐसा ही व्यवहार करते हो ? तुम भारतीयों की अपेक्षा हमसे भी ज्यादा दाम लेते हो।

ऐसी छोटी बातों से उनकी जाग्रत चेतना का पता लगता है। अब समय आगया है कि उनके साथ समभाव से व्यवहार किया जाय। भारतीयों ने अपने व्यवहार में काफी परिवर्तन किया है। धीरे धीरे और भी करेंगे ऐसी आशा है। यह बात निश्चित है कि अब आफ्रिकनों के साथ घृणा करके आफ्रिका में नहीं रहा जासकता। उनके साथ प्रेमल और समतापूर्ण व्यवहार करना ही उचित है।

निःसन्देह आफ्रिकनों में चोरी आदि का दोष काफी आगया है। पहिले ये लोग काफी ईमानदार थे पर विदेशियों की संगति तथा सिनेमा आदि ने इन्हें खूब चोर बनादिया है। घर में ये चोरी करते हैं, खिड़की में से लकड़ी डालकर भीतर के कपड़े चुरा लेजाते हैं। तिजोरियाँ तक उठा लेजाते हैं। मोटर की चीजें भी लेजाते हैं। यद्यपि कम लोग ऐसी चोरियाँ करते होंगे परन्तु बदनाम काफी होगये हैं। अब इन बढ़ते हुए कुसंस्कारों को रोकने की जरूरत है। यह कार्य प्रेम आत्मीयता शिक्षण संस्कार आदि से पैदा किया जासकता है। इस तरफ इसी तरह ही ध्यान देना चाहिये।

आफ्रिकनों में कुछ बहुत पिछड़े वर्ग भी हैं। वे मनुष्यभक्षी भी हैं। जिंजा के एक सज्जन ने मुझसे कहा कि उनके एक भाई को जंगल में आफ्रिकनों ने मारकर खालिया था। उनका विचार था कि भारतीयों में अक्ल बहुत होती है अगर हम उन्हें मारकर खालेंगे तो उनकी अक्ल हममें आजायगी। खैर! उसे अक्ल तो न मिली फांसी मिली, पर उससे उनके भोलेपन को समझा जासकता है। पर ऐसे जंगली लोग बहुत कम हैं। आफ्रिकनों में कुछ लोग ऐसे भी हैं जो मुर्दे को न जलाते हैं न गाड़ते हैं पर स्वयं खाजाते हैं।

पर ये सब अतीत की बातें होती जारही हैं। अब आफ्रिकनों में सभ्य शिक्षित कलाकार उदार आदि उच्चगुणी व्यक्ति काफी संख्या में दिखाई देरहे हैं। सब तरह का व्यापार भी ये लोग करने लगे हैं। इसलिये अभी तक भारतीयों ने जो मनचाहा मुनाफा उठाया है यह भविष्य में न उठा सकेंगे। उनकी आर्थिक स्थितिपर इस बात का प्रभाव पड़ेगा। फिर भी अभी पीढ़ियों तक भारतीय अच्छी स्थितिमें रह सकते हैं। क्यों कि आज जो उनने पूंजी कमाली है उसका असर बहुत समय तक जायगा। और भारत में आकर वे जितने सम्पन्न रह सकते हैं उससे अधिक सम्पन्न यहां रह सकेंगे। इतना होने पर भी भारतीयों को बदली हुई परिस्थिति का सामना करना है। इस बात को यहां के भारतीय समझते भी हैं।

हर हालतमें मैं चाहता यही हूँ कि भारतीय यहां के स्थायी निवासी होजायँ। और जितने अधिक भारतीय यहां आसकें आजायें। इसके चार कारण हैं—

१—आफ्रिका में खाली भूमि अभी काफी है। इसलिये आर्थिक दृष्टि से यहां जनसंख्या काफी खपसकती है। और भारत की अपेक्षा अधिक आराम से रह सकती है।

२—भारत के ऊपर जनसंख्या का बोझ काफी है। उसे कम करने के लिये भी भारतीयों का विदेशों में बसना आवश्यक है। आफ्रिका इसकेलिये सब से अधिक उपयुक्त क्षेत्र है।

३—आफ्रिका के वर्तमानरूप के निर्माण में भारतीयों का काफी हाथ है। भारत की अपेक्षा वे यहां की भूमिके साथ काफी घुलमिल गये हैं। और अपने बन गये हैं।

४—एक मानव समाज के निर्माण के लिये इस तरह भिन्न-भिन्न नस्लके लोगों में सहयोग और सम्मिलन आवश्यक है।

हां! विदेशी बनकर यहां चिरकाल तक नहीं रहा जासकता।

इसके लिये यहां के लोगों के साथ राजनैतिक सांस्कृतिक तथा कौटुम्बिक आत्मीयता पैदा करना भी जरूरी है।

१—राजनैतिक दृष्टि से यहां के भारतीयों को आफ्रिका के पूरे नागरिक बनजाना चाहिये। भारत के साथ धार्मिक तथा सांस्कृतिक सम्बन्ध ही रखना चाहिये।

२—यहां के लोगों के साथ धार्मिक सम्बन्ध स्थापित करना चाहिये। यूरोप के लोगों ने आधे से अधिक आफ्रिकनों को ईसाई बन लिया है, मुसलमान भी काफी बने हैं, पर हिन्दू कोई नहीं बना। बनना कठिन भी है। और अब इसका अवसर निकल गया है। पर इससे आफ्रिकन समाज छिन्न-भिन्न ही होनेवाला है। जब कि हमारा ध्येय सबमें एकता लाना है। ऐसी हालत में अगर कोई ऐसा कार्यक्रम रक्खा जासके जो हिन्दू मुसलमान ईसाई आदि सभी के लिये अपना हो तो इन बिछुड़ी हुई शक्तियों को फिर मिलाया जासकता है और आत्मीयता का सम्बन्ध कायम किया जासकता है।

३—भारतीयों के जरिये आफ्रिकनों का क्या लाभ हुआ है इसका ढंग से प्रचार होना भी जरूरी है। आफ्रिकन लोग जो आज हर एक कला में और व्यवसाय में निष्णात हैं वह सब भारतीयों ने ही उन्हें सिखाया है, इसका भान कराना जरूरी है जिसमें आफ्रिकनों में कृतज्ञता जगे। कुछ मिशनरी लोग उनमें कृतघ्नता जगाने की कोशिश करते हैं। यहां तक कि वे सिखाते हैं कि भारतीय लोग जो तुम्हारे लिये दान करते हैं उसमें उनका क्या उपकार हैं क्योंकि सौ कमाकर दो दान करने से भी ९८ की लूट रह जाती ही है। इस तरह दोनों में वैर बढ़ाने की कोशिश की जाती है। इसका सभ्य प्रतिकार होना चाहिये और यह बताना चाहिये कि इस सम्मिलन से दोनों का उपकार हुआ है। भारतीयों के आने के पहिले आफ्रिकनों के पास जो था आज उससे ज्यादा है। पर वह समझना तभी सम्भव है जब कोई सांस्कृतिक स्थान ऐसा हो जहां वे भारतीयों के सम्पर्क में आवें।

४—आफ्रिकनों के भोलेपन से जो अधिक लाभ उठाया जाता है

वह बन्द करना चाहिये। और ऐसा असर डालना चाहिये कि उन्हें विश्वास होजाय कि उन्हें ठगा नहीं जाता, उचित व्यापार ही किया जाता है।

५– सर्वधर्म-जाति-समभावी सत्यसमाज में स्वयं शामिल होकर और उन्हें भी शामिल करके दोनों में सांस्कृतिक एकता का सूत्रपात करना चाहिये। जगह जगह सत्यमन्दिर बनवाकर वहां एकता की प्रयोगशाला चलाना चाहिये।

६– जो भारतीय आफ्रिकन स्त्रियों के साथ सम्बन्ध कर लेते हैं उन्हें पूरी तरह अपनाये रहना चाहिये। इतना ही नहीं उनके ऐसे कार्यों से आफ्रिका में भारतीयों की स्थिति मजबूत होती है इसकेलिये उन्हें धन्यवाद भी देना चाहिये। यथाशक्य ऐसे सम्बन्धों को उत्तेजन भी देना चाहिये।

विद्वेष का इलाज

आफ्रिका में कुछ यूरोपियन प्रचारक आफ्रिकनों को भारतीयों के विरुद्ध भड़काया करते हैं। उन्हें बताते हैं कि भारतीय लोग तुम्हें लूटते हैं और उनने बहुत कुछ तुम्हें लूटा है।

आफ्रिकन जनता हर तरह पिछड़ी जाति रही है। उसकी कमजोरियों का सबसे अधिक लाभ यूरोपियनों ने उठाया है। और भारतीयों ने भी उठाया है। पर इस तरह भड़काने से आफ्रिकनों का कोई लाभ नहीं। परस्पर द्वेष से दोनों का नुकसान है। दोनों में सोहार्द पैदा करने के लिये आफ्रिकनों के मनमें यह भ्रम न पैदा होने देना चाहिये कि भारतीय तुम्हारे दुश्मन हैं और उनके आने से इस देश का या तुम्हारा नुकसान हुआ है। इसी दृष्टि से मैंने एक प्रवचन जिंजा में किया था उसका सार यह है :—

इसमें सन्देह नहीं कि भारतीय यहां त्यागी और परोपकारी बनकर नहीं आये, वे धन कमाने आये थे और जितना मौका मिला उतना धन उनने कमाया। अब उनका यह भी कर्तव्य है कि वे आफ्रिकन जनता की भलाई के

लिये कुछ विशेष करें। परन्तु यह कहना भी ठीक नहीं कि उनने आफ्रिकनों को लूट लिया है। जिस समय भारतीय यहां आये थे उस समय आफ्रिकन लोग नंगे रहते थे, मटोकी खाते थे, झोपड़ियों में रहते थे। ऐसी हालत में भारतीय उनसे क्या लूटते ? आफ्रिकनों के पास लंगोटी भी नहीं थी जो लूटी जाती, भारतीय मटोकी खाते नहीं कि वह लूटते, न उनकी झोपड़ियों को लूटा है न उनकी जमीन छीनी है।

और जमीन की आफ्रिका में कमी नहीं है। आज भी लाखों एकड़ जमीन खाली पड़ी है। यूरोपीयों ने व्यर्थ ही उसपर अधिकार कर लिया है भारतीयों के पास ऐसी जमीन नहीं है। इसलिये भारतीयों के द्वारा आफ्रिकनों के लुटने की बात व्यर्थ है।

हां ! विदेशियों के आने पर आफ्रिकनों को मजदूरी अवश्य अधिक करना पड़ी है, या यों कहना चाहिये कि व्यवस्थित मजदूरी करना पड़ी है। और उसका फल विदेशियों ने अधिक उठाया है। पर इससे आफ्रिकनों की भी उन्नति हुई है। आफ्रिकन लोग आज साइकिलों पर दौड़ते हैं अच्छे कपड़े पहिनते हैं, स्त्रियां तो तितली की तरह पोशाक पहिनती हैं, मच्छरों का कष्ट घटा है, आने जाने के सुभीते बढ़े हैं, वे पढ़-लिख भी गये हैं, बढ़ई सोनी मोची स्थापत्य आदि के काम तो उन्हें भारतीयों ने ही सिखा दिये हैं कइयों ने अच्छे मकान भी बनवा लिये हैं इसप्रकार दूसरों ने जहां आफ्रिकनों के परिश्रम का लाभ उठाया है वहां आफ्रिकनों का विकास भी हुआ है। इस-प्रकार इस परस्पर सहयोग का स्वागत ही करना है। ज्यों-ज्यों आफ्रिकन जनता शिक्षित होती जायगी त्यों-त्यों शोषण घटता जायगा और बराबरी के आधार से सहयोग बढ़ता जायगा। और उनका दिनदूना विकास होगा। आफ्रिकनों के मन में जो एकांगी प्रचार किया जारहा है उसके उत्तर में यह दूसरा पक्ष भी उन्हें समझाना चाहिये। जिससे दोनों में सौहार्द बढ़े और विद्वेष का इलाज हो।

१३– कम्पाला में

जिंजा सत्यसमाज का केन्द्र बनने लायक स्थान था। इसलिये कुछ दिन और रुकना था। यहां भी भोजन के निमन्त्रण रजिष्टर में लिख लिये जाते थे, और बहुत से निमन्त्रण बाकी थे, पर लौटते समय जिंजा फिर रुकना ही था, सार्वदेशिक सत्यसमाज सम्मेलन का निमन्त्रण भी यहां ही हो, ऐसा विचार भी चल रहा था और फरवरी के अन्तिम सप्ताह में कम्पाला मसाका म्बरारा आदि का दौरा समाप्त कर यहीं आजाना था इसलिये कुछ जल्दी ही कम्पाला के लिये प्रस्थान कर दिया।

ता. २० जनवरी ५२ को शामको ४। बजे जिंजा से रवाना हुए। श्री हरिभाई जी जोगिया अपनी मोटर में कम्पाला पहुचाने आये। आप मोटर चलाने में बड़े तेज मालूम हुए। प्रायः साठ मील की रफ्तार मे आपने मोटर चलाई। यहां सड़क बहुत अच्छी और चिकनी है इसलिये इतनी तेज रफ्तार में भी धक्के नहीं लगते थे, न मोटर उछलती मालूम होती थी।

आफ्रिका वनश्री से सर्वत्र सुशोभित है। गगनचुम्बी सीधे झाड़ों की शोभा दर्शनीय है। रास्ते में चाय के खेत भी देखे। दस मील तक घोर जंगल भी मिला जहां कोई वस्ती नहीं थी। घना जंगल होने से जिसका धरातल दिन में भी अंधकार-पूर्ण था। मालूम हुआ कि रात में यहां से निकलना बड़ा खतरनाक है। जंगल में छिपे हुए आफ्रिकन लोग मोटरों पर बंदूक चला देते हैं। हरिलाल जी शाम को हमें कंपाला पहुँचाकर रातमें ही लौटने वाले थे इसलिये साथ में एक आदमी और ले लिया था। बंदूक तथा कारतूसों की पेटी भी लेली थी।

जब कंपाला चार मील रह गया तब हमें रुकना पड़ा। क्योंकि कंपाला से स्वागत करने के लिये लोग मोटर लेकर खड़े हुए थे। म्बरारा के जीवनलाल जी भी थे। कबाले के लालजीभाई भी थे। और करसनदास जी के ऊपर तो यहां के निवास की सारी जिम्मेदारी ही थी जो उनने प्रसन्नता तथा

आदरभक्ति से उठाई थी। हरिभाई जी तथा नारायणभाई जी भी थे।

खैर! सब लोग यहां के हिन्दू मंदिर आये। हमारे ठहरने का यहीं इन्तजाम किया गया था। द्वार पर मालाओं से स्वागत किया गया।

ठहरने पर बहुतसे लोग दर्शन तथा चरणवन्दना को आये। पर इसमें मेरा कोई गौरव न था, क्योंकि यह वन्दना सिर्फ वेषपूजा थी, विवेक की प्रेरणा नहीं। जिंजा की अपेक्षा यहां पुराने विचारों के लोग अधिक हैं, यद्यपि शूटबूट की पोशाक में वे भी रहते हैं। यहां यह पोशाक प्रायः सभी भारतीय पहिनते हैं, इससे उनके विचारों तथा शिक्षण का पता नहीं लगता।

मन्दिरवालों का विचार था कि प्रवचन मन्दिर में रक्खे जायँ। पर मुझे यह पसन्द नहीं था। इसके दो कारण थे। १—मंदिर के द्वार पर लिखा हुआ था कि हिन्दू सिवाय कोई अन्दर नहीं आसकता। २—मेरे प्रवचनों में सब धर्मों की चर्चा आनेवाली थी उसके लिये स्थान भी सार्वजनिक चाहिये। खैर! मंदिर के संयोजकों ने मंदिर के पास के एक मैदान में प्रवचन कराने का प्रबन्ध किया। तय हुआ कि कल पेम्फलेट छपा जाय और परसों व्याख्यान रक्खा जाय। मैं एक दिन बचाने की दृष्टि से एक दिन जल्दी आया था पर वह दिन न बचा।

आफ्रिका में मैं न तो किसी श्रीमान का मेहमान था, न किसी राजपुरुष का सहयोग था, एक साधनहीन साधारण फकीर की तरह ही यहां मैं आया था। मध्यम परिस्थिति का कोई गृहस्थ लालजीभाई की जानपहिचान आदि के कारण खानेपीने ठहरने आदि की व्यवस्था कर देता था। इस लघुता के कारण मुझे सभी जगह अधिक से अधिक समय और शक्ति खर्च करना पड़ती थी। अगर किसी राजपुरुष का सहयोग होता और किसी श्रीमान का मेहमान होता तो आते ही सारी योजनाएँ बनने लगतीं। पर अब एक दो व्याख्यान के बाद ही कुछ सुभीता होता था, और पहिले व्याख्यान के लिये भी एक दो दिन रुकना पड़ता था। खैर! अपरिचय, तथा धनिक-हीनता और

शासक-हीनता का जो दंड दुनिया से मिलता था, उसे हँसते/हँसते झेल लेना ही कर्तव्य था।

ता. २१ जनवरी को और कुछ कार्यक्रम नहीं था। करसनदास जी के यहां भोजन था, उनके बड़े भाई कबालेवाले श्री लालजी भी थे, जीवनलाल जी भी अपनी अपार श्रद्धा और आशा को लिये थे। पूर्व आफ्रिका में तथा कबाले तरफ सत्यसमाज के प्रचार पर काफी चर्चा हुई।

शामको दो मोटरें लेकर बहुत से सज्जन मुझे कम्पाला घुमाने ले चले। सारा शहर बड़ी बड़ी टेकरियों और उसकी तलहटियों में बसा हुआ है। इसलिये सैकड़ों उतार चढ़ावों से यह शहर भरपूर है। सड़कें साफ सुथर हैं। इधर सड़कों पर कोई कचरा नहीं फेंकसकता, न पेशाब कर सकता है। हर मकान के आगे अच्छा साफ सुथरा लोहेका एक ढकनदार पीपा रक्खा रहता है उसीमें कचरा डाला जाता है। यह पीपा हर घरवाले को अपने खर्च से रखना पड़ता है। कोई न रक्खे तो उसपर मुकद्दमा चल जाय और जुर्माना होजाय। सफाई इधर के प्रायः सभी शहरों में इसी प्रकार रहती है।

खैर! शहरकी काफी सैर की। इधरकी तीन टेकरियों पर तीन इमारतों ने मेरा अधिक ध्यान खींचा। एक टेकरी पर मुसलमानों की मसजिद है, जो काफी दूर से दिखती है। दूसरी टेकरी पर प्रोटेस्टेंट ईसाइयों का गिरजाघर है। जो काफी विशाल भव्य और सुन्दर है। इतना बड़ा गिरजाघर मैंने आज तक नहीं देखा था। यहां एक इतना बड़ा पियानो है जिसके भीतर आदमी बैठते हैं। और उसके भीतर बैठकर बाजा बजाते हैं। बिजली के तार उसमें लगे हैं, बटन दबादबाकर वह बजाया जाता है।

गिरजाघर बिलकुल खुला पड़ा था। आने जाने को किसी को रोक टोक नहीं। इन बातों का हृदयपर बड़ा प्रभाव पड़ा।

उस टेकरी से उतरकर हमारी मोटरें दूसरी टेकरी पर चढ़ीं। यह कैथोलिक ईसाइयों का गिरजाघर है। विशालता भव्यता आदि में पहिले

गिरजे के समान, पर प्रभावकता में उससे कई गुणा महान। इसमें जगह जगह ईसा मसीह की मूर्त्तियाँ तथा उनके जीवन की भिन्न भिन्न घटनाओं से सम्बन्धित दृश्य थे। एक जगह क्रास पर लटकी हुई खून से लथपथ ईसा मसीह की मूर्ति इतनी करुण और हृदयद्रावक थी कि उसे देखते ही आंखों में आंसू भर आये। सचमुच मूर्ति का हृदयपर बड़ा प्रभाव पड़ता है। मूर्ति मन्दिर की ज्योति है, वह न हो तो मंदिर अन्धकारमय मालूम होता है। यह मंदिर भी खुला पड़ा था। आने जाने में कोई रोक टोक नहीं थी। वास्तव में धर्मस्थान ऐसा ही होना चाहिये जहां ताला या पहरा न लगाना पड़े और जो हर समय मनुष्य-मात्र के लिये खुला हो।

जिस मंदिर की इमारत में मैं ठहरा था उसमें मूर्त्तियाँ नहीं थीं, चित्र थे। फिर भी वह मनुष्यमात्र के लिये खुला नहीं था। धर्मस्थान की यह विडम्बना देखकर हृदय घायल होजाता था।

गिरजाघर की मूर्त्तियाँ देखकर नाना तरह के भाव हृदय में उठे। एक दिन संसार ने म. ईसा को मामूली बात पर एक साधारण आदमी की तरह मार डाला, उसीके चरणों पर आज संसार के बड़े से बड़े शाहंशाहों के मस्तक झुकते हैं, ऐसी ऐसी देव दुर्लभ इमारतें उसके नाम पर बनाई जाती हैं। संसार की यह कैसी दयनीय अन्धता है!

शाम को डेरेपर ही कुछ आदमी आगये थे। गिरजाघरों की स्मृति ताजी थी। इसलिये ईसाई धर्म और म. ईसा के जीवन पर विस्तार से कहा। १०॥ बजे तक मीटिंग समाप्त हुई। अभी तक लोगों ने प्रवचन नहीं सुना था इसलिये आज भी पुराने विचार के लोग वन्दना करने आये, पर यह सब वेष-पूजा थी।

ता. २२-१-५२ को करसन जी भाई के यहां चर्चा हुई। मालूम हुआ कि म्वांसा तरफ ऐसे भारतीय हैं जो आफ्रिकन स्त्रियों के साथ शादी कर चुके हैं उनसे सन्तान भी पैदा हुई है, उन्हें लोग चौतारा कहते हैं पर वे लोग

स्वयं इस शब्द को पसन्द नहीं करते । निःसन्देह आफ्रिकन स्त्रियों का रंग तथा लम्बे बालों से रहित उनका सिर भारतीयों को पसन्द नहीं आसकता । पर जो भारतीय किसी कारण ऐसा कर लेते हैं उन्हें मैं धन्यवाद देता हूँ । बिखरी हुई मानवता को मिलाने के लिये यह आवश्यक है । सत्यसमाज ऐसे लोगों का सहर्ष स्वागत करेगा ।

शामको ६ बजे से ७। तक आमसभा में प्रवचन हुआ । विषय था क्या 'धर्म लड़ाते हैं' सर्वधर्म समभाव के इस प्रवचन से काफी लोग प्रभावित हुये । उन्हें काफी नयापन मालूम हुआ । डेरे पर भी चर्चा होती रही । बहुत लोगों ने इस बातपर बड़ा खेद प्रगट किया कि इस देश में पिछले वर्षों में अन्धश्रद्धा बढ़ानेवाले प्रचारक आये हैं पर स्वतंत्र विचार से जनता को जगाने-वाले बहुत कम आये ।

ता. २३ को 'दुनिया एक कैसे बने' इस विषय पर प्रवचन किया । रंग राष्ट्र धर्म जाति राजनीति आदि सभी तरह के भेदभावों को गौणकर एकता की योजना बताई ।

ता. २४ को गोवरधनदास जी के यहां एक टेकरी पर सब लोग फलाहार करने गये । शामको ६ बजे से ७। तक आफ्रिका में एशियाइयों की समस्या पर प्रवचन किया । आज सभा में ही काफी प्रश्नोत्तर हुए । इसलिये सभा ८ बजे के बाद समाप्त हुई । प्रश्नोत्तर से असर और बढ़गया ।

ता. २५ को विवेक पर प्रवचन और चर्चा हुई, कुछ लोग सत्यस-माजी भी बने ।

ता. २६ को ओल्ड कम्पाला में जमनादासजी के यहां भोजन था । वे श्रीमान व्यक्ति हैं । कम्पाला में सत्यसमाज के प्रचार के सम्बन्ध में काफी चर्चा हुई । इनने काफी उत्साह बताया ।

शामको प्रवचन हुआ कुछ और सत्यसमाजी बने । डेरे पर विश्व-रचना, तथा गांधीवाद आदिपर काफी चर्चा हुई ।

ता. २७ को सुबह उच्चपदों पर काम करने वाले तीन सुशिक्षित सज्जन आये। पर विचार पुराने ढंग के थे।

कुछ विरोधी भावना लेकर ही आये थे। मैं स्नान कर रहा था इसलिये पहिले उनकी चर्चा लालजीभाई से हुई। और लालजी की बातों से ही वे काफी प्रभावित होगये और विरोध नरम पड़ गया। फिर मेरे आनेपर काफी चर्चा हुई। यह चर्चा दो ढाई घंटे चली। उनके भिन्न भिन्न प्रश्नों का खूब विस्तार से उत्तर दिया गया। प्रश्न कई तरह के थे। एक प्रश्न यह था कि उदारता से क्या दूसरे लोग हिंदुओं से लाभ न उठा लेंगे। मैंने कहा कि मेरी योजना में हिन्दुओं का धन छीनकर गैरहिन्दुओं को नहीं दिया जाता किन्तु उदारता से समन्वय कर उन्हें अपने पास आने का निमन्त्रण दिया जाता है। इसमें अपना कोई नुकसान नहीं है। अगर स्वार्थ की दृष्टि से देखें तो भी लाभ है। मुसलमान जिस सामाजिक पाचन शक्ति से हिन्दुओं को करोड़ों की संख्या में मुसलमान बना सके वह शक्ति अगर हिन्दुओं को मिलजाय तो उनकी सामाजिक शक्ति ही बढ़ेगी। और यह लाभ ही है।

इस मुद्दे को मैंने काफी विस्तार से समझाया, और इसका असर भी हुआ।

इसके सिवाय अहिंसा कर्मयोग आदि पर दार्शनिक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से काफी विवेचन किया।

उनके चेहरों से तथा बातों से ऐसा मालूम हुआ कि उनका विरोध बहगया है और वे काफी प्रभावित हुए हैं। प्रचार कार्य में कुछ सहयोग देने की इच्छा भी उनने प्रगट की।

रात में करसनदासजी के यहां सत्यसमाज के प्रचार के लिये काफी चर्चा हुई।

कम्पाला से मसाका की ओर आगे बढ़ना था। पर पिछले आठ अतिवर्षा से जो रास्ते टूट गये थे उनकी दुरस्ती अभी तक नहीं होपाई थी

इसलिये मसाका का रास्ता बन्द था। हां! इन्टेबे से विक्टोरिया झील में से स्टीमर जाता था। १२ घंटे स्टीमर में बैठनेपर फिर तीस मील चलकर मसाका पहुंच सकते थे। स्टीमर में आजकल इतनी भीड़ थी कि लोग खड़े खड़े जाते थे। इन सब बातों से मसाका जाना ठीक नहीं समझा। जिंजा में कुछ काम भी करना था, इसलिये २८ जनवरी को फिर जिंजा लौटे। पहिले तो एक श्रीमान भाई ने अपनी कार से जिंजा पहुंचाने का वचन दिया था पर काम लगजाने से वे न आसके। तब कबाले के लालजीभाई तथा करसनदासजी ने मोटर किराये पर करके जिंजा पहुंचा दिया। लालजीभाई तथा हरिभाई जी साथ आये।

१४– दूसरी बार जिंजा

आफ्रिकनों के बीच

अब की बार जिंजा आने पर जो महत्वपूर्ण कार्यक्रम हुआ वह था आफ्रिकनों के बीच। बैरिष्टर भट्टजी ने इन कार्यक्रमों के लिये तन-मन-धन से काफी कार्य किया। अगर उनका सहयोग न होता तो यह महत्वपूर्ण कार्य रह जाता।

जिंजा से ५-६ मील दूर बुगेंबे नाम का गांव है। यहां जिंजा जिले के आफ्रिकन चीफ (काबाजिंगा राजा या शासक) का भी निवासस्थान है। बैरिष्टर श्री भट्टजी यहां अपनी मोटरकार में मुझे लेगये। ज्यादातर शिक्षित आफ्रिकन ही वहां थे। कुछ लोग अंग्रेजी नहीं जानते थे। मैं हिन्दी में बोलता था, बैरिष्टर साहब अंग्रेजी अनुवाद करते थे, उनका अनुवाद एक आफ्रिकन भाई स्थानीय भाषा में करते थे।

मुझे धाराप्रवाह प्रवचन करनेकी ही आदत है। व्याख्यान में मैं घंटों बोलने पर भी नहीं रुकता। पर यहां मिनिट मिनिट पर रुकना पड़ता था। इससे व्याख्यान का सौंदर्य नष्ट होजाता था, पर इसका उपाय क्या था। जब तक संसार भर की एक मानव भाषा नहीं होजाती तब तक यह होना तो रहेगा ही।

व्याख्यान में एक चीफ तथा कुछ सरकारी कर्मचारी भी आये थे। लालजीभाई ने हारमोनियम पर प्रार्थना गाई, बैरिस्टर साहब ने मेरा तथा मेरे विचारों का, सत्यसमाज का परिचय दिया। इसके बाद मेरा प्रवचन हुआ। फिर कुछ प्रश्न पूछे गये उनका भी उत्तर दिया। सब लोग बहुत प्रसन्न हुए। सत्यसमाज के विषय में उत्सुकता प्रगट की।

अगर इनकी भाषा जाननेवाला कोई प्रचारक इनमें काम करे तो हजारों की संख्या में ये सत्यसमाजी बन सकते हैं। इनकी भाषा में थोड़ा बहुत साहित्य लेजाने की भी जरूरत है। ये लोग ईसाई और मुसलमान बन चुके हैं। सत्यसमाजी बनने से ये हिन्दू धर्म के सम्पर्क में भी आजायँगे। इसप्रकार धार्मिक भेदभाव से इस देश की जनता टुकड़े टुकड़े न हो पायगी और यहां बसे हुए भारतीयों के लिये यह सांस्कृतिक समन्वय कई दृष्टियों से काम आयगा। इसमें स्वार्थ भी सधेगा और परमार्थ भी। पर अभी तक इतनी दूरदर्शिता भारतीयों में दिखाई नहीं देती। वे घर में आग लगने पर कुआ खोदने की बात सोच रहे हैं।

खैर! उन लोगों ने बहुत कृतज्ञता प्रगट की। लालजीभाई ने दो फोटो भी लिये। इन सब बातों का यह असर मालूम हुआ कि उनके दिलमें भारत तथा भारतीयों के बारेमें कुछ आदर प्रेम बढ़ा है। यहां के भारतीय इस प्रकार के जितने अधिक कार्यक्रम रक्खेंगे, उतना ही अधिक उनका लाभ होगा।

इगांगा—बुगेंबे के कार्यक्रम की खबर आसपासके गांवों में काफी फैली। इसलिये दो दिन बाद ता. ३१ जनवरी ५२ को इगांगा में जो कार्यक्रम रक्खा गया वह बड़ा शानदार था। पर इसकेलिये बैरिस्टर भट्टजी को काफी परेशानी उठाना पड़ी। ३१ ता. को एक भाई ने मोटर देने को कहा था पर वे न देसके, दो तीन जगह और मांग की पर न मिली। बैरिस्टर भट्टजी की मोटर गैरेज में सुधरने को पड़ी थी, तब वही मोटर बिना सुधरे ढ़: लाना पड़ी और उसीसे किसी तरह काम चलाना पड़ा।

रास्ते में बैरिष्टर सा. कहते जाते थे, कि ये लोग योग्यता आदि की पूजा नहीं करते सत्ता और वैभव की पूजा करते हैं। अगर आप राजसत्ता के साथ आये होते या वैभव के साथ आये होते तो आपके लिये मोटर पेश करने में होड़ मची होती, निमन्त्रणों के मारे आप परेशान होजाते आदि। उनकी बातों में सचाई थी। पर मैं यही सोच रहा था कि मानवसमाज की यह जुगजूनी बीमारी है। इसका इलाज करना है और इसके लिये जितनी भी परेशानियाँ अपमान उपेक्षाएँ आदि सहन की जासकें सहन करना है।

खैर! इस प्रकार चर्चा करते करते हम लोग जिंजा से २७ मील दूर इगांगा पहुंचे। यहां भारतीयों की भी काफी बस्ती है। बैरिष्टर साहब ने चाहा कि जब आफ्रिकनों के बीच कार्यक्रम करने के लिये मैं यहां तक आया हूँ तो इसका लाभ भारतीय भी उठायें। एक दूकानपर जाकर उनने कहा भी। पहिले भी वे टेलीफोन कर चुके थे कि घर बैठे गंगा आरही है, वे नहाने से न चूकें। पर लोगों ने कोई पर्वाह न की। आफ्रिकनों में जागरण आरहा है इसका अनुभव भारतीयों को होरहा है, भविष्य कुछ अन्धकारमय है ऐसी चर्चा भी लोग करते हैं, पर उसका उपाय नहीं करना चाहते। आफ्रिकनों से आर्थिक लाभ उठाना, और घर के काम के लिये नौकर पाजाना, इससे ज्यादा और कोई सम्बन्ध वे नहीं रखना चाहते। भारतीयों की यह जड़ता देखकर बैरिष्टर साहब को बड़ा दुःख हुआ, और बार बार उनने प्रगट भी किया।

पर आफ्रिकन जनता ने जिसप्रकार शानदार कार्यक्रम रक्खा उससे बैरिष्टर साहब अपनी मनोवेदना भूलगये।

एक बड़े हॉल में आफ्रिकन महिलाएँ काफी संख्या में सजधजकर एकत्रित थीं। इनमें अंग्रेजी पढ़ी हुई महिलाएँ भी थीं। अनेक चीफ (तहसीलदार जमीदार आदि की श्रेणी के नायक) उपस्थित थे, और भी काफी संख्या में पुरुष थे। हम लोगों को दूर से देखते ही वाद्य और नृत्य शुरु हो गया। हाल के बाहर सब चीफ तथा सम्भ्रान्त व्यक्ति खड़े हुए थे। सबने हाथ मिलाया।

बैरिष्टर साहब ने मेरा विस्तार से परिचय दिया। भारत की आश्रम व्यवस्था का भी विवेचन किया और कहा कि "स्वामीजी मनुष्यमात्र को एक जाति का समझते हैं। वे काले गोरे का भेद नहीं करते। वे प्रचंड तार्किक हैं। उनके तर्कों के आगे कोई टिक नहीं पाता। उनने सर्वधर्म-समभावी मन्दिर बनाया है। सभी धर्मों के ईश्वर के नाम वे अपनाते हैं। आपके मुंगू शब्द से भी उतने ही प्रसन्न होते हैं जितने ईश्वर शब्द से।" इत्यादि विस्तार से परिचय दिया। फिर लालजीभाई ने हारमोनियम पर वन्दना के गीत गाये। जिनका अनुवाद जनता को समझाया गया। इसके बाद मेरा प्रवचन हुआ।

मेरा प्रवचन

आज दुनिया में जितने आविष्कार होचुके हैं उनसे इसी जीवन में स्वर्ग बनसकता है, फिर भी स्वर्ग नहीं दिखाई देता इसका कारण दिलकी खराबी है। रेल जहाज आदि यातायात के साधनोंने मनुष्य के शरीरों को तो पास पास लादिया है पर मनुष्य के मन पास पास नहीं आ सके। किसी का शरीर तो बड़ा होजाय पर आत्मा उतनी बड़ी न हो, तो उसकी जैसी दुर्दशा होगी वैसी ही दुर्दशा आज मानव-जाति की होरही है।

संसार में तब तक सुख शान्ति नहीं होसकती जब तक मनुष्यमात्र में धार्मिक सामाजिक और राजनैतिक एकता न होजाय। इस एकता का पुण्य-दर्शन जितना अफ्रिका में होसकता है उतना अन्यत्र नहीं। यहां एशिया यूरोप और आफ्रिका तीनों महाद्वीपों की मानवता एकत्रित हुई है। भारत में गंगा यमुना सरस्वती नाम की तीन नदियों के मिलने से प्रयाग नाम का महान तीर्थस्थान बना है जिसकी सब लोग पूजा करते हैं। नदियाँ तो जड़ पदार्थ हैं अगर उनके मिलने से महान तीर्थस्थान बनसकता है तो जिसे आफ्रिका में मानव जीवन की तीन चेतनधाराएँ मिलरही हैं वह तो प्रयाग से सैकड़ों गुणा महान तीर्थस्थान बनेगा। इस दृष्टि से मैं आफ्रिका को भारत से भी महान तीर्थस्थान मानता हूँ। भारत में भी पुराने जमाने में अनेक मानवधाराओं का संगम हुआ था इस दृष्टि से वह भी पवित्र है, पर आफ्रिका की पवित्रता तो

भारत से भी अधिक बढ़ सकती है। पर यह पवित्रता बढ़ेगी तभी, जब तीनों धाराओं में समन्वय होगा, पूरी तरह एकता होगी।

मैं तो समझता हूँ कि मनुष्य सब से प्रेम करके कुछ खोता नही है, पाता ही है। मैं मनुष्यमात्र से प्रेम करता हूं तो जहां जाता हूं वहाँ मुझे अपनी जाति और कुटुम्ब सरीखे लोग मिलजाते हैं। आप लोगों को भी मैं अपनी जाति या कुटुम्ब सरीखा ही मानता हूं. यहाँ जो माताओं की गोद में छोटे छोटे आफ्रिकन बच्चे बैठे हैं उन्हें अपनी गोद में लेकर खिलाने की मेरी इच्छा होती है। उन लोगों की बुद्धि पर मुझे तरस आता है जो रंगभेद या जाति-भेद के कारण किसी मानवशिशु को दूर रखते हैं, घृणा करते हैं। ऐसे लोग जब कुत्ते और बिल्लियों के बच्चों को गोद में खिलाते हैं पर मानव के बच्चे से घृणा करते हैं तब मनुष्यता का दिवाला निकल जाता है।

मेरे लिये तो आपके बच्चे और दूसरों के बच्चे समान हैं। जन्म से मनुष्य के बच्चों की योग्यता जातिभेद के कारण विषम नहीं होती है। हर जाति के बच्चे शिक्षण और संगति से योग्य बन सकते हैं। इसलिये थोड़ी बहुत जो विषमता दिखाई देती है वह व्यक्तियों में है रंग राष्ट्र या जाति के भेदों में नहीं। आप अपने मनमें न झूठा घमंड लाइये न दीनता। आप में भी योग्यता के सारे बीज मौजूद हैं। शिक्षण ईमान और प्रेम से ही कोई व्यक्ति या जाति महान बनती है। इस दृष्टि से आप महान हैं और जो कमी भी है वह पूरी होसकती है।

मैं लज्जा के साथ मानता हूं कि विदेशियों ने शुरु में आपको सताया है, पर भूतकाल की वे बातें आज स्मरणीय नहीं हैं। प्रारम्भ में ऐसा होता ही है। भारत में रेलगाड़ियों में बड़ी भीड़ होती है, इसलिये जब कोई नया यात्री आता है तब सब लोग चिल्लाते हैं कि यहां जगह नहीं है। नया यात्री भी घुसने और जगह बनाने के लिये पूरा संघर्ष करता है। कुछ देर तक झगड़ा होता रहता है। पर थोड़ी देर बाद परस्पर परिचय होता है बातचीत होती है और सब दोस्त के समान बन जाते हैं। इस प्रकार मानवजातियों के

मिलन के समय भी होता है। मुझे आशा है कि आफ्रिका में एशिया यूरोप और आफ्रिका के लोग प्रेमसे हिल मिलकर एक बनेंगे। उन सब की मिली जुली सभ्यता संस्कृति होगी। हर जाति के भीतर कुछ गुण और कुछ दोष विशेष मात्रा में होते हैं। मिलने पर गुणों को अपना लेना है दोष छोड़ देना है। आप लोग एशिया और यूरोप के गुण ग्रहण करें और एशिया तथा यूरोप के लोग आप के गुण ग्रहण करें, इसी लेनदेन से मानव जीवन पूर्णता की ओर बढ़ेगा।

मानव जीवन की इसी पूर्णता के लिये मैंने सत्यसमाज की स्थापना की है। हर धर्म का हर जाति का हर देश का और हर रंग का आदमी इसका मेम्बर बनसकता है। किसी तरह का कोई भेदभाव सत्यसमाज में नहीं है। यहां हर धर्म का आदर किया जाता है। आप लोगों में कोई ईसाई बनगये हैं कोई मुसलमान हैं कोई ईश्वर को मुंगू कहनेवाले पुराने धर्म के माननेवाले हैं। अच्छा है, हर एक धर्म से लाभ उठाइये, और मानवता का तथा प्रेम का पाठ पढ़िये। हिन्दू भी आपके देश में हैं। उनका भी महान धर्म है। उससे भी कुछ सीखिये। यह ध्यान में रखिये कि धर्म के नाम पर आप ईसाई मुसलमान आदि कुछ भी कहलाइये पर उसके कारण समाज के टुकड़े न कीजिये। मानवता के निर्माण में बाधा न पड़े इसका खयाल रखिये। सत्यसमाज में अपने अपने धर्म की छाप लगाये रखने पर भी सब एक होजाते हैं। सब धर्मों से जरूरी बातें लेलेते हैं और बेजरूरी छोड़ देते हैं। आप इस तरफ ध्यान दें।

मुझे आप लोगों का प्रेमभाव देखकर बड़ी खुशी हुई है। और मैं मानता हूँ कि मेरी आफ्रिका यात्रा आज सफल हुई है।

आफ्रिकन भाई बहिनों ने प्रवचन के बीचमें और अन्तमें तालियाँ बजाकर खूब प्रसन्नता प्रगट की। कुछ ने सत्यसमाजी बनने की इच्छा प्रगट की पर उनकी भाषा में फार्म आदि साहित्य न होने से, तथा इस कार्य के लिये काफी लम्बी बैठक करने लायक समय न होने से यह कार्य नहीं किया जासका।

इसके बाद महिलाओं का नृत्य हुआ। आफ्रिकन महिलाओं ने नृत्य कला में सामूहिक विकास किया है और काफी विकास किया है। मुझे तो ऐसा मालूम हुआ कि मानों प्रत्येक आफ्रिकन महिला जन्मजात नर्तकी हो। सारे शरीर को न नचाकर अमुक अंग को ही हिलाने की जो उनमें क्षमता है वह असाधारण है। नृत्य के साथ गीत भी था, कुछ संवाद भी था, सुन्दर चेष्टाएँ भी थीं। गीत और संवाद तो मैं न समझसका पर उनके कंठ का माधुर्य तो संसार की किसी भी जाति की महिलाओं से कम न था। बल्कि कोयल से मिलते जुलते पंचम स्वर की विशेषता थी। और उल्लास तो इतना अधिक था मानों संसार के सारे दुःख शोकों पर हमला होरहा हो। मैं तो क्षणभर को स्तम्भित सा होगया और सोचने लगा कि जो जाति अपने जीवन के भीतर से आनन्द का ऐसा श्रोत बहाकर दुनिया को प्लावित कर सकती हो उसे दुनिया की सभ्यम्मन्य जातियाँ और क्या आनन्द देसकेंगी?

बहुतसी महिलाएँ यूरोपियन पोशाक पहिने थीं। चित्र विचित्रता से वह पोशाक भी अच्छी मालूम होती थी। पर सिर खुला था। आफ्रिकन स्त्रियों के सिर में बाल नहीं के बराबर होते हैं इसलिये सिर की शोभा फीकी रहती है। कुछ स्त्रियाँ कभी कभी सिर में रूमाल बांध लेती हैं जिससे सिर की बाल-हीनता मालूम न पड़े। मैं सोचने लगा—यदि ये साड़ी पहिनने लगें तो सम्भवतः ये अधिक सुन्दर दिखें। सिर पर पल्ला लेने से सिर की बाल-हीनता भी सम्भवतः छिपी रहे। शोभा आदि की दृष्टि से यह प्रयोग अजमाने लायक जरूर है।

इसी समय भोजन का कार्यक्रम भी था। मेहमानों ने और आफ्रिकन चीफों ने एक ही टेबल पर बैठकर भोजन किया। मैंने मक्खन लगी हुई डबल रोटी तथा दूध लिया। इस सहभोज से भी उन सब को बड़ी प्रसन्नता हुई।

उन लोगों ने मानपत्र के समान कुछ लिखित वक्तव्य पढ़े और मौखिक वक्तव्य भी दिये। उनका सार यह था।

आपने जो हमें प्रेम और एकता का सन्देश दिया है उसपर हम चलेंगे और सब प्रेम से मिलकर आफ्रिका को तीर्थस्थान बनायेंगे । आपने यहां आने की जो कृपा की और टूटे फूटे सत्कार को जो स्वीकार किया उससे हमें बड़ी खुशी हुई । आशा है आप हमारे प्रेम को याद रक्खेंगे । और हमारी भावना अपने देश के लोगों पर प्रगट करेंगे । ··· ।"

इसके बाद उनने विजिटर बुक में कुछ लिखने को कहा तब मैंने लिख दिया ।

" आज का दिन मेरे जीवन में चिरस्मरणीय रहेगा । आफ्रिका के भाई बहिनों के निकट सम्पर्क में मैं आया और उनका आदर प्रेम पाया । मैं उन्हें उतना ही प्यार करता हूं जितना अपने भाई बहिनों को प्यार करता हूं । मैं कहता हूँ कि यह प्रेम आफ्रिका में मानवता का दिव्यदर्शन कराये । आज मैं यह भी देख सका कि आफ्रिका की जनता ने कला की खब उपासना की है । और थोड़े साधनों में ही अपना जीवन आनन्दी बनाया है । आशा करता हूं कि यह कला दुनिया सीखेगी और गुणों के आदान प्रदान से सब समानता के आधार पर एक कुटुम्बी बनेंगे ।

मैं फिर एक बार कहता हूं कि मैं आप सब लोगों को कुटुम्बी की तरह प्यार करता हूँ ।

—सत्यभक्त

अन्त में बिदा का समय आया । मुँह बजाकर, हाथ मिलाकर आदि नाना तरह से उनने प्रेम पगट किया और एक टोकनी भर फल मोटर में डाल दिये । मिलन के हर्ष और वियोग की वेदना के साथ हम लोग बिदा हुए ।

बैरिष्टर सा. को रात में बहुत कम दिखता है इसलिये मोटर चलाने में काफी तकलीफ हुई । आज की इस शुभ यात्रा का श्रेय बैरिष्टर साहब को ही था ।

पत्रोत्तर

इगांगा में सोशल वेल्फेयर क्लब की कार्यकर्त्री जेड मुनाबा ने एक पत्र लुगांडा भाषा में लिखा था उसका सार यह है—

हम आपका स्वागत लुगांडा भाषा में करते हैं इसका हमें खेद है...। हम आपसे अनुरोध करते हैं कि आप हमें न भूलें, हम आपके भाई बहिन हैं। आप हमें और भी अच्छा बनने का रास्ता बतायें।

इसपत्र का मौखिक उत्तर तो मेरा वह प्रवचन था जो मैंने इगांगा में दिया था। पर डेरे पर आकर उस पत्र का अंग्रेजी अनुवाद करवाकर उन्हें निम्नलिखित पत्र लिखा था।

जिंजा ५-२-१९५२

प्रिय बहिन मुनाबा,

सस्नेह जयसत्य

आपने लुगांडा भाषा में जो हमारा स्वागत किया उससे हमें बहुत प्रसन्नता हुई। भाषा की बात अवश्य कुछ खेद की थी पर उसकी जिम्मेदारी आप लोगों पर नहीं, मनुष्यमात्र पर है। संसार भर के घोड़े एक तरह से हिनहिनाते हैं और संसार भर के हाथी एक ही तरह से चिंघाड़ते हैं। पर मनुष्य के लिये यह लज्जा की बात है कि वह संसार भर के मनुष्यों की एक मानव-भाषा नहीं बना पाया। यों जब तक मनुष्यमात्र की एक मानव भाषा नहीं बनी तब तक मेरा ही कर्तव्य था कि मैं आप लोगों में आकर आपकी भाषामें बात करता। आपके देश में आप अपनी भाषामें बोलें यही स्वाभाविक है। पर इतनी दूर से थोड़े समय के लिये आये हुए मुझ सरीखे प्रवासियों के लिये जगह जगह की भाषा का उपयोग करना कठिन है। इसलिये फिलहाल इस कठिनाई को झेल लेना ही उचित है। हां! भाषा का भेद हमारे प्रेम और भाईचारे में अन्तर नहीं डाल सकता।

इन पिछले तीन-चार वर्षों में ही आपके सोशल वेल्फेअर क्लब ने जो उन्नति की है और देशभर में उसकी जो शाखाएँ फैली हैं उससे मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है। मुझे विश्वास है कि आपके देशवासी थोड़े ही दिनों में संसार के सब मनुष्यों के साथ कंधे से कंधा भिड़ाकर एक मानवता का निर्माण करेंगे।

आप सब देशों के गुण ग्रहण करें और अपने गुण उन्हें दें और सब अपने अपने दोषों को दूर करें।

आफ्रिका में तीनों खंडों के मनुष्यों का जो संगम हुआ है, उसका समन्वय कर उसे प्रयाग से बढ़कर तीर्थस्थान बनाना है, पुराने अपराधों को भूलकर सबको एक बनना है।

आप अपने पुराने धर्म, ईसाई धर्म, इस्लाम और हिन्दूधर्म को मिलाकर समन्वयात्मक मानवधर्म या सत्यधर्म को मानें, मनुष्यमात्र की एक जाति बनाने के प्रयोग को सफल करें, जो रीति रिवाज हानिकर हों उन्हें छोड़ें और जो लाभप्रद हों उन्हें अपनायें और इसी संसार को सुन्दर सुखमय संसार बनायें।

सत्यसमाज की योजना धर्म जाति के भेदभाव भुलाकर मनुष्यमात्र का एक संगठन या एक कुटुम्ब बनाने के लिये है। आप लोग इसमें शामिल हों।

मैं आप लोगों का हरतरह कल्याण चाहता हूं। आपका आदर स्नेह मुझे सदा याद रहेगा।

आपका—सत्यभक्त

जिंजा का कार्यक्रम

जिंजामें अब की बार मैं नरसीदासभाई के घर पर ठहरा, क्योंकि यह घर मिलने-जुलने वालों को पास पड़ता था, पहिले भी रात की मीटिंग इसी घर में की जाती थी।

रात को ८॥ बजे मीटिंग हुई। पहिले तो प्रश्नों के उत्तर दिये

जिसमें अहिंसा की सात साधनाओं का विवेचन किया गया। तथा भारत की कुछ सांस्कृतिक संस्थाओं का खुलासा किया गया।

इसके बाद जिंजा में अधिवेशन करने का विचार हुआ। यह चर्चा १२ बजे रात तक चली।

२९ ता. को बुगेंबे का कार्यक्रम हुआ। रात में ८॥ बजे से मीटिंग हुई जिसमें प्रश्नों के उत्तर स्वरूप इस्लाम के सर्वधर्म समभाव, तथा धर्मों की प्राचीनता पर कहा। अधिवेशन के बारे में भी चर्चा हुई। ११॥। बजे तक मीटिंग चली।

ता. ३० जनवरी को नील नदी के तट पर पार्क में गान्धी पुण्यतिथि के उपलक्ष्य में एक विशाल सभा हुई। उसमें मैंने सर्वधर्म समभावी प्रार्थना करके एक प्रवचन किया। इस भाषण से यहां के प्रसिद्ध करोड़पति श्रीमान् इन्द्र-सिंह जी गिल काफी प्रभावित हुए। रात्रि में मेरे डेरे पर जो मीटिंग हुई उसमें इन्द्रसिंह जी भी आये। आपके कारण कुछ सिक्ख भाई भी आये थे। मेरा प्रवचन हुआ जिसमें सत्यसमाज की रूपरेखा पेश की गई। फिर अधि-वेशन के बारे में चर्चा हुई। अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष श्री इन्द्रसिंह जी बनाये गये।

ता. ३१ को इगांगा में आफ्रिकनों के बीच कार्यक्रम हुआ। शामको डेरेपर मीटिंग हुई, जिसमें श्री सावित्री बाई के विशेष प्रश्नों के उत्तर दिये और भी कुछ प्रश्नों के उत्तर दिये। प्रचार तथा सम्मेलन की कार्रवाई आगे बढ़ाने का विचार भी हुआ।

ता. १ फरवरी को रात्रि की मीटिंग में अधिवेशन सम्बन्धी चर्चा ही हुई।

ता. २ के सबेरे श्री इन्द्रसिंह जी से अधिवेशन के बारे में चर्चा हुई। दुपहर में आपके साथ लुगाजी गया। बैरिस्टर भट्टजी भी साथ में थे। श्री हरिलालभाई तथा नरसीभाई आदि भी दूसरी मोटर से आये। यहां के

मित्र मैनेजर से सत्यसमाज के विषय में काफी चर्चा हुई। पीछे पूर्व आफ्रिका के सब से बड़े श्रीमान और इस नगर के निर्माता श्री नानजीभाई से काफी चर्चा हुई। स्वागत के जलपान आदि के बाद यह चर्चा करीब एक घंटा चली, जिसमें सेठ जी के विविध प्रश्नों के उत्तर दिये।

संसार में अशान्ति क्यों है आदि प्रश्न तो थे ही, जिनका मैंने उत्तर दिया था पर एक प्रश्न यह था कि आफ्रिका में जो खराबियाँ आपको दिखाई देती हैं वे भारत से आती हैं, इसलिये भारत को यदि सुधार दिया जाय तो आफ्रिका अपने आप सुधर जाय।

मैंने कहा– सड़क पर धूल होने से कमरे में आती है इसलिये सड़क-पर से धूल हटाना चाहिये, यह ठीक होने पर भी हम कमरा साफ न करें और धूल रोकने के लिये खिड़की भी न लगायें तो यह मूर्खता होगी। सड़क की धूल समाप्त हो या न हो हमें कमरे में झाड़ू लगाना ही चाहिये। भारत के उद्धार के बाद आफ्रिका के उद्धार की आशा करना यहां की सब कमाई बर-बाद कर देना है।

चर्चा के बाद शामको फिर जिंजा आगये। रात्रिमें मीटिंग हुई। कुछ प्रश्नोत्तर तथा अधिवेशन सम्बन्धी चर्चा हुई।

ता. ३ फरवरी को नील नदी के तट पर जब मैं पार्क में घूमने गया तब वहां ३०-४० आदमी एक जगह बैठे हुए थे। मेरे पहुंचते ही प्रश्नोत्तर होने लगे। जातिपांति कैसे टूटेगी, काश्मीर का क्या होगा, कांग्रेस और चुनाव, यहां के चौतारा (आफ्रिकन मां और भारतीय पिता की मिश्र सन्तान) की समस्या आदि पर प्रभावक रूप में विवेचन किया। सब को बहुत सन्तोष हुआ।

रात्रि को ९ बजे से मेरे डेरे पर मीटिंग हुई। श्री इन्द्रसिंह जी गिल भी आये थे। आज स्वागतकारिणी के मन्त्री आदि बनाये गये। अध्यक्ष के लिये निर्णय हुआ।

ता. ४ फरवरी को पार्क की मीटिंग में खूब चर्चा हुई। मुझसे पूछा गया कि क्या आफ्रिका में भारतीय रह सकेंगे? मैंने बतलाया कि आज की तरह न रह सकेंगे। आर्थिक दृष्टि से अमुक अमुक परिवर्तन होंगे। परन्तु अच्छे नागरिक की अवस्था में रह सकेंगे। पर उन्हें सामाजिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से मेल की कोशिश करना है। आफ्रिकनों को सिर्फ स्वाय बनाकर ही हम उनके देश में नहीं रह सकते। उनके साथ कौटुम्बिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध जोड़ना होंगे।

इस विषय को काफी विस्तार से समझाया, उनकी अनेक आपत्तियों का उत्तर भी दिया।

रात में आज डेरे पर मीटिंग का कार्यक्रम स्थगित रक्खा था। क्योंकि पिछली कई रातों में १२—१ बजे के पहिले न सोपाने से तबियत पर कुछ खराब असर होने की सम्भावना थी। फिर भी कुछ भाई आ ही गये थे। इसलिये दस बजे तक उनके प्रश्नों का उत्तर देकर १०॥ बजे सो गया।

ता. ५ को पार्क की मीटिंग में अनेक प्रश्नों के उत्तर दिये। जाति-पांति कैसे टूटे, नया संगठन किस नाम से किया जाय? गांधीजी को सफलता क्यों मिली? भारत के नेताओं ने देश का विभाजन क्यों स्वीकार किया? भारत अमेरिकन दल में शामिल क्यों नहीं होता? इन प्रश्नों पर विस्तार से प्रकाश डाला।

रात्रि में डेरे पर मीटिंग आज नहीं रक्खी गई थी। फिर भी दो-तीन सज्जन आये। श्री मगनभाई एक जिज्ञासु बहुश्रुत विद्वान हैं। प्रतिदिन की चर्चाओं में सब से अधिक रस आप ही लेते रहे हैं आप एक यूरोपियन फर्म में नौकरी करते हैं। इसलिये यूरोपियन लोगों की मनोवृत्ति जानने के लिये चर्चा की। आप से मालूम हुआ कि व्यापारी यूरोपियन किसी प्रकार का कड़ा रुख नहीं लेता। फिर भी वे लोग भी भारतीयों को अपने से कुछ छोटा तो समझना ही चाहते हैं। हां! भारत के स्वतन्त्र होजाने से जरूर भारतीयों की कुछ इज्जत बढ़ी है। फिर भी विषमता के प्रदर्शन होते ही हैं।

एक बार इनकी फर्म में भारतीयों को यूरोपियनों के साथ चाय पिलाने से इनकार करने के लिये कहदिया गया कि जिस रकाबी में यूरोपियन चाय पीते हैं उसमें भारतीयों को चाय नहीं दी जासकती। यह भारतीयों का खुला अपमान था। भारतीयों ने घर से कप रकाबी लाकर चाय पीने से इनकार कर दिया और चाय का बहिष्कार कर दिया। यूरोपियनों ने बहाना यह बताया कि भारतीयों के दांत खराब होते हैं, इसलिये उनके जूठे कप से हम चाय नहीं पीसकते। तब मम्मूभाई जी ने युक्ति दृष्टांतों से सिद्ध किया कि सब से अच्छे दांत आफ्रिकनों के होते हैं उनसे खराब भारतीयों के, उनसे खराब यूरोपीयनों के। ब्रुश और दतौन से दांत साफ करने का अन्तर भी समझाया। इसके कुछ दिन बाद यह अपमानजनक व्यवहार बन्द हुआ।

अंग्रेज व्यापारी भारतीयों को प्रतिस्पर्द्धी के रूप में देखता है। और वह टिक नहीं सकता। इसलिये भारतीयों को राजनैतिक तरीके से उखाड़ने की फिक्र में रहता है। फिर भी एक व्यापारी की हैसियत से उसे मिलनसारी आदि का परिचय देना ही पड़ता है।

१५— लुगाजी

ता. ६ को लुगाजी आये। दो तीन दिन पहिले यहां प्रवचन करने के लिये टेलीफोन से निमन्त्रण आगया था। हरिलाल जी जोगिया अपनी मोटरकार से हमें लुगाजी पहुँचा गये। यहां नानजी सेठ का शक्कर का कारखाना है। मीलों तक गन्ने के खेत खड़े हैं। दिन में विश्राम करके शामको सेठजी की कार से कोकुंजरो गये। यह जंगल में १६ मील भीतर है। रास्ते में रबर की खेती देखी, इसके भूरे भूरे झाड़ जीवन में पहिली बार ही देखे थे। बीचबीच में छोटे-छोटे काफी के भी झाड़ थे।

रास्ते में आफ्रिकन लोगों की छोटी-छोटी बस्तियाँ मिलीं। जहां एक एक भारतीय कुटुम्ब भी बसे हुए थे। ऐसे घोर जंगल में आफ्रिकन लोगों के बीच एक भारतीय कुटुम्ब का रहना साहस ही था।

यह इस बात की निशानी थी कि भारतीय विकट साहसी होते हैं पर साथ ही इस बात की भी निशानी थी कि आफ्रिकन बिलकुल असभ्य नहीं हैं। अन्यथा अकेला कुटुम्ब उनके भीतर निर्वाह नहीं कर सकता था।

कोकुंजरो ईसाई मिशनरियों बड़ा केन्द्र है। मिशनरी लोग तीन काम करते हैं। हास्पटिल, स्कूल और चर्च। तीनों ही काम यहां काफी बड़े पैमाने पर होते हैं। इस तरह इनने आफ्रिकनों को जहां काफी परिमाण में ईसाई बनाया है वहां उनकी सेवा और समुन्नति भी काफी की है।

फिर भी रंगभेद का असर इनमें भी है। इसलिये गोरों का गिरजाघर अलग है और कालों का अलग। ईसाइयों के सेवाकार्य में यह रंगभेद गुड़ में कंकड़ की तरह मजा किरकिरा कर देता है।

थोड़ी दूर पर यहां भारतीयों की भी बस्ती है। यहां ७-८ दूकानें उनकी हैं आफ्रिकनों की भी छोटी छोटी दूकानें हैं। एक दूकान पर हम लेजाये गये वहां हमारा काफी आदर सत्कार किया गया। ये लोग आफ्रिकनों के भीतर रम गये हैं। इन्हें उनसे कोई शिकायत नहीं है। आफ्रिकन जनता का व्यवहार इनके प्रति बहुत अच्छा है।

अनेक जगह मैंने भारतीयों के मुंह से आफ्रिकनों की काफी शिकायतें सुनी हैं। उनमें सत्यांश भी है। पर भारत में ऐसे नौकरों की शिकायतें भी कम नहीं होतीं। इसलिये इनके प्रति घृणाभाव छोड़कर अपनाने की नीति ही अपनाना चाहिये।

कोकुंजरो से लौटते ही श्री जीवनलाल जी, तथा कम्पाला के करसनदास जी मिलगये। श्री जीवनलाल जी मोटर लेकर लेने के लिये आये थे। आफ्रिका यात्रा में लालजीभाई की सेवाएँ तो तन-मनधनसे असाधारण थीं ही, पर आफ्रिका आने पर लालजीभाई के बड़े भाई जीवनलाल जी की भी सेवाएँ इतनी असाधारण थीं जिसकी मुझे कल्पना तक नहीं थी। मेरे मुंबासा आते ही आप मुंबासा पहुंचे। आप के साथ रहने से मुंबासा, नैरोबी, म्वाले, टोरोरो

जिंजा तथा कम्पाला में यात्रा में काफी निश्चिन्तता रही। मेरा साथ देने से हजारों शिलिंग का आपको व्यापारिक नुकसान उठाना पड़ा। कुछ दिन के लिये आप घर गये और फिर लेने के लिये मोटर लेकर आप कम्पाला आगये। पर लुगाजी का कार्यक्रम आजाने से तीन दिन देर हुई। और आपको मोटर वापिस करना पड़ी। तीन दिन बाद आप भाड़े से एक मोटरकार करके लुगाजी आमिले। आपके मिलने से यात्रा की चिन्ता का बोझ सा हटगया।

लुगाजी में एक विशाल लेक्चरहाल है। उसमें मेरा प्रवचन हुआ। एक घंटे में प्राय: सभी मुख्य मुख्य बातें कहीं। १०॥ बजे प्रवचन समाप्त हुआ और रात को ११ बजे ही कम्पाला के लिये रवाना हुए। श्री धीरेन्द्र भाई तथा उनके छोटे भाई ने एक मोटर की व्यवस्था कर दी। इस प्रकार दो मोटरकारों में बैठकर रवाना हुए। आते समय धीरेन्द्रभाई ने सुधीर के हाथ में एक लिफाफा दिया। रास्ते में उसे खोला तो उसमें २५० शिलिंग के नोट थे।

३० मील चलकर बारह बजे रातको हम कम्पाला पहुंचे। कम्पाला में करसनजीभाई का घर घर सरीखा होगया था। तुरन्त ही सोने की सब व्यवस्था होगई। सुबह ६ बजे उठे तुरन्त ही ताजी पूड़ी बनाई गई। सब ने नाश्ता किया और सात बजे रवाना होगये।

आज हमें मोटरकार में ही १७६ मील की यात्रा करना थी। एक ही दिन में मोटर में बैठकर इतनी लम्बी यात्रा मैंने कभी नहीं की थी। यहां से चौरासी मीलपर मसाका है, और मसाका से ९२ मील म्बरारा।

मसाका में दो घंटे

कम्पाला से मसाका का रास्ता वर्षा के कारण पिछले बहुत दिन से टूटा था। दो-तीन दिन हुए अब वह खुला था फिर भी पूरी तरह सुधर नहीं पाया था।

रास्ते में जब हम काफी घने जंगल में थे, मोटर में पंक्चर होगया इसलिये वहां चक्का बदलने के लिये हमें कुछ समय रुकना पड़ा। आगे चलने पर एक नदी के रास्ते में एक बड़ी भारी मोटर लारी कीचड़ में फसी पड़ी थी इसलिये रास्ता बन्द होगया था। और घंटों से दोनों तरफ दर्जनों मोटरें रुकी पड़ी थीं।

आफ्रिका की ये नदियाँ बड़ी विचित्र होती हैं। भारतवासी इन नदियों की कल्पना नहीं कर सकते। इनमें पानी नहीं दिखाई देता। सारी नदी में एक तरह का जंगल लगा रहता है। और छोटे छोटे झाड़ों के नीचे भागों में पानी भरा रहता है। ये करछोटे के झड़ इतने घने रहते हैं कि उनकी कलगियाँ ही दिखाई देती हैं। पानी का बहाव भी धीमा धीमा होता है। सड़क इस पानी से एकाध फुट ऊँची होती है। अतिवर्षा से पानी सड़कों पर भरजाता है और सड़क खराब होजाती है। रास्ता बन्द होजाता है। सड़क के नीचे से नदी का पानी निकालने के लिये सिमिट के मोटे मोटे नल डाल दिये जाते हैं। ऊपर मिट्टी पत्थर बिछा दिये जाते हैं।

खैर! ऐसी ही नदी के किनारे हमें दो घंटे रुकना पड़ा। फँसी हुई मोटर लारी का सामान उतारा गया, और बहुत से लोगों ने हाथ भी लगायें तब मोटर खिसकी। और रास्ता साफ हुआ।

हम बारह बजे के बाद मसाका आपाये। यहां लालजीभाई की बहिन का घर है। और जीवनलाल जी ने पहिले से काफी प्रचार कर रक्खा था इसलिये महीनों से लोग मेरे आने की बाट देख रहे थे।

पर मसाका रुकना नहीं था। म्बरारा पहुंचकर ही भोजन करने का कार्यक्रम रक्खा गया था। १ या २ बजे तक म्बरारा पहुंचने की आशा थी पर बीच में रास्ता रुकने से मसाका ही हम बारह बजे के बाद आपाये। सब का आग्रह था कि भोजन करके तथा एकाध प्रवचन करके आगे बढ़ा जाय। पर किसी तरह समझा बुझाकर उनसे छुट्टी ली। हां! वचन देदिया कि २१-२२-२३ फरवरी को मसाका में प्रवचन होंगे। फिर भी तीन घर जाकर दुग्ध-

पान या फलाहार करना ही पड़ा। सब का प्रेम भक्ति विनय विशेष मात्रामें था।

वहां से हम दो बजे रवाना होगये। रास्ता खूब पहाड़ी है। यों तो सारा आफ्रिका ही पहाड़ और जंगलों से भरा पड़ा है। पर यहां पहाड़ और भी अधिक हैं। बड़े से पहाड़ों पर बड़ा बड़ा जंगल नहीं है। इधर रास्ते में शेर बहुत मिलते हैं। पहिले से अब कम होगये हैं फिर भी काफी हैं। पर हमें कोई शेर नहीं दिखा। दिन में शेर दिखते भी नहीं है।

१६— म्बरारा में

शामको ५ बजे हम म्बरारा पहुंचे। श्री जीवनलाल जी की सेवाएँ तथा इनके बड़े पुत्र नरसिंहदास जी के सत्यानुरागपूर्ण पत्र आदि के कारण ऐसा मालूम होने लगा था मानों हम घर ही आगये हैं। आते ही स्नान भोजन से निवृत्त हुए। जागरण तथा प्रवास की थकावट काफी थी इसलिये शामको जल्दी सोगये। और काफी गहरी नींद ली।

म्बरारा भी अन्य टाउनों की तरह टेकरी और उसकी ढाल पर बसा है। यहां भारतीयों की साठ दूकानें है। जिनमें आधे इस्माइली हैं और बाकी हिन्दू और सिक्ख। सिक्खों का गुरुद्वारा है और इस्माइलियों का खाना। मन्दिर नहीं है। जीवनलालजी ने प्रतिज्ञा ली है कि जब तक यहां मन्दिर की नींव न पड़ जायगी तब तक एक बार ही भोजन करेंगे। आप प्रखर सत्य-समाजी हैं इसलिये आपकी इच्छा यहां सत्यमन्दिर बनवाने की है। इससे हिन्दू मन्दिर की पूर्ति होने के साथ-साथ अन्य सब धर्म जातिवालों में एकता का कार्यक्रम भी बन सकेगा। और आफ्रिका में भारतीयों की जो समस्या उलझी हुई है उसके सुलझाने में मदद मिलेगी।

इस तरफ वस्ती विरल है। हर हफ्ते रात में टाउनमें शेर चक्कर मार जाता है। १२ बजे के बाद रात में घर से बाहर निकलना जान की जोखिम है। सम्भव है कोई दरवाजा खोले और दरवाजे पर शेर खड़ा हो। आसपास

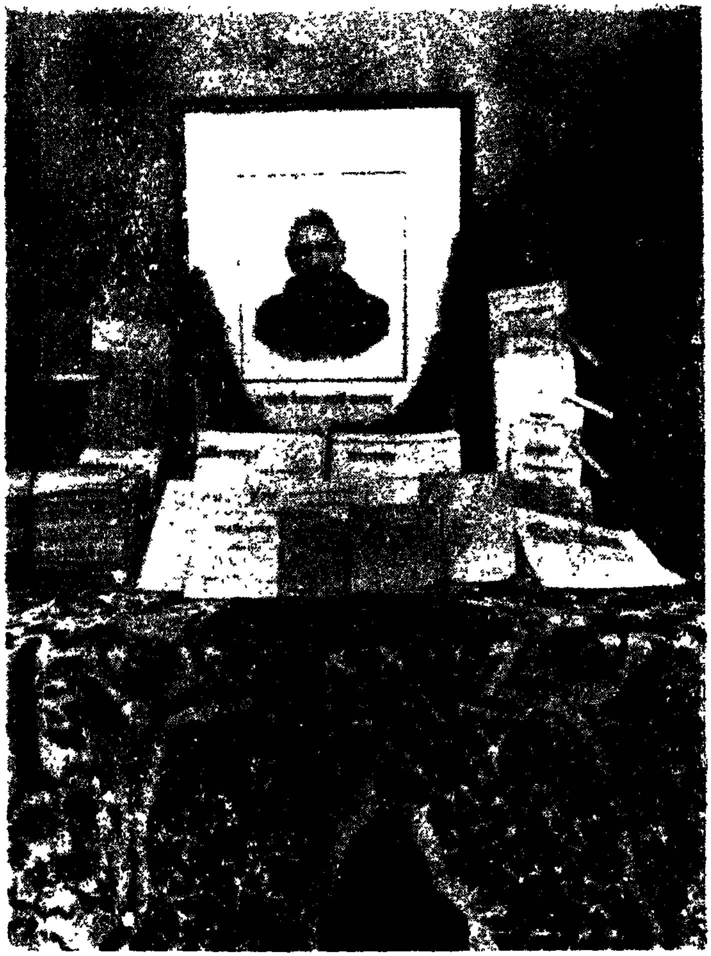
की आफ्रिकन बस्तियों में तो शेरों का और भी डर है। जिस दिन मैं वहां आया उसके एक दिन पहिले एक आफ्रिकन को शेर खा गया था। भारतीय लोग बंगलों में रहते हैं, मोटरों में सफर करते हैं, बन्दूक रखते हैं और काफी सतर्क रहते हैं इसलिये वे शेर की दुर्घटना से बचे रहते हैं।

एक भाई ने कहा कि यहां एक भारतीय भाई थे जिनने पचासों शेरों को मारा था। एक ही रात में सात शेर मारे थे। अभी तक जितने शहरों में मैं गया था वहां वस्ती में शेरों का डर नहीं था पर म्बरारा में था।

हां! जिंजा में जरूर यह सुना था कि जब शहर में नल नहीं थे तब लोग आफ्रिकन लोगों के द्वारा विक्टोरिया झील से पानी मगाते थे। और ऐसी घटनाएँ अक्सर होजाती थीं कि नौकर को मगर पकड़ लेजाता था। यहां के मगर पानी से बाहर निकलकर भी शिकार पकड़ लेजाते हैं। अब नल होजाने से इस जोखिम से पिंड छूटा है।

तीन-चार माह पहिले म्बरारा में भी नल लग गये थे। नहीं तो लोग दो मील से पानी मंगवाते थे। इसके सिवाय वर्षा का पानी भी एक टंकी में इकट्ठा कर लेते थे और वह महीनों पीते रहते थे। छप्पर यहां टीन का होता है। छप्पर का सारा पानी एक नली के द्वारा एक बड़ी टंकी में पहुँचा दिया जाता है। श्री जीवनभाई के घर में एक हजार गेलन की एक टंकी थी। इस-प्रकार वर्षा का पानी एकत्रित करने का तरीका मैंने एक बार लाडनू (मारवाड़) में जरूर देखा था। पर वहां तो वर्षा कम होने से पानी का इस तरह संग्रह किया जाता था पर यहां काफी वर्षा होनेपर भी इस उपाय से काम लेना पड़ता था, क्योंकि यहां कुए नहीं हैं और दूर से पानी मंगाना खतरे से खाली नहीं है। अब सरकार कहीं कहीं पर ट्यूब वेल बनवा रही है।

म्बरारा के पास ही एक पहाड़ी नदी बहती है। जिसका प्रवाह काफी बड़ा और तेज है। पर उनका पानी बिलकुल कत्थिया रंग का है। जैसे लोहे का मोर्चा काफी परिमाण में घुला हुआ हो। वैज्ञानिक जांच से पता



म्वरारा [आफ्रिका] में सत्यभक्त जयंती की वेदी

लगा कि इस पानी में लोहा घुला हुआ है। पर पीने में नुकसानदेह नहीं है।

अब इसी नदी का पानी साफ करके नलों द्वारा म्बरारा टाउन के घर घर में पहुंचाया जारहा है।

युगांडा में म्बरारा की आबहवा अच्छी समझी जाती है। यहां मच्छर मलेरिया आदि की बाधा नहीं है, ठंड कुछ अधिक है। यहां अभी बिजली नहीं आपाई है इसलिये गेम की बत्तियाँ या घासलेट की साधारण लालटेनों से काम चलाया जाता है। रेडियो बेटरी से चलते हैं।

जीवनलालजी के घर में एक बड़ासा कमरा हमारे ठहरने के लिये स्वतन्त्र रूप में देदिया गया था। मालूम हुआ कि कुछ महीने पहिले जब प्रसिद्ध राष्ट्रनेत्री कमलादेवी यहां आई थीं तब वे इसी कमरे में ठहराई गई थीं। सोशलिष्ट पार्टी की नेत्री होने पर भी उनने सोशलिज्म के विषय में कुछ प्रचार नहीं किया था। एकता का ही सन्देश दिया था।

ता. ८-९-५२ के सबेरे कई आफ्रिकन, इस्माइली, सूदानी तथा हिन्दू भाई मिलने आये। सूदानी और आफ्रिकनों से दुभाषिये के द्वारा बात चीत हुई।

शामको पौने छः बजे से सरकारी स्कूल की इमारत में मेरा प्रवचन हुआ। स्त्रियाँ भी काफी संख्या में थीं, मुसलमान भी थे। धर्म-समभाव पर सवा घंटे बोला।

रात्रि में डेरे पर चर्चा हुई। काफी आदमी आये थे। अहिंसा की सात साधनाएँ तथा उसकी व्यावहारिकता पर विस्तार से कहा।

यहां उस सम्प्रदाय के बारे में कुछ विशेष जाना जो ईमानदारों का सम्प्रदाय कहा जासकता है। इसको यहां मरोकई कहते हैं। ये लोग झूठ नहीं बोलते, चोरी नहीं करते, शराब नहीं पीते। इस सम्प्रदाय की स्थापना एक यूरोपियन ईसाई ने की है। कई हजार आफ्रिकन इस सम्प्रदाय में शामिल होगये हैं। चरित्र सुधार सम्बन्धी यह महान सेवा है।

इस सम्प्रदाय में आने के बाद कई लोगों ने पुरानी चोरियों का

माल भी वापिस कर दिया। मुझे इस बात का खेद हुआ कि भारतीय लोग आफ्रिकनों को सुधारने की किसी भी तरह की योजना में काफी उदासीन है। कुछ तो सिर्फ उनके निन्दक ही हैं। यह रुख काफी आत्मघातक है।

ता. ६ फरवरी को तबियत कुछ खराब थी। पर शामको नियत समय पर प्रवचन हुआ। दुनिया एक कैसे बने इस विषय पर बोलते हुए जाति-पांति तोड़कर एक समाज बनाने पर जोर दिया।

इसके बाद कार में बैठकर जंगल में घूमने गये। लाल पानी बहाने वाली नदी देखी। इसकी तेज धार से एक पनचक्की चलाई जाती थी पर आजकल वह बन्द थी। पास में आफ्रिकन लोग रहते थे। यह स्थान शेरों के आने जाने लायक था। रात में यहां शेर जरूर आते होंगे।

रात्रिमें कल की तरह फिर बैठक हुई। हनुमान आदि बन्दर नहीं थे इत्यादि बातों का खुलासा किया। अहिंसा पर भी विवेचन हुआ।

ता. १० फरवरी को कई आफ्रिकन शिक्षित युवक मिलने आये। एकता के विचारों से काफी प्रसन्नता प्रगट की।

शामको गुरुद्वारे में एशियाइयों की समस्या तथा सत्यसमाज पर प्रवचन हुआ। एक भाई ने कहा कि इसी जगह काका कालेलकर का भी व्याख्यान हुआ था।

प्रवचन के बाद एक सज्जन ने कहा कि यहां की समस्या सुलझाने के लिये आपको स्थायी रूप में यहां रहना चाहिये। मैंने कहा कि इस तरफ आप लोग ध्यान दें फिर रहनेवाले भी मिल ही जायँगे।

रात्रि की बैठक में ११। बजे तक चर्चा हुई। आफ्रिकनों के साथ कैसे सम्बन्ध स्थापित करना चाहिये, उनके भ्रमों को किसप्रकार दूर करना चाहिये आदि बातों पर विस्तार से प्रकाश डाला। आफ्रिकनों में अब बड़ी तीव्र गति से जाग्रति हो रही है उसके अनुकूल अगर सम्बन्ध स्थापित नहीं किया, तो भारतीयों का भविष्य यहां अन्धकारपूर्ण होजायगा, इस दृष्टि से सत्यसमाज की योजना की उपयोगिता बताई।

ता. ११ फरवरी को दुपहर के बाद स्त्रियों की सभा हुई जिसमें सौ. वीणादेवी ने एक घंटा प्रवचन किया। जिसमें धर्म जाति समभाव, आफ्रिकनों के साथ सद्व्यवहार, हिन्द के टुकड़े होने के कारण, और उससमय स्त्रियों की हुई दुर्दशा, स्त्रियों पर सांस्कृतिक जिम्मेदारी आदि पर प्रकाश डाला। वीणादेवी गुजराती भी बोल सकती हैं इसलिये गुजरातीमें ये सब विचार सुनकर स्त्रियों को बड़ी प्रसन्नता हुई।

शामको वर्षा होने से आमसभा न हो सकी। ९ बजे से चर्चा के लिये मीटिंग हुई। जिसमें विवेक से काम लेने की तथा सत्यसमाज के संगठन की चर्चा हुई। कुछ सदस्य भी बने।

ता. १२ की स्त्रीसभा में वीणादेवी ने नरनारी समभाव और पर्दा आदि पर कहा। मैंने पुरुषों की सभा में स्वार्थ किस प्रकार व्यापक दृष्टि से परमार्थ बनसकता है, विवेक के बिना क्या क्या हानियां हैं आदि बातों पर विवेचन किया।

रात्रि में मन्त्रतन्त्र जादू टोना आदि की निःसारता बतलाई। धर्म के नामपर वे धतिंग किये जायँ तो इनके चक्कर में न आना चाहिये। विज्ञान के चमत्कार इनसे हजारों गुणे महान हैं इन्हीं की जूठन का एकाध कण लेकर धर्मगुरु ढोंग करके ठगा करते हैं, इनका भंडाफोड़ करना चाहिये। आदि बातें विस्तार से समझाई गईं। इस विषय में मैंने अपने तथा दूसरों ने कुछ संस्मरण भी सुनाये। ११ बजे मीटिंग समाप्त हुई।

१७— मरोकडे सम्प्रदाय

ता. १३-२-५२ को भी बहुत से व्यक्ति दर्शन को आये। उनमें विशेष थे मरोकडे सम्प्रदाय के दो व्यक्ति। यहां का मरोकडे सम्प्रदाय ईमानदारों का संगठन है। इस सम्प्रदाय के व्यक्ति चोरी नहीं करते, शराब या बीड़ी सिगरेट नहीं पीते। यहां स्मोकिंग (बीड़ी आदि पीने का) बड़ा रिवाज है। चाहे हिन्दुस्तानी हो, चाहे यूरोपियन हो, चाहे आफ्रिकन, प्रायः हर एक पुरुष,

स्मोकिंग करता है। हर भारतीय पुरुष सौ-पचास शिलिंग माह स्मोकिंग कर जाता है। रिवाज की यह बहुलता देखकर मैं अपने सामने भी स्मोकिंग की अनुमति देदेता था। पर मरोकड़े सम्प्रदाय के वे व्यक्ति इस बारे में काफी कट्टर मालूम हुए। मेरे और उनके बीच में बातचीत करने के लिये जो भारतीय सज्जन दुभाषिये का काम कर रहे थे वे सिगरेट पी रहे थे। एक मरोकड़े भाई ने पहिले उनको सिगरेट पीने से मना किया, और सिगरेट फेंक दी गई। इसके बाद बातचीत हुई।

उन लोगों को मेरा परिचय यह कहकर दिया गया था कि मैं भारत के मरोकड़े सम्प्रदाय का गुरु हूं। मरोकड़े सम्प्रदाय में ईमान और सचाई पर ज्यादः जोर दिया जाता है इसलिये सत्यसमाजका अनुवाद मरोकड़े किया गया। शब्दशः यह ठीक था पर व्यवहार में इसमें काफी अतिशयोक्ति है। मरोकड़े सम्प्रदाय की ईमानदारी तो अद्भुत और आश्चर्यजनक है। म्बरारा में ही मुझे पता लगा कि एक आदमी ने किसी के नव शिलिंग चुराये थे, और जब वह मरोकड़े सम्प्रदाय में दीक्षित हुआ तब उसने दीक्षा के समय वह चोरी कबूल की और वे नव शिलिंग वापिस किये गये। इसी प्रकार एक भारतीय को पुरानी चोरी के पंद्रह शिलिंग वापिस मिले थे। आगे चलकर कबाले में भी मुझसे कहा गया कि तीन वर्ष बाद मेरा फाउन्टनपेन वापिस किया गया था। एक भाई को तो बारह वर्ष पहिले चोरी गई हुई रकम गतवर्ष वापिस मिली थी।

खैर! उन मरोकड़े लोगों ने मेरे विषय में बड़ा आदर प्रगट किया और कहा कि भारतीय लोग सत्यसमाजी क्यों नहीं होते? आप उन्हें सत्य-समाजी बनाइये।

आज तीसरे पहर स्त्रियों की सभा में वीणादेवी ने फिर प्रवचन किया। सभ्यता शिष्टाचार आदि पर बोलते हुए सत्यसमाज की विशेषता समझाई। सत्यमन्दिर की योजना पर भी कहा। स्त्रियों ने खूब अनुमोदन किया और सत्यमन्दिर बनने में उत्सुकता दिखाई।

शामको मेरा प्रवचन हुआ। आज उपस्थिति कुछ विशेष थी। मैंने

धर्म अर्थ काम मोक्ष पर प्रवचन किया। पीछे सत्यसमाज की चर्चा भी हुई।

यहां सत्यसमाज के दस बारह सदस्य बनचुके थे, जिसमें एक आफ्रिकन बहिन भी थी, एक आफ्रिकन भाई भी था, एक मिश्रसंतान भी थी। सभा में दस सदस्य और बनगये। म्बरारा में कुल साठ घर ही हैं। जिसमें तीस हिंदुओं और सिक्खों के हैं। इस जनसंख्या को देखते हुए सदस्य संख्या ठीक ही होगई।

आज बुटाले के त्रिकमजीभाई भी मिले। ये एक बार अपनी मोटर लेकर कम्पाला तक मुझे लेने गये थे। पर लुगाजी के कार्यक्रम के कारण मैं कम्पाला न पहुंच सका था इसलिये इन्हें खाली वापिस आकर चारसौ मील से भी अधिक का चक्कर व्यर्थ लगाना पड़ा था। बुटाले ले चलने की इनकी बड़ी इच्छा थी पर आगे का कार्यक्रम निश्चित होजाने से मैं न जासका।

रातको ९ बजे से ११। बजे तक चर्चा हुई।

१८—कबाले

१४ फरवरी ५२ को कबाले जाने का कार्यक्रम था। वहां से तार आ चुका था कि शामको छः बजे तक आजाइये। छः बजे प्रवचन का प्रबन्ध किया गया है।

यहां के वीरजीभाई ने कबाले तक पहुँचाने की जिम्मेदारी ली थी। आज उन्हीं के यहां भोजन था। यहां के रिवाज के अनुसार जहां मेरा निमन्त्रण होता था वहां दस पांच व्यक्ति और निमन्त्रित किये जाते थे। आज भी काफी आदमी निमन्त्रित किये गये थे। दो बजे रवाना होने का कार्यक्रम था, पौने दो बजे भोजन से निवट चुके थे। इतने में वीरजीभाई ने कहा कि पहाड़ी रास्ता है, स्वामीजी के साथ अपने में से भी कोई आदमी जाना चाहिये। एक मोटर में मजा भी न आयगा। इसलिये अपनी दूसरी मोटर की भी व्यवस्था की। खुद पहुंचाने के लिये साथ आये, कम्पाला के एक मेहमान को भी साथ लिया; जीवन जी भाई को काफी काम था पर उन्हें भी मेरे पहुंचाने की बेगार

में ले लिया। छः बजे तक कवाले पहुंचने की सूचना तार द्वारा भेजदी गई।

आशा थी कि ढाई बजे रवाना होजायेंगे। पर ठीक समय पर एक ड्राइवर गुम गया। सारे टाउन में उसे ढूंढा गया, पर न मिला। कुछ देर में अपने आप आगया। पर इस में आधे घंटे की देर होगई।

यहां के आफ्रिकन मोटर ड्राइवरों की यह आदत है कि थोड़ा सा भी अवसर पाते ही वे इधर उधर खिसक देते हैं। हर आफ्रिकन उनका कुटुंबी सा होता है। उनके खाने पीने की चिन्ता अपने को नहीं करना पड़ती। अपना खाना उन्हें पसंद भी नहीं आता। वे कहीं भी मटोकी या कंद खालिया करते हैं। कहीं भी जाकर गपशप लड़ाने लगते हैं। इन लोगों का जीवन आनंदी, मिलनसार, सहनशील और कुछ लापर्वाह होता है।

खैर! सवातीन बजे हम म्बरारा से रवाना हुए। ९२ मील का रास्ता था। पर वर्षा के कारण एक रास्ता खराब होगया था इसलिये आठ मील के चक्कर का दूसरा रास्ता लेना पड़ा। इस प्रकार १०० मील का सफर होगया।

रास्ता बिकट, किन्तु नयनाभिराम था। मीलों तक दोनों तरफ के पहाड़ों के बीच में से एक चौड़ी नदी थी। जो करकोटे के झाड़ों से आच्छादित थी। नदी का पानी नीचे धीरे धीरे बहता रहता है पर दिखाई नहीं देता। इसी करकोटे को देखकर नदी का पता लगता है। इसी करकोटे से यहां मकान छाये जाते हैं। काटकर इसे सुखा लेते हैं।

इतने में गायों का झुंड मिला। इतने सुंदर चिकने सफेद और बिशाल सींग किसी जानवर के सिर पर नहीं देखे जाते जितने यहां की गायों के सिर पर होते हैं। अच्छे हाथीदांतों से ही इनकी तुलना की जासकती है।

पर वे गायें बड़ी सीधी होती हैं। अपने सींगों से आदमियों को डरवाती भी नहीं हैं। मध्यप्रदेश की गायों की अपेक्षा वे हृष्ट पुष्ट भी होती हैं। आफ्रिकन लोगों की धनिकता का परिचय इन गायों से लगाया जाता है।

आजकल ये लोग गाय के घी दूध का काफी धंधा करते हैं। पर बैल सिर्फ मारकर खाने के ही काम में आते हैं। खेती में उनका उपयोग नहीं किया जाता।

बीच में किनोनी नाम का गांव मिला। यहां भारतीयों के सिर्फ दो घर थे। उन्हें पता लगा तो उनने रोकलिया। और कमसे कम थोड़ी देर रुककर दूध चाय आदि लेने का आग्रह किया। हमने छः बजे कबाले पहुंचकर प्रवचन देने की बात कही। ऊधवजीभाई और उनके घर की स्त्रियाँ मोटर के पास आईं। प्रणाम किया। और दूध चाय पीने का आग्रह और भी तीव्रता से किया।

उनका कहना था कि जितने भारतीय नेता यहां से निकलते हैं वे हमारा स्वागत सत्कार जरूर ग्रहण करते हैं, आप हमें निराश न करें। मुझे मालूम हुआ कि इनका स्वागत अगर स्वीकार न किया जायगा तो इनके दिल को काफी चोट पहुंचेगी।

आखिर हम सब उनके घर में गये। पांच मिनिट भी पूरे न हुए होंगे कि गरम गरम दूध चाय के प्याले सामने आगये। इतनी जल्दी इतनी तैयारी देखकर लालजीभाई के मुँह से निकल पड़ा कि क्या आपको तार मिल-गया था जिससे पहिले से सब तैयारी करली थी? ऊधवजी मुसकरादिये। मैंने मन ही मन कहा, जहां तीव्र अनुराग है वहां बिना तार के ही तार का काम होजाता है।

मैंने इनसे व्यापार धंधे की बात भी पूछी। यहां के आफ्रिकनों का व्यवहार कैसा है? इस पर ऊधवजी ने संतोष व्यक्त किया। बोले–सब अच्छे आदमी हैं। उन्हीं की दमपर हमारी गुजर होरही है। ये लोग हमें किसी तरह नहीं सताते। हम भी इनकी इच्छा के अनुसार ही इनसे व्यवहार करते हैं। किसी तरह का झगड़ा मोल नहीं लेते।

उनकी बात से मुझे काफी संतोष हुआ। मैंने मन ही मन कहा कि जो लोग आफ्रिकन लोगों की जाति को ही खराब कहकर उनकी निंदा

करते हैं वे बिलकुल एकांगी और पक्षपात पूर्ण विचार करते हैं। यह विचार-धारा आत्मघातक भी है।

यों तो ऊधवजी भाई संतुष्ट मालूम हुए, पर वे भारतमाता के दर्शनों को बड़े लालायित थे। इस बात का जिक्र करते ही उनकी आंखों में आंसू आगये। मैंने उन्हें तसल्ली दी और यहां के लोगों की सेवा करने की प्रेरणा की।

उनके घर में एक वयस्क भाई तथा उनका बालक बीमार था। उनने बालक से कहा कि मुझे प्रणाम करे। वह रजाई से ढका पड़ा था वह उठा, पर मैंने स्वयं हाथ बढ़ाकर उसे आशीर्वाद दिया। हाथ लगाते ही मालूम हुआ कि उसे १०३ डिग्री बुखार होगा। मैंने मन ही मन उसके नीरोग होने की परमात्मा से प्रार्थना की।

चलते समय घर के स्त्री पुरुष मोटर के पास वंदना करने लगे। मोटर आगे बढ़ी। मैं सोचने लगा कि भारत से हजारों मील दूर, समुद्र के पार, एक जंगल में भारतमाता का नाम लेने वाले लोग मौजूद हैं यह भारत के लिये कितने सौभाग्य की बात है। इसका अधिकांश श्रेय गुजरात, काठियावाड़ और पंजाब को है।

कुछ आगे बढ़ने पर गायों के टोले पर टोले मिले। इससे मोटरों को थोड़ी देर रुकना पड़ा।

एक जगह मोटरें खड़ी करके हम लोग एक आफ्रिकन बगीचे में गये। वहां एक आफ्रिकन बाई ऊनी स्वेटर बुन रही थी। वहां आम तोड़ तोड़कर खाये। आफ्रिका की यह विशेषता है कि एक ही आम के वृक्ष में आम का मौर भी रहता है, कच्चे आम भी रहते हैं, पके आम भी रहते हैं। बहुत से केले भी लिये। शहतूत भी थे पर कच्चे थे। १५-२० मिनिट इसमें लग गये। उसे तीन शिलिंग (दो रुपये) दिये। भारत की दृष्टिसे ये कम दाम थे, पर आफ्रिका के बाजारों की दृष्टिसे अधिक थे।

बगीचे में अनार आदि के अनेक झाड़ थे। वह आफ्रिकन परिवार सुसंस्कृत और सुखी मालूम हुआ।

जब कबाले पच्चीस तीस मील रहगया तब आफ्रिकनों की श्रमशीलता का अद्भुत परिचय हुआ। यद्यपि यहां पहाड़ ही पहाड़ थे, मैदान कहीं नजर नहीं आता था, पर खेत और वस्ती घनी थी। पहाड़ों के नीचे से लेकर ऊपर तक बड़ी बड़ी क्यारियाँ बनाई गई थीं। उनमें कन्द तथा अन्य खाद्य पदार्थ लगाये गये थे। पहाड़ इतने खड़े थे कि उनके ऊपर चढ़ना कठिन था पर वहीं इन लोगों ने क्यारियाँ बनाईं थीं। क्यारियाँ भी पहाड़ के समान खड़ी थीं। भारत में तो ऐसी जगह पर किसी चीज का पैदा होना मुश्किल ही था पर यहां की बारहमासी वर्षा के कारण खड़े ढालदार पहाड़ों पर भी खेती होजाती थी। कहीं कहीं ढाल को काटकर ये लोग दस पांच गज जगह निकालकर अपने रहने के लिये झोपड़ियाँ बना लेते हैं। कहीं कम ढालदार मैदान मिल जाने पर दस दस पांच पांच झोपड़ियाँ बना लेते हैं ऊंचे ऊंचे पहाड़ों को भी क्यारियों से सिर से पैर तक इस प्रकार सजा दिया था और बीच बीच में झोपड़ियों और पगडंडियों से पर्वत इस तरह सुसज्जित थे कि शोभा देखते ही बनती थी। जंगल में भी मंगल ही मंगल दिखाई देरहा था। किसी एक पहाड़ में ही यह शोभा नहीं थी किन्तु चारों तरफ नजर दौड़ाने पर जो दर्जनों पहाड़ नजर आते थे उन सब पर ऐसी बस्तियाँ, क्यारियाँ और पगडंडियाँ थीं। कबाले तक ऐसी ही लगातार वस्ती थी। मानों पचीस तीस मील लम्बा, कई मील चौड़ा, विरल विरल बसा हुआ कोई एक ही गांव हो। जनसंख्या अधिक होने से यहां आदमियों की आमद रफ्त भी अधिक थी।

मेरी मोटर आगे थी और लालजीभाई जिस मोटर में थे वह पीछे थी। बीच बीच में हम पीछे की ओर नजर डालते जाते थे कि पीछे की मोटर आरही है या नहीं। एक बार बड़ी देर तक पीछे की ओर नजर डालने पर भी मोटर दिखाई नहीं दी। पहाड़ का उतार चढ़ाव काफी था, रास्ते भी टेढ़े

थे, एक ही रास्ता, जिसपर से हम गुजर चुके थे, एक के नीचे एक कई जगह दिखाई देरहा था। इसलिये सोचा कि किसी टेड़ में पीछे की मोटर होगी। पर एक जगह पीछे की ओर दूर तक रास्ता दिखाई देने पर भी, पीछे की मोटर दिखाई नहीं दी, तब सन्देह हुआ और हमने मोटर रोकी। पहाड़ के ढाल में मिट्टी खोद-खोदकर इस तरफ सड़कें बनाना पड़ती हैं, हम ऐसे ही स्थान में थे। सामने के पहाड़ पर वही क्यारियाँ झोपड़ियाँ थीं। थोड़ी देर में आफ्रिकन बच्चे इकट्ठे होगये। हम उनके लिये तमाशा थे, वे हमारे लिये तमाशा थे। भाषा जुदी जुदी होने से परस्पर बोलचाल सम्भव नहीं था।

इतने में पीछे की मोटर आगई। मालूम हुआ कि पेट्रोल में कचरा आजाने से मोटर रुकगई थी। करीब आधे घंटे में ठीक व्यवस्था की जासकी।

खैर! इन सब कारणों से हम साढ़े सात बजे के बाद कबाले पहुंचे। छः बजे के पहिले से लोग बस्ती के बाहर स्वागत के लिये इकट्ठे हुए थे पर एक घंटे बाट देखकर लौट गये थे।

आखिर हमारी मोटर लालजीभाई जोगिया के घर पहुंची। थोड़ीही देर में कुछ लोग इकट्ठे होगये। इस नगर में भी बिजली नहीं है। नल भी नहीं है इसलिये पानी काफी दूर से मंगाया जाता है, इसकेलिये एक नौकर अलग रखना पड़ता है। घर घर गेस के लेम्प हैं।

हमारे कार्यक्रम में कबाले में ठहरने के लिये अपेक्षाकृत कम ही समय था। परसों हमें आगे आगे बढ़जाना था। इसलिये सोचा कि आज देर होजाने पर भी सभा का आयोजन करना चाहिये।

कबाले में हिन्दू मुसलमान भारतीयों की तीस दूकानें हैं। पन्द्रह घर और हैं। इसप्रकार कुल पैंतालीस घर हैं। पास की टेकरी पर सरकारी बंगले पोष्ट आफिस, यूरोपियन होटल और बस्तियाँ आदि हैं। पुलिसथाना अब नीचे आगया है। एक बाजार अलग भी बनाया गया है जिसमें एक दूकान भारतीय की है और बाकी दूकानें आफ्रिकनों की हैं। शाक भाजी आदि यहीं

मिलती है । यहां ठंड काफी पड़ती है । मच्छर खटमल यहां बिलकुल नहीं हैं ।

ठंड अधिक होने से रात में मीटिंग करना कुछ कठिन ही था । फिर भी मीटिंग हुई । सोचा था कि जो भी दस पांच आदमी यहां आजायँगे उन्हीं को कुछ सुना दिया जायगा । पर आदमी आशा से अधिक आये । सारी जगह भर गई । पीछे आने वालों को ठूंस ठांसकर बैठाना पड़ा । प्रार्थना के बाद लालजीभाई ने मेरा परिचय दिया फिर मेरा प्रवचन शुरु हुआ ।

मैं धर्म समभाव के साथ आफ्रिका की समस्या पर बोला और सत्यसमाज की उपयोगिता बताई । इसके बाद प्रश्नोत्तर हुए । यहां कुछ लोगों में प्रश्न करने का उत्साह खूब मालूम हुआ । खूब जोश के साथ प्रश्न किये गये । आफ्रिकनों के साथ कैसे निभें ? क्या निकट भविष्य में यहां कम्युनिज्म आजायगा ? क्या तीसरा महायुद्ध होगा ? इत्यादि अनेक प्रश्न थे । इनका मैंने विस्तार से खुलासा किया । ऐसा मालूम हुआ कि उत्तरों से सब को काफी सन्तोष हुआ है । ९। बजे से ११। तक मीटिंग चली ।

दूसरे दिन (ता. १५ फरवरी ५२) सबेरे दो मोटरों में बैठकर पास की टेकरी पर घूमने गये जिसपर सरकारी आफिस तथा यूरोपियन बस्ती थी । यूरोपियन लोग सफाई पसन्द बहुत होते हैं इसके प्रमाण यहां भी मिले ।

लौटकर आये तो १०॥ से स्कूल में फिर प्रवचन किया । सत्य-समाज की सारी योजना सुनाई । अनुमोदक पत्र पढ़कर सुनाया । प्रश्नों के उत्तर दिये । सवा बारह बजे मीटिंग समाप्त हुई । भोजन में अभी एक घंटे की देर थी इसलिये सबने कहा कि तब तक यहां का रोमन कैथोलिक चर्च देख लिया जाय । दो मोटरों में बैठकर सब लोग वहां गये । गिरजाघर काफी विशाल था, पर वह भी छोटा पड़ रहा था इसलिये पासमें एक और बड़ा गिरजाघर बनाया जारहा था जिसमें हजारों आदमी बैठ सकें । इसे बनाने के लिये लोग मुफ्त में मजूरी करते थे । ईंटें आदि भी बना देते थे ।

आफ्रिका में लाखों की संख्या में लोग ईसाई बनालिये गये हैं ।

उनके बच्चों को पढ़ने लिखने का इन्तजाम भी यहां किया गया है। जब हम लोग वहां गये तब सैकड़ों बालक बालिकाएँ गिरजाघर में प्रवेश कर रहे थे। वे लोग प्रार्थना में लीन होने के लिये झुक गये। कुछ देर बाद प्रार्थना गुन-गुनाने लगे।

जब हम बाहर आये तो सैकड़ों बालकों ने हमारी मोटरों को घेर लिया था। हम लोग पहुंचे तो हमें भी उनने घेर लिया। बालोचित हास्य के साथ कुछ शिष्टाचार के शब्द भी बोल रहे थे, बाकी प्रसन्नता का आदान प्रदान चेहरों से ही होरहा था। लालजीभाई ने फोटो लिये।

लौटते समय दिल में यह बात खटकती रही कि भारतीय इनके सुधार के लिये ऐसा कोई आयोजन नहीं करते। भारत से इसप्रकार सेवा देने वाले लोग भी यहां नही आते।

वहां से लौटकर श्री टप्पूभाई जी के यहां भोजन किया। और भोजन करके बुन्योनी झील देखने उन्ही की मोटर में बैठकर गये।

बुन्योनी झील

बुन्योनी झील के लिये एक अलग सा रास्ता गया था जो पहाड़ों की कमर छीलछीलकर बनाया गया था। इन पहाड़ों पर भी ऊपर नीचे बस्तियाँ थी। क्यारियों के खेत थे। सम्भवत: इस प्रदेश की सारी पहाड़ियाँ इसी तरह आबाद हैं।

झील भी पहाड़ों से घिरी हुई थी। यह झील भी काफी लम्बी है। झील के बीच में एक पहाड़ी द्वीपमें कुछ बंगले दिखाई देरहे थे। दूरबीन लगा-कर देखा तो आसपास काफी सुन्दरता और सफाई मालूम हुई। मालूम हुआ कि यहां एक कुष्ठाश्रम है। यहां कुष्ट रोगी रक्खे जाते हैं उनका इलाज किया जाता है।

इस झील की बड़ी विशेषता यह है कि इसमें मगर किबोका आदि विशाल प्राणी नहीं हैं, सिर्फ छोटी छोटी मछलियाँ हैं। इतनी बड़ी झील में

कोई बड़े जन्तु न हों यह बड़ा आश्चर्य ही है। हमें भी कोई जानवर दिखाई नहीं दिया। सिर्फ छोटी छोटी मछलियाँ ही दिखीं। पानी बहुत साफ था। एक जगह एक छोटीसी मछली पानी के भीतर मरी पड़ी थी जो साफ पानी होने से ऊपर से भी दिखाई देरही थी। मछली मछली को जिन्दे में ही खा-जाती है, ऐसी हालत में कोई मछली की लाश पानी में सुरक्षित रहसके यह भी एक आश्चर्य ही मालूम हुआ।

एक जगह झाड़ियों में घुसकर हम उस स्थान में पहुंचे जहां तैरने आदि के लिये एक लकड़ी का प्लेटफार्म बनाया गया था। पहिले यूरोपियन लोग यहां नहाने आते थे। कपड़े बदलने आदि के लिये भी उनने एक मकान-सा बना रक्खा था। पर आजकल वह मकान नहीं था। प्लेटफार्म भी उजड़ गया था। उसपर चढ़ने का रास्ता भी घास फूस से ढक गया था।

फिर हम उस स्थान पर आये जहां एक नाव पड़ी हुई थी। सुना कि यह मशीन से चलती है। पानी के भीतर बने हुए एक छप्पर में यह कैद थी। हम लोगों की मोटर देखकर दूर से कुछ आफ्रिकन अपने डोंडों पर बैठ-कर वहां आये। उनकी आशा थी कि हम लोग डोंडे में बैठकर झील में घूमेंगे। उन्हें कुछ सेन्ट या शिलिंग मिलजायँगे। पर शामको पांच बजे से फिर प्रवचन का कार्यक्रम होने से हमारे पास जलबिहार के लिये समय नहीं था। यदि होता भी तो हम डोंडे में बैठकर जल विहार करने न जाते।

ऐसे डोंडे मैंने बाल्यावस्था में अपने नगर दमोह में बहुत देखे थे। एक ही मोटी लकड़ी को भीतर से काट काटकर ये बनाये जाते हैं। नाव सरीखी बैठने की सुविधा इनमें नहीं होती। दमोह के डोंडों की अपेक्षा ये कुछ बड़े थे पर मजबूती में अधिक नहीं मालूम हुए।

आफ्रिकन लोग हम लोगों को भेंट करने के लिये बहुतसे नील कमल लाये थे। उन्हें लेकर जब उन्हें भीतर से देखा तब तबियत खुश होगई। मैं लाल कमल को सब से श्रेष्ठ मानता हूं। दमोह का फुटेरा तालाब लाल कमलों से ढका पड़ा है। बाल्यावस्था में मैं उसमें नहाने जाता था, कमल लाता था,

उसकी कमलगट्टोंवाली छतरी भी लाता था, कमल गट्टे खाता था, उसकी मीठी मृणाल भी मैंने खाई है। इसके बाद फिर कमलों से सम्पर्क नहीं हुआ। सफेद कमल कभी कभी देखे हैं पर उनकी तरफ जी कभी नहीं लुभाया। नील कमल शास्त्रों में पढ़ा था। संस्कृत कवियों ने इन्दीवर उसका अलग नाम भी दिया है। पर वह मेरे देखने में नहीं आया था। गीता देवी ने याद तो दिलाई कि एक बार कलकत्ते में नीलकमल देखा था पर मुझे उसका स्मरण नहीं हुआ। यहां नील कमल देखकर एक नवीन सुन्दरता के दर्शन किये हैं ऐसा ही भाव हुआ।

नीलकमल भेंट में लेलिये, पर जब उन आफ्रिकनों को मालूम हुआ कि हम जलविहार न करेंगे तब उनके चेहरे मुरझागये। तब लालजी भाई जोगिया ने उन्हें एक एक सिगरिट भेंट की, तब उनके चेहरे खिलगये। आफ्रिकन लोग सिगरेट के बहुत शौकीन होगये हैं।

जहां नौकाएं रक्खी हुई थी वहां मोटर गैरेज भी बने हुए थे। जिसमें मोटरें रखकर ताले बन्दकर यात्री लोग जल विहार आदि कर सकें। इसलिये पहाड़ काटकर कुछ जमीन निकाली गई थी। एक जगह ऐसा मालूम हुआ कि यहां काली चट्टानें काटना पड़ी हैं। पर कुतूहल से जब मैंने उन्हें हाथ लगाया तो मालूम हुआ कि वे मिट्टी के समान कोमल हैं। दो उंगलियों से दबाने से मिट्टी की तरह पिस जाती हैं। वर्धा में पत्थर और मिट्टी के बीच की चीज होती है जिसे मुरम कहते हैं पर यह मिट्टी और मुरम के भी बीच की चीज मालूम हुई। हाथ में लेनेपर बजन पत्थर की तरह मालूम हुआ। बात छोटी सी थी पर थी आश्चर्य-जनक।

झील से लौटकर प्रवचन के लिये गये। शामको ५॥ बजे से ७॥ बजे तक प्रवचन किया। विवेक पर प्रवचन करते हुए, देव गुरु शास्त्र और लोकाचार के विषय में सत्यनीति का परिचय दिया। अन्त में सत्यसमाज की चर्चा की। श्री शिवराम जी भाई ने स्वयं सत्यसमाजी बनने तथा औरों को भी सत्यसमाजी बनाने का वचन दिया।

रात में मेरे स्वागत के उपलक्ष्य में शिवराम जी भाई ने अपने घर पर पार्टी दी। जिसमें एक वयोवृद्ध यूरोपियन को भी निमन्त्रित किया गया था। वे भाई वयोवृद्ध थे पर तन मन से जवान थे। मजाक करने कराने का उन्हें शौक था। सब ने भोजन किया पर मैंने सिर्फ दूध और फल लिये।

कबाले के बाजार में अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक भीड़ थी। कारण यह कि आसपास के सारे पहाड़ तलहटी से चोटी तक आफ्रिकन लोगों से आबाद है। इसलिये अपेक्षा कृत इस तरफ घनी बस्ती है। सरकार यहां के लोगों को प्रान्त के दूसरे भागों में बसने या काम करने को भेजा करती है। इसके लिये वह आने जाने का खर्च भी देती है। फिर भी बस्ती इस तरफ घनी है इसलिये बाजारों में भी यहां ज्यादा लोग दिखाई देते थे।

दर्जी का काम तो प्रायः आफ्रिकन लोग ही करते हैं। भारतीयों की एक एक दूकान की छपरी में चार-चार पांच-पांच आफ्रिकन दर्जी मशीन चलाते बैटे रहते हैं। वे शामको अपनी मशीनें दूकान में रख जाते हैं इसके लिये प्रत्येक दर्जी करीब बीस शिलिंग भाड़ा भी देता है इसप्रकार दूकान का आधा भाड़ा निकल जाता है।

पर इतने दर्जी होने पर भी यहां के सब आदमियों के लिये कपड़ा पूरा नहीं होता। कबाले के बाजार में चमड़ा पहिनने वाले स्त्रीपुरुषों की संख्या काफी दिखाई देती है। कमर में वे चमड़ा लपेटे रहते हैं जो घुटने तक नीचे लटकता है, ऊपर दूसरा चमड़ा बायें कंधे पर पट्टियों से लटकता हुआ दाहिने तरफ शरीर को ढके रहता है। यह चमड़ा बकरे का होता है, मक्खन तेल लगाकर कोमल किया जाता है।

स्त्रियाँ इस चमड़े को सजाती हैं। ऊपर के चमड़े में चांदी के मोती से बनाकर उसकी झालर लगाती हैं। पैरों में साधारण धातु के तारों के गुंथे हुए लच्छे इतने अधिक पहिनती हैं कि पिंडरी से घुटने तक पैर ढकजाता है। पांच-पांच शेर का वजन पहिनें हुए वे घूमती हैं। कबाले में आफ्रिकन स्त्री और भारतीय पुरुष से पैदा होने वाली सन्तान भी काफी है। इनके बाल

काफी सुन्दर होते हैं। मुंह की आकृति भी ठीक होजाती है रंग में भी काफी फर्क आजाता है। सामाजिक संस्कार तथा भाषा भी भारतीयों की होजाती है। दूसरी पीढ़ी में तो बालों का सौंदर्य असाधारण होजाता है। एक मानवता के निर्माण के लिये इस प्रकार के मिश्रविवाह अधिक उपयोगी हैं। देखा गया है कि इसप्रकार की मिश्रसन्तान में दोनों नस्लों के गुण उतरते हैं। बुद्धिमत्ता में भी ये बढ़जाते हैं। अब उसका सदुपयोग या दुरुपयोग कराना समाज के हाथ में है। सत्यसमाज का प्रचार इन लोगों की सामाजिक समस्या को अच्छी तरह हल कर सकता है।

वहां मैंने यह भी सुना कि बेलजियम राज्य की सीमा पर सोने टीन आदि की खदानों के मालिक यूरोपियन भी घर में आफ्रिकन स्त्री रखते हैं, उनसे भी मिश्रसन्तान पैदा हुई है। पर वह मुझे देखने को न मिल सकी, न उसकी सामाजिक स्थिति को जान सका।

केन्या युगांडा की हवा इतनी गर्म नहीं है कि यहां इतने काले आदमी हों, कबाले तो बारह माह ठंडा रहता है। यहां के काले आदमी किसी समय किसी गरम जगह से आकर बसे होना चाहिये। उस नस्ल का असर अभी चला आता है। मिश्र-संतान से यहां के कुछ लोगों का रंग बदल जायगा और सम्भवतः वह स्थायी होगा। विज्ञान का उपयोग करके भी इस नस्ल को सुधारा जासकता है। जिस युग में पिचकारी से बच्चे पैदा करने का रास्ता खुल गया हो उस युग में यह समस्या असाध्य नहीं कही जासकती।

१९— किसोरो

किसोरो युगांडा का अन्तिम टाउन है। यहां भारतीयों के सिर्फ चार घर हैं। यहां से थोड़ी दूर पर ब्रिटिश राज्य की सीमा समाप्त होती है और बेलजियम का राज्य शुरु होता है। मैं चाहता था कि बेलजियम राज्य में घुसकर कुछ टाउनों में जाकर वहां बसे हुए भारतीयों की परिस्थिति का अध्ययन करूं और वहां की समस्याओं को सुलझाने में सत्यसमाज का क्या उपयोग है वह जानूं। सम्भव हो तो वहां भी सत्यसमाज की स्थापना करूं।



आफ्रिकन बालकों के बीच स्वामीजी [कबाले]

पर समय की कमी थी, इसलिये एकाध स्थान देखने का ही कार्य-क्रम बना सका। और उसके लिये ता. १६ फरवरी ५५ को सबेरे किसोरो के लिये रवाना हुआ। इसके लिये टप्पूलालजी ने अपनी मोटर का प्रबन्ध किया। लालजी भाई जो गया को यद्यपि बहुत काम था पर उनके बिना काम न चलता इसलिये उन्हें भी साथ किया। टप्पूलालजी के छोटे भाई कांतिलालजी भी साथ लिये गये। हम साढ़े तीन आदमी तो थे ही।

किसोरो कबाले से सिर्फ ५० मील है। पर रास्ता विकट है। पहाड़ों को काट काटकर ऊंची नीची आड़ी टेढ़ी सड़क बनाई गई है। कहीं कहीं तो दस दस कदम पर सड़क मुड़ती है। उस जगह मोटर चलाना, और टकराने से बचाना बड़ा कठिन होता है। थोड़ीसी भी गलती से सैकड़ों फुट गहरी खाई में समाजाना पड़े। पर ड्राइवर होश्यार था। यहां के आफ्रिकन ड्राइवर भी अब काफी होश्यार होगये हैं। इसलिये हम सकुशल पहुंचे और सकुशल लौटे।

रास्ते के प्राकृतिक सौन्दर्य का क्या पूछना। दो पहाड़ियों के बीच में करकोटे से ढकी हुई नदी, (मुग्गा) और किसी एक पहाड़ी की कमर पर खुदी हुई हमारी सड़क, और एकौसे चोटी तक पहाड़ियों पर बसी हुई आफ्रिकन बस्तियां, और क्यारियों के समान उनके खेत। एक पहाड़ी खत्म होती, तो दूसरी आजाती। मैदान कहां नहां, हम हिंडोले की तरह कभी नीचे होते कभी ऊपर। ऊपर पहुंचने पर आस पास दर्जनों पहाड़ियों के दर्शन होते, नीचे उतरने पर आगे पीछे दायें बायें ऐसे चार पहाड़ जरूर दिखाई देते। जब हम ऊंचे पहाड़ पर होते और नीचे की टेकरियों पर बसी हुई आफ्रिकन बस्तियों पर नजर पड़ती तो बड़ा अच्छा मालूम होता।

बीचमें रास्ते में वेणुबन (बांसका जंगल) मिला। सारा पहाड़ ऊपर से नीचे तक बांस के झाड़ों से ढका हुआ था। उसी को काटकर हमारी सड़क बनाई गई थी। एक तरफ पहाड़ की ऊंचाई, दूसरी तरफ पहाड़ की निचाई, दोनों बांस के वृक्षों से आच्छादित। भारत में बांस के बिड़े होते है

जिनमें सौ पचास बांस होते हैं। पर यहां सारा जंगल बांस के वृक्षों से भरा हुआ था। वहां से किसी जानवर का निकलना भी कठिन था। जंगल कई मील का था। यहां मानव की बस्ती नहीं थी। कोई जानवर हमें रास्ते में नहीं मिला। सुना था कि वेणुवन में हाथी रहते हैं। यहां भी सुना कि कभी कभी किसी ने हाथी देखा था। पर हमें हाथी तो क्या दिखता, पर उतने घने वन में हमें हाथी का रहना ही अशक्य मालूम हुआ।

दुपहर को किसोरो आये। और लालजी भाई थोभाणी के यहां रुके। उनको साथ लेने के लिये यहां रुकना जरूरी था।

चार लालजी- इस दौरे में लालजी भाई नाम के इतने व्यक्ति सम्पर्क में आये है कि पाठक गड़बड़ी में पड़जायेंगे। जब किसोरो में भोजन करने बैठे तब पास पास तीन लालजी बैठे थे। मैंने विनोद में कहा कि "लालजी भाई व्यक्तिवाचक संज्ञा न रहकर यहां जातिवाचक संज्ञा बनगई है।" इसलिये यहां उनकी अलग अलग पहिचान कराना जरूरी है।

१— लालजी वैद्य। ये अयोध्या में रहते हैं। इस दौरे के मुख्य सेवक ये ही थे। अपना तन मन धन इस कार्य में लगा रहे हैं। भारत से साथ आये हैं।

२— लालजी जोगिया। ये कबाले में रहते हैं। कम्पाला में इनके भाई करसनदासजी का घर हमारे लिये घर था, कबाले में इनका घर भी हमारा घर था। इन्हीं की प्रेरणा से हम कबाले में आये थे।

३— लालजी थोभाणी। ये किसोरो में रहते हैं। किसोरो में हम इन्हीं के यहां ठहरे थे। ये बेलजियम राज्य में साथ चले थे। इन्हीं के कारण कस्टम की कोई झंझट नहीं हुई।

ये तीनों लालजी किसोरो में एक हो गये थे।

४— लालजी पटनी। ये जिंजा में रहते हैं। अच्छे समझदार

और साहित्य प्रेमी हैं। आपने सत्यसाहित्य का काफी अध्ययन किया है।

लालजी भाई थोभाणी किसोरे के प्रतिष्ठित व्यापारी हैं आसपास जो सोने आदि की खदानें हैं उनके मालिक संचालक यूरोपियन लोग आपके ग्राहक और मित्र हैं। पर उन्हें शनि रवि को ही फुरसत मिलती है इसलिये इन्हीं दो दिनों में आपकी दूकान खूब चलती है। पर दूकान चलने से भी अधिक सवाल आनेवाले यूरोपियनों के खाली हाथ लौटने का था। इसलिये मेरे साथ न चलपाने के लिये ये विवश थे।

बेल्जियम राज्य में दो स्थानों पर जाने का मेरा कार्यक्रम था, किसेनी और रुहेंगेरि। किसेनी टांगानिका झील के किनारे सुन्दर शहर है, यहां दर्शनीय स्थान काफी हैं। पर यहां भारतीयों के घर दो तीन ही हैं। इसलिये प्रचार की दृष्टि से यहां जाना विशेष लाभप्रद न था। रुहेंगेरि साधारण स्थान था पर भारतीयों के घर काफी हैं। इसलिये विचार किया गया कि रोटी खाकर ३ बजे दिन को यहां से निकला जाय और शामको वहां प्रवचन करके ९ बजे रात तक वापिस आया जाय। इससे लालजी भाई थोभाणी को रविवार के दिन गैरहाजिर न होना पड़ेगा। आज का ही कुछ घंटों का नुकसान होगा। थोभाणी जी इतना समय खुशी से देने को तैयार थे। यह बात सब को पसन्द आई। किसेनी का कार्यक्रम स्थगित कर दिया। अब पौने दो सौ मील की यात्रा के बदले सिर्फ पचास मील की यात्रा का ही कार्यक्रम रहा।

किसोरो काफी ठण्डा स्थान है। आसपास कुछ मैदान भी है। सामने महाबोरा गिरिशृंग दिखाई देता है। अभी तक रास्ते में बड़े बड़े ऊंचे पहाड़ देखे थे पर इसके आगे सब बच्चे से मालूम होते थे। आसपास की तमाम पर्वत राशि मानों इसके घुटने चूम रही थी। बादलों में घुसा हुआ यह खूब ऊंचा चलागया था। इसकी ऊंचाई तेरह हजार चारसौ फुट थी।

यहां भी बकरे का चमड़ा पहिनने वाले स्त्री पुरुष दिखाई देते थे। कबाले में तथा इसके पहिले भी इसप्रकार के लोग काफी हैं।

थोभाणी जी के घर में एक साधारण मिर्च का झाड़ इतना बड़ा था जितना मैंने कहीं नहीं देखा था। मेरे शरीर से उसकी उंचाई दूनी थी। शाखाएं आदि भी उंचाई के अनुकूल मोटी थीं।

यहां बिजली तथा पानी के नल नहीं हैं। छप्पर का बरसाती पानी संग्रह करने की टांकी यहां भी थी।

२०— रुहेंगेरि (बेलजियम राज्य)

भोजन करके हम लोग निकले। रास्ता ऊंचानीचा बहुत नहीं था। आसपास ज्वारी के खेत थे। थोड़ी देर को ऐसा मालूम होने लगा कि मानो हम महाराष्ट्र के किसी स्थान में से गुजर रहे हैं। ज्वारी लाल थी। अर्जेन्टाइना का मिलो जिस प्रकार भारत में आया था और खाया था, उसी तरह की यह मालूम हुई। मटोकी आदि भी काफी दिखाई दिये। महाबोरा के पीछे दो गिरि शृंग और देखे जो महाबोरा से कुछ ही कम थे।

सात मील पहुंचने पर कस्टम नाका आया। यह युगांडा का अंतिम नाका था। लालजी भाई थोभाणी साथ न होते तो एक दो घंटे यहां ही निकल जाते पर लालजी भाई ने मोटर में बैठे बैठे दो मिनिट बात की, मोटर का नम्बर नोंध किया गया और फाटक खोल दिया गया।

इसके बाद ही वह स्थान आया जहां से बेलजियम राज्य शुरु होता था। यहां कोई प्राकृतिक सीमा नहीं थी। सिर्फ बोर्ड था। और दाहिने तरफ मोटर चलाने की सूचना थी।

अपने यहां गाड़ी बाईं तरफ चलाई जाती है पर बेलजियम फ्रांस आदि देशों में दाहिने तरफ चलाई जाती है। उनके उपनिवेशों के लिये भी यह नियम लागू होता है। एक ही मिनिट में हमारी मोटर बायें से दाहिने चलने लगी। लालजी भाई को तो दोनों तरफ का अभ्यास है क्योंकि उन्हें दिनरात इस तरफ आना जाना पड़ता है पर जिसने जीवन में कभी दाहिने

तरफ मोटर न हांकी हो उसे इस तरह साइड बदलना पड़े तो बड़ी परेशानी होती है। सुना कि एक बार बेलजियम राज्य की मोटर युगांडा की मोटर से इसीलिये टकरा गई थी, कि बेलजियम के ड्राइवर ने यहां के नियम के अनुसार दाहिने तरफ मोटर हांकी थी।

खैर ! थोड़ी दूर पर बेलजियम राज्य में प्रवेश करने की चौकी थी। थोभाणीजी न होते तो यहां और भी दिक्कत होती पर कुछ न हुई। सिपाही मोटर के पास आये, थोभाणी जी ने बात की और एक रजिष्टर में दस्तखत किये। मोटर का नम्बर तथा मालिक का नाम लिखा गया और फाटक खोल-दिया गया। ५–७ मिनिट में ही यह कारवाई पूरी होगई। हम लोगों से कोई पूछताछ नहीं की गई।

बेलजियम राज्य में भारतीयों का करीब करीब वही सन्मान है जो यूरूपियनों का। यूरोप की अन्य गोरी जातियों ने भारतीयों को नीचा नहीं समझा, सिर्फ अंग्रेजों ने ही नीचा समझने की धृष्ठता की है। जहां अंग्रेजो की छत्रछाया है वहां इसका असर कम ज्यादा जरूर दिखाई देजाता है।

बेलजियम राज्यके जिस प्रान्तमें हमने प्रवेश किया था उसे रुएन्डा उरेंन्डी (R. U.) कहते हैं। यह प्रान्त पहिले जर्मनी का था। महायुद्ध के बाद यह बेलजियम को देदिया गया। आज कल इसपर बेलजियम का राज्य है पर यू. एन. ओ. की देखरेख रहती है।

अभी कुछ दिन हुए यू. एन. ओ. की तरफसे एक कमीशन राज्य शासन की निगरानी के लिए आया था उसमें एक भारतीय कमिश्नर भी था। उसके बाद से शासन नर्म कर दिया गया। इसके पहिले थोड़ेसे ही अपराध से आफ्रिकनों को किबोका लगाये जाते थे।

किबोका जानवर का जिक्र मैं कर चुका हूँ। यह हथी के समान विशाल, जल और थल में चलनेवाला जानवर है। जिसकी चमड़ी काफी

मजबूत और मोटी होती है। उससे बेंत से भी मजबूत स्टिक बनाई जाती है। किबोका के चमड़े के बेंत को भी किबोका कहते हैं। इसकी मार बेंतों से भी अधिक दर्दनाक होती है। अब यू. एन ओ. की सिफारिश से इनका प्रयोग बन्द कर दिया गया है।

यहां के बेलजियम राज्य में यह नियम है कि कोई यूरोपियन मिले तो आफ्रिकन का फर्ज है कि वह उसे सलाम करे। क्योंकि यहां भारतीयों की इज्जत भी यूरोपियनों सरीखी है इसलिए आफ्रिकन लोग उन्हें भी सलाम करते हैं। हमारी मोटर को देखकर आफ्रिकन लोग दौड़कर एक तरफ खड़े होजाते थे और सलाम करते थे।

पर यह नियम अब ढीला होरहा है क्योंकि बहुतसे लोग सलाम नहीं भी करते थे। सम्भव है शुरु शुरु में आफ्रिकनों को दबाने के लिए इस नियम की जरूरत समझी गई हो, पर रास्ते चलते यह जबर्दस्ती की सलाम ठीक नहीं कही जासकती।

यहां के आफ्रिकन अभी कम विकसित हैं। इसलिये गुण के समान दोषों का विकास भी कम होपाया है। युगांडा के आफ्रिकन चोरी करने, धोखा देने, झगड़ने, ठगने, कृतघ्न बनने आदि में काफी बढ़गये हैं जब कि बेलजियम राज्य के आफ्रिकन इन दोषों से बहुत कुछ मुक्त हैं। अंग्रेजी सरकार गुणों के साथ दोषों का विकास भी होने देती है बल्कि गुणों की अपेक्षा दोषों का विकास ज्यादा होजाता है जब कि बेलजियम सरकार ने गुण और दोष दोनों का विकास रोका है।

खैर! थोड़ी देर में हम रुहेंगेरे के पास आगये। यहां कस्टम का बड़ा आफिस है। यहां जिम्मेदार यूरोपियन अधिकारी रहता है। आफिस के बीस तीस कदम पहिले फाटक है वहां दो आफ्रिकन सिपाही रहते हैं जो पूछ ताछ करके फाटक खोल देते हैं उसके बाद कस्टम आफिस के कम्पाउन्ड में गाड़ी लेजाना पड़ती है। वहां पूछताछ होती है यहां समय भारत से साढ़े तीन घंटा पीछे है। और युगांडा से एक घंटा पीछे।

हमारी गाड़ी जब फाटक पर पहुंची तब थोड़ी देर में फाटक तो खोल दिया गया, पर एक चौकीदार ने दूसरे से स्थानीय बोली में कहा कि क्यों न यह मोटर घंटे दो घंटे के लिये रोक दी जाय। पर दूसरे ने ऐसा करने से इनकार कर दिया। थोभाणी जी स्वाहिली के साथ स्थानीय बोली भी समझते थे इसलिये उनने बात समझली। उससे तो कुछ न कहा पर आफिस में जाकर यूरोपियन आफीसर से सारी बात कहदी। फल यह हुआ कि उस आफ्रिकन चौकीदार का पचास फ्रांक (करीब पांच रुपया) जुर्माना किया गया।

थोड़ी देर में हम टाऊन में पहुँचे। यहां हम बिलकुल अपरिचित थे। जिनकी दूकान के पास हमने मोटर खड़ी की थी उनसे सभा करने आदि का जिक्र किया गया। वे बिचारे बड़ी चिन्ता में पड़ गये। बोले-एक स्वामी तो यहां पहिले से आये हुए हैं वे काफी चन्दा करना चाहते हैं। अब दूसरे स्वामी के लिये क्या किया जाय। पर जब कहा गया कि ये स्वामीजी किसी प्रकार का चन्दा नहीं करते, सिर्फ प्रवचन करके चले जाते हैं। यहां भी वे सिर्फ तीन घंटे के लिये आये हैं। तब उनके मनका बोझ उतरा और सभा का इन्तजाम करने के लिये राजी हुए।

ये बातें लालजी भाई जोगिया (कबाले वाले) के साथ चुपचाप होगई। मुझे कुछ पता न लगा। हम लोग तो भीतर लेजाये गये, आदर से बिठलाये गये चाय, बगैरह से सन्मान किया गया। मैंने कुछ न लिया। प्यास थी पर थोड़ी देर में सोडावाटर का झरना देखने को जाना था इसलिये सोचा कि वहीं पानी भरपेट पियेंगे।

२१— सोडावाटर का झरना

लालजी भाई जोगिया तो सभा का इन्तजाम करने को रहे और हम लोग लालजी भाई थोभाणी को लेकर सोडावाटर का झरना देखने गये। गरम पानी के झरने तो बहुत सुने थे पर सोडावाटर का झरना आश्चर्य की बात थी। मोटर में मील दो मील जानेपर एक छोटीसी नदी मिली, जो सड़क

के बगल से ही प्रपात बनकर नीचे गिरती थी। वहां एक कारखाना भी था। नदी पार कर थोड़ी दूर पर हमारी मोटर खड़ी कर दी गई और बीस पच्चीस कदम पैदल चलकर हम झरने के पास पहुंचे। वहां एक कुंड बना हुआ था जो चारों तरफ पत्थर से बंधा हुआ था। देखकर हमें बड़ा आश्चर्य हुआ। कुंड के इस पार से उस पार तक जमीन में से उफनता हुआ और उबलता हुआ सा पानी निकल रहा था। सोडावाटर की बोतल खोलने पर जैसा उफान आता है वैसा उफान कुंड में जगह जगह से आरहा था।

बड़ा ही विचित्र दृश्य था। ओभाणी जी ने कहा कि बाईस वर्ष से तो मैं ही इसे इसी प्रकार उफनता हुआ देख रहा हूँ। न जाने कितने जमाने से यहां इसी प्रकार सोडावाटर निकल रहा है। भूगर्भ में वह कौनसी रचना है जिसका अक्षय भंडार अभी तक खाली नहीं हुआ, जिसने सिर्फ पानी का स्वाद ही सोडावाटर सरीखा नहीं कर दिया है किन्तु युगों से उसके उफान को भी चालू रक्खा है।

खैर, सीढ़ियों पर बैठकर मैंने कटोरी से वह पानी पिया, और भरपेट पिया। इसके बाद जो डकारें आईं वे भी वैसी ही थीं जैसी सोडावाटर पीने के बाद आती है। इससे मुझे बड़ी आश्चर्यजनक प्रसन्नता हुई।

पानी छानने का कपड़ा जब कुंड के पानी में डाला गया तब उससे मैल कटकट कर अलग होता दिखाई देने लगा। इतनी जल्दी और इतने जोर से तो साबुन से भी मैल नहीं कटता।

समय थोड़ा था, भरपेट पानी पीचुके थे इसलिए जल्दी रवाना हुए। इस अवसर पर लालजीभाई ने कुछ फोटो भी लिए।

मैंने चाहा कि अपने कमण्डलु में यह पानी भरलूं पर लालजीभाई ओभाणी ने कहा कि दो तीन घंटे के बाद इसका सारा असर निकल जाता है। इसलिये मैंने वह पानी न लिया।

लौटकर आकर मैंने यहां की परिस्थिति के विषय में पूंछताछ की।



बेलजियम राज्य के रुहेंगेरि में
सोडावाटर के झरने पर

पहिले यहां के सिक्के और नोट देखे। यहां का मुख्य सिक्का फ्रांक कहलाता है। जिसका मूल्य भारत के डेढ़ आने के बराबर है। पर देखने में रुपये बराबर है और सफेद है। आधा फ्रांक अठन्नी बराबर है। इतनी छोटी कीमत का ऐसा सिक्का अभी तक न देखा था। यहां बात बात में सैकड़ों हजारों की संख्या बोलना पड़ती है। मकानभाड़ा पांच हजार फ्रांक महीना था। अर्थात् पांच सौ रुपया महीना हुआ। एक शिलिंग में करीब सात फ्रांक मिलते हैं।

छोटा से छोटा नोट पांच फ्रांक का होता है। भारत की दृष्टि से यह आठ आने का कहलाया।

बेलजियम आफ्रिका के नोटों में एक विशेषता देखी। इनमें किसी राजा रानी का चित्र नहीं होता, न कोई नियत राजचिन्ह होता है। किन्तु आफ्रिकन लोगों के ही चिन्ह होते हैं। पांच फ्रांक के नोट में एक तरह के चित्र होंगे तो दस फ्रांक के नोट में दूसरी तरह के, तो बीस फ्रांक के नोट में तीसरी तरह के। इस तरह सब नोटों में अलग अलग चित्र होते हैं। किसी में आफ्रिकन लोग नृत्य कररहे हैं, किसी में नौका-विहार कर रहे हैं, किसी में कोई आफ्रिकन युवति है। इन चित्रों से वहां की अपढ़ जनता को नोट पहिचानने में सुभीता होता होगा। पढ़े लिखे आदमी लिखावट पढ़कर या अंक देखकर नोट पहिचान जाते हैं। आकार में भी फर्क होता है। जब कि ब्रिटिश आफ्रिका के नोटों में नाममात्र का फर्क होता है।

यहां के भारतीयों की भी आर्थिक स्थिति काफी अच्छी है। युगांडा से कुछ अधिक अच्छी है। अगर कोई भारतीय यहां आकर बसना चाहे तो बस सकता है पर उसे करीब पचास हजार फ्रांक (ठीक संख्या याद नहीं) सरकार में डिपाजिट कराना पड़ती है। सुना कि रुएन्डा उरंडी के बाद कांगो में जो भारतीय बसते हैं उनकी स्थिति और भी अच्छी है।

यह भी पता लगा कि यहां हिन्दू मुसलमानों में अनबन नहीं है

हिन्दू मुसलिम भेद का सब से अधिक जोर केन्या में है। क्योंकि वहां केन्या सरकार ने पृथक निर्वाचन का विष घोल दिया है। युगांडा में भी भेदभाव बढ़गया है पर केन्या बराबर नहीं। बेलजियम आफ्रिका में इसका असर और भी कम या करीब करीब नहीं के बराबर है। उसका कारण यह कि जो हिन्दुस्थान के दो टुकड़े हुए उसका सम्बन्ध बेलजियम सरकार से कुछ नहीं था।

किन्तु इसका मतलब यह नहीं कि यहां हिन्दू मुसलिम एकता पूरी तरह है, या दोनों का एक समाज है। यह कार्य तो सभी जगह बाकी पड़ा है। इसका श्रीगणेश भी नहीं हुआ है। सत्यसमाज सरीखी संस्था ही यह श्री गणेश कर सकती है, पर अभी यह भी दूर है।

आफ्रिका में अधिकांश मुसलमान इस्माइली या आगाखानी हैं। ये लोग पूरे मुसलमान भी नहीं है। न मसजिद में जाते हैं, न नमाज पढ़ते हैं। सब गुजराती हैं। घर में और बाहर गुजराती बोलते हैं। इनके स्कूल अलग हैं पर गुजराती में पढ़ाई होती है। मुसलमान लोग इन्हें मुसलमान भी नहीं समझते। श्रीमन्त व्यापारी होने से ये साधारण मुसलमानों सरीखी उग्रता का भी प्रदर्शन नहीं करते। पर आश्चर्य है कि हिन्दू मुसलिम भेद के नाम पर हिन्द के जो टुकड़े हुए, और आफ्रिका में जो भेदभाव फैला उसमें मुसलिम नेतृत्व इस्माइली लोगों ने ही लिया। मि. जिन्ना इस्माइली ही थे। पूर्व आफ्रिका में जितने भारतीय हैं उनमें रुपये में आठ आने इस्माइली होंगे। चार आने लुहाणा हिन्दू, दो आना पटेल, और दो आने में बाकी सब। सब की संख्या दो लाख से अधिक न होगी, पर भेदभाव जोर पर है। खैर! रुहेंगेरि में इस विषय में नई कोई बुराई पैदा नहीं हुई इससे सन्तोष हुआ।

यहां ऐसे लोगों की भी संख्या है जो आफ्रिकन मां और भारतीय पिता से पैदा हुए हैं। पूछने पर पता लगा कि उनका बहिष्कार नहीं किया जाता। दूसरी पीढ़ीमें तो भेदभाव और भी दूर होजाता है। यहां मुझे एक ऐसे श्रीमन्त का भी पता लगा जिनने एक ऐसी लड़की से शादी की थी जिसकी

मां मिश्र-सन्तान थी। और वे समाज में काफी प्रतिष्ठित थे। इन सब बातों से मुझे काफी सन्तोष हुआ।

खैर ! इसप्रकार की बहुतसी बातें मैंने १५-२० मिनिट की बात-चीत में जानलीं, फिर प्रवचन के लिए सभा में गया। पहिले स्वामी जी, जिनका नाम योगानन्द जी था, सभा में पहिले से ही पहुंच गये थे। प्रार्थना के बाद लालजी भाई ने मेरा परिचय दिया, फिर मेरा प्रवचन हुआ।

पहिले तो मैंने रुहेंगेरिवालों को बधाई दी कि वे धार्मिक सामाजिक और आर्थिक दृष्टिसे सौभाग्यशाली हैं। फिर सत्यसमाज की योजना सामने रक्खी। धर्म जाति समभाव तथा विवेक आदि पर विवेचन किया। बाद में योगानन्द जी ने भी कुछ कहा, जिसके उत्तर रूपमें मुझे कुछ बातों का खुलासा करना पड़ा। आपकी बातों से मुझे मालूम हुआ कि वे मुझे पहिले से जानते हैं, मेरा साहित्य भी पढ़ चुके हैं। व्यवहार में भी काफी नम्रता प्रगट करते थे।

खैर ! प्रवचन तथा चर्चा का अच्छा प्रभाव पड़ा।

श्री अमरसिंह भगवानदास जी ने सत्यसमाज के संगठनके प्रति बड़ा अनुराग प्रगट किया। और यहां सत्यसमाज की स्थापना का वचन दिया। सत्यसमाज के प्रवेश फार्म लेकर आपने वचन दिया कि जिंजा के पते पर ये फार्म भरकर भिजवा दिये जायंगे। समय होता तो दूसरे दिन मेरे सामने ही सारी कार्रवाई होसकती थी पर सभा के बाद पांच मिनिट भी रुकने का समय न मिला। खैर ! साहित्य का सेट यहां खरीद लिया गया। संगम के ग्राहक भी बने।

लौटकर रास्तेमें ९॥। बजे किसोरो आगये। बहुत देर होजाने से यहां सभा न होसकी। यों गांव में चार ही भारतीय थे, उनमें सभा क्या होती ? उनमें से एक लालजी भाई किसोरो में मेरा प्रवचन सुन ही चुके थे। इसलिये थोड़ी देर बाद सोगये।

२१—फिर कबाले

सबेरे जब उठे तो बाहर निकलते ही महाबोरा गिरिश्रृंग पर नजर पड़ी। सिर से कमर तक वह बादलों से लिपटा हुआ था। काफी देर तक उसे देखता रहा। फिर नाश्ता आदि से निबटकर सब लोग कबाले की ओर चले।

रास्ते की शोभा का वर्णन पहिले कर चुका हूँ, पर लौटते समय भी उसमें नयापन सा नजर आता था। जाते समय जिन दृश्यों पर नजर कम पड़ पाई थी लौटते समय उनपर पड़गई।

एक जगह एक स्त्री चमड़ा पहिने चमड़ा ओढ़े चली आती थी। लालजी ने चाहा कि मोटर रोककर उसकी फोटो ले ली जाय। ज्यों ही मोटर खड़ी कीगई और लोग उतरे तथा केमरा लेकर आगे बढ़े त्यों ही वह भागी। हमारी सड़क पहाड़ की कमर पर थी। वह ऊपर की ओर भागकर जंगल में इस प्रकार घुसगई कि हम सब की नजर उसे ढूँढ़ न पाई। आगे चलकर भी दो तीन स्त्रियाँ चमड़ा पहिने और भी मिलीं. वे भी देखते ही भागीं। यहां तक कि घबराहटमें अपना सामान तक सड़क पर छोड़ गईं। तब इन लोगों का फोटो उतारने का विचार ही छोड़ दिया। आगे चलकर एक नदी के किनारे हम लोग उतरे वहां चमड़ा पहिने हुए एक कुटुम्ब बैठा था। पहिले तो उन लोगों ने इतराज सा बताया पर किसी तरह उनका फोटो लेलिया गया।

खैर! किसोरो से ९, बजे रवाना होकर ११, बजे फिर कबाले आगये।

शामको स्कूल के हाल में वीणादेवी का प्रवचन हुआ। काफी संख्या में स्त्रियाँ आई थीं। धर्म जाति-समभाव, रूढ़ियों का विरोध, आफ्रिका की समस्या सुलझाने में स्त्रियों की जिम्मेदारी आदि पर खूब कहा। पीछे चर्चा भी हुई। स्त्रियों ने सत्यमन्दिर की योजना को पसन्द किया।

शामको डेरेपर आगन्तुक भाइयों के साथ काफी चर्चा हुई। आज लालजी भाई का संगीत कार्यक्रम रक्खा गया था पर जोर की वर्षा होने और खूब बिजली तड़कने तथा ठंड के बढ़जाने से न होसका। बाजार में चमड़ा पहिने हुए स्त्री पुरुषों की संख्या काफी दिखाई देती थी। पर लालजी को किसी ने फोटो न उतारने दिया। इसका मूल कारण तो भय था, पर अब टाऊन में उसने प्रलोभन का भी रूप ले लिया था। ऐसा मालूम होता है कि जब विदेशी फोटोग्राफर शुरु शुरु में इनका फोटो उतारते होंगे तब ये भागते होंगे। तब एकाध शिलिंग का प्रलोभन पाकर ये फोटो उतरवाते होंगे। तब से इन लोगों के मन में यह बात बैठगई कि फोटो उतरवाना उतारनेवाले का कोई उपकार है इसलिये उसके बदले में कुछ सेंट शिलिंग मिलना चाहिये।

यह अज्ञानपूर्ण प्रलोभन सिर्फ चमड़ा पहिरनेवालों में ही नहीं है किन्तु कालेज का शिक्षण पाई हुई यूरोपियन पोशाक में सुसज्जित आफ्रिकन लड़कियों तक में भी है। लालजी भाई ने ऐसी कुछ लड़कियों का फोटो उतारना चाहा, पर वे शिलिंग मांगने लगीं।

इस विषय की एक दिलचस्प घटना लालजी भाई ने सुनाई कि जब भगवानदासजी आफ्रिका में थे और गांव गांव घूमकर फोटो उतारने का धंधा करते थे तब एक जगह एक आफ्रिकनने इनसे फोटो उतरवाया पर जब फोटो उतारने के शिलिंग इसने उनसे मांगे तो वह लड़ने लगा—बोला मैं क्यों शिलिंग दूं ? मैंने तो फोटो उतरवाया है इसलिये तुम्हीं शिलिंग दो।

कैसा आश्चर्यजनक अज्ञान इनमें बना हुआ है !

खैर ! लालजी भाई कबाले के उस मारकेट में गये जहां आफ्रिकन लोग ही अधिकतर दूकानदार थे। यहां ये बहुत से फोटो उतार सके। यहां भी किसी ने सेंट मांगे पर उपेक्षा से ही उनका उत्तर होगया।

ता. १८ को कबाले से रवाना होना था पर टप्पूलालजी का मोटर ड्राइवर पत्नी की बीमारी का तार पाकर एक दिन पहिले मसाका के पास कसी गांव में चला गया था, इसलिये न जापाये।

शामको स्कूल में प्रवचन रक्खा गया, मैंने चार पुरुषार्थ पर कहा। सत्यसमाज पर भी प्रकाश डाला।

यहां सत्यसमाजी बनने की जिम्मेदारी श्री शिवराम भाई ने ली थी उनने बहुत से सत्यसमाजी बनाये भी। और कुल मिलाकर उन्नीस सत्यसमाजी होगये। तीन इस्माइली भाई भी सत्यसमाजी होने को तैयार थे, पर पीछे से उनने कहा कि हमारे नाम प्रगट न किये जायं। जब मुझसे पूछा गया, तो मैंने कहदिया कि जो लोग नाम प्रगट करने तक में डरते हैं वे सत्यसमाज का प्रगट में समर्थन कैसे कर पायेंगे, कैसे सहयोग करेंगे। डेढ़ शिलिंग की फीस वसूल करने के लिये मेम्बर नहीं बनाये जारहे हैं। उनके फार्म अस्वीकार कर दिये गये और शिलिंग भी वापिस कर दिये गये। शामको डेरे पर आकर कुछ लोगों ने काफी चर्चा की।

रात्रि में ८॥ से १०॥ तक लालजी भाई का संगीत कार्यक्रम हुआ, इससे नागरिकों को बड़ी प्रसन्नता हुई।

डुडु— पूर्व आफ्रिका में एक तरह का सूक्ष्म कीड़ा होता है जो पैरों के नखों के बीच से उंगली में घुसजाता है। अगर उसे ठीक तरह से न निकाला जाय तो सारा पैर सूज जाता है। यहां उसे डुडु कहते हैं। यों अन्य कीड़ों को भी डुडु कहते हैं। इससे बचने के लिये यहां लोग मोजा और जूता घर में भी पहिने रहते हैं। अंग्रेजी सभ्यता का भी यह प्रभाव है। फिर भी कभी न कभी तो पैर उघड़ा हो ही जाता है और डुडु घुसजाता है। हालांकि ऐसी घटनाएं कम होती हैं। क्योंकि सैकड़ों बच्चे नंगे पैर खेलते रहते हैं पर डुडु नहीं घुसता। पर लालजी भाई की उंगली में डुडु घुस गया। उससे उनकी उंगली में दर्द होगया।

यहां के आफ्रिकन लोग होश्यारी से डुडु निकाल देते हैं। होश्यारी की जरूरत इसलिये कि निकालने में अगर वह आधा भीतर रहजाय तो सारे पैर में एक तरह का विष फैल जायगा और पैर फूल जायगा।

लालजी भाई जोगिया के आफ्रिकन नौकर ने तुरन्त ही सुई लेकर लालजी भाई के पैर में से कुड्डु निकाल दिया। यह बहुत ही छोटा था। सुई की नोक पर एक छोटासा सफेद कण सा मालूम होता था। तब हमने इसे सूक्ष्मदर्शक कांच से देखा। तब कुछ भयंकर मालूम होने लगा।

यह पाप बहुत सरलता से कटगया इससे काफी प्रसन्नता हुई।

मालूम हुआ कि इस कुड्डु को निकालकर लोग इधर उधर नहीं डालते किन्तु जला देते हैं।

२२— फिर म्वारा

पूर्व आफ्रिका की यात्रा में पश्चिम की ओर हमारा अंतिम स्टेशन म्हेंगेरि बना, वहां से हम लौटे। जिस रास्ते गये थे उसी रास्ते लौटना था। क्योंकि मेरी यात्रा का मुख्य उद्देश देशाटन नहीं किन्तु सत्यसमाज की जड़ जमाना था। जाते समय जहां सत्यसमाज की स्थापना कर चुका था लौटते समय फिर उसे पानी देना था। म्हेंगेरि से लौटकर कबाले में यही काम किया था।

१९ फरवरी ५२ को कबाले से टप्पूलाल जी की मोटर में रवाना हुए। उनके छोटे भाई कान्तिलाल साथ थे। उनका ड्राइवर नहीं आपाया था इसलिये रोजनदारी पर एक नया ड्राइवर रखलिया था। मुझे डर था कि इन खतरनाक पहाड़ी रास्तों में न जाने यह नया ड्राइवर कैसे पार लगायगा। इतनेमें तो पानी बरसने लगा। ड्राइवरको समझाया कि मोटर खूब सम्हलकर और काफी धीरे धीरे चलाना। करीब बीस मील तक वर्षा में मोटर चली। ड्राइवर धीरे धीरे मोटर चलाता था इसलिये कोई दुर्घटना न हुई। हमने ड्राइवर को काफी होश्यार समझा।

पर यह तो कुछ देर में ही मालूम हुआ कि ड्राइवर वज्रमूर्ख था। इतना ही नहीं, उसमें हैवानियत के साथ शैतानियत भी काफी थी। सामने

आती हुई मोटर से अपनी गाड़ी बचाना और साइड देना उसे बिलकुल नहीं आता था। इसलिये एक जगह हमारी गाड़ी एक लारी से टकरागई। लारी आती दिखाई दी। पर हमारे ड्राइवर ने घबराकर अपनी गाड़ी खड़ी कर दी और ऐसी जगह खड़ी कर दी जहां से लारी को निकलने का पूरा रास्ता नहीं था। और खड़ी भी इस तरह की कि जितनी जगह छोड़ी जासकती थी, उतनी जगह भी न छूटी। लारी के ड्राइवर ने टक्कर बचाने की पूरी कोशिश की, इसके लिए उसने लारी बगल की नाली में से निकाली फिर भी जगह की कमी से हमारी मोटर को उसकी टक्कर लग ही गई। इससे मोटर का नुकसान तो हुआ पर हम लोग बाल बाल बचगये। लारी की खराबी यह थी कि ब्रेक लगाकर वह खड़ी नहीं कीगई। मालूम हुआ कि लारी में ब्रेक था ही नहीं, या खराब होगया था। बिना ब्रेक की गाड़ीको इतने वेग से चलाना भी बड़ी मूर्खता तथा बेजिम्मेदारी की बात थी। फिर भी हमारा ड्राइवर अगर मोटर को कुछ और बाईं ओर हटाकर खड़ी करता तो टक्कर बच सकती थी। या खड़ी न करके कुछ और आगे बढ़ादेता तो भी टक्कर बचसकती थी। उसकी गलती साफ थी पर वह इतना हैवान था कि उसे अपनी गलती के लिये न तो कोई शर्म थी, न चेहरे पर कोई दीनता या पश्चात्ताप का भाव।

इसके आगे भी वह ऐसी ही गलती किया करता था। मुझे लेफ्ट लेफ्ट चिल्लाकर तथा हाथ के इशारे से गाड़ी को बाईं ओर मुड़वाना पड़ता था, तब सामने की मोटर ठीक ढंग से गुजर पाती थी। वह पुराने अनुभव से कोई लाभ नहीं उठापाता था। इस बारे में उसकी जड़ता असाधारण थी।

खैर! शामको ४॥ बजे हम म्बरारा आगये। रास्ते में किनोनी में ऊधवजी भाई ने फिर रोककर दूध पिलाया।

कबाले से तार आचुका था इसलिये जीवनलाल जी भाई ने भोजन तैयार रक्खा था, मेरे ठहरने का कमरा भी व्यवस्थित करादिया था। आकर भोजनादि से निवृत्त हुए। शामको कुछ चर्चा हुई और सोगये।

ता' २०-२-५३ को दो सज्जन आये। बोले-सुना है कि फाल्गुण के बाद विवाह का मुहूर्त नहीं है तो क्या यह बात ठीक है?

मैंने कहा कि भारत में पुराने जमाने में मुहूर्त निकालते समय इस बात का विचार किया जाता था कि उस समय वर्षा तो न होगी, बीमारीका मौसम तो नहीं है, या खेती आदि के कार्य का कोई विशेष मौसम तो नहीं है। इन बातों के विचार से वर्षा ऋतु में विवाह के मुहूर्त नहीं निकाले जाते थे। आश्विन बुखार का महीना था, तब भी मुहूर्त नहीं निकाले जाते थे। चैत्र आदि में कुछ समय बचाया जाता था। पर अब यातायात के साधन बदलगये हैं, कार्यप्रणाली भी बदलगई है इसलिये भारत में भी इन मुहूर्तों का कोई उपयोग नहीं है। फिर आफ्रिका की तो बात ही क्या है। आफ्रिका में ऋतुएं बिलकुल उल्टी हैं मार्च से यहां वर्षा शुरु होजाती है, भारत में जब गर्मी के दिन रहते हैं तब यहां ठंड के दिन रहते हैं, भारत के ठंड के दिन यहां गर्मी के दिन हैं। यहां पर खेती का कामकाज भी जुदे ढंग का है। ऐसी हालत में भारत के पंचांग का आफ्रिका में कोई उपयोग नहीं। सत्यसमाज की विवाह पद्धति में मुहूर्त की परिभाषा यह की गई है कि जब ऋतु अनुकूल हो, लोगों को फुरसत हो, मनमें उत्साह हो, साधन ठीक हों, तभी विवाह का मुहूर्त है।

मेरी बातों से वे बड़े सन्तुष्ट हुए।

यहां नरसीभाई आदि सत्यसमाजियों को बढ़ाने का प्रयत्न उत्साह से कर रहे हैं। आफ्रिकनों को भी सत्यसमाजी बनाया जारहा है।

टक्कर लगने से मोटर का जो बड़ा स्प्रिंग टूट गया था सौभाग्य से म्बरारा में एक दूकानदार वह मिलगया। रास्ते में मोटर कामचलाऊ ढंग से सुधर गई। इसमें ५५ या साठ शिलिंग खर्च हुआ। नये ड्राइवर की मूर्खता का यह दण्ड भी टप्पूलालजी को भोगना पड़ा।

पर दूसरा ड्राइवर नहीं मिला। इसलिये मसाका तक के लिये फिर इसी मूर्ख ड्राइवर को लेना पड़ा। सामने मोटर आती थी कि यह घबराकर

खड़ी कर देता था। बायें तरफ मोटर खड़ी करना चाहिये था सो कहने सुनने से कुछ बायीं ओर करता था। अगला भाग बाईं ओर करता था तो पिछला भाग सड़क के बीचमें रहने देता था। मालूम हुआ कि बीस पच्चीस वर्ष से यह ड्राइविंग करता था पर उसकी कलहीनता और जड़ता असाधारण थी। यह भी मालूम हुआ कि यह काफी शराबी है, पर इस समय शराब का नशा न होने पर भी साइड बचाने में शराबी सरीखा ही था। पर किसी तरह काम चलाया, और मसाका के पास आये।

टप्पूलालजी का स्थायी मोटर ड्राइवर मसाका के पास ही रहता था। उसका घर सड़क से दूर पहाड़ों में था। जांच तपास से पता लगगया कि उसकी पत्नी मरणासन्न है इसलिये वह साथ न आसकेगा।

खैर! हम ७॥ बजे मसाका आगये। यहां लालजी भाई की बहिन प्रभादेवी का घर था। इनके श्वसुर जीवन जी लोहिया बहुत उत्सुक थे। इन्हीं के घर में ठहरे। पहिले तार आजाने से भोजन यहां भी तैयार कर लिया गया था। मैंने दूध लिया, वीणादेवी ने चाय ली, औरों ने भोजन किया। मुझे तो यहीं रुकना था पर कान्तिलाल आदि को आगे जाना था। बारह बजे रातको कम्पाला पहुंचकर सोने का विचार था। जब सब तैयार होगया तब ड्राइवर से मोटर चलाने को कहागया। तब उसने कहा कि मैं नहीं जाता। मैं आगे का डेढ़ सौ शिलिंग लूंगा। उस मूर्ख ड्राइवर की इस मांग की बात से मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैं समझता था कि यह मूर्ख ड्राइवर सस्ता मिला होगा, पर यह तो हर तरह महंगा से महंगा था।

यहां पर अस्सी या सौ शिलिंग महीने पर अच्छा ड्राइवर मिलजाता है। अगर दिन भर के लिये कहीं बाहर लेजाना हो तो दो शिलिंग रोज भोजन भत्ता देना पड़ता है। मैं समझता था कि इस ड्राइवर को भोजन भत्ता सहित पांच शिलिंग रोज दिये गये होंगे। पर मालूम हुआ कि आवश्यकता देखकर पच्चीस शिलिंग रोज पर वह आया। उसने दो दिन के पचास शिलिंग लिये। और जब पचास शिलिंग ले लिये तब लौटने का किराया भी मांगने लगा।

हालां कि पच्चीस शिलिंग ठहराते समय लौटने के किराये की बात तय नहीं हुई थी पर उसने झगड़ा किया। किसी आफ्रिकन पुलिसमेन को लेआया। आगे झंझट न बढ़े इसलिये ग्यारह शिलिंग और देकर छुट्टी पाई। पर उस रात कांतिलाल आदि रवाना न हो पाये। क्योंकि दूसरे ड्राइवर का इन्तजाम करना था।

दूसरे दिन सबेरे एक अच्छा परिचित मोटर ड्राइवर मिलगया। पन्द्रह दिन के लिये सौ शिलिंग तय कर लिये गये। चलने के लिये सब तैयारी होगई थी कि वही हैवान ड्राइवर एक यूरोपियन पुलिस को लेकर फिर आगया। उसने सबेरे ही उठकर रिपोर्ट की थी कि यह मोटर सड़क पर रातभर रही। यहां का नियम यह है कि या तो रातमें मोटर गली में रखना चाहिये, या सड़क के किनारे भी लगाकर रखना हो तो उसमें लाल लाइट रखना चाहिये। नियम उचित है पर उसके पालन कराने की कोई जिम्मेदारी उस ड्राइवर पर नहीं थी, उसने सिर्फ दुश्मनी दिखाने और सताने के लिये ही यह सब खटपट की थी।

मैं सोचने लगा कि इसने अपनी घोर मूर्खता से मोटर को टक्कर लगवाई जिससे साठ शिलिंग तुरन्त खर्च करना पड़े, रास्ते भर अपनी मूर्खता का परिचय दिया, फिर भी पांचगुनी मजदूरी ली, इतने पर भी यह दुश्मनी दिखाई। अपनी गलतियों की क्षमायाचना आदि की तो बात ही दूर रही।

क्षणभर को यह विचार आया कि आफ्रिकन जनता में क्या ऐसी ही हैवानियत और शैतानियत है?

निःसन्देह किसी एक व्यक्ति के चरित्र से किसी जाति को नहीं परखा जासकता, हिन्द में भी एक से एक बढ़कर हैवान और शैतान हैं, फिर भी सम्पर्क में आये हुए व्यक्तियों के चरित्र से जाति का भी नाम निन्दित या प्रशंसित होता है यह बात भुलाई नहीं जासकती।

हालांकि मोटर की टक्कर के मामले में उसपर मुकद्दमा चल या

जासकता था पर इससे गवाही आदि की जो झंझटें बढ़तीं या उससे और भी परेशानियां होतीं उसकी अपेक्षा यही ठीक समझागया कि इस मामले का नुकसान चुपचाप सहन कर लिया जाय।

पर इस विषय में पूछताछ करने पर पता लगा कि आफ्रिकन लोगों में धीरे धीरे बहुत दोष बढ़ रहे हैं। इसके कई कारण हैं। हिन्दुस्थानियों ने भी पहिले इन लोगों को काफी ठगा है इसकी प्रतिक्रिया भी इन लोगों में हुई है। पर शासननीति के कारण भी इन लोगों को उत्तेजन मिलता है। अंग्रेजी शासन प्रणाली का यह दोष तो चिर अनुभूत है कि उसमें न्याय की अपेक्षा कानून को अधिक महत्व दिया जाता है। अपराधी निश्चित होजाने पर भी अगर कानून के शब्दों की पकड़ से कोई छटक सकता है तो खुले आम न्याय की हत्या कर दी जायगी। अंग्रेज अपने जातीय या शासन सम्बन्धी स्वार्थ को धक्का लगने पर कानून की पर्वाह नहीं करता, पर अन्यत्र वह कानून के सिकंजे में न्याय का गला पकड़े रहता है। फल यह हुआ है कि न्याय के भी विरुद्ध षड्यंत्र करनेवाले वकीलों का एक वर्ग पैदा होगया है और उनके बलपर अपराधी छटक जाते हैं।

दूसरी बात यह है कि भारतीयों पर यहां के शासन की नजर टेढ़ी है। इसका असर भी थोड़ी बहुत मात्रा में हर मामले पर पड़ता ही है।

मतलब यह कि जिस द्रुत गति से आफ्रिकनों में चोरी डकैती विश्वासघात कृतघ्नता उद्दंडता आदि दोष बढ़रहे हैं वह असाधारण है और उसकी काफी जिम्मेदारी शासन नीति पर है। अन्त में इससे सभी का नुकसान है। अन्त में शासकों को भी इस नीति के दुष्फल चखना पड़ेंगे।

अभी अभी दस पन्द्रह वर्ष पहिले आफ्रिकन लोग विश्वासघात झूठ चोरी आदि जानते तक न थे। अब हालत यह है कि उनको कोई मजदूरी दे दी जाय और दस्तखत न लिए जायँ तो तुरन्त ही वे फिर मजदूरी दूसरी बार मांग बैठेंगे। पहिले बार की प्राप्ति को अस्वीकार कर देंगे। न्याय की अब उन्हें पर्वाह नहीं है।

जहां आफ्रिकनों की बस्ती ज्यादा है और भारतीय के एक दो घर ही है वहां रात में अकेला मकान छोड़ना कठिन है। मुझे ऐसे व्यक्ति मिले जो व्याख्यान में शामिल होने की इच्छा रखने पर भी रात में मकान में हाजिर रहना अनिवार्य होने के कारण व्याख्यान के लिए रुक न सके। या व्याख्यान सुनकर रात में ही घर गये। कुछ वर्ष पहिले ऐसा डर नहीं था।

घरों में भी मुझे अनेक अनुभव हुए। घरवालों की तरफसे मेरे कमरे में दूध वगैरह लाया गया और मैंने आवश्यकता न होने से वापिस कर दिया तो आफ्रिकन नौकर ने उसे अपने कमरे में लेजाकर पीलिया। एक जगह तो गृहिणी ने मेरे पास मेवा के दो बहुमूल्य पैकट नाश्ता के लिये भेजे। जरूरत न मालूम होने से मैंने वापिस कर दिये। पर नौकर उन्हें गृहिणी के पास न लेगया, अपने कमरे में लेजाकर खाने के लिये उन्हें खोलने लगा। लालजी भाई की नजर पड़गई और उनने गृहिणी को इसकी सूचना दी, तब वे पैकेट उससे लेलिये गये।

चोरी में पकड़े जाने पर आफ्रिकन नौकर को कोई शर्म नहीं मालूम होती। और उसे डांटा फटकारा भी नहीं जासकता, नहीं तो वह चला जायगा और घर का सारा काम अड़जायगा। एक भाई ने कहा कि अमुक महाशय बड़े से बड़े करोड़पति को फटकार सकते हैं पर अपने आफ्रिकन नौकर को नहीं फटकार सकते। इसप्रकार आफ्रिकनों के चरित्र का पतन होरहा है और उसके इलाज का कोई उपाय काम में नहीं लिया जारहा है।

ले कौन ? भारतीयों के चरित्र भी दूसरी तरफ काफी गिरे हुए हैं। वे आपस में भी विश्वासघात करने में नहीं चूकते। अभी अभी मैंने सुना कि एक भारतीय ने दूसरे भारतीय से हीरे की अंगूठी खरीदी, और चैक से मूल्य दिया। अब कुछ वर्ष बाद उनने नालिश कर दी कि चैक मैंने उधार दिया था सो शिलिंग लाओ। अंगूठी बेचने वाले के पास गवाह तो हैं पर अंगूठी बेची इसका लिखित प्रमाण नहीं है इसलिये उस पर मुकद्दमा चला दिया गया।

इस प्रकार मुट्ठी भर भारतीयों के भीतर इसप्रकार बेईमानी की बड़ी बड़ी घटनाएँ होती रहती हैं।

इसप्रकार चरित्रहीन विलासी भारतीय, आफ्रिकनों को चरित्र और ईमान का पाठ कैसे पढ़ा सकते हैं? वे इस बारे में कुछ सोचते भी नहीं हैं। जो सिर पर बीतती हैं भोगलेते हैं पर दूरदर्शी बनकर कुछ इलाज नहीं कर पाते।

भारत से जो प्रचारक आते हैं उनका ध्यान भी इन समस्याओं की तरफ नहीं जाता, वे सब बीमारियों का इलाज नामजाप पूजापाठ आदि बताकर, कुछ ढोंग ढांग दिखाकर शिलिंग लूटते हैं। इसमें उनका जितना कुसूर है, उतना या उससे कुछ ज्यादा कुसूर यहां के भारतीयों का है। क्योंकि वे भी ऐसे ही लोगों की कद्र करते हैं। अपने हित अहित का या हितैषी अहितैषी का विवेक उन्हें नहीं है।

अगर यहां के भारतीय इस तरफसे ऐसे लापर्वाह रहे, सांस्कृतिक सुधार की तरफ ध्यान न दिया, न सांस्कृतिक सुधार का कार्य करनेवालों को वे पासके तो एक दिन समस्या असह्य होजायगी, और भारतीयों को बुरी तरह बर्बाद होना पड़ेगा। हालत दिन प्रति दिन बिगड़ रही है पर अभी असह्य नहीं हुई है। संयम और विवेक से काम लिया जाय तो स्वपर कल्याण अभी भी होसकता है।

२४—मसाका में

ता. २० फरवरी ५० को शाम को ७॥ बजे हम मसाका आगये थे। यह श्रद्धा वृत्तिवालों का टाउन है। उनमें अनेक सज्जन वास्तव में सज्जन हैं, स्नेही हैं। खबर पाते ही ९ बजे रात तक कुछ लोग चर्चा के लिये आगये। इनमें एक इस्माइली भाई भी थे। पर उनके वेष-भूषा, भाषा विचार आदि से पता न लगता था कि वे इस्माइली हैं। दो दिन तक मुझे भी पता

न लगा कि वे इसमाइली हैं। मैं उन्हें हिन्दू समझकर ही बात करता रहा। उन्हीं का प्रश्न था कि वासनाओं को या मनोविकारों को कैसे दबाया जाय ?

मैंने कहा कि रूपान्तर करने से ही उन्हें दबाया जासकता है। नदी की धारा रोकी नहीं जासकती पर नहरों के द्वारा उसका पानी खेतों में पहुंचाकर उससे अन्न बढ़ाया जासकता है। क्रोध, मान, छल, लोभ का सदुपयोगी रूप क्या है और सत्येश्वर के दर्बार में उन्हें किस प्रकार स्थान है ? इत्यादि बातें भी समझाईं। कर्मयोगकी मुख्यता पर बात समाप्त की। ११। बजे तक यह सब चर्चा चली। सब लोग काफी संतुष्ट हुए।

इसी समय आगन्तुक लोगों ने आगे के चार दिन के लिये अपने अपने निमन्त्रण रिजर्व करालिये। यहां तक कि जिनके घर मैं ठहरा था उनसे कहदिया: -- "आपके यहां तो स्वामीजी हर दिन सुबह नाश्ता करेंगे ही, इसलिये आप को तो काफी पुण्य मिल जायगा, एक एक दिन तो हम लोगों को मिलजाने दीजिये। स्वामीजी एक बार भोजन करते हैं इससे और अड़चन है, नहीं तो सब लोग एक एक टाइम बांटलेते" खैर, चार दिन ठहरना था इसलिये चार दिन बांटदिये गये।

२१-२-५२ को दिन में महिला मण्डल की कार्यकर्त्री महिलाएँ आईं। पता लगा कि लुहाणा और पटैल, इस जातीय आधार पर स्त्रियों में इतना झगड़ा हुआ है कि एक वर्ष से महिला मण्डल टूटा पड़ा है। अब एक जगह सब स्त्रियां जुड़ती भी नहीं हैं।

उनकी बातों से स्त्री-सभा में वीणादेवी का प्रवचन कराना अत्यावश्यक मालूम हुआ। दूसरे दिन के लिये यह योजना रक्खी गई।

शाम को ६ से ७॥ तक सिनेमा थियेटर में सर्वधर्म समभाव पर मेरा प्रवचन हुआ। आफ्रिका के लिये धर्मसमभाव की अत्यावश्यकता तथा उपयोगिता बतलाई। उपस्थिति काफी थी।

ता. २२ को भी सिनेमा थियेटर में प्रवचन रक्खा गया था, पर

पहिले दिन सभा समाप्त होते समय लोगों को यहीं सभा होने की सूचना देना भूलगये, इसलिये लोगों को सभा का पता ही नहीं लगा, इससे सिर्फ सात आठ आदमी आये ! पीछे यह भी पता लगा कि जिन लोगों को सभा होने की बात मालूम भी थी उनमें से भी बहुत से इस डर से नहीं आये कि कल तो प्रवचन हुआ था, आज चन्दा किया जायगा। यद्यपि यह बात भी प्रगट कर दी गई थी कि चन्दा नहीं किया जायगा, पर इस बात पर लोगों को विश्वास नहीं हुआ क्योंकि अभी तक जो प्रचारक आये हैं वे भी पहिले यह कहा करते थे कि हमें चन्दा नहीं चाहिये किन्तु प्रवचन होजाने पर लोगों से यज्ञ के नामपर या किसी संस्था के नाम पर मांग बैठते थे, और लोगों को अनिच्छा से नाक सिकोड़ते हुए भी कुछ देना पड़ता था। इस बात को लेकर लोगों में साधुओं और प्रचारकों के प्रति तीव्र घृणा का भाव पैदा होगया है। इसका तीव्र परिचय उस समय मिला, जब हम एक घर में गये और हमारे भोजन करलेने पर घर की वृद्धा गृहिणी ने कहा कि—हमारा घर आज पवित्र होगया क्योंकि आज ऐसे सन्त ने भोजन किया जो चन्दा नहीं मांगते।

चन्दा करनेवालों से लोगों के मनमें कितनी घृणा है, इसका यह नमूना है। फिर भी दुनिया में मूर्खों की संख्या इतनी अधिक है कि पैसा ठगने वाले ठगही लेजाते हैं। जनता को चकमा देना कठिन नहीं है। जनता में विवेक की मात्रा बहुत कम है। उसे अच्छे बुरे की पहिचान नहीं है और जिनमें है, वे भी बुरों को रोकने और भलों को उत्तेजन देने की वृत्ति या शक्ति नहीं रखते। निर्लज्ज और दम्भी आदमी इन्हें कभी भी ठग लेजायँगे। हां ! ईमानदार और हितैषी अवश्य परेशान होंगे।

खैर ! थियेटर में सात आठ आदमियों के समक्ष भाषण देना उचित न मालूम हुआ इसलिये सब लोग मैदान में घूमने गये और एकांत में एक जगह बैठकर तत्व चर्चा करने लगे।

नाम बैंक—यहां भी नामजाप का बहुत रिवाज है। नकुरु कम्पाला मसाका आदि में राम नाम के बारे में कुछ विचित्रसी योजना है। एक नाम

बैंक खोला गया है। जिसका नाम है 'अयोध्यापति बैंक अनलिमिटेड' इसकी तरफसे नोट बुके छपाई गई हैं, जिनमें एक एक पेज पर करीब सौ सौ खाने हैं। हर खाने में राम नाम लिखना होता है। इस प्रकार एक एक नोटबुक में हजारों नाम लिखे जाते हैं। ये नोट बुकें राम नाम लिखनेवालों को मुफ्त दीजाती हैं। लोग हर दिन घंटे दो घंटे इनमें राम नाम लिखते हैं। फिर ये नोट बुकें केन्द्र में जमा की जाती हैं और इस बात का हिसाब रक्खा जाता है कि किस आदमी ने कितने राम नाम बैंक में जमा कराये हैं। इस काममें हजारों रुपयों की स्टेशनरी खर्च हुआ करती है ।

स्पष्ट ही यह अपव्यय है। पर भारतीयों में धर्म के नामपर जितनी समय शक्ति सम्पत्ति आदि की बर्बादी की जाय वह सब 'धर्म' कहलाता है। इस दिशा में काम करनेवाले वृथा सन्तोष पैदा करते हैं (अनुचित और निष्फल सन्तोष को वृथा सन्तोष कहते हैं)

लोग इस बातको भूले हुए हैं कि भगवान का नाम लेना या उसकी पूजाविधि आदि करना धर्म नहीं है। यह तो दिन रात में जो धर्म किया हो उसका हिसाब देने की और आगे के लिये प्रेरणा लेने की जगह है। जीवन में धर्म न हो, पर धर्म का हिसाब देने का बड़ासे बड़ा आडम्बर हो तो यह अपने को और दूसरों को ठगना है। पर इससे हम भगवान को नहीं ठग सकते, न हम अपना पाप भगवान से छिपा सकते हैं और न उसकी चापलूसी करके पाप करने की छूट ले सकते हैं। भगवान चापलूसी के चक्कर में आने-वाला नहीं है और न वह पक्षपाती है। ऐसी हालत में हजारों बार उसका नाम लिखना एक तरह से बेकार है।

हां, मंदिर मसजिद में पूजापाठ प्रार्थना आदि का उपयोग भी हो सकता है पर वह धर्म रूप में नहीं, धर्म के संकल्प रूप में। इन से हमें धर्म की प्रेरणा मिलसकती है।

ये सब बातें मैं प्रवचन में कहचुका था। मैदान में बैठे बैठे जो

तत्वचर्चा हुई उसमें ये सब बातें कुछ संक्षेप में कहकर कहा कि बहुत लोग जब इस तरह के जाप या लेखन का उपयोग नहीं बता पाते तब कहने लगते हैं कि कम से कम उतनी देर तक चित्त शान्त तो रहता है। पर इस तरह की यान्त्रिक शांति तो किसी भी अहिंसक काम में लगने से मिल सकती है। पर यह जीवन की शांति नहीं। यह तो एक तरह की बालक्रीड़ा है। जीवन की शुद्धि का भी इसके साथ कोई सम्बन्ध नहीं बैठता, न कोई प्रेरणा मिलती है। दिनभर कैसे भी पाप में जीवन बितानेवाला यदि घंटे दो घंटे सब तरफ से चित्त हटाकर राम नाम लिखता रहे तो इससे उसके पापों में कुछ कमी न होगी। कदाचित् वृथासंतोष के कारण कुछ वृद्धि ही होगी।

एक आस्तिक मनुष्य के जीवन में जब कोई पाप आजाता है और वह उसका अनुभव करने लगता है तब वह इस चिन्ता में पड़जाता है कि किसी पुण्य कार्य से पाप का निवारण हो। पाप निवारण का अर्थ यही है कि उसके कार्यों से संसार का जो अहित हुआ है उसके बदले में कोई हित किया जाय। ऐसा हो तो अच्छा है। पर जब उसके सामने यह कार्यक्रम रख दिया जाता है कि भगवान का नाम लेना या घंटों उसका नाम लिखना बड़ा पुण्य है तब वह पाप निवारण के लिये संसार के हित की तरफ ध्यान नहीं देता, किन्तु पाप करने से बची हुई शक्ति नामजाप या नामलेखन में लगाने लगता है। पाप-निवारण की इस झूठी आशा से वह पाप की तरफ से निश्चिन्त भी होजाता है।

देखा गया है कि बहुत से धनवान लोग ऐसे कार्यक्रमों को काफी महत्व देते हैं, इसप्रकार का कार्यक्रम पेश करनेवालों की काफी पूजा भी करते हैं, इससे वास्तविक पाप-निवारण की तरफ से वे लापर्वाह होजाते हैं।

निःसन्देह ऐसे लोग कुछ ऊंची श्रेणी के होते हैं, क्योंकि अपने जीवन के पाप को समझते तो हैं, उसके निवारण की चिन्ता तो करते हैं, यह जीवन की काफी उच्चता है पर नामजाप आदि के वृथा संतोषमय कार्यक्रमों से

वे अपनी उच्चता को निष्फल कर डालते हैं। अगर ऐसे वृथासंतोषमय कार्य-क्रम में न फँसें तो पाप निवारण के लिये कुछ जगतहित का कार्य करें, या उसकी मात्रा बढ़ादें। इस दृष्टि से नाम बैंक, अखण्डजाप आदि की योजनाएं हानिकर हैं, उन्हें यथासाध्य शीघ्र हटा देना चाहिये। और स्वाध्याय आदि से तथा जनसेवा के कार्यों से वह जगह भरना चाहिये।

इस चर्चा में मैंने यह भी कहा था कि इस प्रकार के यांत्रिक विधि-विधानों से मन की अशांति भी नहीं हटती। क्योंकि जिसप्रकार कोई लेख या पत्र लिखते समय उस तरफ ध्यान लगाना जरूरी है, उस तरह हजारों बार एक ही नाम लिखने या बोलने में ध्यान लगाने की जरूरत नहीं पड़ती, बिना ध्यान के भी हाथ लिखता जाता है, मुँह उच्चारण करता जाता है।

नाम लेने का ठीक तरीका यह है कि नाम लेने के साथ उसके जीवन पर विचार किया जाय, और अपने जीवन में उसके जीवन से क्या प्रेरणा ली जासकती है इसका भी चिन्तन किया जाय। एक बार राम नाम बोलकर रामजी की बाल लीलाओं का चिन्तन कीजिये, दूसरे बार राम नाम लेकर उनके राज्यत्याग की बात का चिन्तन कीजिये! दस पन्द्रह मिनिट में या घंटे दो घंटे में सिर्फ पांच सात बार ही राम नाम लीजिये, और हर बार कुछ मिनिट तक रामजी के जीवनपर अर्थात् उनके जीवन के किसी गुण पर विचार कीजिये। इस तरह का नामस्मरण ही उचित है।

फिर भी इस बात का खयाल रखिये कि इस प्रकार का उचित नामस्मरण भी धर्म नहीं है, धर्म की प्रेरणा लेने का अच्छा सा तरीका है।

जो लोग विवेकहीन होकर इसप्रकार नाम जाप, अखंडजाप, नामबैंक आदि की योजनाएं करते हैं वे व्यर्थ ही अपनी शक्ति सम्पत्ति बर्बाद करते हैं।

इसकी अपेक्षा यह हजार गुणा अच्छा है कि नामजाप आदि की अपेक्षा अच्छे साहित्य का स्वाध्याय किया जाय।

इस दिन ४॥ से ६॥ बजे तक स्त्रियों की भी सभा कीगई। विवाद-

अन्त स्थान बदल देने से काफी संख्या में स्त्रियां आईं। वीणादेवी का गुजराती में विस्तार से प्रवचन हुआ और चर्चा भी हुई। धर्म-समभाव, विवेक आदि पर कहकर सत्यसमाज की तथा सत्यमन्दिर की योजना समझाई। स्त्रियों ने इसका समर्थन भी किया।

रात में डेरे पर चर्चा हुई। मन, आत्मा तथा योग के विषय में प्रश्नों के उत्तर दिये।

ता. २३-७-४२ को फिर वीणादेवी का प्रवचन हुआ। आज स्त्रियों की संख्या कल से अधिक थी। जगह की कमी मालूम होती थी। नर-नारी समभाव, समाज की उन्नति में स्त्रियों का स्थान, सत्यसमाज आदि पर कहा। आज भी स्त्रियों ने काफी प्रसन्नता प्रगट की। वीणादेवी का भाषण गुजराती में होने से स्त्रियों को सब बातें अच्छी तरह समझमें आती थीं।

शाम को छः बजे से स्कूल में मेरा प्रवचन हुआ। इस देश में भारतीयों का भविष्य क्या है? कौन कौन से आर्थिक संकट आने वाले हैं, व्यापार के हाथ से निकल जाने, प्रतिस्पर्द्धा बढ़जाने आदि से कैसी परेशानी होगी, सांस्कृतिक संकट भी किस प्रकार आनेवाले हैं, पिछले दस पन्द्रह वर्षों में क्या क्या परिवर्तन हुए हैं इन सब बातों का विवेचन करते हुए बतलाया कि इस देश में गुजर करने के लिये क्या क्या काम करने जरूरी हैं? इसी पूर्व भूमिका के साथ सत्यसमाज की चर्चा की और प्रवेश-पत्र समझाया। तब एक भावसार युवक ने सत्यसमाजी होने की इच्छा प्रगट की। इसके बाद और भी अनेक व्यक्ति सत्यसमाजी बने। फार्म भरेगये।

रातकी चर्चा में मानवभाषा पर विवेचन किया। कुछ अन्य प्रश्नों के उत्तर दिये।

आज रवाना होना था, पर दिनभर कोशिश कीजानेपर भी मोटर न मिली। एक भाई की लारी कम्पाला जानेवाली थी, सोचा उसीमें चले जायँगे। इतने में एक भाई ने कुछ किराया लेकर मोटर में कम्पाला तक पहुंचाने का

वचन दिया तब लारी छोड़ दी गई। पर ठीक समय पर उस भाई ने इनकार कर दिया। वनमाली जी ने इसके बाद भी प्रयत्न किया पर मोटर न मिली।

इस तरफ यातायात की बड़ी कठिनाई है। घर की मोटर न हो तो काफी परेशानी होती है। जहां रेलगाड़ी है वहां भी दो चार दिन में एक बार गाड़ी जाती है, फिर कम्पाला के बाद तो रेलगाड़ी भी नहीं है। हां! बस जरूर चलती है पर बस में बैठना भारतीयों की दृष्टि में अच्छा नहीं समझा जाता। कुछ भारतीय आपद्धर्म समझकर ही बस का उपयोग करते हैं। काले लोगों से ही बसें भरी रहती हैं और भीड़ के कारण तकलीफ भी बहुत होती है। इसलिये यहां के लोग बस द्वारा हमें बिदा नहीं करना चाहते थे। अन्तमें गाड़ी न मिलने से हमें रुकना पड़ा। यहां का समाज ईर्ष्या द्वेष के कारण छिन्न भिन्न है, धनिकों की मदान्धता के कारण भी यह छिन्न-भिन्नता बढ़ी हुई है। यहां सौ घर हिन्दुओं के होंगे सौ इस्माइलियों के। समाज के ये दो भाग तो हैं ही। हिन्दू समाज लुहाणा और पटेलों में बटा हुआ है। दोनों में काफी द्वेष है। इसी द्वेष के कारण महिलामण्डल टूटा पड़ा है। लुहाणा में भी अमुक सेठ की पार्टी अलग और ढिमुक की अलग। आपस में द्वेष इतना कि कौन किसके यहां ठहरा है, इसका विचार कर व्यवहार किया जाता है। तुम भले ही ज्ञानी और परोपकारी रहो पर अमुक के यहां ठहरे तो हमसे क्या मतलब? इसी भाषा में यहां के लोग सोचते हैं। इससे प्रचार में कुछ दिक्कत तो जाती ही है, साथ ही आज मोटर न मिली, इसमें यह वातावरण भी कारण था, वनमाली जी और लोधिमाजी मोटर ढूंढ़ने के लिये जब खूब प्रयत्न कर रहे थे तब एक श्रीमन्त भाई ने तो उनसे यहां तक कहा कि तुम क्यों मोटर के लिये परेशान हो रहे हो, जिन्हें इन्तजाम करना होगा वे करेंगे।

मसाका अपेक्षाकृत पुराना शहर है। यहां एक भाई ऐसे भी मिले जो करीब चारसौ एकड़ जमीन के मालिक हैं और जिन्हें करीब आठसौ एकड़ जमीन लीज पर मिली है। लुगाजी और ककीरा के बाद किसी भारतीय के पास यहां खेती की जमीन नहीं है। उन्हें खरीदने का भी हक नहीं है। हां!

चौतारा (भारतीय पिता और आफ्रिकन मां की सन्तान) को जमीन खरीदने का हक है पर उनकी इतनी लियाकत नहीं होती। पुराने समय में एक भारतीय को यहां जमीन मिलगई सो मिलगई।

यहां चालीस चालीस वर्ष पुराने बसे हुए भारतीय हैं। स्वयं लोधिया जी ऐसे ही पुराने वाशिन्दे हैं। उन दिनों यहां सड़कें नहीं थीं, रास्तों में जंगली जानवर भरे पड़े थे, सवारी का कोई प्रबन्ध नहीं था। एक तरह का खच्चर मिलता था, उसी पर सामान लेकर आना जाना पड़ता था। उस समय भारतीय यहां आकर बसे थे।

यहां ऐसे भी लोग मिले जो भारत से मुम्बासा तक मामूली नौकाओं में बैठकर आये थे। अपार समुद्र में उत्तालतरंगों के बीच एक एक माह तक एक नौका के बीच में जीवन बिताना कितना कठिन है इसकी कल्पना ही की जासकती है। आज कल तो एंजिन से चलने वाले जहाजों में समुद्र के पानी की भाफ से काफी मीठा पानी बना लेते हैं, पर पाल से चलने वाली नौकाओं में यह सुविधा कहां? वहां तो माह डेढ़ माह के लिये पानी भरकर रखना पड़ता है और पीने भर को थोड़ा थोड़ा दिया जाता है। हवा के प्रतिकूल होजाने पर नौका एक ही जगह दो दो चार चार दिन पड़ी रहजाती है। पर ऐसी नौकाओं द्वारा समुद्र पार करने वाले स्त्री-पुरुष मिले। नौकाओं में भोजन बनाना कितना कठिन है यह अनुभव भी प्रभादेवी ने सुनाया कि एक आदमी को संडासी से सिगड़ी पकड़कर रखना पड़ती थी, दूसरा उसके ऊपर चढ़ा हुआ बर्तन पकड़ता था। पकड़ ढीली होजाय तो सिगड़ी और रसोई सब बिखर जाय। नौका के काफी हिलने से उल्टियां भी खूब होती थीं।

एक भाई ऐसे भी मिले, जिनको मृत्यु की पूर्ण सम्भावना का सामना करना पड़ा था। वे भाफ के बड़े जहाज में बैठे थे, पर जब किनारा दो घंटे के रास्तेपर रहगया था, तब इतना भयंकर तूफान आया कि जहाज के बचने की आशा ही न रही। जहाज पर काला झण्डा लगा दिया गया, यात्रियों को लाइफ बोल्ट बांट* दिये गये, और मरने के लिये तैयार होने की सूचना देदी गई। उस समय यात्रियों की मनःस्थिति क्या होगी उसकी कल्पना से ही दिल कांप जाता है।

ऐसा भी मालूम हुआ कि लड़ाई के समय में एक यात्री-जहाज बम मारकर डुबा भी दिया गया था। उस समय स्त्री-बच्चों का करुण क्रन्दन, समुद्र पर इधर उधर डूबते हुए यात्रियों का करुण दृश्य, स्मरण मात्र से दिल दहला देता है।

युद्ध मानव के भीतर बैठे हुए शैतान का सब से बीभत्स और भयंकर नृत्य है। समुद्र यात्रा के ही कष्ट नहीं, भीतरी आवागमन के भी नाना कष्टों को झेलकर भारतीय वहां बसे हैं, और आज भी उनकी स्थिति निश्चित रहने लायक नहीं है। वे सौ सौ पचास पचास मील की दूरी पर मुट्ठी मुट्ठी-भर बसे हैं। ऐसी हालत में उनके भीतर पूर्ण एकता, संगठन और सहयोग होना चाहिये, पर मसाका में जो दशा देखी उससे चित्त को खेद हुआ।

यह खेद प्रगट हुआ रात के प्रवचन में। मोटर न मिलने से जब रुकना पड़ा तब लोगों ने रात्रि में फिर प्रवचन की योजना की। आज का प्रवचन एक सज्जन के घर पर रक्खा गया। इसके लिये उनने काफी तैयारी की थी। घर का सामान हटाकर काफी जगह निकाली थी। कुछ प्रसाद वगैरह की योजना भी की थी।

इस प्रवचन में मैं विवेक पर बोला। परीक्षक बनने, अन्धविश्वास नष्ट करने आदि पर काफी कहा। नगर की फूट के लिये भी कुछ फटकार सी बताई। लोगों को प्रवचन काफी अच्छा लगा, कुछ लोग आज भी सत्यसमाजी बने। रात को सवा ग्यारह बजे सभा समाप्त हुई।

वनमाली जी आदि ने तीन मील दूर जाकर मोटर का इन्तजाम किया। वहाँ लालजी भाई जोगिया कबालेवालों के जमाई रहते थे। उन्हें एक दो दिन बाद कम्पाला जाना था। पर वे मुझे पहुंचाने के लिये २५ ता. को ही राजी होगये। उनकी मोटर में बैठकर मैं कम्पाला तक आया।

आज तबियत कुछ खराब थी।

रात्रि में टेलीफोन द्वारा बातचीत हुई और जिंजा से हरिलाल जी जोगिया मोटर लेकर लेने आये।

२५– तीसरी बार जिंजा

६ फरवरी को दूसरी बार जिंजा से विदा होकर २५ फरवरी को रात में तीसरी बार जिंजा आये। अब की बार भी श्री नरसीभाई जोगिया के यहां ठहरे। पहिले भी इनके यहां आठ दिन ठहर चुके थे। इनकी पत्नी श्री मुक्ता बहिन ने चलते समय अनुरोध किया था कि जब आप फिर जिंजा आयें तब हमारे यहां ही ठहरें।

तीसरी बार जिंजा आने के दो कारण थे। पहिला और मुख्य कारण था सत्यसमाज पद्धति से एक विवाह की विधि कराना। यद्यपि मैं विवाह में शामिल होने के लिये कहीं यात्रा नहीं करता और न अब किसी विवाह का पौरोहित्य करने जाता हूँ, पर यह विवाह लालजी भाई के कुटुम्बियों में होरहा था और आफ्रिका में सत्यसमाज की विधि जाननेवाला अभी कोई न था, इसलिये मुझे स्वीकारता देना पड़ी थी। और ठीक समय पर हाजिर होने के लिये बेलजियम राज्य का कार्यक्रम अधूरा छोड़कर, म्बारारावालों के अनुरोध को भी टालकर, बुटाले का कार्यक्रम रोककर जल्दी आना पड़ा था।

पर मानों सत्येश्वर को यह बात पसन्द नहीं थी। सत्यप्रचार छोड़-कर विवाह में शामिल होने के लिये आना और अपना नियम भंग करना उनकी दृष्टि से अपराध था इसलिये सत्येश्वर ने दंड देने की योजना की थी। यही कारण है कि इतनी परेशानी उठाकर यहां आने पर भी विवाह में मेरा सहयोग न होसका।

विवाह के संयोजकों की तरफ से यह बात कही गई कि यदि विवाह में होम आदि न किया जायगा तो स्त्रियों में असन्तोष रहेगा, इसलिये होम जरूर होना चाहिये। अग्निसान्निध्य के बिना विवाह विधि कैसी ?

मैंने उन्हें समझाया कि होम का युग चला गया। अब अन्न घी जलाया नहीं जासकता और अग्नि आदि को देव समझना भी ठीक नहीं,

आदि । किसी किसी को बात समझ में आई पर रूढ़ि बल के आगे वे टिक न सके । तब मैंने कहा कि आप पुरानी विधि से शादी कराओ । मैं किसी विवाह के लिये सत्यसमाज की विवाह पद्धति में होम आदि शामिल नहीं कर सकता । अन्त में पुरानी विधि से ही शादी हुई ।

जिंजा आने का दूसरा कारण था सत्यसमाज के अधिवेशन की तैयारी कराना । जिंजा में कार्यकर्ताओं की काफी कमी है युवक दल यहां दिखाई नहीं देता । अधिवेशन आदि इस देश में होते भी बहुत कम हैं, खासकर युगांडा में तो और भी कम । इसलिये सत्यसमाज सम्मेलन के बारे में भी लोग किंकर्तव्यविमूढ़ थे । इसलिये इस कार्य को गति देना आवश्यक था । सत्यसमाज के सिद्धांतों का अधिक से अधिक प्रचार भी जरूरी था ।

यहां नील नदी के किनारे पब्लिक पार्क में शामको कुछ जिज्ञासु सज्जन आकर बैठते हैं और इधर उधर की चर्चा करते हैं । मैंने सत्यप्रचार के लिये यह अवसर उपयुक्त समझा । पहिले भी मैंने इस अवसर का उपयोग किया था । मेरे पहुंचने पर चर्चा गम्भीर रूप ले लेती थी । मैं एक घंटे तक प्रश्नों का उत्तर देता था । अबकी बार भी यही कार्यक्रम रक्खा ।

ता. २६ फरवरी को बैरिष्टर भट्ट और बैरिष्टर जेठाभाई के प्रश्नों के उत्तर दिये । प्रश्न आत्मवाद पर था । मैंने कहा कि आत्मा नित्य तत्व है इस बात को सिद्ध करने के लिये यद्यपि पूरे प्रमाण नहीं मिलते फिर भी आत्मा में स्वानुभव की जो शक्ति है वह विज्ञान के ९२ तत्वों में से किसी में नहीं पाई जाती इसलिये वह एक स्वतन्त्र तत्व मालूम होता है । कम से कम यह तर्क आत्मा न मानने के बारे में सन्देह पैदा कर देता है और अनात्मवाद की अपेक्षा आत्मवाद मानने में मानव का अधिक कल्याण है इसलिये आत्मा मानना ही ठीक है । हां ! अनात्मवादी भी सुसंस्कार आदि के द्वारा पवित्र जीवन बिता सकता है । पर फिलहाल यह कुछ कठिन मार्ग है, इसमें आत्मवाद की अपेक्षा पतन का अधिक डर है इसलिये जहां तक होसके आत्मवादी बनकर जीवन निर्माण करना चाहिये । हां ! अनात्मवाद के कारण किसी को

अधर्मी न मानना चाहिये। इसके लिये तो उसका आचार-व्यवहार या ईमान आदि देखना चाहिये।

डार्विन का विकासवाद

एक प्रश्न डार्विन के विकासवाद पर भी था। मैंने कहा कि डार्विन का विकासवाद उपेक्षणीय नहीं है। यह सम्भव है कि पुरातत्व तथा प्राणि-शास्त्र की खोजों से जो क्रम डार्विन ने बताया उस क्रम में काफी गड़बड़ियां हों, फिर भी पृथ्वी पर विभिन्न प्राणि सृष्टि की उत्पत्ति की समस्या को सुलझाने का जो डार्विन ने प्रयत्न किया है वह स्तुत्य है।

पृथ्वी सूर्य का एक टुकड़ा है और करोड़ों वर्ष पहिले इसका धरातल आग की तरह गरम तथा जन्तुशून्य था यह बात तो निर्विवाद-सी है। पृथ्वी गर्भ में अभी आग का पिंड ही है, इसका पता ज्वालामुखी पर्वत और उनमें निकलनेवाले लावा से आफ्रिकावासियों को लगा ही करता है। इस प्रकार जीवशून्य पृथ्वी में हाथी घोड़ा मनुष्य आदि प्राणियों की सृष्टि दो ही तरीके से कही जासकती है।

एक तो यह कि आसमान से हाथी घोड़े ऊंट मनुष्य आदि नाना तरह के प्राणियों के जोड़े टपके हों और उनसे यह प्राणिसृष्टि हुई हो।

दूसरा यह कि अमीबा सरीखे एककोषी सूक्ष्म जीव पैदा हुए हों और उनसे विकसित होते होते यह प्राणिसृष्टि हुई हो।

पहिली बात असम्भव है। चार पांच मीलके ऊपर तो यहां के प्राणियों का जिन्दा रहना तक कठिन है फिर आसमान में प्राणी कहां से आयेंगे और टपकेंगे? इसलिये दूसरी बात ही सम्भव है। तब निर्जीव सृष्टि में इकदम बिना मां-बाप के हाथी घोड़े ऊंट बन्दर आदमी पैदा हो जायँ—यह भी सम्भव नहीं है। प्रारम्भ में तो सूक्ष्म कीटाणु ही पैदा हो सकते हैं। तब हमें सूक्ष्म कीटाणुओं से विकसित होते होते मनुष्य तक के निर्माण की बात माननी होगी। उसमें कितने वर्ष लगे और किस क्रम से विकास हुआ, इस बात में

भ्रम होसकता है पर साधारणतः विकासवाद मानना पड़ेगा ।

इस चर्चा से लोगों को बहुत सन्तोष हुआ ।

बेचैनी के दिन

२७ और २८ फरवरी के दिन सभी के लिये बेचैनी के थे । सत्य-समाज पद्धति से विवाह विधि कराने के लिये प्रचार कार्य बन्द कर सैकड़ों मील लौटकर मैं जिंजा आया पर वह विधि नहीं होरही है, इसका खेद विवाह के संयोजकों को भी था और मेरी आफ्रिका यात्रा के संयोजकों को भी । और सब आपस में कुटुम्बी और रिश्तेदार थे । कई बार बातचीत में वे यह भी कह चुके थे कि स्वामीजी की आफ्रिका यात्रा के खर्च के लिये जगह जगह से चन्दा तो करना ही नहीं है, इसलिये हम लोग आपस में ही इस रकम की पूर्ति कर लेंगे । पर विवाह विधि की बात को लेकर भीतर ही भीतर सभी का दमसा घुट रहा था । इनकी भूल यह थी कि इनने विवाह विधि मंजूर कर निमन्त्रण पत्र में उसका उल्लेख किया था, और मुझे बुला लिया था, मेरी भूल यह थी कि मैंने इन्हें उदार मान लिया था ।

इसमें सन्देह नहीं कि मेरी इस यात्रा में लालजी भाई के कुटुम्बी और रिश्तेदार ही इस यात्रा का सारा बोझ उठा रहे थे । इसप्रकार भविष्य में जब सत्यसमाज के इतिहास में आफ्रिका यात्रा का महत्वपूर्ण प्रकरण लिखा जायगा तब यहां के सोनी समाज की यह सेवा अमूल्य समझी जायगी । मैं जहां जहां गया वहां वहां किसी सोनी ने ही ठहरने खाने-पीने का प्रबन्ध किया । उन्हीं की मोटरों का ज्यादा उपयोग हुआ । यहां तक कि कभी कभी भाड़े से मोटर करना पड़ी तो इसका खर्च उन्हींने उठाया । मेरे विचारों का अधिक से अधिक लाभ दूसरी जनता ने उठाया पर मेरे ठहराने खिलाने पिलाने तथा अन्य सेवा आदि करने का बोझ सोनियों ने उठाया ।

आफ्रिका की भारतीय जनता का यह हाल है कि कोई धर्म का ढोंग दिखाकर लाखों लेजाय वह दे देगी । पीठ पीछे गाली भी देगी पर इससे ढोंगी का काम न रुकेगा । इधर मेरे विचारों की कीमत करनेवाला दल काफी होनेपर

था पर मेरी यात्रा का सारा बोझ सोनी समाज पर पड़ा था, यह अवस्था मुझे भी असह्य मालूम होरही थी।

किसी तरह का चन्दा तो करना भी नहीं था, मैंने जीवन में कभी किया भी नहीं था, फिर भी यात्रा का बोझ तो यहां की आम जनता को ही उठाना था। केवल सोनी समाज ही यह बोझ उठाये यह उचित नहीं था, पर इस तरफ दूसरों का ध्यान नहीं था। और मैं यह बात किसी से कहना न चाहता था।

सोनी समाज के इस विशेष सहयोग का परिणाम था कि कुछ लोग मुझे सोनियों का गुरु मानने लगे थे; सम्भवतः इसलिये भी वे मेरे प्रबन्ध की चिन्ता से मुक्त थे। परन्तु मुख्य कारण एक तरह की लापर्वाही था। कुछ भी हो! भविष्य में यदि सत्यसमाज की विचारधारा से आफ्रिका की जनता को लाभ हुआ तो इसका प्रारम्भिक श्रेय सोनी समाज को मिलेगा। भले ही सत्यसमाज से लाभ उठाने की योग्यता उसमें न रही हो, और दीवाल बनाकर छप्पर का काम उसने छोड़ दिया हो।

सम्बन्ध की इस निकटता के कारण ही विवाहविधि की बात ने गम्भीर और कुछ प्रतिक्रियात्मक रूप लेलिया था। और इससे अधिवेशन की बात भी संशय पर चढ़गई थी। स्वागताध्यक्ष श्री गिल बहुत दिनों से कहीं बाहर गये हुए थे इसलिये भी स्थिति गम्भीर थी। इन सब कारणों से ता. २७-२८ को पार्क में न आसका।

ता. २९ के सबेरे अयोध्या सत्यसमाज के संरक्षक वैद्य प्रकाशपुञ्ज जी का एक विस्तृत पत्र मिला, जिसमें सम्मेलन के लिये भारत के अच्छे अच्छे सत्यसमाजियों के सन्देश थे। विवाह पर पढ़ने योग्य कविता भी थी और भी साहित्य था। मेरे पास आने के पहिले यह पत्र लालजीभाई के बड़े भाई जीवनलालजी (म्बारारा वालों) ने पढ़ा। उनके दिलपर इसका बहुत असर हुआ। उनने इस ढील ढाल के लिये कुछ लोगों को फटकारा और मेरे पास आये, बोले-आपको जिस सत्यप्रचार के लिये हमने आफ्रिका में बुलाया है

वह काम पूरा होगा, सम्मेलन वगैरह भी सारे काम अच्छी तरह होंगे। अगर किसी ने इस काम में हाथ न बटाया, तो मैं अपनी दुकान बेचकर भी यह सब कार्य कराऊंगा।

जीवनलालजी करीब हजार मील से आकर मुझे लेने मुम्बासा गये थे, करीब एक माह साथ रहे थे, यात्रा में बहुतसा खर्च भी किया था, आप और आपके दोनों युवक पुत्र सत्यसाहित्य पढ़कर ही सत्यसमाज के रंग में रंग गये हैं, इस तरह उनकी सत्यसेवा महान है, पर आज जो उनने हिम्मत बतलाई उसने ठीक अवसर पर असाधारण कार्य किया।

आफ्रिका यात्रा का श्रेय सोनी समाज को काफी है पर अभी उसकी मात्रा अनिश्चित है लेकिन लालजीभाई और उनके बड़े भाई जीवनलालजी की सेवाओं की तुलना चिरकाल तक न होसकेगी। संभव है भविष्य में सत्यसमाज को यहां बड़े बड़े सहायक मिलें पर आज का मूल्य मिलना दुर्लभ है।

विवाहविधि और आहुति

ता. २९-२-५२ को जब पार्क में गये तब आज उपस्थिति काफी अधिक थी। एक भाई ने प्रश्न किया कि आपकी विवाह विधि क्या है और वह यहां होते होते क्यों रुक गई?

मैंने कहा– विवाह एक ऐसा शुभ बन्धन है जो सब समाजों के लिये मान्य है। विवाह के बाद जो पतिपत्नी बनते हैं वे सभी समाजों और धर्मों के लोगों की दृष्टि में पतिपत्नी बनते हैं, इसलिये विवाह में यथाशक्य सभी की गवाही चाहिये। पर सबके आदमी कहां तक ढूंढ़े जांय इसलिये सब धर्मों के देवों का साक्षित्व पद्य पद लिया जाता है, सभी की मंगल कामना भी इसी तरह प्रगट की जाती है। सप्तपदी की शर्तें शर्तों की भाषा में नहीं हैं किन्तु एक दूसरे के प्रति अपनी सेवा अर्पित करने की प्रतिज्ञा की भाषा में हैं। उसमें दोनों का एक दूसरे के प्रति सम्मानजनक भाषा का प्रयोग करना पड़ता है।

सात प्रदक्षिणाएं जीवन के कार्यक्षेत्र की प्रतीक हैं। जिस कार्यक्षेत्र में जिसकी प्रधानता है उसमें उसे आगे रहना पड़ता है। सेवा गृह-प्रबन्ध आदि की प्रदक्षिणा में कन्या आगे रहती है, अर्थोपार्जन रक्षण आदि की प्रदक्षिणा में वर आगे रहता है आदि। अन्त में दोनों साथ रहकर प्रदक्षिणा करते हैं।

इसके सिवाय इस विधि की विशेषता यह है कि इसमें संस्कृतभाषा का उपयोग नहीं किया गया है क्योंकि अब लोग संस्कृत नहीं समझते। ऐसी भाषा में विवाहविधि कराना जिसे वर वधू समझते ही न हों, यहां तक कि दर्शक भी न समझते हों, विधि की व्यर्थता है। यह तो ऐसी दस्तावेज पर दस्तखत कराना है जिसे न दस्तखत करनेवाले समझते हैं। न गवाही देनेवाले। इस धोखे की क्रिया को सत्यसमाज की विधि में स्थान नहीं है।

इसके सिवाय एक विशेष बात यह है कि इस विधि में आग में हवन आदि क्रिया नहीं होती। आज घी अन्न जलाने का समय नहीं है। इसके लिये तो सबसे अच्छा अग्निकुण्ड मनुष्य का पेट है। यह ठीक है कि हम जीवन में अनेक तरह से अनेक चीजें बर्बाद करते हैं पर चीजों का बर्बाद होना एक बात है और बर्बाद करने का विधान बनाना दूसरी बात। बर्बादी का विधान नहीं बनाया जासकता। ऐसे विधान का मतलब यह कि आप बुराई को भलाई साबित करना चाहते हैं। (बैठे आदमियों में निकलते समय कभी कभी हमारा पैर दूसरों को लगजाता है, कभी कभी थूंकते समय दूसरों पर उसके कण उड़जाते हैं, चलते समय पैरों से जो धूल उड़ती है वह दूसरों के सिरपर पहुँच जाती है, और भी ऐसे अनेक कार्य प्रमाद आदि के कारण होजाते हैं पर इसीलिये किसीको पैर मारने, थूंक उड़ाने या धूल उड़ाने के विधान नहीं बनाये जाते।)

पुराने जमाने में हम आग को देवता मानते थे। लकड़ी रगड़कर आग पैदा करते थे, इसलिये वह हमें एक अद्भुत अदृश्य महाशक्ति मालूम होती थी। बाद में हम आग के रहस्य को समझे, आग को देवता की मूर्ति के

रूप में भी मानने की प्रथा चली गई। फिर उसके स्थान पर पत्थर की भाव-पूर्ण मूर्तियां आईं, लिखने का रिवाज आया उसीसे हमने देव को समझने का कार्य किया। आज आग को देवमूर्ति समझने की जरूरत नहीं हैं। देवमूर्ति का हमें सदा सन्मान करना पड़ता है, उसे साधारण काम में नहीं लाते। रामजी की मूर्ति से न हम चटनी बांटते हैं न सुपारी फोड़ते है। पर आग के जरिये तो संडास में बैठे बैठे सिगरेट पीते हैं। इसलिये आग को देवमूर्ति समझना और खाद्य सामग्री जलाना अनुचित है।

एक भाई ने पूछा–आहुति से कीटाणु मरते हैं और हवा साफ होती है।

मैंने कहा कि इसके लिये तो आपके घरों में मच्छर मारने की पिचकारियां और फिनेल की बोतलें सबसे अच्छी चीजें हैं। जिन दिनों इन चीजों का आविष्कार नहीं हुआ था उन दिनों पुराने साधनों का उपयोग किया जाता था, आज नहीं। फिर भी, आपको धुआं से मुहब्बत ही हो तो घी आदि न जलाकर गूगल धूप आदि जलाइये और ऐसी जगह जलाइये जहां गन्दगी ज्यादा हो, विवाह मण्डप सरीखी साफ जगह में आग जलाने का क्या अर्थ है? वर वधू बिचारे आग की लपटों की गर्मी से बचने के लिये हाथ आकाकर छटपटाये, धुंआं के मारे आंखें मलते रहें और परेशान हों, इस तरह का वृथा कष्ट और खाद्य सामग्री की बर्बादी सत्यसमाज नहीं चाहता, ऐसी परेशानी और बर्बादी से वैवाहिक जीवन का प्रारम्भ नहीं करता।

एक भाई ने पूछा कि धुंआँ से बादल बनते हैं, इससे वर्षा होती है, इस प्रकार कुछ लोग कहते हैं। इसमें कहां तक सत्य है?

मैंने कहा–धुंआँ में कार्बन आदि तत्व हैं और बादल या पानी में आक्सिजन और हाइड्रोजन। एक तत्व से दूसरे तत्व की चीज इस प्रकार कैसे बनेगी? यूरेनियम जब इकदम हीलियम बनता है तब एटम बम का फटना कहलाता है, हाइड्रोजन को हीलियम बनाने की क्रिया से एटम बम से भी

कईगुणा शक्तिशाली हाइड्रोजन बम बननेवाला है। तत्वों का सहसा बदलना ऐसा सीधा साधा कार्य नहीं है, वह प्रलयंकर है। और उसके लिये काफी कोशिश करना पड़ती है। आप से आप कार्बन पानी नहीं बन सकता। आज तो ये बच्चों की बातें हैं पर पुराने जमाने में बड़े बड़े दार्शनिक इन बातों को न समझते थे। पर आज समझदारी उपलब्ध होने पर भी पुरानी नासमझी से चिपके रहने का क्या अर्थ है?

पुराने लोगों को पदार्थों का भीतरी ज्ञान नहीं था। वे समझते थे कि वाष्प रूप जितने पदार्थ हैं, एक हैं, और तरल रूप जितने पदार्थ हैं वे एक हैं। इसलिये वे धुआं और बादल को एक समझते थे। सैकड़ों वर्ष बाद इस वैज्ञानिक जमाने में इस भोलेपन की वकालत करने की मूर्खता न करना चाहिये। क्या आप मान सकते हैं, कि घासलेट और पानी तरल होने से एक हैं? या वह धूआं बादलका बाप है जिसे रोककर घनीभूत करने से कज्जल या कालिमा बनती है? जरा आप देश के जंगल जलाकर मैदान तो बना डालिये। तब आप देखेंगे कि धूएं से तो आसमान भरगया और प्राणियों का दम भी घुटगया पर वर्षा आधी भी नहीं रही। समुद्र में काफी वर्षा होती है, पर वहां कौन अग्निकुंड में आहुति देता है? चेरापुंजी में कितने पुरोहित होम करने आते हैं, जहां साल में छः सौ इंच अर्थात संसार में सब से अधिक वर्षा होती है और सहारा के मरुस्थल में होम करके देख लीजिये, आपके धूएं से वर्षा की कितनी बूंदें टपकती या बढ़ती हैं।

एक भाई ने कहा–इस तरह आप पुरानी परम्परा को तोड़ते हैं, पर जनता आपकी बात नहीं समझ सकती। क्योंकि वह इतनी पढ़ी लिखी नहीं है।

मैंने कहा– जनता तो समझ सकती है पर कुछ पढ़े लिखे लोग उसे समझने देना नहीं चाहते। रूढ़ियों का सम्बन्ध कुछ पढ़े लिखे लोगों की जीविका तथा प्रतिष्ठा से होजाता है और अपने स्वार्थ के कारण वह वर्ग जनता को रूढ़ियों के चक्कर के बाहर नहीं जाने देना चाहता। जनता के भोलेपन और मानसिक निर्बलता का वह दुरुपयोग करता है। वह डरा देता है

कि रूढ़ियों के भंग से इसप्रकार सर्वनाश होगा, उस प्रकार अपशकुन होगा, इत्यादि। जनता डर जाती है और समझकर भी नासमझ बनजाती है। सुधार के पथ में जनता के नासमझ होने का डर इतना नहीं है जितना कि पढ़े लिखों के नासमझ होने का डर है। अगर जनता को उसी के विवेक पर छोड़ दिया जाय, उसकी मानसिक दुर्बलता का दुरुपयोग न किया जाय तो उसे समझाना मुश्किल नहीं है।

एक भाई ने यह भी पूछा कि होम न रहने से विवाह विधि गैरकानूनी तो न होजायगी ?

मैंने कहा– आधे से अधिक हिन्दुओं के विवाह बिना होम के होते हैं। हिन्दुओं में जाति जाति और प्रान्त प्रान्त की विवाह विधियां अलग अलग हैं और बहुतों में होम नहीं है, इससे उनके कानूनी रूप पर कोई असर नहीं पड़ता।

उठते उठते एक भाई ने पूछा कि विवाह में और भी बहुतसी बुराइयां हैं, पर आप इस छोटीसी बुराई पर इतना जोर क्यों देते हैं ?

मैंने कहा– मैं विवाह की हर बुराई को दूर करने की कोशिश करता हूँ। जो बुराई सामने आगई और जिसे लोग बुराई नहीं समझते, उसपर जोर ज्यादा देना पड़ता है। यों अपने साधनों को भी देखना पड़ता है। घर में बहुतसी कीट लगी होने पर भी धूल पहिले झाड़ ली जाती है। साधन मिलने पर कीट भी निकलना ही है।

साधुता और दाम्पत्य

१ मार्च ५२ को पार्क की मीटिंग में बैरिष्टर भट्टजी ने कुछ व्यक्तिगत प्रश्न करने की अनुमति मांगी और कहा कि आपका जीवन तो सबका जीवन है उसमें व्यक्तिगत क्या है इसलिये व्यक्तिगत प्रश्न से बुरा न मानें। मैंने कहा कि मैं बुरा नहीं मानता आप निसंकोच पूछिये। तब उनने पूछा—

१- हमारे देश में सब लोग किसी से दीक्षा लेकर साधु बनते हैं तब आप किसी से दीक्षा लिये बिना साधु कैसे बने ?

२- आपके साथ पत्नी है तब आप साधु कैसे ?।

३- आप इस प्रकार पीला या केशरिया क्यों पहिनते हैं ? क्या यह धोखा देना नहीं है ? और पहिनते हैं तो पूरा क्यों नहीं पहिनते, धोती सफेद क्यों पहिनते हैं ?

४— आपने कल कहा था कि पढ़े लिखों का डर है ? तो क्या आप यह समझते हैं कि सब आप की बात सुनते ही मानलें ?

मैंने इन प्रश्नों का उत्तर प्रसन्नता से इस प्रकार दिया—

१— साधारणतः गुरु से दीक्षा लेना उचित है, क्योंकि हर एक आदमी आवश्यक ज्ञान और संयम स्वयं नहीं पाता, और न आवश्यक अनुशासन भी पालपाता है। पर मेरे जो विचार हैं, जीवन में संयम का जो रूप है, उसे देने योग्य कोई गुरु मुझे नहीं मिला। मेरी आत्मकथा पढ़ने से आपको पता लगेगा कि मेरे विचारों का निर्माण किस प्रकार चिन्तन मनन करते करते स्वयं स्फूर्तिसे हुआ। और उसी तरीके से मैंने अपने जीवन का ढांचा बनाया। इस प्रकार गुरु की न तो मुझे जरूरत मालूम हुई, न गुरु बनाने लायक कोई व्यक्ति दिखा। यहां तक कि इस मार्ग में प्रेरणा देनेवाला और प्रेरणा देने की योग्यता रखनेवाला भी कोई व्यक्ति मुझे न मिला, इसलिये मुझे अपने आप ही मार्ग निर्माण करना पड़ा। पुराने शास्त्रों में भी प्रत्येक बुद्ध या स्वयंबुद्धों का उल्लेख आता है। हालां कि ऐसे व्यक्ति अपवाद रूप होते हैं पर होते हैं जरूर। मुझे भी ऐसा ही समझें।

गुरुके विषयमें उचित नीति यह है कि अगर सत्पथ में प्रेरणा देनेवाला या सत्पथ प्रदर्शक, अपने से गुणों में महान, श्रद्धास्पद व्यक्ति मिल जाय तब तो उसे गुरु बनाना चाहिये, अगर योग्य व्यक्ति न मिले तो बिना गुरु के ही रहना चाहिये, गुणहीन और अयोग्य व्यक्ति से गुरु की जगह न भरना चाहिये।

सत्यसमाज के जो सन्देश हैं वे सन्देश मुझे किसी व्यक्ति से नहीं, किन्तु सत्येश्वर से मिले इसलिये मैंने किसी व्यक्ति को गुरु न मानकर सत्येश्वर को ही गुरु माना। साधुता की दीक्षा भी मैंने उन्हीं से ली है।

२— कम से कम लेना और अधिक से अधिक देना साधुता है इसलिये किसी व्यक्ति को साधु कहने न कहने में इसी साधुता का विचार करना चाहिये। बाकी बातें गौण हैं। मैं पहिले सन् ३५–३६ में चार पांच घण्टे काम करके दोसौ रुपये माह लेलेता था। आज दस बारह घंटे काम करके, और कोई छुट्टी न लेकर भी सिर्फ रोटी कपड़ा लेता हूँ। और उसमें भी मेरी जीवन भर की सम्पत्ति लगी हुई है। सत्याश्रम की इमारत मन्दिर प्रेस आदि अपने ही धन से बनवाये हैं। ऐसी अवस्था में साधुता की उपर्युक्त परिभाषा के अनुसार मुझमें साधुता तो मानी ही जासकती है।

पर साधुता को व्यापक परिमाण में जीवन में उतारने के लिये साधुसंस्था बनाई जाती है जिसमें साधुता रूप प्राणों की रक्षा के कुछ बाहरी विधान होते हैं। हर एक धर्म संस्था के ये विधि विधान देश काल रुचि के अनुसार जुदे जुदे होते हैं। इस बारे में सत्यसमाज का भी विधान है। जिसके अनुसार अकेले अकेले साधु तो बन ही सकते हैं पर दम्पति भी साधु बन सकते हैं। हां! उनके ऊपर कुटुम्बियों के पालन पोषण का और उन्हें उत्तराधिकारित्व देने का बोझ न होना चाहिये। उनके पास जो कुछ हो उसका उत्तराधिकारी समाज या संस्था ही होना चाहिये।

मैंने इस नियम की पाबन्दी की है और घोषणा की है।

नारी के साथ रहने में साधुता का कोई विरोध नहीं, बल्कि उसकी मात्रा बढ़ने की ही सम्भावना है। परस्पर पूरक और सहयोगी बनकर वे समाज सेवा के कार्य का अच्छी तरह संचालन कर सकते हैं। जिन गृहस्थों की उन्हें सेवा करना है उनसे सम्बन्ध भी अच्छा रख सकते हैं, कौटुम्बिक समस्याओं के अनुभवी भी होसकते हैं, अकेली स्त्री, अकेला पुरुष या दम्पति को उनके पास आने में कोई संकोच नहीं होसकता है। आज कल जो अनुभ-

वहीन ज्ञानहीन सेवाहीन लोग सिर्फ ब्रह्मचारी कहलाने के नाम पर साधु बनकर पुज जाते हैं, और समाज का भार बनजाते हैं उनका भार घटेगा और समाज के लिये उपयोगी साधु मिलेंगे। और सब से बड़ी बात यह होगी कि साधु-संस्था में जो भयंकर व्यभिचार घुस गया है, साधु के पास आज बहू बेटी सुरक्षित नहीं हैं उससे रक्षा होगी। दम्पति साधु के पास जब बहू बेटी आयगी तब ऐसा मालूम होगा मानों मां बाप के पास आई है। आज अवस्था उल्टी है।

इस प्रकार दम्पति साधु की प्रथा का पुनरुद्धार आवश्यक है। वह उपयोगी है और पुरानी भी है। हिन्दू समाज में भी जो ब्रह्मचारी साधु की प्रथा व्यापक होगई है वह जैनधर्म और बौद्धधर्म से उधार ली हुई है। पहिले ऋषि महर्षियों की जो साधुसंस्था थी वह सपत्नीक होती थी, वह आश्रम चलाती थी, जनसेवा के सारे कार्य करती थी। आज भी युग के अनुसार पुनरुद्धार जरूरी है।

सपत्नीक साधुसंस्था में ज्ञान और सेवा का परिचय देना जरूरी हो जाता है, अन्यथा वह गृहस्थों के समान मानली जायगी और टिक न सकेगी, पर ब्रह्मचारियों की साधुसंस्था में ज्ञान सेवा की भी जरूरत नहीं समझी जाती, वह अकेलेपन के दमपर पुज जाता है। पर इससे समाज को कोई सेवा नहीं मिलती, सिर्फ बोझ ही बढ़ता है और वातावरण गंदा होता है। इसलिये खूब गहराई से विचार करने पर और समाज की जरूरत देखकर दाम्पत्य वाली साधुसंस्था के निर्माण की जरूरत है।

३— वेष किसी संस्था के सदस्य होने की निशानी है। सत्यसमाज ने जब साधु-संस्था बनाई तो उसमें कुछ गणवेष (यूनिफार्म ड्रेस) जरूरी था। धोखा देना तो तब कहलाये जब कोई साधुता की जिम्मेदारी तो न उठाये पर सिर्फ वेष दिखाकर जनता से लाभ उठाले। सत्यसमाज की साधुसंस्था में या मुझमें ऐसी बात नहीं है। यहां साधुता जितनी मात्रा में है, उसका एक अंश भी लाभ नहीं उठाया जाता।

इस देश में साधुता के निशान के रूप में पीला, भगवा या केशरिया

रंग प्रचलित है, यह एक तरह की भाषा है। जो भाषा प्रचलित हो उसका उपयोग करना सब के लिये सहूलियत की बात है।

धोती सफेद इसलिये रक्खी कि वह हरदिन धोना पड़ती है और रंग निकलता है। यूनिफार्म का काम चादर और बंडी रंगने से चलगया इसलिये अधिक रंग की जरूरत नहीं समझी। रंग धर्म की मात्रा नहीं है कि ज्यादा से ज्यादा लगाया जाय।

४— कल आपने (बैरिष्टर भट्टजी ने) कहा था कि जनता पढ़ी-लिखी न होने से मेरी बात नहीं समझ सकती। इसपर मैंने कहा था कि जनता तो समझ सकती है पर पढ़े लिखे लोगों की नासमझी का ही अधिक डर है। संस्कृत में कहावत है—

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि तं नरं न रञ्जयति

मूर्ख सरलता से समझाया जासकता है, विद्वान् और भी सरलता से समझाया जासकता है पर जो अधकचरे हैं उन्हें विधाता भी नहीं समझ पाता।

इसलिये इस बात की चिन्ता न करना चाहिये कि मूर्ख न समझ पायेंगे।

बाकी कोई मूर्ख हो या पढ़ालिखा, सभी से मैं यही कहता हूं कि विवेक से काम लो। मैं तो देव, शास्त्र और गुरु सब की परीक्षा की बात विस्तार से कह चुका हूँ। कठोर से कठोर प्रश्न पूछने तर्क करने, और परीक्षा लेने की बात आप सब से कहता हूं और इसीलिये मैं आता हूं।

ऐसी हालत में मेरी बात सुनते ही मानने का सवाल ही नहीं उठता। मेरा कहना तो यह है कि न नये का पक्षपात करो न पुराने का, न वेष के कारण किसी की बात मानो, न पद के कारण, अपनी सारी शक्ति लगाकर हित-अहित का विचार करो।

आज के प्रश्न कुछ व्यक्तिगत थे पर उत्तरों से सब को काफी सन्तोष हुआ।

मेरे डेरे पर रात में ९ बजे से जो चर्चा सभा हुई उसमें आज बैरिष्टर भट्ट भी आये थे। कुछ अन्य साधारण प्रश्नों के उत्तर दिये। बैरिष्टर भट्टजी ने पूछा कि आप प्रचार के लिये आफ्रिका क्यों आये ? लोगों को ही आपके पास वहां पहुँचना चाहिये।

मैंने कहा यह भी एक प्रचार शैली है। इससे मनुष्य का व्यक्तित्व बढ़ता है पूजा होती है, पर जनसाधारण को लाभ कम मिलता है। न तो हर एक जन के पास इतने साधन होते हैं कि वह मेरे पास पहुंच सके, न हर एक को इसका पता होता है कि अमुक जगह ज्ञाननिधि है इसलिये वहां जाना चाहिये। मैं यहां न आया होता तो आप में से कितनों को मेरे विचारों का पता लगता ? पुराने जमाने में महावीर बुद्ध ईसा जरथुस्त आदि को इसी तरह दर दर घूमना पड़ा है। निःसन्देह इससे मनुष्य का अपमान होता है, तिरस्कार होता है, खाने पीने ठहरने आदि की तकलीफें भी होती हैं, पर यह सब जनहित की दृष्टि से सहन ही करना चाहिये। जनता जब तक समझती नहीं है तब तक ये सब कष्ट उठाने ही पड़ेंगे।

बैरिष्टर भट्ट जी ने कहा कि मुझे इस बात का दुःख है कि जनता को आपसे जितना लाभ उठाना चाहिये था उसका शतांश भी नहीं उठापाई, इसमें मैं आपका नुकसान नहीं समझता पर अपना या जनता का नुकसान समझता हूँ। इसे जनता का दुर्भाग्य कहना चाहिये।

मैंने कहा– इस दुर्भाग्य को सौभाग्य बनाने की जितनी कोशिश हो सके हर एक को करना चाहिये।

जिंजा २–३–५२

आज उपवास किया था। आज रविवार होने से बाजार बन्द था इसलिये फल न मिले, सिर्फ पानी पीकर ही दिनभर रहा। रात में थोड़ा सा मक्खन लिया।

विविध प्रश्न

आज पार्क की मीटिंग में काफी प्रश्न हुए। एक भाई ने पूछा—आज कल ताजमहल सरीखी इमारतें क्यों नहीं बनती ?

मैंने कहा— आज जीवन के दूसरे काम इतने बढ़गये हैं कि वैसी कला रचना के लिये आज का मनुष्य इतनी सम्पत्ति खर्च करने को तैयार नहीं है। यों आज भी दिल्ली के दरीबा के नये जैन मन्दिर में, आगरा के पार्श्वनाथ मंदिर में तथा स्वामीबाग में ताजमहल सरीखे काम होरहे हैं। कारीगर आज भी हैं पर अब उनकी उपयोगिता नहीं समझी जाती। इच्छा होनेपर ताज महल से बढ़कर चीजें आज भी बनसकती हैं।

प्रश्न— शंकराचार्य सरीखे व्यक्ति आज क्यों नहीं होते ?

उत्तर— होते हैं और उनसे बढ़कर होते हैं। पर महामानवों के युग की जनता उनको पहिचान नहीं पाती। जो चीज आंख से सटी हो वह दिखती नहीं है या ठीक नहीं दिखती क्योंकि उसका फोकस नहीं मिलता। पर जब वे कुछ दूर होजाते हैं अर्थात पुराने पड़जाते हैं तब दिखने लगते हैं। लोगों में भूतकाल का मोह भी होता है इसलिये भी वे भूत की बात को बढ़-चढ़कर मानते हैं। यों एक से एक बढ़कर आदमी पैदा होते हैं, आगे भी होंगे।

प्रश्न— योगी अरविन्द रमण आदि की शक्तियों के बारेमें आपके क्या विचार हैं ?

उत्तर— वे अच्छे व्यक्ति थे, विचारक थे। इनके आश्रमों में कर्मठता का भी परिचय दिया जाता है। स्वयं अरविन्द काफी परिश्रम करते थे। पर जिस चमत्कार के लिये इनकी प्रसिद्धि है वह मैं नहीं मानता। हमारे ध्यान लगाने से कोई अलौकिक शक्ति उतरेगी जो लोगों की दुर्वृत्तियां नष्टकर उन्हें दिव्य बना देगी ये सब निराधार कल्पनाएं हैं। मैं मजदूरी में विश्वास करता हूँ। दुनिया के लोग सुधरेंगे अवश्य, एक दिन यह संसार दिव्यसंसार या नया संसार बनेगा पर उसके लिये घर घर प्रचार करना पड़ेगा, क्रांतिकारी

संस्थाएं बनाना होंगी, राजनैतिक और आर्थिक परिवर्तन करना होंगे नये ढंग का शिक्षण देना होगा, इत्यादि प्रयत्नों से दुनिया सुधरेगी। किसी अलौ-किक या आकस्मिक चमत्कार से नहीं

प्रश्न– क्या आत्मिक शक्तियां कोई चीज नहीं?

उत्तर– कोई चीज क्यों नहीं? वे आत्मिक शक्तियां हैं। ज्ञान संयम प्रेम सेवाभाव सहिष्णुता आदि महान आत्मिक शक्तियां हैं। महावीर बुद्ध ईसा आदि में ये ही आत्मिक शक्तियां थीं जिनसे वे इतने महान बनगये और दुनिया को भी बहुत कुछ सुधार गये। बाकी आत्मशक्ति के नामपर जो अद्-भुत रस की बातें कही जाती हैं वे सब झूठ हैं।

प्रश्न– सतीप्रथा के बारे में आपके क्या विचार हैं?

उत्तर– यह एक नृशंसतापूर्ण कुप्रथा थी। पुराने इतिहास से पता लगता है कि मिश्र बेबलन आदि में जब कोई राजा मरजाता था तब उसके साथ उसकी रानियां तथा दास दासियां तक जिन्दी दफना दी जाती थीं। जिससे दूसरे लोक में राजा को रानियों तथा दास दासियों की कमी न हो। सती प्रथा के मूल में भी यही क्रूरतापूर्ण मूढ़ता काम करती है। समय बीतने पर इस कुप्रथा को सुन्दर भावनाओं से मढ़ने की कोशिश की गई। ऐसी सतियों के खूब गीत गाये गये, परलोक की सद्‌गति के प्रलोभन दिये गये, इसे पतिव्रत्य की पराकाष्ठा समझा गया जिससे बहुत स्त्रियां स्वेच्छा से भी जल मरने को तैयार होगईं, पर क्रूरता के दृश्य काम न हुए। चिता पर जलने-वाली सती आग लगने पर भाग न पाये इसलिये चारों तरफ शस्त्रधारियों का पहरा लगने लगा, भागने पर उसे शस्त्रों से ढकेलकर फिर चिता में डाल दिया गया, उसके करुण क्रन्दन से मनुष्यता न जाग पड़े, इसलिये इतने जोर जोर से बाजे बजाये गये कि उसका क्रन्दन सुनाई न पड़े, कपूर की मालाएं उसे पहिनाई गईं कि आग उसे जल्दी पकड़ ले। मनुष्य धर्मान्धता के नाम पर कितना क्रूर होसकता है, इसकी निशानी यह सती कुप्रथा है। आज भी सती कुप्रथा की उत्तेजक कहानियाँ गढ़कर लोग पत्र में छपाते हैं। इसके मूल



जिंजा पार्क में सत्येश्वर का सन्देश देते हुए स्वामी सत्यभक्त

में प्रत्यक्ष क्रूरता और धर्मान्धता के सिवाय कुछ नहीं है।

अंधेरा होचला था इसलिये सब लोग उठ पड़े। घर तक मोटर में आने का इन्तजाम होने पर भी मैं पैदल ही आता था क्योंकि बहुत से आदमी घर तक साथ आते थे और रास्ते में प्रश्न पूछते थे। आज भी एक भाई ने पूछा—

प्रश्न -- पुण्य पाप क्या है ?

उत्तर—पुण्य पाप किसी खास क्रिया का नाम नहीं है। जब जो कार्य सब की भलाई की दृष्टि से ठीक हो वह पुण्य, जो बुराई पैदा करे दुःख दे, वह पाप। इसकी विशेष और विस्तृत व्याख्या तो सत्यामृत में की है पर संक्षेप में व्याख्या यही है। पुण्यपाप के नामपर किसी क्रियाकांड के चक्कर में न पड़ना चाहिये।

प्रश्न— दैव का बल प्रधान है या पुरुषार्थ का ?

उत्तर— जन्म में दैव की ही प्रधानता है इसके बाद धीरे धीरे पुरुषार्थ की प्रधानता होती जाती है। समझदार होजाने पर हमें दैव की चिंता न करना चाहिये सदा पुरुषार्थ में लगे रहना चाहिये। होसकता है कि किसी जगह दैव बलवान हो, इसलिये वह जीतजाय फिर भी हमें तो पुरुषार्थ के द्वारा उससे लड़ते रहना चाहिये। दैव उन पुराने कारणों को कहते हैं जो बीज-रूप में मौजूद रहते हैं। हम उन्हें पहिले से देख नहीं सकते। पुरुषार्थ करने पर भी जब निष्फलता दिखाई देती है तभी हमें दैव की प्रबलता का पता लगता है।

दैव की प्रबलता और निर्बलता का निर्णय करने के लिये भी पुरु-षार्थ से काम लेने की जरूरत है। दैव अपना काम करे, हम अपना काम करें, यही नीति कल्याणकर है।

प्रश्न- परमात्मा का दर्शन क्या है ?

उत्तर– परमात्मा का दर्शन दो तरह का होता है। १–गुणदर्शन २ रूपदर्शन।

परमात्मा के गुणों को समझना, उनपर श्रद्धा रखकर उन्हें जीवन में उतारने की कोशिश करना, इसप्रकार उसमें तन्मय होना गुणदर्शन है। जैसे विष्णु भगवान का कार्य है संसार का रक्षण। संसार के रक्षण के लिये क्या क्या कार्य हैं, हम क्या क्या कर सकते हैं इत्यादि विचारों में तन्मयता विष्णु भगवान का गुण दर्शन है।

ईश्वर के गुणों के अनुरूप उनका चित्र बनाना, मानव आदि का आकार देकर उनकी कल्पना करना और तन्मयता के साथ उनका जाग्रत स्वप्न देखना–ईश्वरका रूप दर्शन है। रूप-दर्शन तब तक विशेष उपयोगी नहीं है जब तक वह गुणदर्शन न करादे।

जिंजा ३–३–५२

आज भी भोजन नहीं किया। दिन में पपीता लिया। रात में थोड़े खजूर लिये।

अलौकिक प्रत्यक्ष

शाम को पार्क की मीटिंग में एक भाई ने पूछा कि क्या भूत का तथा दूर का अलौकिक प्रत्यक्ष नहीं होता ?

मैंने कहा—नहीं। किसी न किसी माध्यम के द्वारा भौतिक प्रभाव जब इन्द्रियों पर पड़ता है तब प्रत्यक्ष होता है। हां! प्रत्यक्ष के जो संस्कार पड़ते हैं उन संस्कारों का उपयोग कर मन बहुत तरह के स्वप्न, जाग्रत स्वप्न, उपमान या प्रत्यभिज्ञान, तर्कों की तीव्रता और तन्मयता आदि के रूपमें बहुत से ज्ञान करता है और उनमें कुछ प्रत्यक्ष के समान स्पष्ट मे होते हैं इसलिये उनको भी लोग प्रत्यक्ष कहने लगते हैं।

पुराने जमाने की जो योगज प्रत्यक्ष की बातें शास्त्रों में आती हैं वे

एक तरह के मानस प्रत्यक्ष हैं। अतिशयोक्ति और अन्युक्ति के कारण उन्हें अलौकिक चमत्कार का रूप आगया है।

प्रश्न— सुना है कि विज्ञान के जरिये भूत वर्तमान के रूप में दिखाई देगा। यह क्या बात है?

उत्तर— सो तो आज भी दिखाई देता है। जिस समय हम सूर्योदय देखते हैं वास्तव में उस समय सूर्योदय नहीं होता। सूर्योदय उसके ७-८ मिनिट पहिले होगया होता है। प्रकाश की गति सेकिण्ड में एक लाख छ्यासी हजार मील है। सूर्य से यहां तक प्रकाश आने में सात आठ मिनिट लगजाते हैं। इसका मतलब यह कि सूर्य हमें सात आठ मिनिट बाद दिखता है। जिस समय हमें दिखता है उसे हम वर्तमान अवस्था कहते हैं जब कि वह सात आठ मिनिट पूर्व भूतकी अवस्था है। इसप्रकार भूत हमें वर्तमान अवस्थाके रूप में दिखाई देता है।

सूर्य तो सिर्फ नव करोड़ मील है पर तारे तो खर्बों मील हैं। उनसे यहां तक प्रकाश आने में सैकड़ों वर्ष लगजाते हैं। इसका मतलब यह कि जो तारा हमें इस समय दिख रहा है वह सैकड़ों या हजारों वर्ष पुरानी अवस्था में दिख रहा है। इसप्रकार हजारों वर्ष का भूत वर्तमान के रूप में दिखरहा है। बात यह है कि जो भी प्रत्यक्ष हमें होता है वह कुछ न कुछ भूत का ही प्रत्यक्ष है। बिलकुल वर्तमान का प्रत्यक्ष असम्भव है। क्योंकि प्रकाश को आंख तक आकर उसका असर मस्तिष्क तक जाने में, शब्द को कान की झिल्ली से टकराकर उसका असर मस्तिष्क तक जाने में, इसी प्रकार अन्य इन्द्रियों का विषय भी त्वचा जीभ नाक से मिलकर उसका असर मस्तिष्क तक जाने में कुछ न कुछ समय लगजाता है। इसप्रकार प्रत्यक्ष में उतने समय का अन्तर होता ही है। पर इस अनिवार्य समय के अन्तर को हम अन्तर में नहीं गिनते। कुछ देर बाद होनेवाले प्रत्यक्ष को हम वर्तमान ही बोलते हैं। क्योंकि यह अन्तर सब जगह अनिवार्य है। इसी प्रकार विज्ञान ने साधारण प्रत्यक्ष को भूत का वर्तमान में प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिया है।

परंतु आपके प्रश्न का इतना ही उत्तर नहीं है। वैज्ञानिक लोग इसप्रकार की कल्पना कर चुके हैं कि जो दृश्य हम यहां देख चुके हैं वे ही दृश्य फिर सैकड़ों वर्ष बाद वर्तमान के रूप में दिखाई दें। हालांकि अभी यह एक कल्पना ही है और उसे व्यवहार में लाना दुःशक्य है परंतु उसे एक वैज्ञानिक प्रक्रिया का आधार अवश्य है। और उसका बीज वही है जो मैं कहचुका हूं।

जो दृश्य अभी हमने देखा वह प्रकाश के द्वारा चारों ओर चलागया और सैकड़ों वर्ष बाद किसी तारा में या कुछ तारों में पहुँचा। अब मानलीजिये कि वह प्रकाश तारे से टकराकर फिर लौटा और सैकड़ों वर्ष बाद पृथ्वी पर आया, इसप्रकार जो प्रकाश पांच सौ वर्ष पहिले पृथ्वी से गया था वह पांचसौ वर्ष बाद पृथ्वी पर आयगा और जो उसे ग्रहण करेगा उसे हजार वर्ष पुरानी इसी पृथ्वी की घटना वर्तमान के रूप में दिखाई देगी। इस हिसाब से पांचसौ वर्ष भूत की घटना हमारे लिये पांचसौ वर्ष भविष्य की घटना है और पांचसौ वर्ष बाद वाले के लिये हजार वर्ष की पुरानी घटना वर्तमान की घटना है, इसीलिये तो प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइंस्टीन कालभेद को कल्पित मानते हैं।

पर कोई भी दृश्य ज्यों ज्यों दूर होता जाता है त्यों त्यों सूक्ष्म होता जाता है। रेलगाड़ी का एंजिन भी दूरसे स्याही के धब्बेसा दिखता है तब पृथ्वी की कोई घटना अर्बों खर्बों मील जाकर कितनी रह जायगी और वहां से लौटने पर फिर अर्बों खर्बों मील चलने पर कितनी रह जायगी इसकी कल्पना ही निराशा-जनक है। प्रकाश का शोषण भी होता है इसलिये वह लौटने के लिये बचेगा कि नहीं, यह भी सवाल है। इस प्रकार तारों या ग्रहों पर से प्रकाश के लौटने पर भूत का प्रत्यक्ष रूप में दर्शन होने की कल्पना एक कष्ट कल्पना है। उससे सिर्फ भूत भविष्य वर्तमान के व्यवहार की कल्पितता तथा सापेक्षता का ही पता लगता है।

पर इन सब बातों से हमारे अलौकिक प्रत्यक्षों का कोई सम्बन्ध नहीं। वे तो अतिशयोक्ति अत्युक्ति रूप हैं। वे अतथ्य भी हैं और

असत्य भी।

आज रात की मिटिंग में श्री मनूभाई ने कहा—मैं तेरह वर्षकी उम्र से यहां हूँ और बुढ़ापा आगया, पर आज तक जितने लोग यहां आये उनमें आप सरीखा कोई नहीं देखा। हर विषय में आपका अगाध पांडित्य देखकर यहां के सभी लोग चकित हैं। साईंस सरीखे विषय में भी आप गहरी से गहरी और सूक्ष्म से सूक्ष्म बातें कहते हैं और अधिकारी के समान कहते हैं, इन सब बातों से हमें आश्चर्य होता है।

जिंजा ४-३-५२

सन्तति नियमन

आज बेरिष्टर भट्ट ने (सन्तानसमस्या पढ़ कर) सन्तति नियमन की बात उठाई और कहा कि कृत्रिम निरोध की क्या आवश्यकता है? ब्रह्मचर्य से सन्तति नियमन क्यों न किया जाय?

मैंने कहा— इस मामले में साधारण गृहस्थ ऋतुगामी से अधिक संयमी नहीं होसकता पर अगर वह वर्ष में एक बार भी मिले तो भी साल दो साल में एक बच्चा आजायगा। बीस से पैतालीस वर्ष की उम्र में दस पन्द्रह बच्चे होजायंगे। तब सन्तति नियमन क्या होगा? जवानी के पच्चीस तीस वर्षमें सिर्फ तीन चार बार ही रतिप्रसंग करनेवाले कितने व्यक्ति मिलेंगे? ऐसी हालत में ब्रह्मचर्य से सन्तति नियमन की बात कहनेवाले सन्तति-नियमन के विरोधी ही समझे जायँगे। वे इस प्रश्न को टालना चाहते हैं या ऊपर बकना करते हैं।

भट्टजी— क्या इस तरह खसी (नपुंसक) होकर सन्तति-नियमन करना ठीक है?

मैं—सन्तति-नियमन के लिये जो क्षीणा या आपरेशन किया जाता है उससे मनुष्य नपुंसक नहीं होता। नपुंसक तो तब कहलायें जब वह रति-

प्रसंग के योग्य न रहे। पर इस प्रकार का अपरेशन करानेवाला व्यक्ति उतना ही योग्य रहता है जितना कि अपरेशन न करानेवाला व्यक्ति। स्त्री को तो दोनों अवस्थाओं के भेद का पता ही नहीं लगता। इसलिये उसे नपुंसक कहना गलत है। तन और मन से वह वैसा ही समर्थ रहता है जैसा अपरेशन के पहिले था। मेरे कुछ सुशिक्षित व्यक्तियों ने इस प्रकार के अपरेशन कराये हैं और इस बातको कई वर्ष हो चुके हैं, इससे कहा जासकता है कि वह क्रिया किसी भी तरह हानिकर नहीं है।

इस विषय की प्रक्रिया यह है कि अंडकोष और वीर्यकोष से जो वीर्य आता है उसमें अंडकोष के वीर्य में ही वे जीवाणु होते हैं जिनसे सन्तान पैदा होती है। अपरेशन के द्वारा वह सूक्ष्म शिरा काट दी जाती है जिसके द्वारा अंडकोष के जीवाणु [वीर्यसहित] ऊपर आकर वीर्यकोष के वीर्य से मिलकर सम्भोग के समय निकलते हैं। यह अपरेशन बात करते करते पांच दस मिनिट में होजाता है। इसमें क्लोरोफार्म नहीं लेना पड़ता। अपरेशन होनेपर सम्भोग के समय वीर्य तो निकलता है पर उसमें उत्पादक जीवाणु नहीं रहते। इससे नपुंसकता का कोई सम्बन्ध नहीं।

भट्टजी—इससे व्यभिचार बढ़ेगा, लोग चाहे जिसकी पत्नी ले भागेंगे।

मैं— जब अपरेशन से नपुंसकता आती ही नहीं है तब पत्नी को असंतोष क्यों होगा? और वह किसी दूसरे के साथ क्यों भागेगी? हां! जो पत्नी को सन्तुष्ट नहीं कर सकता उसकी पत्नी भाग सकती है, पर वह तो अपरेशन करने के पहिले भी भाग सकती है। ऐसी दुर्घटनाओं का सन्तति-नियमन के अपरेशन से कोई सम्बन्ध नहीं।

जब पत्नी के बहुत बच्चे होजाते हैं और पत्नी का स्वास्थ्य तथा घरकी आर्थिक स्थिति सन्ततिनियमनकी आवश्यकताका अनुभव कराती है, तभी अपरेशन किया जाता है। इससे पत्नी असन्तुष्ट नहीं, सन्तुष्ट ही होती है। इसमें भी उसके भागने का कारण नहीं है।

व्यभिचार बढ़ने की बात जिस दृष्टिकोण से कही जाती है उसमें भी हानि की अपेक्षा लाभ ही ज्यादा है।

विवाहित स्त्रियों में तो व्यभिचार वृद्धि का कारण ही नहीं है। सन्तति नियमन से लोग विवाहित स्त्रियों से व्यभिचार करने लगेंगे इसका क्या कारण है? बिना अपरेशन कराये भी आज ऐसी स्त्रियों के साथ व्यभिचार करने में कोई विशेष बाधा नहीं है। क्योंकि सन्तान होने का डर विवाहित स्त्री को नहीं होता। सन्तान किसी की हो पर पति के मौजूद रहने से न स्त्री बदनाम होपाती है न उसका पति। इस प्रकार व्यभिचार वृद्धि का सन्तति नियमन के अपरेशन से कोई सम्बन्ध नहीं।

रही विधवाओं की बात। सो युवति विधवाएं काम-वासना वश में न रहने पर ही इस मार्ग को अपनाती हैं और उस समय वे इस बात को भूल जाती हैं कि इससे गर्भ रह सकता है। इसप्रकार विधवा विवाह की रोक से जितना व्यभिचार बढ़ सकता है उतना तो बढ़ता ही है। वह सन्तति नियमन का अपरेशन हो तो भी होगा, न हो तो भी होगा। अपरेशन से इतना फायदा अवश्य है कि व्यभिचार होनेपर भी गर्भ न रहने से भ्रूणहत्या न होगी और इस कारण से जो नारी की दुर्दशा होती है या कीजाती है, वह भी न होगी। इस प्रकार अपरेशन से लाभ ही होगा।

भट्टजी— क्या ब्रह्मचर्य की आप आवश्यकता नहीं समझते?

मैं— परिमित समय के लिये ब्रह्मचर्य तो पालना ही पड़ता है, इसलिये उतना आवश्यक कहा जासकता है, पर असली आवश्यक है शील और निरतिभोग। शील पालन का अर्थ है व्यभिचार न करना, निरतिभोग का अर्थ है इतना भोग न करना, जिससे शक्ति क्षीण होजाय, बीमारी बढ़ जाय या इतना समय नष्ट होजाय कि आवश्यक कर्तव्य के लिये समय कम पड़ने लगे। शील और निरतिभोग का पालन किया जाय तो ब्रह्मचर्य जरूरी नहीं है। हां! आत्मकल्याण से या किसी विशेष साधना के लिये कोई ब्रह्मचर्य

रखता है तो भले ही रक्खे। पर स्वयं में ब्रह्मचर्य का कोई मूल्य नहीं। कोई आदमी यह कहे कि मैं ब्रह्मचारी हूँ तो मैं कहूंगा कि ठीक है, उसका मजा तुम्हें जो आता हो वह लूटो! पर मेरे लिये या जनता के लिये उसका कोई मूल्य नहीं। हां! मैं यह जरूर जानना चाहता हूँ कि ब्रह्मचारी रहकर तुमने ज्ञान कितना पाया है, सयम शान्ति आदि कितनी पाई है! जनसेवा का कार्य कितना किया है! बस, इसी ज्ञान संयम सेवा का मूल्य है। चाहे वह ब्रह्मचारी रहकर प्राप्त किया जाय चाहे सम्भोगी बनकर प्राप्त किया जाय इन गुणों का ब्रह्मचर्य से कोई सम्बन्ध नहीं। इसीलिये मैं ब्रह्मचर्य को कोई महत्व नहीं देता। वह स्वयं कोई धर्म नहीं है। हां, शील और निरतिभोग आवश्यक हैं, यह मैं कह ही चुका हूँ।

भट्टजी-क्या आप सम्भोग में पाप नहीं मानते?

मैं- जो स्वपर सुख का विरोधी है वह पाप है। सो इसमें किसके सुख का विरोध है? स्त्री पुरुष को तो इससे आनन्द ही आता है, और तीसरे को तो इससे मतलब ही क्या है? इस प्रकार जब वह किसी को दुःख नहीं देता तब उसमें पाप क्या? बल्कि सम्भोग को पाप मानलिया जाय और दुनिया के सब आदमी इस पाप को छोड़ बैठें तो मानवसमाज एक पीढ़ी में ही समाप्त होजाय। ऐसी हालत में सम्भोग को पाप कहने की अपेक्षा ब्रह्मचर्य को ही पाप कहना पड़ेगा।

भट्टजी-ब्रह्मचर्य से तेज बढ़ता है, वीर्य शरीर में रहकर खून में तथा सब धातुओं में ओज बढ़ाता है, शास्त्रों में ब्रह्मचर्य की महिमा खूब बताई गई है, सो क्या झूठ है?

मैं-वह सब अर्थवाद है। साधुसंस्था के द्वारा जब श्रमणों से क्रांति कराने की जरूरत थी और इसके लिये युवक साधुओं का निर्माण भी आवश्यक था, तब ब्रह्मचर्य को महत्व देना पड़ा। क्योंकि सपत्नीक साधुसंस्था उस समय क्रान्ति का बोझ नहीं उठा सकती थी, न व्यभिचारिणी साधुसंस्था से यह कार्य होसकता था। ब्रह्मचर्य के सिवाय गति नहीं थी। इसलिये ब्रह्म-

चर्य की प्रशंसा खूब अतिशयोक्ति के साथ की जाय यह जरूरी था। यह सब क्षम्य है।

यों ओज बढ़ने आदि की बात में कोई जान नहीं है। वीर्य न खून में मिल सकता है, न हड्डी में। वैद्यक शास्त्र के अनुसार रस से रक्त, रक्त से मांस, मांस से मेद, मेद से हड्डी, हड्डी से मज्जा, और मज्जा से वीर्य बनता है।

रसाद्रक्तं ततो मांसं मांसान्मेदः प्रवर्तते।
मेदतोऽस्थि ततो मज्जा ततो वीर्यं ततःप्रजा॥

इसप्रकार मांस से हड्डी बनसकती है, हड्डी से मांस नहीं। वीर्य अन्तिम धातु है। वह अन्य किसी धातु में नहीं मिलसकती। अब इसको जरा व्यवहार में देखें।

संसार में जितने मनुष्य दीर्घायु हुए हैं और आजकल पाये जाते हैं, उनमें ब्रह्मचारी एक फीसदी भी नहीं हैं। ब्रह्मचारी कहलानेवालों का स्वास्थ्य, सपत्नीक लोगों के स्वास्थ्य से अच्छा नहीं पाया जाता है। कर्मठता में भी ब्रह्मचारी बाजी नहीं मार पाते। उनके चेहरों को देखो तो उसमें तेज की अपेक्षा छाया (मुरझायापन) ही अधिक दिखाई देगी। ब्रह्मचर्य से यदि उम्र आदि न बढ़ती हो तो इस दृष्टि से उसकी प्रशंसा का क्या मूल्य है?

खैर! यहां तो अपने को सन्तति-नियमन का विचार करना है। सो उसकी सफलता भौतिक उपायों से ही सम्भव है और उसीका हमें अव-लम्बन लेना चाहिये। उसका अपरेशन बम्बई में ३०) लेकर डाक्टर कर देते हैं। खूब प्रचार किया जाय तो यह कार्य दस दस रुपये में होने लगेगा।

भट्टजी– पर यह कार्य आध्यात्मिक शक्ति से न करके भौतिक शक्ति से करना पामरता है।

मैं– जो कार्य जिस शक्ति से अच्छी तरह से हो सके वह कार्य उसी शक्ति से करना चाहिये। शक्तियों की अपनी अपनी सीमा है। बहुत से कार्य

आध्यात्मिक शक्ति से होसकते हैं, पर भौतिक शक्ति से नहीं होसकते, पर बहुत से कार्य भौतिक शक्ति से होसकते हैं, वे आध्यात्मिक शक्ति से नहीं होसकते। ज्ञान से हम हृदय का अंधेरा दूर कर सकते हैं पर कमरे का अंधेरा दूर करने के लिये भौतिक दीपक ही चाहिये। यह पामरता नहीं है किन्तु कार्यकारणभाव का विवेक है। इसके सिवाय इसका भी ध्यान रखना चाहिये कि जो कार्य आम जनता से कराना है, उसे भौतिक रूप में ही पेश करना पड़ेगा। व्यावहारिकता को भूलना न चाहिये।

चर्चा समाप्त होने पर प्रतिदिन की तरह बहुत से आदमी साथसाथ डेरे तक आये। रास्ते में मेरे विचारों का समर्थन भी होता रहा। कोई कोई आपस में यह चर्चा भी करने लगे कि यहां एक से एक साधु आये पर हर विषय के ऐसे गहरे विद्वान और स्वार्थ-त्यागी साधु कोई नहीं आये।

बैरिष्टर जेठाभाई बिसाणा डेरेपर भी आये और बहुतसी प्रशंसा करके बोले कि– "आपकी बातें कितनी साफ तर्कपूर्ण नई और सबके भले की हैं, यह हम लोग अनुभव कर रहे हैं। यदि आपके व्याख्यान विलायत में हों तो विलायत के लोगों को भी मालूम हो कि आज भी भारत कैसे कैसे महा-पुरुष पैदा कर रहा है।"

जिंजा ता. ५–३–५२

भारत में मुसलमान

आज पार्क की सभा में एक भाई ने पूछा कि भारत में मुसलमान रह सकेंगे या नहीं ?

मैंने कहा कि रह सकेंगे। भारत में मुसलमानों की संख्या इतनी अधिक है कि वे सब पाकिस्तान में समा नहीं सकेंगे। यह ठीक है कि भारत की जनसंख्या प्रतिमील २६६ है और पाकिस्तान की जनसंख्या २१०, फिर भी पाकिस्तान भारत के सब मुसलमानों को जगह नहीं देसकता। हां ! यह अवश्य है कि भारत के अधिकांश मुसलमान पाकिस्तान की तरफ नजर रखते

हैं, विशेष आत्मीयता दिखाते हैं। यह बुरा है, पर है मनोवैज्ञानिक। हिन्द के टुकड़े क्षेत्रके नाम पर नहीं हुए भाषा के नाम पर भी नहीं हुए, किन्तु धर्म के नाम पर हुए। इसलिये भारत के मुसलमानों की सहानुभूति पाकिस्तान पर, और पाकिस्तान के हिन्दुओं की सहानुभूति भारत पर है। राष्ट्रीयता के लिये और शासन के लिये यह बुरी बात है, पर इसका आज कोई उपाय नहीं है। इसका बाहरी प्रदर्शन न हो इतना काफी है।

हां! हमें इस प्रकार शिक्षण देना होगा कि आगे की पीढ़ी में यह धार्मिक कट्टरता तथा इसके कारण पैदा होनेवाले राष्ट्रद्रोह का भाव न रह पाये, एक प्रजा का निर्माण हो। इसके लिये धर्म-समन्वय की योजना भी काम में लाना पड़ेगी।

जिस समय देश के टुकड़े हुए उस समय एक ने दूसरे को मारा और भगाया। पर अब वह परिस्थिति नहीं है। उससे नुकसान ही ज्यादा होगा। भारत सरकार की नीति भी उदार है, जो उचित है। अब इसी राह से राष्ट्र का विकास करना है। नव निर्माण करना है।

एक भाई ने कहा-पर शिक्षण से क्या होगा? शिक्षित लोगों ने ही तो देश के टुकड़े कराये हैं?

मैं-पर वे शिक्षित राष्ट्रीयता के आधार पर नहीं बनाये गये थे। वे अंग्रेजों के द्वारा शिक्षित किये गये थे। हमें शिक्षण प्रणाली बदलकर उदारता के संस्कारों का शिक्षण देना है। भारतसरकार इस विषय में कुछ सोच विचार कर रही है।

श्रद्धा और तर्क

श्रद्धा और तर्क पर कल कुछ चर्चा होचुकी थी, पर समय न रहने से अधूरी रही थी। आज मैंने उसका खुलासा करते हुए कहा—पुरानी अन्ध-श्रद्धा को छोड़ देने से लोग समझते हैं कि अमुक मनुष्य में श्रद्धा नहीं। पर श्रद्धाहीन तो मनुष्य तब कहलाये जब उसमें कोई नई श्रद्धा भी न आई हो।

श्रद्धा जीवन में आवश्यक है क्योंकि श्रद्धा के बिना मनुष्य कोई कार्य नहीं कर सकता। एक वैज्ञानिक भी विज्ञान के सिद्धान्तों के प्रति श्रद्धालु होकर ही उसके लिये जीवन खपाता है। इसलिये हर मनुष्य को जीवन को सुखी बनाने की नीति के प्रति, उसके निश्चित और उचित साधनों के प्रति इतना श्रद्धालु होना चाहिये कि वह थोड़ीसी बाधाओं से मार्गभ्रष्ट न होजाय। मैं बहुत सी पुरानी बातों को नहीं मानता पर सत्यसमाज के चौबीस सिद्धान्तों पर मुझे दृढ़ श्रद्धा है। उसमें कुछ सिद्धान्त नये हैं, कुछ पुराने हैं। बहुत से पुराने अन्धविश्वासों को अमान्य कर देने से ही मैं श्रद्धाहीन नहीं हूं।

मतलब यह कि श्रद्धा को बदल देना, सुधार देना, श्रद्धाहीन होना नहीं है।

जो श्रद्धा परम्परा से चली आरही है, विज्ञान के विरुद्ध है, जीवन के कल्याण से मेल नहीं खाती, उसे त्याग देना श्रद्धाहीन होना नहीं है। उसके स्थान पर विज्ञान के साथ मेल खानेवाली विवेकपूर्ण श्रद्धा होना चाहिये। अब तो बहुत सी पुरानी बातें हँसने लायक होगई हैं। अभी उस दिन सूर्य ग्रहण हुआ था। मैं कम्पाला में था। मैंने भी वह देखा। सूर्य और पृथ्वी के बीच में चन्द्र आजाने से सूर्य का अमुक हिस्सा हमें नहीं दिखाई देता था। कहीं कहीं पूरा सूर्य दिखाई नहीं दिया। यह ग्रहों की गति के कारण होता है। पर हमारे पुरखे समझते थे कि केतु या राहु राक्षस सूर्य को खाजाता है। अब हम सूर्य को काफी अच्छी तरह जानते हैं। वह हमारी सारी पृथ्वी से तेरह लाख गुणा बड़ा है, और गर्मी इतनी कि जितनी का पृथ्वी पर अनुभव नहीं किया जाता। हम अधिक से अधिक तीन हजार डिग्री गर्मी पैदा कर पाये हैं उसे देखने से ही आदमी अन्धा होजाता है और लोहा आदि भी पिघलजाता है। पर सूर्य का ऊपरी तल इससे दूना अर्थात् छः हजार डिग्री गरम है। इतने विशाल और इतने गर्म को कोई प्राणी खा भी सकता है या उसके पास भी आसकता है यह कहना बच्चों की ही बातें हैं।

इस प्रकार बालोचित बातों पर कोई श्रद्धा न करे और इस पर कोई

कहें कि अमुक मनुष्य में श्रद्धा नहीं है तो यह कहना ऐसा ही है कि कोई पुराने सड़े हुए कपड़े छोड़कर नये सुन्दर मजबूत कपड़े पहिने और उससे कहा जाय कि इसने पुराने कपड़े छोड़ दिये हैं, इसलिये नंगा है। अन्धश्रद्धाएं छोड़िये, तर्क विज्ञान संगत सच्ची कल्याणकारी श्रद्धा को अपनाइये, इससे आप श्रद्धाहीन न कहलायेंगे।

कोई कोई भाई यह समझते हैं कि मैं सब पुरानी बातों का विरोध करता हूं। कल रास्ते चलते एक भाई ने इसी ढंग की जिज्ञासा प्रगट की तो मैंने कहा कि आज तक आप मुंह से खाते थे तो क्या मैंने यह कहा कि मुंह से खाना पुराना है इसलिये छोड़िये और नाक से खाना शुरू कीजिये। मैंने सत्यसमाज का निर्माण किया है, उसके व्यवस्थित सिद्धान्त हैं, उनपर श्रद्धा रखना आवश्यक है। श्रद्धाहीन न मेरा जीवन है, न मैं किसी का जीवन श्रद्धा-हीन बनाता हूँ।

कोई कोई लोग यह भी कहते हैं कि आप ढेरों बातें काटते रहते हैं, इतनी पुरानी मान्यताओं को काटने के बाद रह क्या जाता होगा?

जब मैं आफ्रिका आनेवाला था तब एक विद्वान सज्जन ने सत्याश्रम में मुझ से ऐसा ही प्रश्न पूछा था। मैंने कहा था कि एक आदमी गन्ना चूस रहा है और छूंछ फेंक रहा है। चारों तरफ छूंछ का ढेर देखकर कोई कहे कि तुमने सारा गन्ना तो फेंक ही दिया, आखिर तुमने लिया क्या? तो क्या आप यह समझते हैं कि छूंछ फेंकने वाला गन्ने से कुछ नहीं लेता?

मेरा भी यही हाल है। मैंने अहिंसा ईमान सत्य शील त्याग दान निर्व्यसनता एकता सेवा धर्मालय भक्ति कर्मयोग आदि सार सार रूप बातें ली हैं और हानिकर अन्धविश्वास ही छोड़े हैं, वह सब छूंछ है।

सूर्यचन्द्र ग्रहण

एक भाई ने पूछा—सूर्य-चन्द्र-ग्रहण से क्या हानिलाभ है?

मैंने कहा—ग्रहण को देवताओं पर संकट समझना और घबराना

भूल है। सूर्य और पृथ्वी के बीच जब चन्द्र आजाता है तब सूर्यग्रहण होता है और पृथ्वी की जो छाया पड़ती है उसमें से चन्द्र का गुजरना चन्द्रग्रहण है। यह कोई संकटमय घटना नहीं है। सूर्यग्रहण से इतना ही होता है कि थोड़ी देर को सूर्य से आनेवाली गर्मी कम होजाती है पर सालभर तक सदा पृथ्वी पर गर्मी आती रहती है. उसमें से यदि कुछ मिनिटों के लिये कुछ गर्मी कम आये तो यह कोई ऐसी हानि नहीं है, जिसकी चिन्ता कीजाय। चन्द्र की चांदनी तो पृथ्वी पर काफी कम आती है, उसमें साल में एकाध बार कुछ मिनिटों के लिये कुछ और कम होगई तो यह भी कोई खास चिन्ता की बात नहीं है। ग्रहण से घबराना न चाहिये।

मूर्त्तिपूजा

इसके बाद उन्हीं भाई ने पूछा कि आर्यसमाजी लोग जो मूर्त्ति का विरोध करते हैं तो इसके बारे में आपके क्या विचार हैं ?

मैंने कहा—स्वयं तो मैंने धर्मालय में मूर्त्तियां रक्खी ही हैं इसलिये मूर्त्ति को मैं उपयोगी समझता हूं। हां उसके आडम्बर से बचना चाहिये। भगवान को सुलाना, जगाना, चन्दन केशर घिसकर पालने में रखदेना और भगवान की टट्टी कहकर सिर से लगाना और समझना कि ऐसी बातों से परमात्मा खुश होजायगा इत्यादि मूर्त्तिपूजा का दुरुपयोग है। जब मूर्त्तिपूजा का दुरुपयोग बढ़जाता है तब मूर्त्ति विरोधी सम्प्रदाय खड़े होते हैं। मूर्त्तिपूजा ने अरब की जब दुर्दशा कर दी तब इस्लाम ने मूर्त्तिपूजा का विरोध किया।

ईसाई धर्म में विकृतियां बढ़ने पर मार्टिन लूथर ने प्रोटेस्ट अर्थात विरोध किया और प्रोटेस्टेंट सम्प्रदाय खड़ा हुआ जिसमें मन्दिरों के ढोंग मिटाने के लिये मूर्त्तिपूजा का विरोध किया गया। भारत में इसलाम तथा प्रोटेस्टेंट सम्प्रदाय का प्रचार होनेपर यहां भी मूर्त्तिविरोधी सम्प्रदाय खड़े हुए। ब्राह्मसमाज, आर्य समाज आदि आधुनिक पंथ इसी के फल हैं। नानक कबीर आदि के पंथ कुछ पुराने हैं, जिनपर इस्लाम का प्रभाव पड़ा है। पर किसी न किसी रूप में मूर्त्ति का उपयोग हर एक करता ही है इसलिये उसके दुरुपयोग

का ही विरोध करना उचित है, सत्यसमाज ने दोनों का मर्म बताया है और दुरुपयोग को हटाकर मूर्ति का उपयोग किया है।

जिंजा (युगांडा) ६-३-५२

सत् असत्

आज पार्क में भट्टजी के प्रश्न के उत्तर में सत् असत् की गम्भीर दार्शनिक चर्चा छिड़गई। पर अंधेरा होजाने से अधूरी रही। रास्ते में जो लोग मेरे साथ थे उन्हें यह चर्चा समझाई। दूसरे दिन डेरे पर ममू भाई को भी यह चर्चा समझाई।

भट्टजी तथा सूचक जी का कहना था कि सत् का अर्थ नित्य है, यह संसार अनित्य है इसलिये इसे असत् कहना चाहिये। जगत में चेतन ब्रह्म के सिवाय और कुछ नहीं है। तीनों जगह मिलाकर जो मैंने इस बात का खुलासा किया उसका सार यह है।

सत् का अर्थ है सत्ता वाला अर्थात जो 'है'। कोई नित्य हो या अनित्य हो पर होना तो दोनों में पाया जाता है। इसलिये सत तो दोनों ही हैं। नित्य सदा रहेगा, अनित्य थोड़े समय रहेगा अर्थात नष्ट होजायगा, पर जब नष्ट होजायगा तब उसे असत् कहलेना, पर जब तक वह नष्ट नहीं हुआ तब तक वह असत् कैसे कहा जासकता है। मानलो बारह बजे के समय पर दो पदार्थ हैं, उनमें से एक सदा रहेगा दूसरा एक बजे नष्ट होजायगा, पर बारह बजे के समय पर तो दोनों हैं, उस समय एक को सत् दूसरे को असत् कैसे कहा जासकता है?

यदि अनित्य को असत् कहा जाय तो गधे के सींग को क्या कहा जायगा? गधे का सींग भी असत् है और अनित्य होने से बैल का सींग भी असत् है, तो गधे के सींग में और बैल के सींग में क्या अंतर है? फिर तो 'बैल के सिर पर सींग हैं, यह कहने के समान गधे के सिर पर सींग हैं' यह कहना भी ठीक माना जायगा। पर गधे के सिर पर सींग की बात झूठ है

और बैल के सिर पर सींग हैं' यह बात ठीक है । इस अन्तर का कारण यही है कि गधे के सिर पर सींग असत् हैं और बैल के सिर पर सींग की बात सत् है। अनित्य होनेसे ही वे असत् नहीं हैं, गधे के सींग के समान नहीं हैं।

वेदान्त दर्शन का यह सिद्धांत है कि जगत में एक चिद्ब्रह्म ही है, जो नित्य है। बाकी जो अनित्य जगत दिखाई देरहा है वह माया है मिथ्या है, असत् है। इसप्रकार वेदान्त के अनुसार नित्य तत्व ही सत् है : इससे उल्टा बौद्ध दर्शन कहता है कि जगत् में नित्य कुछ भी नहीं है। जो है वह क्षणिक ही है। जो क्षणिक नहीं है, नित्य है, वह माया है, मिथ्या है। जब कि न्याय वैशेषिक आदि दर्शन नित्य को भी सत मानते हैं और अनित्य को भी सत् मानते हैं। इस प्रकार एक दर्शन नित्य को ही सत् कहता है, दूसरा दर्शन अनित्यको ही सत् कहता है तीसरा चौथा आदि दर्शन नित्य और अनित्य दोनों को सत् कहते हैं।

इस प्रकार नित्य सत् है कि अनित्य सत् है या दोनों सत् हैं इसमें विवाद होसकता है पर इससे इतना तो मालूम होता ही है कि नित्य का अर्थ सत् नहीं है, अनित्य का भी अर्थ सत् नहीं है नित्यानित्य का अर्थ भी सत् नहीं है। सत् का अर्थ सिर्फ अस्तित्ववान् (होनेवाला) है। वह नित्य हो या अनित्य, यह अलग बात है। हम किसी आदमी को अच्छा कह सकते हैं पर अच्छा शब्द का अर्थ अमुक आदमी नहीं कर सकते। इसप्रकार वेदांत नित्य को सत् कह सकता है अनित्य को असत् कह सकता है पर नित्य का अर्थ सत् और अनित्य का अर्थ असत् नहीं कर सकता।

यहां थोड़ीसी बात वेदांत के अद्वैत की भी समझ लेना चाहिये। सत्यसमाज ने अद्वैत का समन्वय विश्वप्रेम के रूप में किया है। सबके हित में अपना हित है यही वास्तविक अद्वैत है।

पर दार्शनिक दृष्टि से जो अद्वैत पर जोर दिया जाता है वह जीवन के लिये उपयोगी नहीं है। अगर यह कहा जाय कि मेरा आत्मा और मेरा शरीर तथा पृथ्वी जल वायु आदि भूत मूल में एक ही हैं। तो इसका मतलब

यह हुआ कि मेरा आत्मा पृथ्वी जल अग्नि आदि से बना हुआ है यही बात अनात्मवादी चार्वाक कहता है कि आत्मा और पृथ्वी जल अग्नि वायु आदि मूल में एक हैं। एक आदमी आत्मा को भी जड़ कहे दूसरा पृथ्वी आदि को भी चेतन कहे, दोनों के कहने का यही अर्थ निकलता है कि मूल पदार्थ में जड़चेतन का भेद नहीं है।

चार्वाक दर्शन में आत्मा पंचभूतों से अलग नहीं है इसलिये मरने के बाद वह पंचभूतों में मिलजाता है इसलिये परलोक नहीं बनता। वेदान्त में भी यही बात होगी कि आत्मा और पंचभूत एक ही तत्व हैं इसलिये मरने के बाद भी दोनों एक हैं। इसप्रकार जिस तरह जड़ाद्वैत में परलोक की व्यवस्था नहीं बनती उसीप्रकार चेतनाद्वैत में भी परलोक की व्यवस्था नहीं बनती। इसप्रकार जड़ाद्वैत और चेतनाद्वैत दोनों ही धार्मिक दृष्टि से अनुपयोगी होजाते हैं।

कुछ लोग यह समझते हैं कि चेतनाद्वैत को मानने से ईश्वर की व्यापक सत्ता मानली जाती है। परन्तु ईश्वर अनीश्वर ये परस्पर सापेक्ष शब्द हैं। जब ईश्वर से अतिरिक्त कोई वस्तु है ही नहीं, तब कौन किसका ईश्वर? इसप्रकार चेतनाद्वैतवाद का दर्शन अनीश्वरवादी बनजाता है। यही कारण है कि छह वैदिक दर्शनों में वेदान्त को अनीश्वरवादी दर्शन माना गया है।

न्याय वैशेषिक और योग ये तीन दर्शन ईश्वरवादी हैं और सांख्य मीमांसा और वेदान्त (उत्तर मीमांसा) ये तीन अनीश्वरवादी दर्शन हैं। जो लोग ईश्वरवाद और आत्मवाद से मिलनेवाले लाभ के लिये वेदान्त का सहारा लेते हैं वे धोखा खाते हैं। जगत को असत् कहने से न कर्तव्य की प्रेरणा मिलती है न जिम्मेदारी का भान होता है।

जिंजा (युगांडा) ७-३-१२

खुराक और बीमारी

पिछले दो-तीन दिन से सुधीर की तबियत काफी खराब थी। १०३ डिग्री तक बुखार जाता था। साधारणतः मलेरिया बुखार एक बार चढ़कर सबेरे

उतर आता है पर सुधीर को दिनमें कई बार चढ़ा और कई बार उतरा। चढ़ने पर १०३ डिग्री जाता था और उतरने पर ९९ से नीचे आजाता था। इस तरह के मलेरिया का यह नया अनुभव था, इसलिये डाक्टर को बुलाया। इंजेक्शन देने का यहां आम रिवाज है पर मैंने इंजेक्शन नहीं दिलाया। एनीमा दिया गया और कुनैन मिक्स्चर दिया गया। कानमें भी दर्द था इसलिये कान भी धोकर साफ किया गया।

युगांडा यद्यपि बहुत साफ होगया है फिर भी मलेरिया यहां काफी है। मच्छर तो इसका कारण है ही, हवा का गीलापन भी कारण है। साथ ही एक बात पर ध्यान और गया जिससे कब्ज बढ़ने की विशेष सम्भावना रहती है।

यहां गेहूं नहीं मिलता, किन्तु मैदा के समान पिसा हुआ बारीक आटा मिलता है। कारखाने से जब आटा चलता है तब दूकानों में आते आते और घरों में पहुंचते पहुँचते सप्ताहों या महीनों निकल जाते हैं। फिर घरों में भी धीरे धीरे खर्च होता है। आटा बहुत दिन रहजाने से उसमें कीड़े (लट) भी पड़जाते हैं तब उसे और भी अधिक पहली छनी से छानते हैं। इस तरह पुराना, बिगड़ा हुआ तथा मैदे के समान खूब पतला आटा खाने में आता है। बहुत पतला आटा नुकसानदायक है। पेट में रेती नुकसान नहीं करती, किन्तु सिमेंट नुकसान करती है। इसी प्रकार मोटा आटा रेती के समान है तो पतला आटा सिमेंट के समान। स्वास्थ्य के लिये ऐसे पतले और पुराने आटे का त्याग करना चाहिये।

यदि यहां गेहूं मिले और भारत की तरह आटा पीसने की चक्कियाँ मुहल्ले मुहल्ले हों तो आज की अपेक्षा ताजा और कुछ मोटा आटा सरलता से मिलने लगे। इसके सिवाय गेहूँ का छिलका, जो बहुत ही अच्छा पोषक तत्व है वह भी खुराक में शामिल रहे। मैदा सरीखे आटे में तो बिलकुल ही छिलका नहीं रहता, इसप्रकार अच्छा पोषक और पचानेवाला अंश भोजन में से निकल जाता है।

यहां एक बात और देखी। आटा में तेल का मोन देते हैं, फिर तवे

पर ही रोटी सेंकते हैं। मैदा सरीखा आटा, और उसमें सोडा पड़ा हो तो यों ही भारी होजाता है, फिर तवे पर ही सेंकने से रोटी पराठे की तरह भारी होती है। वह अच्छी तरह फूल नहीं पाती।

इन सब बातों का विचार करना जरूरी है। खुराक में यदि थोड़ा सुधार किया जाय, और पेट खाली रक्खा जाय तो मच्छरों का अब इतना डर नहीं है।

मुझसे तो कई सज्जनों ने पूछा कि आपको यहां की हवा माफिक आगई? मैंने यही उत्तर दिया कि पेट खाली रक्खा जाय तो सब हवा माफिक आती है।

यहां फल बहुत सस्ते हैं। भारत में फलाहार करना श्रीमन्त होने का लक्षण है, वह शौक की चीज समझी जाती है। पर यहां वह गरीबी की बात समझी जाती है। इसलिये फलों का उपयोग भारत से अधिक होने पर भी जितना अधिक होना चाहिये उतना अधिक नहीं होता।

साधारणतः युगांडा स्वास्थ्य के लिये अब भयंकर नहीं रहा है। अगर सतर्कता से काम लिया जाय तो इंजेक्शनों की जरूरत और भी घट सकती है।

खरीद के अनुभव

विदेशी चीजें यहां सस्ती पड़ती हैं। जार्जेट की जापानी साड़ियाँ भारत की सूती साड़ियों से भी सस्ती थीं। फिर भी बहुतसी चीजें जो महँगी दिखाई देती थीं, उसका कारण था मुनाफा का अधिक होना। भारत की तरह यहां रुपये पर दो-चार पैसेपर व्यापार नहीं किया जाता। सवाये डेवढ़े पर किया जाता है। यह अनिवार्य है क्योंकि भारतीय का यहां जो रहन-सहन का तरीका है उसके लिये विशेष मुनाफा अनिवार्य है। हां! अब आफ्रिकन लोगों का भी व्यापार में प्रवेश होरहा है, कहीं कहीं तो उनने भारतीयों सरीखे व्यापारिक ढंग भी अपना लिये हैं, इसलिये भविष्य चिन्तनीय है। आगे इतने मुनाफे पर व्यापार न किया जासकेगा।

हमें यहां विशेष चीजें खरीदने का अवसर नहीं आया। पर कभी कभी कुछ विशेष अनुभव भी हुए। लालजी भाई ने अपने रिश्तेदार को भेंट में देने के लिये तेईस तेईस शिलिंग की साड़ियां खरीदी थीं। पर दो तीन दिन के बाद उनका भाव अठारह अठारह शिलिंग होगया। इतनी जल्दी इतना भाव गिरना आश्चर्य जनक था।

एकबार वीणा देवी की तबियत कुछ खराब थी, इसलिये जरूरत मालूम हुई कि पान का बीड़ा मिले तो अच्छा। पर पान का एक मामूली बीड़ा तीस सेंट (तीन आने) में मिला। जब कि इतने में यहां तीस केले आजाते हैं। भावों की इस विषमता पर बड़ा आश्चर्य हुआ।

एक बार सुधीर के लिये दो बनियाइनों की जरूरत थी, एक दूकान पर गये तो उनने पैसे ही न लिये। वे सत्यसमाजी थे और सत्यसाहित्य में रस लेते थे। इसलिये जब मुझे दो बनियाइनों की जरूरत हुई तो लालजी भाई ने सोचा कि किसी अपरिचित की दूकान पर चलना चाहिये, जिसे माल के पैसे लेने में संकोच न हो। लालजी भाई ऐसे भाई की दूकान पर गये जो प्रवचनों में कभी दिखाई न देता था। दो बनियाइनें खरीदीं, बांधने को कहा, इतने में कुछ दूसरे कपड़े मांगे, फिर तीसरे मांगे। इस झमेले में बनियाइनें बांधकर न दी जासकीं पर बिल सबका चुका दिया। डेरे पर आने पर कपड़े मुझे दिखाये गये तो उनमें बनियाइनें नहीं थीं। तब खयाल आया कि बनियाइनें बांधने से रहगईं। लालजी भाई को पूरी आशा थी कि जाने पर माल तुरन्त मिलजायगा। पर उनकी आशा व्यर्थ गई। उसे भूलने की घटना याद कराई गई पर वह इस तरह याद न कर सका कि भूला हुआ माल दे देता। इस-प्रकार एक जगह माल मिला था पर पैसे न देने पड़े थे, और दूसरी जगह पैसे तो देना पड़े पर माल न मिला।

एक बार लालजी भाई एक दूकान पर मेरे लिये फाउन्टेनपेन लेने गये। आदमी ज्यादा परिचित नहीं थे इसलिये आशा थी कि अच्छा माल देंगे और पूरे पैसे लेंगे। पर जब उन्हें मालूम हुआ कि मेरे लिये फाउन्टेनपेन

है तब उनने पेन तो काफी अच्छा दिया पर मूल्य लेने से साफ इनकार कर दिया।

बुद्धि विद्या धारणा

आज पानी काफी बरसा था, हवा भी काफी तीखी और ठंडी थी। ऐसे अवसर पर यहां पार्क में घूमने कोई नहीं जाता। इसलिये मैं भी नहीं गया और पार्क की मीटिंग बन्द रही। फिर भी घूमने की इच्छा तो थी ही, इसलिये नरसी भाई (जिनके यहां मैं ठहरा था) और लालजी भाई को लेकर शहर के आसपास की सड़कों पर घूमा। आज रात में मीटिंग का कोई विचार न था। ऐसे मौसम में घर से बाहर कौन निकलता ? पर ममूभाई जी ९ बजे आगये। प्रकरण निकलने पर उन्हें मानवभाषा समझाई। वेदान्त की चर्चा में सत् असत् का विवेचन किया।

इसके बाद प्रकरण चलने पर यह भी कहा कि बुद्धि विद्या धारणा में क्या अंतर है।

बुद्धि जन्मजात योग्यता है इसके जरिये किसी बात को जल्दी समझने, कोई उपाय ढूढ़ने, तर्क करने आदि की योग्यता आती है।

विद्या से शास्त्रों की जानकारी मिलती है। ऐसा होसकता है कि कोई आदमी बुद्धिमान बड़ा हो पर विद्वान बड़ा न हो और कोई विद्वान बड़ा हो पर बुद्धिमान बड़ा न हो। धारणा से याद रखने की क्षमता बढ़ती है। ऐसा होसकता है कि किसी की धारणा तीव्र हो पर वह काफी बुद्धिमान या विद्वान, न हो। इसप्रकार तीनों का अलग अलग रूप है। जिसमें तीनों बातें काफी मात्रा में हों वह असाधारण व्यक्ति है, बड़ा भाग्यशाली है।

कोई आदमी बड़ी गहरी बातें याद रखता है पर मामूली बातें भूल जाता है, इसका कारण धारणा की कमी नहीं है किन्तु किसी खास बात पर महत्व न देने की वृत्ति है। इससे धारणा की कमी नहीं समझी जाती। पर धारणा को उतना महत्व प्राप्त नहीं है जितना विद्वत्ता और बुद्धिमत्ता को है।

ममूभाई को इन बातों से काफी सन्तोष हुआ।

जिंजा (युगांडा) ८-३-५२

विविध प्रश्न

आज पार्क की मीटिंग में तथा लौटते समय रास्ते में अनेक प्रश्न पूछे गये। प्रायः प्रतिदिन बैरिस्टर भट्टजी ने प्रश्न करने की जिम्मेदारी ली थी। दूसरे लोग भी पूछते थे पर भट्टजी की अपेक्षा बहुत कम। आज भी भट्टजी ने कहा—अमुक सज्जन आपके बहुत भक्त हैं पर वे तो प्रार्थना जाप आदि करते हैं तो इस विषय में आपका क्या मत है?

मैं— इस विषय में मैं अपना मत तो कई बार प्रगट कर चुका हूँ कि प्रार्थना और जप स्वयं में कोई धर्म नहीं है। हां! धर्म के प्रेरक हैं। अगर उनसे प्रेरणा मिलजाय और उससे मनुष्य, विश्वहितवर्धन रूप धर्म करे तो प्रार्थना आदि सफल हैं अन्यथा निष्फल।

नाम जपने से कोई अपने को धर्मात्मा माने तो यह भूल है।

हां! प्रार्थना आदि से एक तरह की तसल्ली मिलती है, सनाथता का अनुभव होता है यह प्रगट लाभ भी है पर इसे भी धर्म नहीं कह सकते, न इन बातों से परमात्मा खुश होता है। वह कर्तव्य से ही खुश होता है।

भट्टजी— आप तो बड़े तार्किक और उपयोगितावादी हैं फिर सत्येश्वर को क्यों मानते हैं?

मैं— सत्येश्वर का जीवन में काफी उपयोग है, उनसे बुद्धि भी सन्तुष्ट होती है और मन भी। सत्येश्वर को मानने का अर्थ है रूढ़ परम्परा आदि का मोह छोड़कर विश्वकल्याण के पथको जानना समझना। इस बात का न विज्ञान से विरोध है न तर्क से। इसलिये मैं सत्येश्वर को मानता हूँ। उनके रूपदर्शन से भावना सन्तुष्ट रहती है, अपने को उनका अनुचर मानकर काम करने से फलाफल की चिन्ता नहीं रहती, न पथभ्रष्ट होने का डर रहता है, सनाथता का अनुभव भी होता है इसलिये निर्भयता रहती है, असफलता में भी निराशा नहीं होती, इन कारणों से मैं सत्येश्वर को मानता हूं। इस मान्यता में कर्तव्य करने से ही परमात्मा को खुश करने का भाव आता है, चापलूसी

करके परमात्मा को खुश करने का भाव नहीं आता।

एक श्रीमानजी ने पूछा—इतने तो बाड़े थे आपने एक बाड़ा और क्यों बनाया ?

मैं—इसलिये कि बाड़े बाड़े में जो दीवारें हैं और उनमें रास्ता नहीं है वह खुल जाय। यह नया बाड़ा नहीं है परन्तु सब बाड़ों को मिलाने और साफ करने की योजना है। सत्यसमाजी होने के लिये न हिन्दू धर्म छोड़ना जरूरी है, न इस्लाम, न ईसाई धर्म। हां! कोई किसी धर्म को न मानता हो तो उसे भी सत्यसमाजी बनने की गुंजायश है। इसप्रकार यह योजना धर्म के नामपर बटे हुए मानवसमाज को मिलाने की योजना है।

फिर भी मानलो कि इसमें नयापन है और कुछ अलहदगी भी है तब भी क्या बुरा है ? घर में मां है, बाप है, चाचा है, चाची है, आजा आजी भी है, इस प्रकार बहुत से आदमी हैं तो क्या इसलिये बच्चा पैदा होने की जरूरत नहीं है ? बूढ़े आदमी हैं तो जरूर, पर उनकी कार्यक्षमता नष्ट होगई है, उनका उत्तराधिकारित्व सम्हालने के लिये नई सन्तान चाहिये। सत्यसमाज पुराने धर्मों की सन्तान के रूप में है जिसे आज के युग की सेवा करना है।

आप आज के युग की समस्याओं को देखिये। आज राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय, धार्मिक सामाजिक आर्थिक कौटुम्बिक, आदि सभी समस्याओं को देखकर सत्यसाहित्य पढ़िये और देखिये कि इसमें आज की सभी समस्याओं को हल करने के लिये मसाला है कि नहीं ? और यह सब मसाला पुराने धर्मों में कितना है। अगर विशेषता मालूम पड़े तो अपनाइये, नहीं तो जाने दीजिये।

श्रीमानजी—पर किसी तरह की अदलबदल करने को लोग तैयार नहीं होते।

मैं—होते हैं। आप जो शूट बूट पहिने हुए हैं क्या वह आपके पिता ने पहिना था ! आप जैसे मकान में रहते हैं क्या आपके बाप दादे वैसे मकान में रहते थे ? मोटर आदि हर चीज का क्या आप नये से नया माडल पसन्द नहीं करते ? इन सब बातों में आप सब अदलबदल कर लेते हैं तब यह

कैसे कहा जासकता है कि लोग अदलबदल करने को तैयार नहीं होते ।

श्रीमानजी—व्यवहार की बात दूसरी है पर धर्म में तो अदलबदल नहीं होता ।

मैं—होता है । जिस हिन्दू धर्म को आप मानते हैं वह कितने अदलाबदली का परिणाम है इसका आपको पता नहीं । पुराने जमाने के यज्ञ पशुहिंसा आदि अब चले गये और मूर्तिपूजा आदि नये नये तरीके नये नये देव आदि आगये । युग के अनुसार धर्म भी बदलता है नया आता है । इससे घबराना न चाहिये ।

इसके बाद एक दूसरे श्रीमान जी बोले—इस प्रकार तो हर कोई धर्म बना लेगा ?

मैं—बनाकर देखें तब मालूम होगा । युग की सब समस्याओं को समझना, उनका हल ढूंढकर पेश करना, दिनरात उसकी चिन्ता करना, उसके फैलाव को दर दर घूमना, विरोधियों से तथा अज्ञानियों से टक्कर लेना, और जीवनभर निष्फलता का सामना करना और टिके रहना, यह सब गाल बजाते ही नहीं होजाता । घर द्वार व्यापार धन्धा छोड़कर इसके लिये फकीर बनकर यह कीजिये तब मालूम होगा कि हर कोई धर्म बना सकता है या नहीं ।

इसके बाद एक भाई जी बोले कि भट्टजी जब प्रश्न करते हैं तो वे चाहते हैं कि उत्तर समझाकर न कहा जाय, एक ही वाक्य में हां या न कह दिया जाय ।

मैं—जब किसी प्रश्न का उत्तर हां या न में पूरा न होसकता हो तब उसका उत्तर हां या न में देदेना गलत या अधूरा उत्तर है । कोई पूछे कि रोटी खाना अच्छा या बुरा ? तो इसका उत्तर हां या न में नहीं दिया जासकता । कहना होगा कि यदि आदमी नीरोग है पेट साफ है भूख लगी है तो रोटी खाना अच्छा, यदि पेट में मल विक्षेप है, बीमारी है, भूख नहीं लगी है तो रोटी खाना बुरा है । धर्म के विधान पर भी देश काल पात्र का प्रभाव पड़ता है इसलिये किस की अपेक्षा से क्या कर्तव्य है क्या अकर्तव्य है इसका

विवेक करना ही पड़ता है।

एक भाई ने यह भी पूछा कि थियोसोफी में और सत्यसमाज में क्या अन्तर है?

मैंने कहा—थियोसोफी सर्वधर्म समभाव को मानती है और सत्यसमाज भी मानता है इतना मेल है। पर समभाव पर ऐतिहासिक दृष्टि से विचार कर उसका समन्वय करना और किसी तथ्य को न मरोड़ना सत्यसमाज का अपना ढंग है। इसके साथ सत्यसमाज आधुनिक विज्ञान के साथ कंधे से कंधा भिड़ा कर चलना चाहता है, वह रहस्य के आधार पर खड़ा नहीं होना चाहता, कोई जन्मजात जगद्गुरु भी उसमें नहीं है। समाज आदि के क्रांतिकारी कार्यक्रम पर उसका काफी जोर है। थियोसोफी का अर्थ अध्यात्म विद्या है जब कि सत्यसमाज सामाजिक क्रांति की संस्था है। यहां धर्मसमभाव और धर्म सुधार भी समाज के अंग रूप में पेश किये जाते हैं। सत्यसमाज के चौबीस जीवन सूत्र का कार्यक्रम काफी विशाल है और उसे अमल में लाने का तरीका भी अलग और व्यावहारिक है।

एक भाई ने पूछा कि जैनधर्म का अनेकांत क्या है? क्या वह संशयवाद है?

मैंने कहा-नहीं। वह सापेक्षवाद है। संशयवाद में ज्ञान अनिश्चयात्मक होता है जब कि अनेकांत में अपेक्षाभेद से ज्ञान निश्चित होता है।

अनेकांतवाद कैसा अच्छा सिद्धांत है इसका कुछ विवेचन करके सापेक्षता का उदाहरण दिया कि एक बार अकबर बादशाह ने सभा में एक तिनका रखकर सभासदों से कहा कि कोई इसे छोटा करदे पर तोड़े नहीं। किसी से करते न बना तब बीरबल उठा और उसने उससे भी लम्बा तिनका लाकर रख दिया। पहिला तिनका छोटा दिखने लगा। अनेकांतवाद वस्तु को तोड़ता नहीं है, ज्ञान को संशयात्मक भी नहीं बनाता, फिर भी वस्तु के भिन्न भिन्न पहलुओं को दिखा देता है। सत्यदर्शन के लिये अनेकांत दृष्टि आवश्यक है।

आज जो आदमी मेरे डेरे तक आये उनमें दो एल. एल. बी. भी

थे। उनने कहा—आज तक आप सरीखा ज्ञानी व्यक्ति जिंजा में नहीं आया, पर यहां धूर्त मूर्ख आदि व्यक्ति ही पुजते हैं। आपकी कद्र नहीं करते। मैंने कहा—स्वपर कल्याण की दृष्टि से जिसे कद्र करना ठीक मालूम पड़े वह कद्र करे। यों सचाई को लोग देर से ही परख पाते हैं।

जिंजा (युगांडा) ९-३-५२

गीता प्रवचन

आज आर्यसमाज भवन में दिन को दस बजे भगवद्गीता पर प्रवचन करते हुए कहा—गीता की महत्ताएं अनेक हैं। वह अपने युग का समन्वयात्मक महान संदेश है पर उसकी एक बड़ी भारी विशेषता यह है कि वह उस व्यक्ति की कही हुई है जिसका जीवन गीता का मूर्तिमन्त रूप था। सच पूछा जाय तो गीता श्रीकृष्ण के जीवन की छाया है और श्रीकृष्ण का जीवन भगवद्गीता का मूर्तरूप है, इस प्रकार गीता के मूल में रचयिता का सिर्फ पांडित्य नहीं है किंतु उसका जीवन है।

गीता कर्म करते हुए भी कर्म से निर्लिप्त रहने की कुशलता बताती है। वह कर्तव्य कर्म से भागने को पतन बताती है और मोहासक्त होकर कर्म करने को भी पाप बताती है। इन दोनों बुराइयों से बचकर स्वपर-कल्याणकारी पथ पर जगत को चलाती है कर्तव्य कर्म से बचने की कोशिश व्यर्थ है। क्योंकि क्षणभर भी मनुष्य कर्महीन नहीं होसकता, कर्मत्याग का ढोंग करके वह दुनिया के सिर का बोझ, और एक तरह से मोघजीवी ही बन-सकता है।

कर्म करते हुए भी कर्म से निर्लिप्त कैसे रहा जाय? इसका तरीका है जीवन का खेल खिलाड़ी की तरह खेलना। नाटक का खिलाड़ी राजा या रंक बनकर भी अपने को राजा या रंक नहीं मानता, सिर्फ उसका खेल करता है और अपनी कला दिखाता है और सूत्रधार की आज्ञा पालता है उसी प्रकार मनुष्य जीवन का खेल खेले और जगत के सूत्रधार परमात्मा की आज्ञा का पालन करे, क्षणभर को भी परमात्मा को न भूले। पनिहारी रास्ते में हजार

बातें करती हैं पर सिर पर रखे हुए जलघट को एक क्षण के लिये भी नहीं भूलतीं, इसी तरह मनुष्य अपने जीवन में परमेश्वर की तरफ ध्यान रखकर निष्काम कर्म कर सकता है।

गीता से हमें यही सन्देश लेना है। वह पाठ करके पुण्य कमाने की या वेदीपर विराजमान करके आरती उतारने की चीज नहीं है। उसे तो समझकर कर्मयोग का सन्देश लेकर जीवन में उतारना है।

जो दुनिया के लिये जरूरी है वह कर्तव्य है। उसे छोटा समझकर कतराना न चाहिये। श्रीकृष्ण ने ड्राइवरी भी की, यज्ञ में पाहुनों के पैर भी धोये, शस्त्र भी चलाये, बांसुरी भी बजाई, नाचे गाये और तीर्थंकर की तरह गीता का सन्देश भी दिया। वे हरफनमौला थे। हमें भी शक्ति के अनुसार सब कामों में अपने को तत्पर रखना चाहिये दुनिया से भागो मत। जो जो आवश्यक कर्तव्य हो उसे करने में मत चूको, और खिलाड़ी की तरह निर्लिप्त रहकर कार्य करो यही गीता का सन्देश है।

भ्रमण और चर्चा

आज कुछ कुटुम्ब मोटरों में बैठकर जिंजा से पांच सात मील दूर जंगल में वनविहार करने गये। वीणादेवी भी सुधीर को लेकर गईं थीं, लालजी भाई भी गये थे। पर मैं नहीं गया, क्योंकि मुझे प्रतिदिन के अनुसार पार्क में प्रवचन या चर्चा के लिये जाना था। मालूम हुआ कि पांच-सात मील पर नील की दो धाराएं होगई हैं फिर आगे चलकर मिलगई है। यहाँ सब लोगों ने गाया बजाया, भोजन किया, फोटो लिये गये आदि कार्य हुए।

जिंजा तो मैं पहिली बार ही देख चुका था। यहां घूमने की सब से अच्छी जगह नील नदी का किनारा है। जहां बगीचा पार्क बना हुआ है। वहां तो प्रतिदिन प्रवचन करने जाता ही था। यहां के प्रपात वगैरह कई बार देख चुका था इसलिये देखने की दृष्टि से कहीं जाने की इच्छा न थी। फिर भी वैरिस्टर महता मोटरकार लेकर आये। बोले—चलिये कुछ घूम आयें।

रास्ते में श्री नटवरलाल जी पारेख का घर मिला। ये यहां के विशेष सत्यसमाजी हैं। इनसे काफी चर्चा हुई। इनने कहा—मैं धनिक तो हूँ नहीं, पर सत्यसमाज की इतनी सेवा कर सकता हूं कि बिना किसी प्रकार का पारिश्रमिक लिये आपके साहित्य का गुजराती अनुवाद कर दूं। मैंने प्रसन्नता व्यक्त की और अनुमति दी। आशा है. मेरे लौटने के बाद भी ये जिंजा में सत्य समाज की ज्योति जगाये रक्खेंगे।

इतने में बैरिष्टर भट्ट जी एक और अध्यापक को लेकर आगये उनको साथ लेकर सब लोग नील नदीके किनारे उस स्थान पर पहुंचे जहां बड़ा भारी बांध बनाया जारहा है। इस कार्य के लिये आसपास यूरोपियन लोगों का नगर बस गया है। इसमें इटालियन आदि कई देशों के लोग हैं। इन लोगों के लिये लकड़ी के कच्चे बंगले बनालिये गये हैं, बंगले काफी अच्छे हैं। इस स्थानपर मैं पहिले भी कई बार आचुका था।

यहां नदी किनारे खड़े खड़े नये अध्यापक जी ने कुछ प्रश्न किये, जिनकी चर्चा पार्क में हो चुकी थी। वह चर्चा भी आई कि कुछ लोग कहते हैं कि जैसे भौंरा घूमते हुए भी स्थिर मालूम होता है उसी तरह योगी लोग अपनी अलौकिक शक्ति से दुनिया का भला करते रहते हैं किन्तु कर्महीन मालूम होते हैं।

मैंने कहा—तर्क में दृष्टान्त का उपयोग तो है पर उपमा का नहीं। दृष्टान्त से कार्य कारण के नियम पर प्रकाश पड़ता है पर उपमा से नहीं पड़ता। इसलिये इस प्रकरण में यह सिद्ध करना पड़ेगा कि योगियों के ध्यान से किस प्रकार कार्य होता है और क्या कार्य होता है। यों एक तरह की डकैती आजकल खूब प्रचलित है। भारत को स्वराज्य मिला, तो किसी ने कहा मैंने ध्यान लगाया इसलिये मिला, किसी ने कहा मैंने यज्ञ किया था इस-लिये मिला, इसप्रकार सबने अपनी अपनी साधना के गीत गाडाले। रेलगाड़ी में कुछ बच्चे बैठे बैठे दीवार को धक्का देरहे थे, अब गाड़ी छूटी तो सब चिल्लाने लगे कि मेरे धक्के से गाड़ी चली है। स्वराज्य मिलने और दुनिया के कल्याण का यश लूटनेवाले ये योगी साधु पंडित कहलानेवाले लोग ऐसे

ही बालकों सरीखे भोले या दम्भी हैं ।

संसार की भलाई होगी, एक दिन यह दुनिया स्वर्ग सरीखी बनेगी, पर उसके लिये शिक्षण संगठन व्यवस्था आदि के कार्य वर्षों और पीढ़ियों तक करना पड़ेंगे । किसी के ध्यान लगाने से या होम करने से दिलों की बीमारी हटजायगी ऐसी आशा न करना चाहिये ।

श्रेय की इस डकैती से सैकड़ों आदमी दुनिया को लूट रहे हैं, धन प्रतिष्ठा आदि कमा रहे हैं । इससे दुनिया का कोई लाभ तो है ही नहीं, नुकसान बेहद है । हमें इस डकैती से दुनिया को बचाना है ।

कल्याणवाद

सवा छः बजे पार्क में प्रवचन की जगह पर आगये । आज मैंने कल्याणवाद की व्यावहारिक परीक्षा शीर्षक अपना लेख सुनाया । यह लेख ११-१२ वर्ष पहिले संगम में निकल चुका था और संस्कृति समस्या शीर्षक लेख संग्रह में छपरहा था । जिसके छपे फार्म मुझे डाक द्वारा सत्याश्रम वर्धा से मिले थे ।

यहां के ही नहीं सब जगह के लोग मुझे समझने में कठिनाई का अनुभव करते है : जब मैं कहता हूं कि ईश्वर परलोक आदि मानने से जीवन को पवित्र रखने में बड़ी प्रेरणा मिलती है, प्रार्थना आदि का भी उपयोग है, तब लोग मुझे आस्तिक समझ लेते हैं । पर जब मैं कहता हूँ कि ईश्वर और परलोक न मानकर भी मनुष्य धर्मात्मा बनसकता है, भजन-पूजन से सिर्फ प्रेरणा मिलती है ईश्वर खुश नहीं होता, ईश्वर को फुसलाने की या रिश्वत देने की गुस्ताखी न करना चाहिये, भूतपिशाच मन्त्र आदि की मान्यताएँ मूढ़तापूर्ण हैं । वे सिर्फ तमाशे हैं, विज्ञान के साथ धर्म को मिलाना चाहिये, अन्धश्रद्धा छोड़ना चाहिये, पुरानी रूढ़ियों की गुलामी छोड़ना चाहिये, हमारे पुरखे सर्वज्ञ नहीं थे, वे आजकल के लोगों से कम जानते थे आदि, तब लोग मुझे नास्तिक समझने लगते हैं ।

मेरा समन्वयात्मक, सत्यशोधक और कल्याणवादी दृष्टिकोण लोगों की समझ में जल्दी नहीं आता। वे अतिवादी या एकान्तवादी होते हैं इसलिये मेरे जीवन के दोनों पक्षों की बातों से चक्कर में पड़जाते हैं। इसकेलिये भी मुझे लेख लिखना पड़े हैं। बहुत वर्ष पहिले मैंने 'मैं क्या हूँ' शीर्षक लेख लिखा था, इसके बाद यह कल्याणवाद का लेख लिखा था। इसमें दोनों तरफ के विचारों की उपपत्ति बताई गई है।

इस लेख से लोगों को काफी सन्तोष हुआ। यहां तक कि बैरिस्टर भट्टजी तक ने सन्तोष व्यक्त किया।

एक भाई ने पूछा कि आपने इसे कल्याणवाद क्यों कहा, सत्यवाद क्यों नहीं ?

मैंने कहा— कल्याणवाद को मैं सत्यवाद ही कहता हूं। पर सत्य-वाद को लोग तथ्यवाद समझ लेते हैं इसलिये स्पष्टता के लिये मैंने लेख में कल्याणवाद शब्द का उपयोग किया।

निराशता का भ्रम

एक भाई ने सहज ही पूछा कि आपका आगे का कार्यक्रम क्या है ?

मैंने कहा— अधिवेशन ने मुझे जिजा में बाँधदिया है। अधिवेशन होते ही मैं शीघ्र भारत चला जाना चाहता हूं।

उनने कहा— अभी तो आफ्रिका में आपकी काफी जरूरत है। आपको इतनी जल्दी न जाना चाहिये।

मैंने कहा— अपने साधनों के अनुसार मैं जितनी सेवा कर सकता था, की है। अधिक की गुंजाइश नहीं है।

दूसरे भाई ने कहा— यहां के लोग सच्चाई की कद्र नहीं करते। यहां तो ढोंगी दम्भी ही पूजा पाते हैं।

मैंने कहा— जो इस अन्तर को समझते हैं उन्हें अपनी शक्ति के अनुसार अपने विचार को कार्यपरिणत करना चाहिये।

तीसरे भाई ने कहा— आपने खेती करने के पहिले जमीन नहीं देखी, यहां की जमीन ठीक नहीं।

मैंने कहा— जिन्हें यश पूजा धन आदि की खेती करना है उन्हें इस बात का विचार करना पड़ता है। पर एक ईमानदार डाक्टर यह नहीं देखता कि कौनसा रोगी फीस ज्यादा देगा, पर उसके सामने जो भी रोगी आजाता है वह उसका इलाज करता है। मैं अपने को सत्येश्वर का नौकर मानता हूँ। ईमानदारी से सत्येश्वर का हुक्म बजाना मेरा कर्तव्य है। उसकी सफलता निष्फलता का सुख दुख सत्येश्वर को करना है मुझे तो उनके हुक्म बजाने से मतलब।

कुछ लोग कहते हैं कि "आप अमुक विचारों में परिवर्तन करलें तो खूब पूजा प्रतिष्ठा आदि मिले" पर वह तो मेरी नहीं मेरी लाश की पूजा होगी। सत्येश्वर ने जो विचार मुझे दिये हैं वास्तव में वही मैं हूँ। उनको छोड़ देने पर फूलों से ढकी हुई या सोने से मढ़ी हुई मेरी लाश रह जायगी।

एक भाई ने पूछा—क्या आप निराश हैं ?

मैंने कहा—नहीं। यह तो सिर्फ साधनों का सवाल है। मेरे पास जितने साधन हैं उतना काम कर रहा हूँ। यहां से मैं जाऊंगा तो भी काम ही करूंगा। निराश तो मैं तब कहलाऊं जब इस कार्य को छोड़ दूं। सो तो मरते दम तक नहीं छोड़नेवाला हूं। भले ही जीवन के अन्त तक बाहरी दृष्टि से निष्फल ही क्यों न रहूँ।

एक भाई ने पूछा—क्या आपको आफ्रिका आने का पश्चात्ताप है ?

मैंने कहा—बिलकुल नहीं, यहां मैंने काफी लोगों के पास अपने विचार पहुँचाये हैं। अन्धश्रद्धा का सब जगह राज्य होनेपर भी लोगों ने उन-पर काफी ध्यान दिया है, मेरा यह भी विश्वास है कि यह असर जल्दी नष्ट नहीं होगा, इन सत्य विचारों का प्रचार करते रहनेवाले व्यक्ति भी मुझे जगह जगह मिले हैं। यह भी काफी है। इसके सिवाय मैं किताबें पढ़कर किताबें लिखना पसन्द नहीं करता, दुनिया पढ़कर किताबें लिखना पसन्द करता हूं।

आफ्रिका आकर भी दुनिया पढ़ने को मिली यह भी एक लाभ है। इसलिये आफ्रिका आने का कोई पश्चात्ताप नहीं है।

आज की पिछली चर्चा से कुछ न कुछ खिन्नतासी लोगों के दिल में आगई थी। इस तरह वातावरण में कुछ गम्भीरता मालूम होने लगी थी। इस विषय में लोगो के दिल में सम्भवतः कुछ गलतफहमी हुई थी। उनने मुझे निराशसा समझ लिया था जब कि मैं निराश नहीं था।

जिंजा (युगांडा) १०-३-५२

उदार दृष्टि

आज मैं कुछ जल्दी ही पार्क में आगया था इसलिये मैं और बैरिष्टर भट्टजी पार्क में चक्कर लगाने लगे। बैरिष्टर साहब ने कहा, आप अन्तर्राष्ट्रीय न बनकर राष्ट्रीय बनें तो अच्छा। चेरेटी बिगन्स एट होम।

मैंने कहा कि इसका अर्थ है कि धर्म, दान या त्याग घर से शुरु करना चाहिये। उसका यह अर्थ नहीं है कि धर्म को संकुचित बनाकर अधर्म बना देना चाहिये। मैंने जो त्याग की बात की वह खुद अपने से शुरु की, इतना ही नहीं पहिले भारत में सत्य का प्रचार किया फिर इधर। संकुचितता तो धर्म नहीं कहा जासकता। मनुष्य शक्ति के अनुसार कार्य क्षेत्र कितना भी थोड़ा रक्खे पर मनुष्य को धर्म के स्वरूपमें निःपक्षता उदारता और सर्वभूत हित की वृत्ति रखना ही चाहिये।

और आज के जमाने में, जब कि सारे संसार का एक बाजार बनगया है, सब देशों से मनुष्य का दिनरात का सम्बन्ध होगया है, रंग राष्ट्र की समस्याएँ जीवन की बिकट और निकट की समस्याएँ बनगईं हैं उस समय इनकी तरफसे आंख मूंदकर हम दुनिया को सत्य नहीं देसकते। महाकाल के दर्बार में किसी संकुचित नीति को जगह नहीं मिलसकती।

भारतवासी यदि भारत का ही विचार करें और दुनिया की समस्याओं पर ध्यान देने का काम यदि दूसरे लोग ही करें, तो इससे भारत का गौरव बढ़ेगा नहीं, घटेगा ही।

फिर एक बात और है। चेरेटी को घर से शुरु करना है, घर पर खत्म नहीं करना है। घर पर खत्म कीजायगी तो वह चेरेटी न रहेगी स्वार्थपरता होजायगी। त्याग तो घर से ही शुरु करना चाहिये पर उसका फल अधिक से अधिक लोगों को, यहां तक कि सारे संसारको चखने का अवसर मिलना चाहिये। संकुचितता धर्म के स्वरूप की नाशक होती है।

क्रान्ति का विस्फोट

नील नदी का उद्गम जहां हुआ है वहां कुछ चट्टानें तोड़ी जारही हैं जिससे आगे के बड़े बांध का काम ठीक तरह से करने के लिये यहां एक अस्थायी बांध-बांधकर पानी रोका जासके। कभी कभी सुरंगों के फटने से बड़े जोर का धड़ाका होता है। और प्रवचन करते करते भी कभी कभी चौंका देता है।

आज भी विस्फोट हुआ। जिसे सुनकर बैरिस्टर भट्टने कहा कि चट्टानें पानी की धारासे कभी टस से मस न हुईं पर अब क्रांति के विस्फोट से उड़ रही हैं। समाज भी सुधार को नहीं मानती, क्रांति को मानती है।

बैरिस्टर साहब की बात का समर्थन करते हुए मैंने कहा कि इसमें सन्देह नहीं कि आज क्रांतिकी ही जरूरत है। पुरानी समाज-रचना और धर्मसंस्थाएं इसप्रकार मुर्दा होगई हैं कि अब उनमें प्राण नहीं आसकता, अब तो नये सर्जन की ही जरूरत है। वास्तव में क्रान्ति ही चाहिये। परन्तु मनुष्य तो क्रान्ति के विस्फोट को ही देखता है। विस्फोट के लिये क्रान्ति के साथ जो कोशिश करना पड़ती है उसकी महत्ता को लोग नहीं समझता। चट्टानों में सुरंग लगानेके लिये छेद करने, बारूद भरने आदि की तैयारी करना पड़ती है वह बड़ी शान्तिपूर्ण मालूम होती है। ऐसा मालूम होता है कि विस्फोट से उसका कोई सम्बन्ध ही नहीं है परन्तु इसी तैयारी से विस्फोट होते हैं। लन्दन की लाइब्रेरी में बैठे हुए कार्लमार्क्स जब केपिटल तैयार कर रहे थे तब उस विस्फोट की किसी को कल्पना भी नहीं थी जो रूसमें कम्युनिस्ट क्रांति के नाम से केपिटल के आधार पर हुआ। समय पर विस्फोट तो क्रांति

ही, पर उसकी तैयारी के लिये दृढ़ता के साथ चुपचाप काम करने की जरूरत है।

स्मृति और हिचकी

इसके बाद बैरिष्टर भट्टजी ने पूछा कि आज दुपहर में मुझे बहुत हिचकियाँ आईं। मैंने सोचा कि मेरी पत्नी (जो भारत आते हुए इस समय समुद्र में होंगी) ने मुझे याद किया होगा। तो क्या यह विचार ठीक है? इसके विषय में आपका क्या विचार है?

मैंने कहा—कार्यकारण भाव की परीक्षा करना चाहिये। अगर परीक्षा में कार्यकारण भाव निश्चय रूप में समझ में आवे तो हमें स्वीकार करना चाहिये। स्मरण करने से ईथर में या हवा में वे कौनसी लहरें पैदा होती हैं जो हिचकी पैदा करती हैं और अमुक व्यक्ति में ही पैदा करती हैं इस विषय की परीक्षा हुए बिना स्मरण का और हिचकी का सम्बन्ध जोड़ना बेकार है। खैर! हवा की या ईथर की लहरों का पता न लगे पर कोई अज्ञात कारण हो तो उसकी भी परीक्षा की जासकती है। इसके लिये आप एक कमरे में बैठ जायँ और दूसरे कमरे में आपकी पत्नी बैठ जायँ। अब आपकी पत्नी आपका स्मरण करें और आपको हिचकी आवे, और वे स्मरण बन्द करें कि हिचकी बन्द होजाय, तब तो समझा जासकता है कि स्मृति का हिचकी से कुछ सम्बन्ध है, अन्यथा दुनिया में अपने अपने कारणों से सैकड़ों घटनाएं होती हैं और हम वृथासन्तोष के लिये मनचाहा सम्बन्ध उनमें घोषित करें तो वह भोलापन ही कहा जासकता है।

भट्टजी—पर ऐसी ऐसी बातों का शास्त्रों में भी उल्लेख मिलता है।

मैं—पर उससे तो यही सिद्ध होता है कि मूढ़ता की यह बीमारी नई नहीं है काफी पुरानी है। रोग क्रानिक (जीर्ण या पुराना) होजाय तो वह नीरोगता नहीं कहलाता।

जिंजा (युगांडा) ११-३-५३

आज पार्क में बेरिष्टर भट्टजी ने प्रश्न पूछे—

१— तर्क और अनुभव के अतिरिक्त कोई दूसरा ज्ञान है कि नहीं ? या वैज्ञानिक ज्ञान में ही सब समाप्त है। कहावत यह है कि जहां विज्ञान का अन्त होता है वहां तत्वज्ञान का प्रारम्भ होता है।

२- ईश्वर का दर्शन होसकता है कि नहीं ? ईश्वर के दर्शन के बिना तो जीवन व्यर्थ ही है।

मैंने इन प्रश्नों का उत्तर निम्नलिखित दिया।

ज्ञान की सीमा

ज्ञान की सीमा कोई नहीं पासकता, न विज्ञान न तत्वज्ञान।

सर्वज्ञ कहलानेवाला व्यक्ति भी युग की खास खास बातों का ही अनुभवी होता है, ज्ञान की सीमा पानेवाला नहीं। सत्येश्वर गीता में मैंने लिखा है—

सत्येश्वर शिव रूप हैं, तीनों काल त्रिपुंड।
रोम रोम में भर रहे, सर्वज्ञों के झुंड॥

इसप्रकार मनुष्य ज्ञान की सीमा न पाने पर भी क्रम से विकसित होता जाता है अर्थात् उसका ज्ञानभंडार बढ़ता जाता है। इससे पुरखों की महत्ता कम नहीं होती। अभी अभी पीताम्बर भाई से टहलते टहलते बात होरही थी। वे टिकिट के पैसे उधार लेकर आफ्रिका आये थे। पर आज उनके पास पचास लाख से भी अधिक की जायदाद है। इससे उनकी असाधारण योग्यता का पता लगता है। अब मानलीजिये कि उनका पुत्र इस विषय में इतना योग्य न हो और वह अपने जीवन में लाख दो लाख ही कमापाये, फिर भी वह पीताम्बर भाई से अधिक धनी होगा। क्यों कि पीताम्बर भाई के पास जो सम्पत्ति है वह तो उसे मिलेगी ही, साथ ही लाख दो लाख जो उसने

कमाये हैं वे भी उसे मिलेंगे। पीताम्बर भाई यदि साठ लाख के धनी हैं तो उनका लड़का बासठ लाख का धनी होगा। इसप्रकार योग्यता में कम होकर भी वह धनिकता में अधिक होसकता है। मानव समाज का ज्ञान भण्डार भी इसीप्रकार बढ़ता जाता है। पिछली पीढ़ियों में तो वह काफी बढ़ा है। आगे भी बढ़ता जायगा।

लोग समझते हैं कि हमारे पुराने तत्वज्ञानियों ने ज्ञान की सीमा पा ली थी। और चूंकि तत्वज्ञान विज्ञान के अन्त के बाद शुरु होता है इसलिये तत्वज्ञानियों ने विज्ञान का पूरा ज्ञान तो कर ही लिया था। पर पुराने लोगों ने विज्ञान की कितनी कम उन्नति कर पाई थी इसका पता पुराने शास्त्रों को देखने से लगता है। उन्हें हवा का भी ठीक ज्ञान नहीं था। वे सूरज चांद तक आदमियों के उड़ने की बात लिख जाते थे। उन्हें पता नहीं था कि पांच मील के बाद हवा में आक्सिजन की इतनी कमी होजाती है कि वहां मनुष्य जिन्दा नहीं रह सकता। पृथ्वी, तथा गृह नक्षत्रों के बारे में उनकी जानकारी हास्यास्पद थी।

इसलिये यह कहा जासकता है कि तत्वज्ञान विज्ञान के बाद भले ही शुरु होता हो, फिर भी तत्वज्ञानी होने से कोई विज्ञान का जानकार नहीं होजाता।

जितना सच्चा ज्ञान है उसका आधार तर्क और अनुभव ही है। इन आधारों को छोड़कर जो ज्ञान है उसका प्रामाणिकता की दृष्टि से विशेष मूल्य नहीं है। तत्वज्ञान जिसे कहते हैं उसमें भी कुछ अंश में तर्क अनुभव से काम लिया जाता है। उतने अंश में वह विज्ञान ही है। परन्तु तत्वज्ञान कहलाने वाले ज्ञान में उन बातों का भी समावेश किया जाता है जिनका आधार कल्पना है। वह विज्ञान के बाहर है पर प्रामाणिक न होने से उसका कोई मूल्य नहीं।

तत्वज्ञान कल्पना रूप होने से विज्ञान के बाद ही शुरु होसकता है। क्योंकि जो चीजें विज्ञान से निश्चित होजाती हैं उनमें कल्पना अपने दांत नहीं चुभा सकती। जहां विज्ञान नहीं पहुंचपाया वहीं तत्वज्ञान कल्पना का खेल करता है। इसे कल्पनारूप तत्वज्ञान की महत्ता नहीं कह सकते।

कल्पना का सम्बन्ध प्रामाणिकता से नहीं होता, उसका सम्बन्ध हमारी इच्छा से होता है। कल्पना से वस्तु की स्थिति का पता नहीं लगता हमारी चाह का लगता है।

हां! तत्वज्ञान का एक अर्थ है जीवन के लिये उपयोगी ज्ञान। जिससे स्वपर-कल्याण हो ऐसा ज्ञान। ऐसा ज्ञान वैज्ञानिकता का दावा नहीं करता। वह अनुभव तर्क और कल्पना सभी का सहारा लेता है। उसमें विज्ञान भी आता है और काव्य भी। वह धर्म का विषय है। उसका तथ्यातथ्य से कोई सम्बन्ध नहीं, उसकी उपयोगिता वस्तु की जानकारी में नहीं, किन्तु जीवन को पवित्र तथा स्वपर कल्याणमय बनाने में है।

पर जो तत्वज्ञान कल्पनाओं का सहारा लेकर दर्शन शास्त्र कहलाता है और वैज्ञानिकता का दावा करता है वह तर्क अनुभव से बढ़कर जितना दावा करता है उसका कोई मूल्य नहीं। तर्क से सामान्य बात जानकर विशेष का चित्रण करें तो क्षम्य है।

मतलब यह है कि वस्तु तत्व का ठीक ज्ञान तर्क और अनुभव से ही होता है। विज्ञान इनका सहारा लेकर आगे बढ़ता जाता है। कल्पनाएं विज्ञान के आगे जाती हैं पर प्रामाणिकता की दृष्टि से इनका कोई मूल्य नहीं। धर्म तर्कणाओं सम्भावनाओं तथा रूपकों का मिश्रण करके जो वर्णन करता है उसे यद्यपि विज्ञान नहीं कह सकते फिर भी उसका उपयोग किया जासकता है। पर उसे विज्ञान के संघर्ष में न पड़ना चाहिये।

ईश्वर दर्शन

२— ईश्वर दर्शन के बारे में, मैं कह चुका हूं। उसका दर्शन दो

तरह का होता है। १- गुण दर्शन, २- रूप दर्शन।

ईश्वर के गुणों का विचार करना, उनका जगत पर क्या प्रभाव पड़ता है इसका चिन्तन करना, और वे गुण हमारे जीवन में कैसे उतरें, संसार में उनका प्रसार कैसे हो इत्यादि विचारों में जो तन्मयता होती है वह ईश्वर का गुणदर्शन है।

ईश्वर को मालिक या माता पिता आदि मानकर उसका कोई रूपक चित्र ध्यान में रखना, और उसमें इतनी तन्मयता होजाना कि हर समय वह हमें सामने दिखाई दे यह ईश्वर का रूपदर्शन है।

चित्र या मूर्ति बनाकर देखने से, या आंख बन्दकर ध्यान में उसकी आकृति लाने से ही ईश्वर का रूपदर्शन नहीं होजाता, उसके लिये वह तन्मयता चाहिये जो हर समय उसे स्पष्ट रूप में आंखों के सामने रक्खे और कोई भी पाप न आने पाये।

यद्यपि मुख्यता गुणदर्शन की है फिर भी रूपदर्शन भी मनुष्य को पाप से बचाता है। जैन मन्दिरों में एक शिष्टाचार पाला जाता है कि भगवान को पीठ न दिखाओ अर्थात् वे तीर्थंकर की मूर्ति की तरफ पीठ नहीं करते। भगवान को पीठ न दिखाने का मतलब यह है कि कोई भी काम करते समय भगवान को सामने रक्खो। जब हम देखेंगे कि भगवान सामने है तब कोई भी पाप करने की हमारी हिम्मत न होगी। इसप्रकार ईश्वर-दर्शन मनुष्य को होसकता है।

पर ईश्वर-दर्शन भी जीवन की पवित्रता का या स्वपर कल्याण का साधन है। ईश्वर-दर्शन साध्य नहीं है। दुनिया में ऐसे भी धर्म हैं जो ईश्वर नहीं मानते हैं पर वे संयम त्याग आदि में किसी से कम नहीं हैं।

असल बात यह है कि जीवन का ध्येय सुख है। सुख के लिये जो बात उपयोगी मालूम होती है हम उसे भी ध्येय के समान कहने लगते हैं। बहुत से लोग तो ऐसे हैं कि ईश्वर-दर्शन की अपेक्षा शिलिंग-दर्शन को

अधिक महत्व देते हैं। क्योंकि वे समझते हैं कि शिलिंग से जितना सुख मिल सकता है उतना ईश्वर से नहीं। उनका ध्येय सुख है, वह न मिले तो जीवन व्यर्थ है। उसके साधन को इतना महत्व नहीं दिया जासकता।

ईश्वर से सुख मिलता हो तो ईश्वर को मानने के लिये तैयार हैं, किसी दूसरी चीज से सुख मिल सकता हो तो उसे मानने के लिये वे तैयार हैं। मां-बाप की सेवा से सुख मिलता हो तो उनकी सेवा को धर्म मानने के लिये तैयार हैं। इसप्रकार जीवनकी सफलता सुखमें है, ईश्वर आदि में नहीं। हां! सुख के साधन के रूप में ईश्वरदर्शन आदि का भी महत्व है।

यद्यपि सुख ही जीवन का अन्तिम ध्येय है पर अनुभव ने मनुष्य को सिखाया कि स्वार्थी बनने से जीवन सुखी नहीं होता, क्योंकि जब सभी स्वार्थी बनजाते हैं तब स्वार्थों का संघर्ष होने लगता है और इस संघर्ष में सभी का स्वार्थ चौपट होजाता है इसलिये सबके स्वार्थों का समन्वय करना ही और ईमानदारी से सहयोग करना ही जीवन को सुखी बनाने का वास्तविक उपाय है।

इसप्रकार जीवन का परम ध्येय सुख है। उस ध्येय के लिये सर्व-सुख समन्वय रूप धर्म की जरूरत है और उस धर्म के लिये ईश्वरवाद कर्मवाद आदि की जरूरत है। ईश्वर-दर्शन इस ध्येय की पूर्ति का अच्छा साधन है।

जिंजा (युगांडा) १२-३-५२

पोष्ट ऑफिस की ईमानदारी

अधिवेशन के निमन्त्रण पत्र सैकड़ों जगह भेजे गये थे। पर भूल से एक पत्र में एक शिलिंग का टिकिट (स्टाम्प) ज्यादा लग गया था। दूसरी बार जब किसी काम से लालजी भाई पोष्ट आफिस गये तब पोष्ट मास्टर ने कहा कि एक पत्र में आपने एक शिलिंग का टिकिट ज्यादा लगा दिया था। यह लीजिये एक शिलिंग का टिकिट। यह कहकर उनने एक शिलिंग का नया टिकिट दे दिया।

मुझसे जब लालजी भाई ने यह बात कही तब यहां की ईमानदारी और सतर्कता देखकर मैं तो दंग रहगया। भारत में कदाचित सतर्कता रक्खी है पर वह सिर्फ इतने अर्थों में कि टिकिट कम तो नहीं लगे हैं। अगर ज्यादा लगे हों तो पोष्ट आफिस को इससे कोई मतलब नहीं। जब कि यहां जनता के हित का भी सतर्कता से पूरा ध्यान रक्खा जाता है और ईमानदारी भी पूरी बताई जाती है। अगर पोष्ट का कर्मचारी एक शिलिंग का टिकिट निकाल लेता और लालजी भाई को न देता तो कौन कहनेवाला था। डांक तो पहुँच ही जाती। वह रजिष्टर्ड भी नहीं थी कि उसकी रसीद में लगे हुए स्टाम्प का उल्लेख हो। यद्यपि शिलिंग दो शिलिंग के हानि लाभ से न लालजी भाई गरीब होते न पोष्टमाष्टर अमीर, पर ईमानदारी के लिये इतना विवेक भारत में कितने कर्मचारी रक्खेंगे? वहां तो अपने स्वार्थ के लिये जनता के स्वार्थ को कुचलने में भी न चूकेंगे, फिर हाथ में आये हुए स्वार्थ को छोड़कर जनता का माल बिना मांगे वापिस कर देना और उसके लिये इतना ध्यान रखना आश्चर्यजनक है। यह मानवता का सहज चिन्ह है पर आज वह इतना दुर्लभ होगया है कि उसे देवत्व का चिन्ह कहना पड़ता है।

इससमय मुझे यह भी याद आया कि सत्याश्रम से भेजे गये दस सेटों के रजिष्टर्ड बुकपोष्ट पोष्ट आफिस ने बिना ध्यान दिये लेलिये और फिर वे बम्बई से वापिस गये। क्योंकि बुकपोष्ट के लिये जितना वजन निर्धारित है उससे ज्यादा था। पर पोष्ट आफिस ने रजिष्ट्री करते समय ध्यान न दिया था। इस तरह थोड़ीसी गफलत से ३०-३५ रुपये के टिकिट बेकार गये, पुस्तकें खराब हुईं, काम रुका। जब कि यहां के पोष्ट आफिस ने अनरजिष्टर्ड डांक में भी एक शिलिंग का नुकसान न होने दिया।।

आज वर्षा अधिक थी, ठंड भी काफी थी। इसलिये पार्क में मीटिंग न होसकी। यद्यपि ७-८ आदमी वहां पहुंचे पर इतने थोड़े आदमियों में व्यवस्थित चर्चा न होसकी। घूमघाम कर लौट आये। रास्ते में एक सज्जन ने यहां के कुछ संस्मरण सुनाये कि अब यहां अंग्रेजों का न्याय और ईमान कैसा गिर रहा है ऐसी हालत में वे यहां टिक न सकेंगे।

एक बार एक आदमी ने शक्कर की चोरी की। शक्कर पकड़ी गई और गवाह आदि से भी चोरी प्रमाणित होगई। फिर भी अंग्रेज अफसर ने इसलिये उस आफ्रिकन चोर को छोड़दिया कि शक्कर अमुक आदमी की है इसका कोई चिन्ह नहीं। मानों अलग अलग आदमियों की शक्कर अमुक अमुक जाति की होती हो। निःसन्देह एक भारतीय के विरुद्ध अपराधी को छोड़ने का यह रद्दी से रद्दी बहाना था। इस न्याय को पढ़कर एक दूसरे अंग्रेज ने कहा था कि मैं समझता था कि मेरी जिन्दगीभर अंग्रेजी राज्य यहां से न जायगा पर अब कह सकता हूं कि मेरी जिन्दगी में ही चला जायगा।

समभाव अहसान नहीं

रात में एक उत्साही और सुशिक्षित सत्यसमाजी युवक डेरे पर आये। उन्हें इस बात पर बहुत कुछ कहा कि जनसेवा करने में न दीनता का भाव आने देना चाहिये न अहंकार। इसके बाद प्रकरण निकलने पर समभाव के बारे में भी कहा।

कुछ लोग यह समझते हैं कि हम धर्मसमभाव दिखाते हैं तो दूसरों पर अहसान करते हैं। उदाहरण के लिये हम मुहम्मद साहब को या कुरान को आदर दिखाते हैं तो मुसलमानों पर अहसान करते हैं, इसलिये जब मुसलमान हमारे देव पर आदर नहीं दिखाते तब हम उनके देवपर आदर क्यों दिखावें?

यह भ्रम है। मुसलमानों पर अहसान तो तब हो जब हम उन्हें कुछ दें। समभाव में इस बात से कोई मतलब नहीं। समभाव में तो संसार के महामानवों के प्रति न्याय किया जाता है और उनसे जो कुछ सीखने लायक हो वह सीखा जाता है। कन्फ्यूशियस के माननेवालों से कोई सम्बन्ध न रखने पर भी हमें कन्फ्यूशियस का आदर करना चाहिये। उनसे जो कुछ सीखने लायक हो सीख लेना चाहिये।

एक खास बात यहां यह है कि किसी के पिता से कुछ सीख लेना

उन पर उपकार नहीं है। मुहम्मद साहब से अगर भाईचारा सीख लिया जाय तो हिन्दुओं में एकता आजायगी और इससे उनकी ताकत बढ़जायगी, मुसलमानों में रहनेवाली संगठन शक्ति भी मिल जायगी। इससे मुसलमानों पर कौनसा उपकार होगा ?

हमें सत्य के आधार पर धर्मसमभाव अपनाना है। इससे हमारा लाभ तो है ही, अंत में दूसरों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ेगा। यदि न पड़ेगा तो भी हमारा कोई नुकसान नहीं। विवेकपूर्ण धर्मसमभाव को असली सच्चाई मानकर अपनाना चाहिये।

जिंजा (युगांडा) १३-३-५२

आदर्श की उच्चनीचता

आज पार्क की सभा में अध्यापक पारीख जी ने रामकृष्ण परमहंस के बारेमें पूछा कि सत्यसमाज में क्या विशेषता है। उनका प्रश्न पूरा होते न होते बैरिष्टर भट्ट जी बोल उठे कि इस प्रकरण में मुझे एक बात याद आई कि रामकृष्ण परमहंस अपनी पत्नी को भी मां कहते थे, दयानन्द जी ब्रह्मचारी थे, शंकराचार्य भी ब्रह्मचारी थे तो आपने इतना ऊंचा आदर्श छोड़कर नीचा आदर्श क्यों लिया ? आप पत्नी क्यों रखते हैं ?

मैंने कहा– पारीख जी के प्रश्न की अपेक्षा भट्ट जी का प्रश्न ज्यादा जोरदार है इसलिये मुख्य रूप में उसी का उत्तर दूंगा, पारीख जी के प्रश्न का उत्तर संक्षेप में दूंगा।

यह कहकर मैंने बताया कि रामकृष्णजी अच्छे भक्त थे, उनके शिष्यों ने जनसेवा के कार्य किये हैं। साधक होनेपर जनसेवा के सब कार्य सत्यसमाज भी करना चाहता है। पर भक्ति उसका मुख्य कार्यक्रम नहीं।

इसके बाद मैंने भट्टजी के प्रश्न को लिया और कहा—

निःसन्देह कुछ बड़े आदमी ब्रह्मचारी भी हुए हैं और कुछ सपत्नीक भी हुए हैं और वे ब्रह्मचारियों से भी बढ़कर हुए हैं। हनुमान ब्रह्मचारी थे और म. राम सपत्नीक थे, इसलिये रामजी हनुमानजी से नीचे न होगये। हिन्दुओं के देवता सपत्नीक हैं इसलिये वे अपने ब्रह्मचारीभक्तों से छोटे नहीं हैं।

महामानवों में सपत्नीक महामानव एक से एक बढ़कर हुए हैं। मुहम्मद और कृष्ण की बात जाने भी दें, फिर भी जरथुस्त सुकरात व्यास वशिष्ठ जनक आदि महामानव भी कम नहीं थे, कबीर तथा सिक्खगुरु कम महान नहीं थे। कार्ल मार्क्स कम नहीं थे। सपत्नीक रहकर गांधी जी ने जो सेवा की वह तो हमारे सामने की ही बात है।

असल बात यह है कि ब्रह्मचर्य रखना न रखना अपनी अपनी रुचि और परिस्थिति की बात है। मुख्य बात तो जनसेवा की है। एक आदमी किसी भी कारण से ब्रह्मचर्य रक्खे बिना जनसेवा नहीं कर सकता तो भले ही वह ब्रह्मचर्य रक्खे, एक आदमी सपत्नीक रहते हुए भी जनसेवा कर सकता है तो वह सपत्नीक रहे। यह तो अपनी अपनी योग्यता और परिस्थिति की बात है। जिसमें सपत्नीक रहकर सेवा करने की क्षमता न हो वह सपत्नीक न रहे। पर हमें तो उसकी सेवा की मात्रा देखना है उसका ब्रह्मचर्य नहीं।

पत्नी को जब पत्नी रूप में छोड़ दिया तब उसे मां कहा जासकता है। पर वह कोई आदर्श नहीं। दुनिया पत्नियों को मां कहने लगे तो दुनिया चौपट होजाय। किसी व्यक्तिमें ऐसी बात क्षम्य तो कही जासकती है पर आदर्श नहीं।

इसके सिवाय मैं पहिले विस्तार से कह चुका हूँ कि ब्रह्मचर्य की दुहाई देनेवाली साधु संस्था से भारत में लाखों की संख्या में असंख्य मूर्ख दुराचारी गुण्डों का निर्माण साधुवेष में हुआ है। उनसे बहू बेटियों पर संकट तो उपस्थित हुआ है पर गृहस्थों को उनसे कोई सेवा नहीं मिलती। आज तो निर्दोष और अभयंकर साधुसंस्था की जरूरत है जो गृहस्थों के भीतर निर्म-

बता से काम कर सके। इसकेलिये दाम्पत्यवाली साधु-संस्था अधिक उपयुक्त है।

ब्रह्मचर्य जनसेवा का एक साधन कहा जासकता है, वह भी अनिवार्य साधन नहीं। ऐसी हालत में हमें ज्ञानसंयम सेवा की मात्रा देखना चाहिये, न कि उनके किसी साधन की। रसोईघर में रोटी कितनी बनी यही महत्व की बात है, लकड़ी कितनी जली और राख का ढेर कितना लगा यह महत्व की बात नहीं है। संभव है राख का ढेर लगानेवाले ने एक भी रोटी न पकाई हो। ऐसी हालत में हम रोटी की जगह राख नहीं खा सकते।

भट्ट जी—पर यह तो आप मानेंगे कि सम्भोग से शरीर का सत्व निचुकता है।

मैं—सात धातुओं में वीर्य अंतिम धातु है। वह न निकले तो लौट-कर खून में न मिलजायगी। वह तो किसी न किसी तरह निकलही जायगी। सम्भोग के समय वीर्य खून में से नहीं निकलता किन्तु अंडकोष या वीर्य-कोष में से निकलता है। हां! सहज रूप में जितना वीर्य शरीर में से निकलने के लिये पैदा होता है अतिभोग से उससे अधिक निकाला जाय तो अवश्य शरीर निचुड़ेगा और कमजोर होगा। सम्भोग बुरा नहीं है अतिभोग बुरा है। अतिरूप में तो खाना पीना तक बुरा होजाता है।

किसी व्यक्तिको नपुंसक कर दिया जाय तो वह सम्भोग न कर सकेगा, पर इसीलिये उसका वीर्य सुरक्षित रहकर उसे बलवान न बनादेगा।

(नपुंसक बनाये हुए बैलों की अपेक्षा पुरुषत्ववाले सांड अधिक बलवान होते हैं,)

यह बात भी एक दिन कही जाचुकी है कि ब्रह्मचारियों की अपेक्षा विवाहित व्यक्ति अधिक उम्र पाते हैं। स्वास्थ्य में भी ब्रह्मचारी कहलानेवाले लोग प्रायः अच्छे नहीं होते।

एक भाई ने कहा— यह ठीक है, शंकराचार्य भी जवानी में मरगये थे।

मैंने कहा— इसप्रकार के उदाहरण बहुत हैं। यह भी मैं एक दिन कह चुका हूँ कि हजार में एकाध मनुष्य शरीर से ही मन्दकामी होते हैं। वे ही ब्रह्मचर्य पालन कर ठीक रह सकते हैं। बाकी लोग ब्रह्मचर्य से ठीक नहीं रह सकते, न दीर्घायु, न स्वस्थ।

साधारण लोगों को ब्रह्मचर्य रखने के लिये शरीर को इतना दबाना पड़ता है कि उनकी अधिकांश शक्ति ब्रह्मचर्य ही खालेता है। जैनमुनियों को ब्रह्मचर्य रखने के लिये शरीर को इतना बर्बाद करना पड़ता है कि वे किसी काम के नहीं रहते। जवानी में भी उनकी हड्डियां गिनने लायक दिखने लगीं इसको वे तपस्या कहते हैं, पर ज्ञान और सेवा की दृष्टि से बेकार साबित होते हैं। इस प्रकार ब्रह्मचर्य समाज के लिये बोझरूप होजाता है। बौद्ध साधु संस्था ने ब्रह्मचर्य रखने की कोशिश तो की पर देहदमन न किया, फल यह हुआ कि वह व्यभिचारियों का अड्डा बनगई।

एक भाई ने कहा कि रोमन कैथोलिकों में भी ऐसा ही दुराचार होता है।

मैंने कहा—मार्टिन ल्यूथर ने प्रोटेस्टेंट सम्प्रदाय की स्थापना की, इसमें एक कारण यह भी है। प्रोटेस्टेंट साधु विवाहित होते हैं।

रास्ते में जो भाई मेरे साथ थे उनने कहा—आज आपका राम और हनुमान का दृष्टांत बड़ा मजेका रहा। ब्रह्मचर्य से हनुमान और विवाह से राम, बड़ी साफ बात है।

दूसरे भाई ने कहा—डाक्टर लोग कई युवकों की बीमारी का इलाज विवाह बताते हैं।

मैंने कहा—मैंने भी इस प्रकार के केस सुने हैं।

आज रात को मेरे डेरे पर स्वागतकारिणी समिति की बैठक हुई। स्वागताध्यक्ष श्री [illegible]सिंहजी मिल मौजूद थे कुछ अन्य सदस्य भी थे। स्वागत-सदस्यों की संख्या बढ़ाने तथा अन्य कार्यों पर विचार हुआ।

जिंजा युगांडा १४-३-५२

चालीस वर्ष

आज अधिवेशन के नियोजित अध्यक्ष श्री सिरदा जी पार्क में मेरे साथ टहल रहे थे। इस समय उनने जिंजा का चालीस वर्ष का इतिहास सुनाया ; बोले-मुझे चालीस वर्ष हुए जब मैं यहां आया था। आज आपको यह बड़ा और सुन्दर शहर दिखाई देरहा है पर उन दिनों यहां न सड़कें थीं न मकान। सिर्फ टीन के तीन झोपड़े थे। यूरोपियन लोग आज हिन्दुस्थानियों को आने नहीं देना चाहते और भगाना चाहते हैं पर उन दिनों यूरोपियन यहां पास नहीं फटकता था। हिन्दुस्थानियों को यहां पद पद पर मौत का सामना करना पड़ता था। उनने खून बहाकर इस देश को बसाया है।

यहां ऐसे भयंकर मच्छर थे कि मलेरिया से बहुत से लोग मर जाते थे। ब्लेक वाटर की बीमारी होती थी जिससे कोई बच न पाता था। जंगली जानवर तो खाही जाते थे पर यहां के आफ्रिकन लोग भी मौका पाकर हिन्दुस्थानियों को मारकर खा जाते थे। इसके सिवाय यहां कोई खाद्य सामग्री न मिलती थी। गेहूं आदि कोई अनाज यहां न होता था। मटोकी तथा एक दो शकरकंद को छोड़कर कोई फल और शाकभाजी यहां न मिलती थी। आटा दाल आदि सब हिंदुस्थान से मंगाना पड़ता था, जो दो ढाई माह में मिलता था, और आटा तो बिलकुल खराब होजाता था।

बहुत से लोग तो खाद्य सामग्री के अभाव के कारण मांस खाना सीखे। इसके बाद हिंदुस्थानियों ने ही भारत से बीज लाकर यहां अनाज की खेती करवाई, तरह तरह की शाकभाजी मिर्च मसाले आदि लगवाये। तब वे सब चीजें यहां दिखाई दीं। आज युगांडा में साढ़े तीन लाख गांठ रुई प्रतिवर्ष पैदा होती है पर उन दिनों यहां के लोग रुई जानते तक न थे। इसके बाद काम काज तो सब हिंदुस्थानियों ने ही इन्हें सिखाया। आज वे दूकान करते हैं, कपड़े सीते हैं, बढ़ई के काम करते हैं, यह हिंदुस्थानियों ने ही इन्हें बनाया है।

इस सिलसिले में एक बड़ी विचित्र बात उनने यह सुनाई कि आफ्रिकनों को भी यह विश्वास था कि हिंदुस्थानी लोग मुर्दा खाते हैं। जब कोई हिंदू मर जाता था तो उसका दाह संस्कार करने सब जाते थे और जब तक मुर्दा जलता रहता था तब तक चिता के चारों ओर बैठे रहते थे। यह दृश्य दूर से देखकर आफ्रिकन लोग समझते थे हिंदुस्थानी लोग मुर्दे को पका रहे हैं और खाने के लिये चारों ओर बैठे हैं।

जब उनसे कोई कहता कि हिंदू लोग मुर्दा नहीं खाते तब वे विश्वास ही न करते थे। कहते थे हमने तो हिंदुओं को मुर्दा पकाते और खाने के लिये चारों ओर बैठे हुए अपनी आंखों से देखा है। तुम कैसे कहते हो कि हिन्दू मुर्दा नहीं खाते। और नहीं खाते तो पकाते क्यों हैं?

दाह संस्कार को वे समझ ही न सकते थे।

इन बातोंमें से यद्यपि बहुतसी बातें मैं पहिले भी जान चुका था पर सिरदा जी के कथन में काफी नई जानकारी भी थी। उससे मुझे काफी प्रसन्नता हुई। पर खेद इस बात का भी हुआ कि हिन्दुस्थानियों ने यहां कष्ट सहे और गुरु का काम भी किया पर गुरुका आसन और सद्भाव न पाया या बहुत कम पाया। इसकेलिये आफ्रिकनों को कृतघ्न तो कहा जासकता है पर हिन्दुस्थानियों की भी कुछ लापर्वाही है। वे उनके ऊपर कोई सांस्कृतिक छाप नहीं डाल सके, न अभी भी इस तरफ उनका ध्यान है।

विकास अविकास

पार्क की सभा में एक नये विद्वान भाई ने एक प्रश्न किया कि मनुष्य मरकर क्या दूसरी योनि में जासकता है या मनुष्य ही होता है?

ये भाई भारत से अभी लौटे थे और पार्क की सभा में पहिली ही बार आये थे।

मैंने कहा— इस प्रश्न का उत्तर इतनी जल्दी विस्तार से दिया जासकता है। यहां मैं संक्षेप में ही कहता हूं कि कर्मों के अनुसार प्राणी ऊंची नीची

योनि में जन्मलेता है। एक आकृति में रहा हुआ आत्मा दूसरी आकृति लेस-कता है। कैसा भी विद्वान आदमी मरकर जब दूसरा जन्म लेता है तब पहिले जन्म की विद्वत्ता उसके पास नहीं रहती और कैसा भी बड़ा प्राणी हो नया जन्म लेने पर उसे गर्भ में छोटी आकृति लेना पड़ती है। ऐसी हालत में वह कोई भी प्राणी बने इसमें न ज्ञान के परिवर्तन की तरफसे बाधा है न आकृति के परिवर्तन की तरफ से। जब कि पुण्य के अनुसार मनुष्य ऊंची गतिमें आसकता है तब पाप के अनुसार नीची गति में क्यों नहीं जासकता।

हां! यह सब व्यक्ति के विषयमें ही कहा जासकता है जातियों के विषयमें नहीं। प्राणी विकसित होते होते बन्दर से मनुष्य होसकता है पर मनुष्य जाति बन्दर बनने की तरफ नहीं जारही है इस तरह विकासवाद मानना ठीक है। मतलब यह कि मनुष्य की सन्तान तो बन्दर न होगी पर मनुष्य मरकर बन्दर की योनि में और बन्दर मरकर मनुष्य की योनिमें जन्म लेसकता है।

फलविराग

इसके बाद बैरिष्टर भट्ट जी ने पूछा कि शंकराचार्य ने इहामुत्र फल-भोग विरागः आदि बातों का जो जिक्र किया है वे ठीक हैं कि नहीं?

मैंने कहा—ठीक हैं। विवेक पर तो जोर देना ही चाहिये। ऐहिक और पारलौकिक फल का विराग है निष्काम कर्म। मनुष्य अपने कर्तव्य का फल तुरंत चाहता है या परलोक की आशा में पुण्य का व्यापार करता है, इससे वह शुद्ध कर्तव्य नहीं कर पाता, कर्तव्य से भ्रष्ट होजाता है। फलभोग का विराग दुनिया से भागजाना नहीं है किन्तु कर्मयोगी बनकर निष्काम कर्म करना है।

आत्मवाद

इसके बाद अध्यापक पारेख ने पुनर्जन्म और आत्मवाद पर प्रश्न पूछा। यह प्रश्न भी पहिले किया जा चुका था। पर कुछ बातें जोड़कर आज फिर कहा— विज्ञान ने जो बानवे तत्व माने हैं उन सब के गुणधर्म जुदे हैं।

यहां तक कि अनेक रूपान्तर होनेपर भी वे अपना गुणधर्म नहीं छोड़ते अर्थात् नहीं मिटते। यहां तक कि अनेक यौगज द्रव्य भी, रूपान्तर करने पर भी, नहीं मिटते। जैसे दो हाइड्रोजन और एक आक्सिजन परमाणु के योग से एक जलाणु बनता है, जल आग के निमित्त से भाफ बनकर हवा में घुलजाता है, फिर निमित्त पाकर बादल बनकर बरसता है। इन सब परिवर्तनों से भी जलाणु मिटता नहीं है। आक्सिजन हाइड्रोजन तो क्या मिटेगा?

कहने का मतलब यह कि तत्व स्थायी पदार्थ है और वे अपने गुण-धर्म के अनुसार जुदे जुदे हैं। पर उनमें ऐसा कोई तत्व नहीं है जो अपने होने का संवेदन कर सके। तब जो तत्व संवेदन करने की क्षमता रखता है उसे अलग तत्व मानना चाहिये। और जब उसे तत्व मान लिया तब उसमें स्थायिता भी मानना पड़ती है और इस तरह पुनर्जन्म भी मानना पड़ता है।

फिर भी मेरा यह कहना नहीं है कि नित्य आत्मा को सिद्ध करने के लिये जो युक्तियां मैंने यहां दी हैं और जो अपने साहित्य में (जैनधर्म मीमांसा-आत्मसिद्धि आदि में) कुछ विशेष दी हैं, वे काफी हैं। अभी और भी जबर्दस्त प्रमाणों की जरूरत है। फिर भी इन युक्तियों से नास्तिकता में सन्देह पैदा होजाता है, ऐसी अवस्था में जिससे जगत् का अधिक कल्याण हो उसे स्वीकार करने में सुविधा होती है। आत्मवाद अधिक कल्याणकर है इसलिये उसपर विश्वास हो तो अच्छा है।

एक भाई ने पूछा—तत्व सिद्ध होजाने पर भी इस जन्म के संस्कार दूसरे जन्म में कैसे जाते होंगे?

मैंने कहा—पानी में गुलाब के फूल पड़े हुए हों और भपका के द्वारा उसकी भाफ बनाकर फिर पानी बनाया जाय तो उसमें गुलाब की सुगन्ध रहती है। वह गुलाब-जल कहलाता है। पानी भाफ बनकर फिर पानी बनने का अर्थ है पानी का पुनर्जन्म। उसके होने पर भी यदि फूलों के संस्कार आते हैं तो आत्मा में भी आसकते हैं।

एक भाई—आत्मवाद की जरूरत क्या है और उससे लाभ क्या है?

मैं-सब के सुख के लिये हरएक मनुष्य का पवित्र ईमानदार सेवाभावी बनना जरूरी है और इसकेलिये यह भी जरूरी है कि हर मनुष्य को यह विश्वास हो कि पवित्र ईमानदार सेवाभावी जीवन बिताने से हमें इसका सुखरूप फल मिलेगा। पर जीवन में ऐसे मनुष्य भी वैभवशाली देखे जाते हैं जिनका जीवन अपवित्र होता है, और ऐसे मनुष्य भी गरीब आदि देखे जाते हैं जिनका जीवन पवित्र होता है। यद्यपि वास्तविक दुःख सुख दूसरी ही बात है। गरीबी आदि में भी सुख होता है और अमीरी आदि में भी दुःख। फिर भी मनुष्य बाहरी दृष्टि से भी पुण्य का सम्बन्ध सुख वैभव के साथ और पाप का संबंध दुःख दीनता के साथ देखना चाहता है, इसके बिना यह पुण्य की तरफ आकर्षित नहीं होता। पर दुनिया में इसप्रकार का नियम नहीं दिखाई देता ऐसी अवस्था में यदि मनुष्य पुण्य पर से श्रद्धा छोड़दे तो जीवन पापमय होजाय। और उस मनुष्य के साथ सारा संसार दुखी होजाय। अदूरदर्शिता के कारण लोग यह सोचने लगें कि ईमानदारी की क्या जरूरत है, चोरी और बेईमानी से ही काम चलाया जाय। पर हर आदमी चोर होजाय तो चोरी किसकी की जाय, इस तरह सभी चौपट होजायं। इसलिये मनुष्य को ईमानदार और परिश्रमी बनना तो जरूरी ही है। ऐसी अवस्था में आत्मवाद और परलोकवाद बड़े उपयोगी साबित होते हैं।

आत्मवाद के अनुसार कहा जाता है कि यद्यपि इस जीवन में बहुत से पुण्यात्मा भी दुःखी देखे जाते हैं पर इसका यह मतलब नहीं है कि पुण्य दुःख देनेवाला है। एक आदमी टाइफाइड से बीमार हो। इसके लिये वह कई दिनों से लंघनें कर रहा हो। पर लंघनें पूरी न होने से बीमारी न गई हो। तो साधारण आदमी यह कहेगा कि लंघनों के कारण यह बीमारी है। जब कि वास्तव में बीमारी पुराने विकार के कारण है और लंघनों के कारण तो बीमारी घट रही है। इसी प्रकार आत्मवाद के अनुसार कोई पुण्यात्मा यदि दुःखी है तो वह पुराने पाप के कारण दुःखी है। नया पुण्य उसे भविष्य में अर्थात् परलोक में सुखी बनायगा। आज पाप करने पर भी जो सुखी दिखाई देता है उसका कारण पुराना पुण्य है, वर्तमान का पाप उसे आगे दुःख देगा।

यह भविष्य इस जन्म में न आपाया तो अगले जन्म में आयगा।

इसप्रकार आत्मवाद से पुण्य के प्रति आस्था और पाप के प्रति घृणा पैदा होती है।

एक भाई ने पूछा– परलोक के स्मरण की घटनाएं जो सुनी जाती हैं उनमें कहां तक सत्य है?

मैं– परलोक की स्मृति यदि हो सके तो यह सबसे अच्छी बात हो। पर इसका अभी तक कोई प्रमाण नहीं मिला। छोटे छोटे बच्चों के दिलों पर जानबूझकर या अनजान में ऐसी बातें जमाई जाती हैं कि वे पूर्वजन्म की स्मृति सरीखी बातें करने लगते हैं। दिल्ली की शांतिदेवी की जो बात आप कहते हैं उसकी जांच की गई थी और उस पर एक पुस्तक भी प्रकाशित हुई थी। उससे पता लगा था कि उसे किस प्रकार तैयार किया गया था। इस प्रकार के झूठे प्रमाणों से पक्ष को कमजोर न बनाना चाहिये।

यह तो होसकता है कि पूर्व जन्म से कोई ऐसे संस्कार लावे जिससे अच्छा प्रतिभाशाली स्वस्थ शरीर आदि बने, पर पूर्व जन्म की विद्या स्मृति भाषा आदि नहीं लासकता। मस्तिष्क में जो इन बातों के संस्कार पड़ते हैं उनके नष्ट होजाने से इसी जीवन में स्मृति नष्ट होजाती है फिर शरीर के जलने गड़ने के बाद दूसरे जन्म में वे मस्तिष्क के चिन्ह कैसे आयेंगे।

बच्चों पर पूर्व जन्म की स्मृति के संस्कार कैसे पड़ सकते हैं, इसका उदाहरण मैं स्वयं हूं। स्वप्न आदि किसी बातसे मेरे पिताजीका विश्वास था कि मैं अपने पहिले जन्मका मामा भोजराज हूं। मरकर अपनी बहिन के गर्भ से पैदा हुआ हूं। इस बात की चर्चा शैशव में मुझसे कर दी गई। फल यह हुआ कि जब मेरी विधवा मामी (भोजराज की पत्नी) मुझे मिली तब लोगों ने आपस में चर्चा की कि यह मेरे पहिले जन्म की पत्नी है। इसका असर यह हुआ कि मैं उनकी गोद में जाने से लजाने लगा और इनकार करने लगा। बस, मेरा यह लजाना और इनकार करना इस बात का प्रमाण बनगया कि सचमुच मैं पहिले जन्म का अपना मामा (भोजराज) हूं। किस्से कहानियों और बातें

के द्वारा बच्चों के हृदयपर ये सब संस्कार सरलता से डाले जासकते हैं। अन्तमें थोड़ीसी ही जांच से इन बातों का रहस्य खुलजाता है इसलिये ऐसी झूठी बातों को प्रमाणरूप न मानना चाहिये। दार्शनिक आधार से ही आत्मवादी बनना ठीक है।

जिंजा ता. १५-३-५२

क्रिश्चियन साइन्स

आज दुपहर में सिरदा जी (सा. स. स. के आठवें अधिवेशन के नियोजित अध्यक्ष) आये और अपनी मोटर में अपने घर लेगये। वहां दो तीन घंटे चर्चा हुई। ये सब बातें पार्क चर्चा में भी आचुकी हैं और वहां लिखी भी गईं हैं। एक विशेष बात निकली थी क्रिश्चयन साइन्स की। कुछ क्रिश्चियन इस बात को मानते हैं कि अपनी दृढ़ इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं होसकता। बीमारी कोई चीज नहीं, हाथपैर टूटजाना कोई चीज नहीं, यह सब मन का भ्रम है। दवाइयों से बीमारी का इलाज करना ईसा का धर्म नहीं है, वे तो अपनी मानसिक शक्ति से बीमारों को चंगा कर देते थे।

यह क्रिश्चियन साइन्स का दृष्टिकोण है।

मैंने कहा मनका शरीर पर काफी प्रभाव पड़ता है। पर क्रिश्चियन साइन्स ने उसपर जितना जोर दिया हैं और जो रूप दिया है वह भ्रामक है। वे लोग स्वयं मरते और स्वयं बीमार होते हैं, पर कुछ नहीं कर पाते। इनके देवता ईसा मसीह क्रास में लटके और मरे। बेहोशी की अवस्था में वे क्रास से उतारे गये पर फिर वे प्रचार न कर सके और शीघ्र मरगये। यह बात बाइबिल से ही मालूम होती है। यह सब साइन्स के नामसे अन्धश्रद्धा की नई दूकानदारी है। मानसिक शक्ति साहस आदि का परिचय देसकती है पर भौतिक शक्तियों का प्रतिरोध नहीं कर सकती।

मृतात्मा की शान्ति

६। बजे पार्क में मीटिंग हुई। एक भाई ने पूछा—किसी के मरने

पर शान्ति प्रार्थना क्यों की जाती है ? क्या हमारे प्रार्थना करने से उसे शान्ति मिलती है ?

मैंने कहा—नहीं मिलती। शांति या अशांति तो मनुष्य को अपने कर्म के अनुसार मिलती है पीछेवालों की निन्दा स्तुति से नहीं। परन्तु मरने के बाद किसी के स्मरण में जो कार्यक्रम किया जाता है उसके दो रूप हैं और दोनों के कारण अलग अलग हैं।

एक रूप तो आधुनिक है। जब हम मृत व्यक्ति के स्मरण में सभा करते हैं, स्मारक बनाते हैं आदि। इस रूपका सबसे बड़ा कारण है उच्च जीवन की प्रेरणा लेना।

किसी स्मरणीय व्यक्ति का जब हम स्मरण करते हैं तब हमारे मन पर यह छाप लगती है कि जनसेवक मर कर भी जिंदा रहता है, कुटुम्बहीन होकर भी महाकुटुम्बी होता है, गरीब होकर भी अमीरों से अधिक भाग्यशाली होता है। इसप्रकार जनसेवक बनने और पवित्र जीवन बिताने की हम में भावना पैदा होती है। और जो जनसेवक है, जिन्हें जिन्दगी में सफलता नहीं मिली है, उन्हें इस बात से सन्तोष रहता है कि मरने के बाद लोगों को मेरी कीमत मालूम होगी। इसप्रकार शान्ति प्रार्थना आदि से मृतात्मा को नहीं, किन्तु पीछेवालों को काफी लाभ होता है।

दूसरे तरीके का सम्बन्ध पुरानी अर्थव्यवस्था से है। समाज के आध्यात्मिक विकास तथा राजाओं और श्रीमानों पर नियन्त्रण रखने के लिये पुराने युग में त्यागी विद्वानों का एक ब्राह्मण वर्ग बनाया गया। उसकी जीविका का ऐसा रूप रक्खा गया कि वे जीविका के कारण किसी के नौकर न बन जायँ। क्योंकि नौकर आदमी मालिक पर नियन्त्रण नहीं रख सकता। इसलिये जन्म मरण विवाह आदि के समय उन्हें श्रद्धा पूर्वक देने का विधान बनाया गया। पीछे जब ब्राह्मण वर्ग त्यागी विद्वान न रहा किन्तु जीविका के नाम पर मुफ्त में श्रद्धादान लेता रहा तब लोगों को यह अखरा और वे इनकार करने को तैयार होगये। तब ब्राह्मण वर्ग ने यह भय जनता के मन में पैदा किया कि यदि ब्राह्मणों को दान न दोगे तो तुम्हारे पुरखों को शान्ति न

मिलेगी आदि । तब ब्राह्मणों को दान देने के लिये भी यह मृतात्मा को शान्ति की बात मानी जाने लगी ।

बैरिष्टर जेठालाल जी विसाणा ने पूछा— क्या यह अर्थ व्यवस्था ठीक थी ?

मैं— किसी भी अर्थव्यवस्था का मूल्य उस युग की परिस्थिति को देखकर लगाना चाहिये जिस युग में वह व्यवस्था बनाई गई । आज कम्युनिज्म का युग है और यह अर्थव्यवस्था सामन्तवादी युग की है । सामन्तवाद की कब्र पर पूंजीवाद खड़ा होता है और पूंजीवाद की कब्र पर कम्युनिज्म खड़ा होता है । एक युग की कसौटी पर दूसरे युग की अर्थव्यवस्था की जांच नहीं की जासकती । हां ! उस युग में उस अर्थव्यवस्था से लोगों ने काफी लाभ उठाया था ।

अर्थव्यवस्थाएँ

प्रकरण आजाने से प्रागैतिहासिक काल से आज तक की अर्थव्यवस्थाओं का संक्षिप्त इतिहास सुना दिया ।

प्रागैतिहासिक युग में मानव समूह कुटुम्बों कबीलों में बटा हुआ था । कबीलों में सैकड़ों स्त्रीपुरुष होते थे । सब का एक पिता माता या नायक होता था । सब की सम्पत्ति इकट्ठी रहती थी । सब काम करते थे, कमाई इकट्ठी रखते थे और मिलकर खाते पीते थे । इन्हें अंग्रेजी में कम्यून कहते हैं । कम्युनिज्म शब्द इसी कम्यून शब्द से बना है । योग्यता के अनुसार काम करना और आवश्यकता के अनुसार लेना यही कम्युनिज्म है । जो हमारे घरों में तो है पर किसी देश में नहीं है । रूस में भी कम्युनिज्म नहीं है । आज एक राष्ट्रमें इसका चलाना कठिन है । घरोंमें यह आज चलता है । प्रागैतिहासिक काल में कबीलों में वह चलता था । कबीले ही उस युग में घर के स्थान पर थे और वे ही राष्ट्र थे ।

जब दो कबीलों में लड़ाई होती थी तब जीते कबीलेवाले लोग हारे

कबीलेवालों को खाजाते थे। पर पीछे उन्हें अनुभव ने सिखाया कि इसकी अपेक्षा यह अच्छा है कि इन्हें जीता रक्खा जाय और जिन्दगी भर काम लिया जाय। इसप्रकार दास प्रथा का प्रारम्भ हुआ। और इसी ने कुछ और व्यवस्थित और व्यापक होकर सामन्तवाद का रूप लिया।

पर पीछे मशीन आई उत्पादन के साधन बढ़े तब सम्पत्ति का मालिक एक दूसरा वर्ग पैदा हुआ उसने सामन्तवाद को पछाड़ दिया। इंग्लैंड का कंजर्वेटिव दल सामन्तवाद का प्रतिनिधित्व करता है और लिबरल दल पूंजीवाद का।

लेकिन पूंजीवाद ने बेकारी बढ़ाई इससे समाज की अर्थव्यवस्था फिर चकनाचूर हुई, तब उसकी कब्र पर समाजवाद आया। समाजवाद या सोश-लिज्म कम्यूनिज्म की पहिली मंजिल है। समाजवाद का नियम है योग्यतानुसार काम करो और काम के अनुसार लो, जब कि कम्यूनिज्म का नियम है, योग्यता-नुसार काम करो और आवश्यकता के अनुसार लो।

अर्थव्यवस्था के जो ये भेद हैं उनके अनुसार ही किसी विधान के फलाफल या अच्छे बुरे का विचार किया जाना चाहिये।

रात में ६ बजे से ११ बजे तक श्री नटवरलाल जी पारीख के यहां खास खास शिक्षितों की मीटिंग बुलाई गई थी। श्री. शाकरलालजी पारीख भी उपस्थित थे। यहां मैंने सत्यसमाज की रूपरेखा, उसकी आवश्यकता आदि पर खूब विवेचन किया, शंकाओं का समाधान किया। पार्क की चर्चाओं में इन चर्चाओं का सार आगया है।

यहां एक समाचार सुना कि एक अध्यापक के घर से उनका आफ्रिकन नौकर पांच छः हजार शिलिंग के गहने उठा लेगया। आफ्रिकनों में चोरी करने का भयंकर रोग प्रसार होरहा है। वे रास्ते चलते आदमियों की धोती तक छीनकर नंगा भगाते हैं, मोटर के पहिये तक निकालकर लेजाते हैं। सिनेमा फिल्मों से चोरी करने के नये नये तरीके सीखते हैं। इसप्रकार भयंकर रूप में आफ्रिकन लोगों का चरित्र गिर रहा है।

जिंजा (युगांडा) ता. १९-३-५२

सत्यसमाज की विशेषता

आज पार्क में एक भाई ने पूछा—रामकृष्ण मिशन भी धर्मसमभाव का प्रसार करता है तो सत्यसमाज में विशेषता क्या है ?

मैं—रामकृष्ण मिशनवाले दूसरे धर्मों से द्वेष नहीं करते पर धर्मों में समन्वय का उनका कार्यक्रम नहीं है यहां तक कि जब मैं कलकत्ता के पास उस मिशन के केन्द्र में गया तब वहां सिर्फ रामकृष्ण परमहंस की ही मूर्ति की पूजा देखी। सर्वधर्मसमभावी कोई मंदिर या अन्य कोई बात वहां नहीं थी.। इसके सिवाय सत्यसमाज राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय हर समस्या को जिस प्रकार अप-नाता है वैसा रामकृष्ण मिशन नहीं। सत्यसमाज में अनीश्वरवादी और अनात्मवादियों को भी जगह है। कार्लमार्क्स को भी पैगम्बर मानलिया जाता है जब कि रामकृष्ण मिशनवाले इन बातों से चौंकते हैं। वे भक्ति और आध्यात्मिकता पर ही ज्यादा जोर देते हैं।

उनने पूछा—उस मिशनवाले जो सेवा का काम करते हैं सत्य-समाज में उसको स्थान है कि नहीं ?

मैंने—सेवा को अधिक से अधिक स्थान है। सत्यसमाज की साधु-संस्था का मुख्य ध्येय स्वर्ग मोक्ष अध्यात्म आदि नहीं हैं किंतु जनसेवा है। हां ! अभी सत्यसमाज के पास साधन नहीं हैं कि वह हास्पिटल स्कूल आदि चलावे पर साधन मिलते ही वह इन सब कामों को हाथ में लेगा। जनसेवा का कोई भी कार्य सत्यसमाज के कार्यक्रम के बाहर नहीं है।

अन्त और आदि

एक भाई के प्रश्न के उत्तर में. यह भी कहा कि सत्यसमाज को अपनेपन के मोह के कारण कोई अहंकार नहीं है। राष्ट्रमोह के कारण भी वह दूसरों के साथ अन्याय नहीं करना चाहता। कुछ लोग सोचते हैं कि यूरोप का तत्वज्ञान या विज्ञान समाप्त होनेपर भारत का ज्ञान शुरू होता है।

पर यह अभिमान की बात नहीं है। मोटर लारी की मशीन आदि का निर्माण होजाने पर उसपर लकड़ी का ढांचा खड़ा करने के लिये बढ़ई का काम शुरु होता है, इसलिये बढ़ई का काम महत्व का नहीं होजाता। मेरे लेख लिख लेने पर छापने के लिये कम्पोजीटर का काम शुरु होता है इसलिये कंपोजीटर का काम लेखन मे महत्व का नहीं होता। विज्ञान के बाद कल्पना काम शुरु होता है यह विज्ञान की अपेक्षा कल्पना के महत्व की बात नहीं है।

स्वतन्त्रता और बन्धन

एक भाई ने यह पूछा-कि संगठन आदि क्या स्वतन्त्रता का अपहरण नहीं है?

मैंने कहा—इस दृष्टि से तो मानवता का विकास स्वतन्त्रता के अपहरण का ही इतिहास है। जब हमने झूठ बोलने की स्वतंत्रता छीनी, चोरी करने की स्वतंत्रता छीनी, व्यभिचार करने, मारने पीटने की स्वतंत्रता छीनी तभी मानवता का विकास हुआ। इसलिये स्वतंत्रता की जो कमी मानव-जाति के कल्याण के लिये जरूरी है उसे स्वतंत्रता का अपहरण नहीं कहते किंतु संयम सहयोग सेवा आदि कहते हैं। वह जरूरी है। स्वतंत्रता जब नाशक होती है तब उसे उच्छृंखलता, असंयम पाप आदि कहते हैं उसका अपहरण तो होना ही चाहिये। सहयोग का बंधन पराधीनता नहीं है।

अंत में अध्यापक पारीख जी ने सब से इस बात की प्रेरणा की कि जिन लोगों को स्वामीजी के विचार पसंद आये हैं उन्हें सत्यसमाज का सदस्य बनना चाहिये और सभी जनता को अधिवेशन के कार्य में भाग लेना चाहिये।

रातमें मेरे डेरे पर बैरिष्टर जेठालाल जी विसाणा आये। वे सत्य-समाज अधिवेशन के उपाध्यक्ष हैं, इन्डियन एशोसियेशन के मन्त्री भी हैं। अधिवेशन को सफल बनाने के लिये आपने काफी चर्चा की। आफ्रिका में सत्यसमाज का जो बीजारोपण हुआ है उसे पल्लवित करने में अधिक से अधिक सहयोग देने की बात भी आपने कही।

इससमय श्री द्वारकादास जी तथा ब्रजलाल जी भी मौजूद थे। आपने भी सहयोग का पूरा वचन दिया।

ता. १७ को पार्क की मीटिंग में सत्यसमाज की ही चर्चा रही। उसका विधान वगैरह काफी समझाया।

बैरिष्टर विसारिया जी उत्साह पूर्वक काम कर रहे थे।

१८-३-५२

विवेक की श्रेष्ठता

आज पार्क में यहां के एक हेडमास्टर ने विवेक पर प्रश्न किया। यह चर्चा काफी चली। पार्क की मीटिंग समाप्त होने पर भी रास्ते भर चली। इसके बाद दूसरे दिन कुछ नये आदमियों के आने पर इस चर्चा का सार मैंने सुनाया।

उनका कहना था कि– आपने विवेक पर काफी जोर दिया है पर विवेक तो जैसा चाहे निर्णय कर सकता है उससे सत्य क्या मिलेगा ?

मैं– जैसा चाहे निर्णय का नाम विवेक नहीं है किन्तु क्या कल्याण-कर है क्या अकल्याणकर है, इसके निर्णय का नाम विवेक है। उसमें भले बुरे का ठीक ठीक निर्णय होना जरूरी है।

हेड मास्टर– पर इसका निर्णय हो कैसे ?

मैं— इसकी अनेक कसौटियाँ हैं। सरल कसौटी है आत्मौपम्यभाव। किसी व्यक्ति के साथ कोई भी व्यवहार करते समय यह सोचना चाहिये कि हमारे साथ वैसा व्यवहार किया जाय तो हमें कैसा लगे ? अच्छा लगे तो कर्तव्य, बुरा लगे तो अकर्तव्य। इसके सिवाय सार्वदेशिक सार्वकालिक दृष्टि से अधिकतम प्राणियों का अधिकतम सुख भी एक अच्छी कसौटी है। इसपर कसकर भी कर्तव्याकर्तव्य का निर्णय किया जासकता है। इन कसौटियों पर कसने से जैसा चाहे निर्णय नहीं होता। सत्य निर्णय होता है और यह कार्य विवेक करता है।

मास्टर- आज तो अमेरिका एक निर्णय करता है और रूस दूसरा निर्णय करता है। दोनों अपने अपने पक्ष में बुद्धि का उपयोग करते हैं, अपनी अपनी बात को ठीक कहते हैं तब किसकी बात मानी जाय ?

मैं—दोनों न आत्मौपम्य भाव से काम लेते हैं न विश्वसुख का विचार करते हैं। इसलिये वे ठीक निर्णय नहीं कर सकते। विवेक से काम लेने के लिये निष्पक्ष होना चाहिये, स्वत्वमोह कालमोह आदि का त्याग करना चाहिये। जहां स्वार्थ की प्रबलता हो वहां सत्यनिर्णय कैसे होगा। अमेरिका और रूस के बारे में वही आदमी ठीक निर्णय कर सकता है जिसके मन में न अमेरिका से पक्षपात हो न रूससे। ऐसा निःपक्ष व्यक्ति अगर निर्णय करे तो विवेक की शक्ति का पता लगजाय।

एक दूसरे विद्वान- इनर व्याइस (अन्तः प्रेरणा) को ही निर्णायक क्यों न मान लिया जाय। गांधी जी आदि इस बात पर जोर देते रहे हैं।

मैं—अन्तः प्रेरणा सत्य की नहीं संस्कार की आवाज होती है। एक आदमी संस्कार वश यह समझता है कि बच्चा जो बीमार है वह देवी के कोप से है। यदि देवी को एक बकरा भेंट चढ़ादिया जाय तो देवी का कोप शान्त होजाय और बच्चा अच्छा होजाय। यह भी अन्तः प्रेरणा है पर इसका सत्य से या कल्याण से कोई सम्बन्ध नहीं। हां! ठीक संस्कार होनेपर ठीक प्रेरणा भी मिल सकती है, पर अन्तः प्रेरणा होने से ही कोई ठीक प्रेरणा नहीं होजाती। इसका निर्णय भी विवेक को ही करना पड़ता है।

हेडमास्टर—पर आदमी तो इमोशन से हो काम लेता है। विवेक की वह कभी कीमत नहीं करता है।

मैं—इसीलिये तो उसके भीतर जानवर मौजूद है और संसार सुख की सामग्री रखकर भी नरक बना हुआ है। यह अच्छी बात नहीं है। मनुष्य क्या करता है यह महत्व की बात नहीं है किन्तु महत्व की बात है यह कि उसे क्या करना चाहिये। मैंने पहिले एक लेख लिखा था भावना और बुद्धि। उसमें लिखा था कि भावना राजा की जगह है और बुद्धि मंत्री की जगह।

अधिकार राजा के हाथ है निर्णय की योग्यता मंत्री के हाथ में। राजा अगर मंजूर न करे तो मंत्री का विचार व्यर्थ जायगा। पर जो राजा मंत्री की सलाह पर ध्यान नहीं देता वह बर्बाद होजाता है। मेरा कहना यह है कि मनुष्य को विवेक से काम लेना चाहिये और विवेक का जो निर्णय हो उसी के अनुसार भावना को काम करना चाहिये। धर्म का विषय यह नहीं है कि क्या होता है, किन्तु यह है कि क्या होना चाहिये। विवेक से निर्णय करके कर्तव्य करना चाहिये यही धर्मनीति है।

दूसरे विद्वान—विवेक क्या निर्णय करे ? महाभारत में इतनी हिंसा हुई इसको क्या कहा जाय ?

मैं- हिंसा अहिंसा के बाहरी रूपों से किसी बात का निर्णय नहीं किया जासकता। रामायण और महाभारत में भारी हिंसा होने पर भी आगे पीछे की व्यापक दृष्टि से उसका विचार करना चाहिये। सम्भ्रान्त महिलाओं को भी सभा में नंगी करने की चेष्टा करना और धृतराष्ट्र भीष्म द्रोण आदि का भी चुपरहना इस बात का चिन्ह था कि समाज का पतन हो गया है, ऐसी हालत में हिंसक इलाज अनिवार्य था। अहिंसा की मैंने सात साधनाएं बताई हैं उनमें छः अबोधनी हैं अर्थात् बाहर से भी अहिंसारूप हैं और एक संहारिणी है अर्थात् बाहर से हिंसारूप है पर जनहितकारी होने से वह भी अहिंसा है। किस साधना का उपयोग कहां किसके साथ करना चाहिये इसका विवेक जरूरी है। महाभारत में श्री कृष्ण का समझाना जब व्यर्थ गया और रामायण में भी बार बार समझाने पर भी जब रावण न माना तब संहारिणी से काम लेना पड़ा। इसका परिणाम यह हुआ कि हजारों रावण और हजारों दुर्योधन पैदा न हासके, वे गर्भमें ही विलीन होगये। इससे समाज की काफी रक्षा हुई।

हेडमास्टर- रावण की बहिन की नाक काटना क्या ठीक था ? इसके बाद रावण ने सीता चुराली तो क्या बुरा किया ?

मैं- रावण की बहिन राम से शादी करना चाहती थी। पर राम ने

इनकार किया। रावण की बहिन ने समझा कि सीता होने से राम शादी नहीं कर रहे हैं इसलिये सीता को मार डालने के लिये उसने सीता पर आक्रमण किया। यह बात लक्ष्मण को सहन न हुई तब उसने उसकी नाक काटली। नारी होने के कारण उसे जानसे नहीं मारा।

हेडमास्टर– यह बात हमने नहीं पढ़ी।

मैं— न पढ़ी होगी, पर मैंने पढ़ी है। हमें तो विवेक के निर्णय की शैली समझना है। होसकता है कि रामायण ही कल्पित हो। पर हमें तो यह सोचना है कि जो घटना जिस रूपमें चित्रित की गई है उसमें कर्तव्य अकर्तव्य का निर्णय करने में विवेक किस तरह काम करता है।

हेडमास्टर—पर कैसे भी निर्णय किया जाय विवेक के जरिये मनुष्य पूर्ण सत्य नहीं पासकता।

मैं– पूर्ण सत्य को कोई नहीं पासकता, न पासकेगा। ईश्वर की बात दूसरी है। मनुष्य तो सत्य का एक अंश ही पापाता है। पर जितना भी सत्य मनुष्य पासकता है उसमें विवेक ही सर्वश्रेष्ठ साधन है। यदि विवेक सत्यनिर्णय में चूकजाता है तो अन्तः प्रेरणा आदि उससे सौगुनी चूकती हैं। सत्यासत्य निर्णय का सर्वश्रेष्ठ साधन विवेक ही है।

हेड मास्टर—हरएक आदमी के पास विवेक नहीं होता।

मैं—नहीं होता है, तो इसका मतलब यह कि हर एक मनुष्य सत्य की खोज नहीं कर पाता। कौन खोज कर पाता, कौन नहीं कर पाता, यह दूसरी बात है पर जो सत्य की खोज कर पाता है वह विवेक से ही कर पाता है यह निश्चित है।

दूसरी बात यह है हरएक मनुष्य को हम जितना विवेकहीन समझते हैं उतना विवेकहीन वह होता नहीं है, कमी होती है उसमें निःपक्षता की। परम्परा के संस्कार और मोह के कारण वह सत्य को स्वीकार नहीं करता, स्वार्थान्धता के कारण भी वह विवेक से काम नहीं लेपाता। अन्यथा

मनुष्य यदि इच्छा करे तो वह काफी सत्य को समझ लेता है। यह होसकता है कि वह व्याख्यान न देसके, शायद वह सत्य को ढूंढ भी न सके, किन्तु सत्य के प्रतिपादन करने पर वह सत्य की जांच कर सकता है और यह समझ सकता है कि इससे जनता की भलाई है, सब की भलाई है। इतना विवेक अधिकांश मनुष्यों में होसकता है। बौद्धिक अयोग्यता इसमें बाधक नहीं होसकती, पक्षपात स्वार्थान्धता ही इसमें बाधक होते हैं।

इस काम में मनुष्य दूसरों से भी मदद लेता है पर मदद लेने में भी विवेक से काम लेना चाहिये। विवेक के बिना मदद लेना भी बेकार है। कोई दूसरों से मदद लेने का अर्थ इतना ही करे कि जिसका कपड़ा भगवां हो या जिसके हाथ में झंडा हो उसका कहना सत्य, या जो संस्कृत में लिखा हो वह सत्य, तो यह सब व्यर्थ होगा। मनुष्य को चाहिये कि वह इन कारणों से किसी बात का निर्णय न करे। किन्तु फलाफल का विचार करके सत्यासत्य का निर्णय करे। विवेक का इतना अंश भी मिल जाय तो भी काफी है।

हेडमास्टर—पर अब मनोवैज्ञानिक लोग कहने लगे हैं कि तर्क से बुद्धि से या विवेक से सत्य का पता नहीं लगता।

मैं—मैं पहिले कह चुका हूं कि मनुष्य को सत्य का पूरा पता लग ही नहीं सकता। पर जितना भी पता लगता है उसका कारण विवेक है। कौन मनोवैज्ञानिक क्या कहता है इसकी चिन्ता व्यर्थ है। दुनिया में हर विचार के विद्वान हैं, मनोवैज्ञानिक भी हैं, जो एक दूसरे के विरुद्ध गवाही देते हैं, उन्हें हम यहां जज नहीं बनासकते।

हेडमास्टर—पर पुराने ऋषि महर्षियों ने जो सत्य की खोज की है वह खोज विवेक नहीं कर सकता। हमें तो उन्हीं की बात मानना चाहिये।

मैं—पर किसकी बात मानें। म. बुद्ध कहते हैं कि ईश्वर मानोगे तो मिथ्यात्वी होजाओगे और म. ईसा म. मुहम्मद कहते हैं कि यदि ईश्वर न मानोगे तो नरक में जाओगे। हर देश के, हर धर्म के सैकड़ों ऋषि महर्षि हैं

जो एक दूसरे के विरुद्ध बात करते हैं। किसकी बात किस तरह ठीक है इसका निर्णय विवेक ही कर सकता है।

हेडमास्टर—पर मानवसमाज विवेकी कभी नहीं बनसकता वह तो इसी तरह चलेगा।

मैं– समाज में अविवेकी रहें यह सम्भव है पर विवेकियों की संख्या बढ़ेगी यह निश्चित है। मानव समाज हजारों वर्षों में विवेक के जरिये ही आगे बढ़ा है। और उसने आदमियत सीखी है।

हेडमास्टर—पर यह सब ऋषि महर्षियों के आदेश का परिणाम है।

मैं—और ऋषि महर्षियों के आदेश विवेक के परिणाम हैं।

हेडमास्टर– मनुष्य स्वार्थी है वह विवेक से क्या समझेगा?

मैं– स्वार्थ ने विवेक के सहयोग से परमार्थ का रूप लेलिया है। स्वार्थ पर जब दूरदर्शिता से विचार किया जाता है तब वह परमार्थ बनजाता है। एक जमाना था जब मनुष्य हारे हुए लोगों को मारकर खाजाता था पर उस ने सोचा कि इस तरह मारकर खाने की अपेक्षा उसे जिन्दा रखकर उससे काम लेने में ज्यादा लाभ है, इस तरह उसने स्वार्थ के लिये हिंसा रोकी। इसी तरह परस्पर विश्वास, सहयोग आदि के लाभ उसे स्वार्थ के लिये ठीक जचे। इस तरह मनुष्य परमार्थी बना। इस प्रकार विवेकपूर्ण स्वार्थ ने परमार्थ को या धर्म को जन्म दिया। यह सब विवेक का परिणाम है। इसलिये सत्य-समाज में विवेक को अधिक महत्व दिया गया है।

रातमें बैरिष्टर विसाखा जी तथा कुछ और विद्वान भाई डेरे पर आये। अधिवेशन सम्बन्धी कार्यवाई की चर्चा हुई। विवेक पर भी चर्चा हुई। संक्षेप में मैंने अपना दृष्टिकोण बतलाया।

विसाखा जी ने लालजी भाई से कहा कि इसमें सन्देह नहीं कि आज मानव समाज के कल्याण के लिये सत्यसमाज सर्वोत्तम संस्था है।

ता. १९-३-५२

आज पार्क में बहुतसे भाइयों ने कहा कि कल की चर्चा हम नहीं सुनपाये। कुछ ने कहा अधूरी सुनपाये। इसलिये कलकी चर्चा का सार सुनाया साथ ही स्पष्टीकरण की दृष्टि से यह भी कहा— रास्ता देखने के लिये सब से अच्छी चीज आंख है। अब यदि कोई कहे कि आंख तो काफी धोखा देती है, कभी सांप भी रस्सी मालूम होता है इसलिये आंख भ्रामक है, आंख रास्ता नहीं दिखा सकती। रास्ता चलने के लिये दूसरे की उँगली पकड़ना ठीक है। पर हमें यह न भूलना चाहिये कि हम जिसकी उंगली पकड़ेंगे वह भी तभी हमें राह पर लेजासकेगा जब उसके आंख होगी।

सत्यपथ की आंख विवेक है। किसी कारण यदि कोई विवेक से ठीक काम नहीं लेपाया तो इसमें विवेक का कुसूर नहीं, न वह व्यर्थ है। विवेकहीन, या कम विवेकी आदमी दूसरे का सहारा भी लेसकता है पर जिसका सहारा लेगा वह विवेकी होकर ही रास्ता बतायगा। ऋषि महर्षि तीर्थंकर अवतार पैगम्बर आदि सब विवेक के द्वारा ही सत्यपथ की खोज करते हैं। निःपक्ष होकर साधारण मनुष्य विचार करे तो अपनी वर्तमान ज्ञानशक्ति से ही सत्य को समझने में बहुत कुछ समर्थ होसकता है।

आज जो कुरूढ़ियां हैं, मनुष्य गुमराह होरहा है इसके लिये परिवर्तन की जो आवश्यकता है वह सब विवेक से ही सुधारना सम्भव है। मैं कहूं कि मैं सुपर ह्यूमन हूँ इसलिये आप मेरी बात मानो तो आप क्यों मानने लगे? ऐसे सैकड़ों आदमी सुपर ह्यूमन होने का दावा करनेवाले आपको गली गली मिलजायंगे आप किस किस की बात मानेंगे? मानेंगे वही जो बात आपको जचेगी। और जचने न जचने का काम आपका विवेक करेगा।

विवेक का अपमान करने से ही आज समाज की दुर्दशा है। वेषधारी लूटते हैं, धर्म के नामपर धन की और शक्ति की काफी बर्बादी होरही है, यह सब तभी रुक सकती है जब आप विवेक को महत्व दें।

आज का हरएक सम्प्रदाय शास्त्र पर विशेष जोर देता है। मुसल-

मान होने के लिये कुरान को सर्वश्रेष्ठ और निर्भ्रान्त मानना जरूरी है, ईसाई होने के लिये बाइबिल को सर्वश्रेष्ठ और निर्भ्रान्त मानना जरूरी है, इसी प्रकार अन्य धर्मों की बात है। पर सत्यसमाज में एक विशेषता है। वह सत्यसमाजी होने के लिये सत्यामृत को सर्वश्रेष्ठ और निर्भ्रान्त मानने की बात नहीं कहता, वह विवेक को प्रथम स्थान देता है। हां! जहां विवेक काम न दे वहां सत्यामृत से मदद लेने की बात कहता है। सत्यसमाजी होने लिये मानव कल्याण की चौबीस बातें या चौबीस जीवन सूत्रों पर विश्वास करना जरूरी है, किसी ग्रन्थ के अन्ध अनुकरण करने की नहीं।

नये संसार का निर्माण करना सत्यसमाज का ध्येय है और इसके लिये मनुष्य को अधिक से अधिक विवेकी बनजाना चाहिये।

एक संसार

इसके बाद एक भाई ने पूछा कि आप दुनिया को एक बनाना चाहते हैं पर दुनिया एक कैसे बनेगी?

मैंने कहा— पिछली लड़ाई ने बतादिया है कि जो जीता वह हारा, जो हारा वह मरा। इंग्लेण्ड जीता है फिर भी सारी दुनिया से उसका वर्चस्व नष्ट होगया है। लंदन की सड़कों पर अब अधनंगे लोग घूमते हैं। इस प्रकार आदमी चाहता है कि अब लड़ाई न हो। कुछ राजनैतिक मूर्ख या दुःस्वार्थी लोग लड़ाई चाहते हैं पर अधिकांश लोग लड़ाई से दूर भागते हैं। इसलिये दुनिया भर की पंचायत यू. एन. ओ. बनाई गई है जिसमें सभी सरकारों के प्रतिनिधि हैं। निःसन्देह अभी आदमी के भीतर बैठा हुआ हैवान या शैतान मरा नहीं है इसलिये राष्ट्रसंघ मरा और यू. एन. ओ. लड़खड़ा रहा है। सम्भव है यह भी मरे। पर आदमी अब जागगया है। इसलिये फिर वह ऐसी संस्था बनायेगा। राष्ट्रसंघ से यू. एन. ओ. अच्छा है, इससे अच्छा आगे कोई संगठन बनेगा या यही सुधरेगा। उससमय इसमें जनता के सीधे प्रतिनिधि होंगे जो कि जनसंख्या के अनुपात से होंगे, सरकारों का तो एक एक प्रतिनिधि ही होगा। उसके हाथ में परराष्ट्र, रक्षा, अन्तर्राष्ट्रीय

यातायात, करेंसी, बैंकिंग, न्याय, आदि अनेक विषय रहेंगे । और जिस प्रकार आज सरकार जनता से कहती है कि तुम कानून को अपने हाथ में न लो, न्यायालय में आओ, उसी प्रकार वह विश्व की पंचायत राष्ट्रीय सरकारों से कहेगी कि तुम कानून को हाथमें लेकर लड़ो मत, विश्व न्यायालय से अपना न्याय मांगो ।

इस ओर मानव ने अपना कदम बढ़ा दिया है, उसमें जो अड़चन पड़ रही है वह रंग राष्ट्रभेद से मानवता के कृत्रिम टुकड़े होने के कारण । इन भावनाओं को दूर हटाने की जरूरत है । सत्यसमाज का यह मुख्य कार्य-क्रम है ।

आज लोगों को यह बात कठिन मालूम होती है । पर एक दिन वह सरल होगी । एक दिन भारत के प्रान्त अलग अलग स्वतंत्र राष्ट्र ही थे, पर धीरे धीरे सब ने एक राष्ट्रीयता का अनुभव किया । तब गुजराती या काठियावाड़ी गांधी किसी दूसरे प्रान्तवाले के लिये पराया न रहा, बंगाली सुभाष भी पराया न रहा, युक्तप्रान्तीय जवाहर भी पराया न रहा । मनुष्य का यातायात जैसा होगया है, आर्थिक और राजनैतिक सम्बन्ध जिसप्रकार परस्पर जकड़गया है, उसे देखते हुए यह सहज ही कहा जासकता है कि एक दिन आज के राष्ट्र प्रान्त बनेंगे और मानवराष्ट्र या पृथ्वी राष्ट्र का निर्माण होगा ।

हां ! उसकेलिये सब को प्रयत्न करने की जरूरत है सो वह करना चाहिये । सत्यसमाज तो इस राह में अपनी सारी शक्ति लगादेना चाहता है ।

कादर भाई के यहां

पूर्व आफ्रिका के मुसलमानों में कादरभाई का स्थान सर्वश्रेष्ठ है । इनमें धन का, सेवा का और प्रभाव का पूरा मिश्रण हुआ है । एक दिन ये राष्ट्रीय वृत्ति के व्यक्ति थे । पर सन् ४७ के विभाजन के बाद यहां के प्रायः सभी हिन्दू मुसलमान साम्प्रदायिक होगये हैं । कादरभाई भी इसके अपवाद

नहीं है। अब वे पूरे मुसलिम लीडर है। पर कानूनी लीडर नहीं है। खूब काम करते हैं।

वे मुम्बासा में रहते हैं पर जिंजा में भी उनका एक सुन्दर और विशाल बंगला है। पांच सात दिन से वे जिंजा आये थे। बैरिस्टर महेश्वरी ने सोचा-यदि मेरा परिचय कादरभाई से हो तो उन्हें मालूम हो कि भारत से आनेवाले साधु सभी शिलिंग नहीं बटोरते, न सभी साम्प्रदायिक होते हैं। उन दोनों की बातचीत हुई। और तय हुआ कि जब मैं प्रवचन के लिये पार्क की तरफ आऊं तब रास्ते में कादरभाई के बंगले पर चाय पान का कार्यक्रम रक्खा जाय।

आजकल कादर भाई एक "ईस्ट आफ्रिकन मुसलिम वेलफेयर सोसाइटी" बनाकर उसके द्वारा यहां की आफ्रिकन जनता में काफी काम करते हैं। उसकी रिपोर्ट कादरभाई जी ने मेरे पास भेजदी थी। और मैंने वह पढ़ भी ली थी। इससे कादर भाई जी की कर्मठता तथा दिल की लगन का खूब परिचय मिला।

रिपोर्ट से तथा पीछे की बातचीत से मालूम हुआ कि इस कार्य के लिये वे पचास लाख शिलिंग चन्दा कर खर्च कर चुके हैं। मुख्य काम तीन मालूम हुए। १- आफ्रिकन लोगों को मुसलमान बनाना, २- उनके लिये जगह जगह मसजिदें बनवाना, ३- उनके लिये स्कूल बनवाना। इसके लिये वे पड़ोसी सूदान और मिस्र से भी सम्बन्ध जोड़ रहे हैं। करीब ढाई लाख आफ्रिकनों को मुसलमान बना चुके हैं, और जल्दी ही पांच लाख बनाने की आशा है।

यद्यपि इस तरह के साम्प्रदायिकता के प्रचार को मैं ठीक नहीं समझता, फिर भी कादर भाई के बारे में मुझे आदर हुआ। अपनी श्रद्धा के अनुसार वे अधिक से अधिक करते तो हैं, पर यहां के हिन्दू तो इतने कर्महीन और अदूरदर्शी हैं कि उन्हें हाथ के पास के शिलिंग के सिवाय कुछ नहीं सूझता। यह अदूरदर्शिता उनके भविष्य को बिलकुल अन्धकारमय बना रही है

इसका उन्हें पता नहीं है।

खैर! समय पर बैरिष्टर भट्टजी कार लेकर आगये। यहां आगत स्वागत के बाद चर्चा हुई। चाय तो मैं पीता नहीं इसलिये उनके यहां दूध और बिस्कुट लिये।

कादर भाई जी की बातें काफी उदारता की थीं। वे हिन्दू मुसलिम भेदभाव से दुखी थे। नेताओं की स्वार्थपरता को धिक्कारते थे। फिलहाल हिन्दू मुसलिम एकता के मामले में निराश थे। सोचते थे कि दस पन्द्रह वर्ष में कम्यूनिज्म आकर ही दोनों के धर्मों का नाश करेगा और एकता पैदा करेगा। फिर भी वे धर्म को जरूरी समझते थे। आफ्रिकन लोगों की एकता के कायल थे। कम्पाला के दंगे का संस्मरण सुनते हुए बोले कि उस समय आफ्रिकन मुसलमानों ने अपने एशियाई मुसलमानों के साथ मुरौवत नहीं की, इसी प्रकार ईसाई आफ्रिकनों ने गोरे ईसाइयों के साथ मुरौवत नहीं की, उनका कहना था कि धर्म की बात दूसरी है पर इस समय सब आफ्रिकन जाति के हित का सवाल है। उनकी यह एकता हमारे लिये अनुकरणीय है। आखिर पच्चीस पचास वर्ष बाद यहां की सत्ता आफ्रिकनों के हाथमें आयगी। अंग्रेजों से वह यहां भारतीयों के हाथ में नहीं आनेवाली है। जरूरत थी कि सब इंडियन एक होते। इंडिया में हिन्दू मुसलमान लड़े तो उनने कुछ पाया भी। पर यहां तो किसी को कुछ मिलनेवाला नहीं। अब अंग्रेजों को हमें उत्तर देने की जरूरत नहीं होती। हिन्दू को उत्तर मुसलमान देता है और मुसलमान को उत्तर हिन्दू देता है, अंग्रेज मुसकराता है।

ये सब बातें उनने मेरी बातचीत के बीच बीच में कहीं थीं। यहां मैंने उनको इकट्ठा लिख दिया है।

मैंने भी उनसे कहा। न कोई मुसलमान है न हिन्दू। अल्लाह को मुसलमान नहीं मानते, और ईश्वर को हिन्दू नहीं मानते। मानते तो दुनिया में पाप न होते। दोनों परमात्मा को फुसलाने की और धोखा देने की कोशिश करते हैं। अच्छे मुसलमान को राम की जय बोलना जरूरी है और अच्छे

हिन्दू को मुहम्मद की जय बोलना जरूरी है। कुरान में सब मुल्कों और सब कौमों के पैगम्बरों को मानने की आज्ञा है। दुनिया को अब एक बनाना है। आफ्रिका में तीनों का समन्वय करना है। मैं तो विश्व का नागरिक हूँ। न हिन्दू न मुसलमान, यों सभी कुछ। मेरी जाति सिर्फ आदमी है और धर्म सत्य। सब को मिलकर संसार से गरीबी और भेदभाव नष्ट करना है। दुनिया में आज चीजों की जरूरत है, चीजों को बनाने की सामग्री है और बनानेवाले भी मौजूद हैं पर उनका मेल नहीं मिल रहा है। शक्तियाँ आपस के संघर्ष में और तुच्छ स्वार्थपरता में खर्च होरही हैं। अगर मिलकर काम किया जाय, कुछ उदार बना जाय तो इसी जमीनपर बहिश्त आसकता है।

हिन्द के कुछ संस्मरण, जहाज के मुहम्मद जयन्ती के संस्मरण आदि भी सुनाये। एशिया में कम्यूनिष्टों की बाढ़ का भारत के स्वतंत्र होने से कितना गहरा सम्बन्ध है इसपर भी कहा। ये सब बातें भी बातचीत के बीच बीच में हुईं।

मेरी बातों से कादर भाई ने और उनके दत्तक पुत्र ने काफी प्रसन्नता प्रगट की। और आदर प्रेम के साथ बिदाई दी।

जिंजा (युगांडा) २०-३-५२

आज पार्क में स्थानीय सत्यसमाज का चुनाव हुआ। उससमय जिंजा में सत्यसमाजियों की संख्या छत्तीस होगई थी। बैरिस्टर बिसाणा जी अध्यक्ष, नटवरलाल जी पारीख मंत्री, लालजी भाई पटनी कोषाध्यक्ष तथा कुछ अन्य भाई कार्यकारिणी के सदस्य चुनेगये।

रातमें मेरे डेरे पर बैठक हुई उसमें अधिवेशन में पास होने योग्य प्रस्तावों का मसविदा बनाया गया।

विवेक और भावना

आज पार्क की बैठक में उन्हीं हेडमास्टर ने धर्मों की चर्चा फिर छेड़ी। आज वे नया संसार की पुस्तक लाये थे। उस पुस्तक के कुछ अवतरण

पढ़कर उनने कहा कि इसमें स्वामी जी ने ऐसा चित्रण किया है कि कामिल को आराम न करना चाहिये, कचहरी में विश्रान्ति-गृह होना चाहिये, टेलीफोन से कचहरी का काम कराया जासकता है, पर ये बातें कैसे होसकती हैं ? सब मनुष्य बराबर नहीं होसकते, आदि। इस प्रकार स्वामीजी की ही पुस्तक का खण्डन रीजनिंग (विवेक) से होगया, तब विवेक निर्णायक कैसे होसकता है ?

मैंने कहा— नया संसार में जो चित्रण मैंने किया है वह ठीक है या बेठीक, इसका विचार करने के पहिले यह बात तो सिद्ध हो ही जाती है कि उसका निर्णय रीजनिंग (विवेक) ही कर रहा है। रीजनिंग यदि सत्यभक्त की रचना में दोष निकाल सकता है तो रीजनिंग ही निर्णायक कहलाया। तब आप उसे अस्वीकार क्यों करते हैं ?

हेडमास्टर— मैं उसे अस्वीकार नहीं करता।

मैं— यहां प्रधान निर्णायक स्वीकार करने न करने से मतलब है। यों भावना और विवेक दोनों की सत्ता को आप भी मानते हैं और मैं भी। अन्तर इतना ही है सत्यासत्य के निर्णय में आप भावना की प्रधानता मानते हैं मैं विवेक की।

हेडमास्टर—हां। यही बात है। भावना से मैं जो चाहे काम कर सकता हूं और विवेक कुछ नहीं कर सकता।

मैं—हां। भावना से आप चोरी डकैती भी कर सकते हैं और त्याग सेवा भी। पर इसमें क्या ठीक है और क्या गैरठीक, इसका निर्णय विवेक ही कर सकता है। इसलिये सत्यासत्य के निर्णय में मैं विवेक की प्रधानता मानता हूं।

हेडमास्टर—पर भावना विवेक को अस्वीकार कर सकती है।

मैं—अवश्य कर सकती है। मैं बार बार कह चुका हूं कि भावना राजा की जगह है उसका अधिकार बड़ा है और विवेक मंत्री की जगह है। मंत्री की बात को राजा अस्वीकार कर सकता है पर निर्णय करने की योग्यता

मंत्री की ही अधिक होती है।

हेडमास्टर—भावना राजा की जगह है और विवेक मंत्री की जगह है इसे आप रीजन से कैसे सिद्ध करेंगे ?

मैं— यह तो आप मानते हैं कि भावना ही जीवन पर शासन करती है। इसलिये उसका स्थान राजा की जगह है और जीवन का हित अहित किसमें है यह निर्णय विवेक करता है, पर भावना के आगे उसकी चलती नहीं है इसलिये उसका स्थान मंत्री का कहलायगा।

हर दिनकी अपेक्षा आज पार्क में अंधेरा अधिक होगया था इसलिये लोगों ने तय किया कि इस प्रश्न का बाकी विवेचन कल के लिये रक्खा जाय।

पर रास्ते में भी चर्चा होती रही। मैंने बतलाया कि जगत् में जो बड़े बड़े आविष्कार हुए हैं, बड़ी बड़ी क्रांतियां हुई हैं, उनके रूप का निर्णय विवेक ने ही किया है। वही पुराने बातों की बुराई बतासका और वही नया रास्ता सुझा सका। आज रूढ़िग्रस्त समाज का कायाकल्प विवेक ही कर सकता है। न्यायालय का निर्णय भी विवेक से होता है।

यहां मैंने यह भी कहा कि कुछ लोग समझते हैं कि कुछ भी कारण पेश कर देना विवेक है। अंग्रेजी के रीजन शब्द का भी ऐसा ही अर्थ लगाते हैं। पर विवेकका अर्थ कुछ भी कारण पेश कर देना नहीं है किन्तु सत्य असत्य की ठीक ठीक छानबीन करना है। अंग्रेजी में इतने भाव को बतानेवाला कोई दूसरा शब्द नहीं है इसलिये उसे रीजनिंग शब्द से कहा जाता है।

मेरे साथ यहां के एक करोड़पति श्रीमान भी चल रहे थे उनने भी इन बातों का समर्थन किया। और एक सिक्ख विद्वान ने मेरी बात का समर्थन करते हुए कहा—

भावना तो अपने ही काम की चीज है उससे दुनिया के सामने अपना आशय कुछ भी सिद्ध नहीं किया जासकता, दुनिया के काम तो विवेक ही चलाता है।

जिंजा (युगांडा) २१-३-५२

आज पार्क में विवेक और भावना के बलाबल के बारेमें कल की अधूरी चर्चा फिर शुरु हुई। मैंने कहा— भावना से तो अपनी रुचि अरुचि या इच्छा अनिच्छा ही बतलाई जासकती है। वह ठीक है कि गैरठीक यह निर्णय भावना नहीं कर सकती। यह शक्ति विवेक में ही है। वही नाना प्रमाणों से निर्णय करके सत्यासत्य का पता लगाता है। कल जो कहा गया था कि नया संसार में जो चित्रण मैंने किया है वह ठीक होने पर भी विवेक से कट जाता है इसलिये विवेक निर्णायक नहीं होसकता" परन्तु यह कहना ठीक नहीं है। नया संसार में जो चित्रण किया गया है वह किस प्रकार ठीक है इसका विवेचन मैं अभी कर देता हूं।

हेडमास्टर ने कहा— नया संसार की बात जाने दीजिये। उसके विवेचन की जरूरत नहीं है। अब तो विवेक और भावना पर ही बात करना चाहिये।

मैंने कहा— जाने दीजिये। जो नया संसार पढ़ेंगे उन्हें उस चित्रण की सचाई का पता लगजायगा। यहां तो मैं इतना ही कहना चाहूंगा कि सत्यभक्त की बात का विरोध विवेक से ही किया जासकता है भावना से नहीं। 'मैं सत्यभक्त की बात पसन्द नहीं करता' इस प्रकार अपनी बात कह देने से कुछ निर्णय नहीं होता, किन्तु विवेक नापसन्दगी का कारण दुनिया के सामने पेश करदेता है तब निर्णय होता है। इसलिये मैं तत्त्वनिर्णय में विवेक को अधिक महत्त्व देता हूं। भले ही उससे मेरी ही किताब का खण्डन क्यों न होता हो।

हेडमास्टर— निर्णय तो एक्सपीरियंस करता है।

मैं— एक्सपीरियंस तर्क आदि सब विवेक की ही सामग्री है। सभी प्रमाण विवेक की सामग्री हैं। एक्सपीरियंस विवेक के बाहर नहीं है। अनुभवों या एक्सपीरियंसों के निचोड़ को तर्क कहते हैं। यहां जो चर्चा चल रही है वह एक्सपीरियंस और विवेक की प्रतिद्वंदिता की नहीं है किन्तु [illegible]

और विवेक की प्रतिद्वंदिता की है। उसमें मैं बता चुका हूं कि भावना तत्त्व-निर्णयमें समर्थ नहीं है विवेक समर्थ है। मनुष्य के पास जितने साधन हैं उनमें तत्त्वनिर्णय के कार्य में विवेक प्रधान है।

हेडमास्टर— विवेक तो भावना का गुलाम है। एक राजा ने नौकर से कहा कि बैंगन बहुत अच्छे होते हैं। नौकर ने कहा—हां हुजूर, तभी तो उसे भगवान का श्याम वर्ण मिला है। लेकिन बैंगन खानेसे जब राजा के पेट में दर्द हुआ तब उसने नौकर से कहा कि बैंगन तो बड़े खराब होते हैं। तब नौकर ने कहा— हां हुजूर, तभी तो उसके सिर पर कांटे हैं। तब राजा ने कहा— उस दिन तो तू बैंगन अच्छे बताता था आज खराब बताता है। नौकर ने कहा — हुजूर मैं आपका नौकर हूँ बैंगन का नहीं। इसप्रकार हम देखते हैं कि विवेक तो जैसी भावना हो वैसा ही बोलने लगता है। युक्तियाँ तो हर पक्षमें मिल जाती हैं, इसलिये उनसे क्या निर्णय होगा ?

मैं—जैसा चाहे बोलने का नाम न विवेक है न तर्क। विवेक तो हित अहित या सत्य असत्य के ठीक ठीक निर्णय करनेवाले ज्ञान का नाम है। बैंगन के दृष्टांत में विवेक या तर्क कुछ नहीं है। तर्क तो साध्य साधन के नियत सम्बन्ध के आधार पर खड़ा होता है। जैसे धुआं और अग्नि का एक नियत संबंध है जिससे धुआं के सद्भाव से अग्नि के सद्भाव का ज्ञान होता है, और अग्नि के अभाव से धुआं के अभाव का ज्ञान। ऐसा नियत संबंध बैंगन के रंग का अच्छाई के साथ नहीं है और कांटे का बुराई के साथ नहीं। काला रंग भगवान का है इसलिये काली काली सभी चीजें-काला सांप आदि-अच्छी होती हैं और अच्छाई के बिना काला रंग नहीं होसकता ऐसा नियम नहीं है, तब नौकर की बात में तर्क और विवेक को जगह कहां रही ? कुछ भी ऊट पटांग बोल देना तर्क और विवेक नहीं है।

बैरिस्टर भट्ट ने बीच में ही टोका—जगत में जितने अनित्य पदार्थ हैं सब असत् है इसलिये धुआं और अग्नि सभी असत् कहलाये इसलिये उनसे असत् का नियम बनाना बेकार है।

मैंने विनोद में कहा–कि जो कुछ अनित्य है वह सब असत् है तो बैरिस्टर भट्ट जो कुछ बोल रहे हैं वह भी अनित्य है इसलिये असत् है, तब यहां उस असत् का क्या मूल्य किया जाय ?

अन्त में मैंने हेडमास्टर की बात को लक्ष्य में लेकर कहा कि–विवेक ही वह वस्तु है जो मैदान में खड़ा होसकता है, तर्क वितर्क कर सकता है, आगे पीछे सोच सकता है। यों तो ईश्वर को छोड़कर मनुष्य के सारे ज्ञान अधूरे हैं पर उनमें जो भी सब से अधिक समर्थ है वह विवेक है।

चर्चा समाप्त हुई। अँधेरा होगया था इसलिये लोग उठे। पर जिस तरह चर्चा समाप्त हुई उससे हेडमास्टर बहुत क्षुब्ध हुए। और क्षोभ में कहने लगे–आपसे किसी का भला न होगा, सत्यसमाज से किसी का भला न होगा, आपके साहित्य में कोई मौलिकता नहीं है। इधर उधरके शास्त्र की बातें बटोरकर लिखदी हैं।

साथ में जो सम्भ्रान्त नागरिक चल रहे थे उनने इस प्रकार का अपमान करने के लिये हेडमास्टर को दृढ़ता से रोका। मैंने सरलता से उत्तर दिया–यदि इधर उधर के शास्त्रों से मैंने बातें बटोरकर साहित्य लिखा है तब तो यह अच्छी ही बात है। शास्त्र जब अच्छे हैं तब मेरी बटोरी बातें भी अच्छी कहलाईं। उनपर बिगड़ने की इतनी जरूरत क्या है ?

मेरी बात से हेडमास्टर और क्षुब्ध हुए। और बोले—नहीं, आपने कचरा किताबों से सामग्री बटोरी है।

लोगों ने यहां भी काफी विरोध किया, और भाषा पर लगाम लगाने की बात कही। एक भाई ने पूछा–आपने स्वामी जी का क्या क्या साहित्य पढ़ा है।

हेडमास्टर ने कहा—मैंने एकाध किताब पर नजर डाली और छोड़दी। ऐसा रद्दी साहित्य मैं क्या देखता ?

वे भाई— तो बिना देखे ही आप ने कैसे जान लिया कि यह

साहित्य कचरा किताबों को बटोरकर बनाया गया है !

(पहिली बार जब मैं जिंजा आया था उस समय हाइस्कूल में गया था वहां आपने मेरी काफी किताबें खरीदी थीं और अमिरगीता आदि कई किताबें आपने पढ़भी ली थीं । इसलिये जब मैं हाइस्कूल में प्रवचन करने गया तब आपने मेरे साहित्य की काफी तारीफ की थी और हेडमास्टर की हैसियत से मेरी और मेरे विचारों की भी काफी तारीफ की थी। पर आज वे रोषमें इतना भान भूले हुए थे कि उन्हें आगे पीछे का, उचित अनुचित का, कुछ भी ध्यान न था । आपके स्नेही लोग भी उनके रवैये पर आश्चर्य और खेद प्रगट कर रहे थे तथा रास्तेभर विरोध भी करते रहे)

खैर ! उनका जो अपमानजनक रवैया था उसमें वे कुछ भी बोलरहे थे । इसकी मुझे चिन्ता न थी । मैं सिर्फ सभ्य भाषा में युक्तियुक्त उत्तर देता रहा ।

इसी सिलसिले में जब मैंने यह कहा कि मुझे धर्म के नाम पर कोरी हवाई बातों से मतलब नहीं है, मेरा धर्म तो यह है कि सब को भरपेट रोटी मिले और सभी आनन्द से रहें ।

इस पर भी हेडमास्टर क्षुब्ध होकर बोले कि—आपने कितनी रोटियाँ बाँटीं ।

इस बात का विरोध भी लोगों ने किया पर मैंने यही उत्तर दिया कि रोटियाँ तो महावीर बुद्ध ईसा नानक मार्क्स आदि ने भी नहीं बाँटीं । वे तो रोटियों का रास्ता बताने आते हैं, उसकी व्यवस्था कराने आते हैं । फिर बाँटने का काम तो कोई भी मामूली आदमी कर देता है ।

अन्तमें चिढ़ते चिढ़ते एक आक्षेप उनने यह किया कि आप दुनिया भरमें भटकते फिरते हैं, लेक्चर देते फिरते हैं, आप कैसे महात्मा हैं ? महात्मा लोग इस तरह भटकते नहीं फिरते ? दुनिया उन्हीं के द्वार पर आती है ।

मैंने कहा-राम कृष्ण महावीर बुद्ध ईसा मुहम्मद जरथुस्त नानक आदि सभी लोग गली गली भटके हैं। पर इस कारण से उनकी महत्ता छिनती नहीं है बल्कि बढ़ती है। महामानव दुनिया की सेवा करने आते हैं पुजने के लिये नहीं। हां! कुछ लोग पुजने के लिये एक जगह बैठ भी जाते हैं और उनके द्वार पर आकर लोग उन्हें पूज भी जाते हैं, पर वे पुजने वाले भी जाप उन्हीं लोगों का करते हैं जो जनसेवा के लिये गली गली भटके थे।

इसप्रकार आज की चर्चा काफी क्षोभपूर्ण वातावरण में समाप्त हुई। कुछ लोगों को इससे काफी बेचैनी हुई। कुछ ऐसा भी मालूम हुआ कि शायद अधिवेशन के समय अशांति हो। पर रातको तथा २२ ता. के दिन को इस विषय का काफी इन्तजाम कर लिया गया इससे कोई अशान्ति नहीं हुई। अधिवेशन २२-२३-२४ मार्च सन् ५२ को अच्छी तरह समाप्त हुआ।

२६- अधिवेशन

सार्वदेशिक सत्यसमाज सम्मेलन का आठवां अधिवेशन जिंजा में काफी समारोह के साथ हुआ। स्थान की सजावट आदि ठीक ढंग से कीगई थी। ता. २२ मार्च ५२ को ठीक चार बजे कार्य शुरु हुआ। लालजी भाई ने 'सभी भाषाएं तेरे नाम' आदि प्रार्थना गाई। बाहर से आये हुए सन्देश पढ़े गये। सन्देश भारत से काफी संख्या में पहुंचे थे। इसके सिवाय पूर्व आफ्रिका तथा दक्षिण आफ्रिका से भी आये थे। इसके बाद स्वागताध्यक्ष श्री बैरिष्टर बिसाणा जी का भाषण हुआ।

बैरिष्टर बिसाणा जी का भाषण

आज जिंजा निवासियों का सद्भाग्य है कि सार्वदेशिक सत्यसमाज जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का ८ वां अधिवेशन हमारे शहर में हो रहा है। आज विश्व में धार्मिक, सामाजिक राजनैतिक आर्थिक विषमता के कारण द्वंद्व मचा हुआ है उसे किस तरह मिटा करके एक समन्वयात्मक मार्ग निर्माण किया जासकता है यही सत्यसमाज का लक्ष्य है। आज सब विचार सारे मनुष्य

समाज के हित अनहित को कसौटी बना करके ही किये जासकते हैं। संकुचित वृत्ति द्वारा विश्व की समस्याओं को हम हल नहीं कर सकते। आफ्रिका में जब हम सब अपना देश छोड़कर आए हैं तब यह आवश्यक होजाता है कि हम सब मिलकर एक नई संस्कृति के निर्माण में सहयोग करें, जिसके लिये स्वामी सत्यभक्त जी ने अपना सारा जीवन ही लगा रक्खा है। उसमें अपना हित तो है ही, साथ साथ विश्व कल्याण का मार्ग भी है, यही व्यावहारिक है।

पिछले दिनों में स्वामी सत्यभक्तजी के विचारों से हम सब भली भांति परिचित हुये हैं। अंध परम्पराओं को थोड़ी देरके लिये अगर हम अलग रखकर सत्यसमाज के याने स्वामी सत्यभक्तजी के विचारों का मनन करें तो विवेक उसे कबूल कर लेता है। आज दुनिया को एकता में गूंथने वाले संगठनों की जरूरत है। हम चाहते हैं कि सत्यसमाज का प्रचार दुनिया के कोने कोने में पहुंचे और स्वामीजी के सत्यसंदेशों से विश्व की मानवता जागे और दुनिया में भाईचारा पैदा होवे। सत्यसमाज ही एक ऐसी संस्था है जो आजकी सब समस्याओं को ठीक तरह से हल कर सकती है। आशा है आप सब इससे लाभ उठायंगे।

स्वागताध्यक्ष के भाषण के बाद मेरा सन्देश रूपमें एक भाषण हुआ। उसका सार यहां दिया जाता है।

मेरा सन्देश

सत्यसमाज मनुष्यमात्र की सभी समस्याओं को सुलझाने का ध्येय रखनेवाली अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है। साधनों के अभाव से अभी तक इसका प्रचार क्षेत्र हिन्दुस्थान ही रहा, पर इस वर्ष आफ्रिका के जिंजा म्बराारा कबाले मसाका कम्पाला म्बाले टरोरो रुहेंगिरि (बेलजियम् राज्य) आदि स्थानों में सत्यसमाज का प्रचार हुआ, शाखाएँ बनीं और आज सार्वदेशिक सत्यसमाज सम्मेलन का आठवां अधिवेशन यहां हो रहा है। इसप्रकार इसे बाहरी दृष्टि से भी अन्तर्राष्ट्रीयता का रूप आरहा है। पर अभी इसे बहुत फैलाना है। सन्देशों और कार्यक्रम की उदारता या विशालता के अनुसार इसका क्षेत्र भी

विचार करना है। अब हम संकुचित दृष्टि से किसी समस्या का विचार करके उसे ठीक तरह से हल नहीं कर सकते। दुनिया अब एक बाजार या एक नगर के समान ही हो गई है। उसके आर्थिक और राजनैतिक सम्बन्ध तो एक दूसरे में ओतप्रोत हो ही गये हैं किन्तु एक ही भूखंड में भिन्न भिन्न संस्कृति या और धर्मों की जनता बस गई है इसलिये सांस्कृतिक सम्बन्ध भी मिल जुल गये हैं। इस प्रकार आज मानव जीवन का शरीर विशाल होगया है। अब यदि उसके अनुरूप परमात्मा न हो तो शरीर लाश की तरह होजाय। हमें मानवसमाज के जीवन की सारी समस्याएँ सब के हित का ध्यान रखते हुए हल करना है। सत्यसमाज का कार्यक्रम ऐसा ही है जैसा कि इसके चौबीस जीवन सूत्रों से आप के ध्यान में है ही।

पर सत्यसमाज अमरपट्टा लिखाकर नहीं आया है। अनन्त काल तक जगत् के उद्धार के लिये सत्यसमाज जरूरी है ऐसा दावा सत्यसमाज नहीं करता। उसे तो अमुक कार्यक्रम पूरा करके विलीन होना है। मैंने "नया संसार" में इस बात का चित्रण किया है कि सौ डेढ़ सौ वर्ष बाद समाज का कायाकल्प हो गया है। उस समय धर्म सम्प्रदायों की जरूरत नहीं रहगई। इसलिये सत्यसमाज की भी जरूरत नहीं रही और उसका विसर्जन कर दिया गया। वह अवस्था कभी भी आये पर सत्यसमाज अपने अस्तित्व को बनाये रखने की चिन्ता नहीं करता, उसे अमुक कार्यक्रम पूरा करके विलीन होने की चिन्ता है। वह चाहता है कि वह कार्यक्रम जल्दी से जल्दी पूरा हो, स्वर्ग इसी जीवन में उतरे और उसे विलीन होने का अवसर मिले।

दुख इस बात का है कि दुनिया में जो धर्मसंस्थाएँ सुख शांति के लिये आई थीं वे आज दुःख अशांति का कारण बनी हुई हैं। उनके नामपर हिन्दुस्थान के टुकड़े टुकड़े होगये हैं, आफ्रिका में रहनेवाले मुट्ठीभर भारतीयों के भी टुकड़े होगये हैं। इससे पता लगता है कि धर्म आज विकार है। जहां सच्चा धर्म है वहां ऐसे झगड़े या दुःख [illegible] हो नहीं सकते और [illegible] धर्म [illegible] अपने स्थान पर मानवता की उन्नति करने को [illegible]।

अगर उनमें आज विरोध मालूम होता है तो उसका मुख्य कारण देश काल परिस्थिति का भेद है। हम अगर इस भेद को समझ जायं तो धर्मों में विरोध न मालूम हो। सत्यसमाज का धर्म-समभाव इसी प्रकार विवेक-पूर्ण है। वह हर एक धर्म की सेवा का मूल्य स्वीकार करता है, उसके प्रति कृतज्ञता प्रगट करता है, और उसकी जो बात आज के युग के लिये जरूरी या उपयोगी नहीं है उसे नम्रता के साथ अस्वीकार करके भी उस धर्म की निन्दा नहीं करता। धर्म अहंकार की पूजा के लिये नहीं है किन्तु जीवन को पवित्र और उदार बनाने के लिये है। सत्यसमाज के अनुसार कार्यक्रम बनजाने पर संसार भर के धर्म उसी प्रकार समन्वित होजायगे जिसप्रकार पुराने जमाने में शैव वैष्णव और शाक्त सम्प्रदाय हिन्दू धर्म के रूप में समन्वित होगये थे।

सत्यसमाज ऐतिहासिक दार्शनिक तथा व्यावहारिक दृष्टि से सर्व धर्म समन्वय का ऐसा रूप पेश कर रहा है जिससे सभी धर्म विभिन्नता रखते हुए भी परस्पर पूरक और सहयोगी के रूप में नजर आने लगें। ये मानवसमाज को तोड़नेवाले नहीं, जोड़नेवाले बनें।

सत्यसमाज ने जो सर्व धर्म समभावी सत्यमन्दिर का रूप उपस्थित किया है उसका ध्येय जन साधारण के भी हृदय में धर्म समभाव पैदा करना है। अफ्रिका में सारी संस्कृतियों के समन्वय के लिये जगह-जगह ऐसे मन्दिरों का बनाना जरूरी है।

सत्यसमाज के साहित्य में उन सब द्वन्द्वों का समाधान किया गया है जो ईश्वर अनीश्वर द्वैत अद्वैत तथा अन्य विधि विधानों से सम्बन्ध रखते हैं। युगांडा, [illegible] केनिया में इन सब प्रश्नों पर विस्तार से प्रकाश डाल चुका हूं। अब तो आप लोगों को उसे अमल में लाने का अधिक से अधिक प्रयत्न करना है।

सत्यसमाज के कार्यक्रम में जो दूसरी बात है वह है मनुष्यमात्र की एक जाति की। जहां तक खानपान का सम्बन्ध है इस बारे में आप काफी उदार होगये हैं [illegible] चाहिये कि [illegible] की ओर खिसकते हैं। जहाज

में बैठते ही वहां की व्यवस्था ने आपके चौका के नियम ढीले कर दिये। बाद में जब आफ्रिका में आये तो यहां के जंगलों में इक्के दुक्के भारतीयों को एक ही झोपड़ी या तंबू में रहना पड़ा और संकटों का सामना करते हुए मौत के साथ युद्ध करना पड़ा। संकट के और अकेलेपन के समय में साधारण जाति-पांति ही क्या हिन्दू मुसलमान के भेद भी नहीं चल सकते थे। इसप्रकार छूआछूत ही नहीं, चौका के नियम ही नहीं, खाने पीने की चीजों के भेद तक ढीले पड़ गये। पर दुर्भाग्य यह कि जातिपांति की बीमारी से छुटकारा नहीं मिला। वह बीमारी मन के भीतर तो पूरी तरह है ही, पर विवाह शादी आदि में बाहर भी दिखाई देती है। इतना ही नहीं, इस बीमारी ने भारतीय समाज के टुकड़े टुकड़े कर दिये हैं। लोहाणा और पटेलों में कैसा द्वन्द्व है और स्त्री समाज तक में वह कैसा घुसगया है, मसाका में यह देखकर मैं हैरान हो गया। कहीं कहीं तो ऐसे द्वन्द्वों के नामपर छुरियां तक चलचुकी हैं। कोई प्रचारक अमुक जातिवालों के यहां ठहर जाय तो अमुक जातिवाले न आयें ऐसी घटनाएं भी अनुभव में आचुकी हैं। सारे पूर्व आफ्रिका में आप लोग मुश्किल से दो लाख होंगे। उसमें भी मुसलमान काफी हैं। पर एक तरह से मुट्ठी भर होकर भी आप टुकड़े टुकड़े बने हुए हैं। यहां आप लोगों का रहन सहन कुछ ऐसा है कि जाति भेद का अन्तर किसी भी तरह नहीं झलकता। सत्यसमाज के सिद्धांतों के अनुसार मनुष्यमात्र की एक जाति है। खानपान विवाह में उनके योग्य गुण ही देखे जाते हैं। इस विषय में उपयोगी शर्तें और जितनी चाहें रक्खी जायं पर उनके पूर्ण होजाने पर जातिपांति का विचार व्यर्थ है। दुनिया की, खासकर आफ्रिका की संस्कृति और जातीय समस्याएं हल करने के लिये सत्यसमाज का सर्वजाति समभाव अत्यन्त उपयोगी और आवश्यक है। इसमें जातिपांति के गुणों की सारी गुंजाइश है और उसके सारे दोषों का निराकरण है। आखिर एक न एक दिन आफ्रिका की एक सम्मिलित संस्कृति का निर्माण होगा ही, परन्तु उसको समझदारी के साथ समन्वित किया जाय तो अच्छा है।

तीसरी बात सामाजिक सुधारों की है। पर इस विषय में अबतक

होनेके नाते कुछ सुधार तो अपने आप हो ही गये हैं। परन्तु वे हो ही गये हैं, किये नहीं गये। करने के लिये अभी बहुत काम बाकी है। मुझे तो इस बात का आश्चर्य हुआ जब यहां की स्त्रियों में पर्दा की प्रथा भी देखी। विवाह विधि के आडम्बर भी ज्यों के त्यों रखने की कोशिश की जाती है। जिस प्रकार का अपव्यय इन मामलों में किया जाता है वह भी एक चिन्ता की बात है। हो सकता है कि कुछ दिन तक आप यह बोझ ढो भी सकें लेकिन इससे आपकी कमर इतनी टेढी होजायगी कि फिर जरूरी और साधारण बोझ ढोना भी आपके लिये कठिन होजायगा।

सौभाग्य से यहां के बहुत से भारतीयों की आर्थिक स्थिति सन्तोष-जनक है। परन्तु जैसा भविष्य आरहा है उसमें ऐसी ही स्थिति रहना कठिन ही है। होसकता है कि कल आपको घर के लिये बॉय भी न मिले या आपकी स्थिति बॉय रखने लायक ही न रहे। ऐसी अवस्था में हमें ऐसे ही तरीकों से काम करना चाहिये जिससे आजके माफिक कल भी हमारी इज्जत बनी रहे। साथ में उन लोगों को भी असुविधा न हो जिनकी स्थिति आज भी असंतोष-जनक है। फिर सम्पत्ति कितनी भी हो हमारे सामने जो काम पड़ा है उसके लिये वह नहीं के बराबर ही है। इसलिये विवेक से काम लीजिये और अपना और सबका, आज का और कल का हित जिसमें हो वही काम कीजिये।

आप जब यहां पर आए थे तब बहुतसी बीमारियों के इन्जेक्शन लेने पड़े थे। क्या ही अच्छा होता अगर इन सामाजिक बीमारियों के इन्जेक्शन भी लेकर आए होते। ऐसा होता तो आफ्रिका में दृश्य ही दूसरा होता और वह आजकी अपेक्षा बहुत ही अच्छा होता।

हर काममें विवेक पर ही मैं ज्यादा जोर देता हूं। इसका कारण यह है कि विवेक ही जीवन को परिस्थिति के अनुसार व्यवस्थित बनाने का रास्ता बताता है। वह दुर्लभ भी नहीं है। सिर्फ थोड़े निर्मोह होने की जरूरत है।

हमारे जीवन की जितनी समस्याएं हैं उन सबको किस तरह हल किया जाय इसीका कार्यक्रम सत्यसमाज है।

सत्यसमाज परलोक की बातों पर जोर नहीं देता। वह इसी दुनिया की बातें कहता है। क्योंकि इस दुनिया की समस्याएं सुलझाने पर परलोक की सब समस्याएं अपने आप ही सुलझ जाती हैं। यहां हमारे सामने काफी काम पड़ा है। दुनिया भरमें हमारा ताल्लुक स्थापित हो गया है। एक जगह की घटना का दूर से दूर और भीतर से भीतर भी काफी असर पड़ता है, ऐसी हालत में हम दुनिया से अलग नहीं रह सकते। अब तो धार्मिक सामाजिक राजनैतिक और आर्थिक सभी दृष्टियों से दुनिया को एक ही मानकर चलना होगा। सबके हित में अपना हित, यह उदार नीति सिर्फ परमार्थ ही नहीं है, स्वार्थ भी है।

सत्यसमाज इसका एक व्यावहारिक और व्यवस्थित कार्यक्रम है। आफ्रिका में उसका बीजारोपण भी हुआ है। अगर यह यहां फले फूले तो आफ्रिका तो उसका लाभ उठायेगा ही, परन्तु दुनिया के अन्य भागों पर भी इसका अच्छा असर पड़ेगा।

आशा है कि सत्यसमाज का यह आठवां अधिवेशन सत्यसमाज के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त करेगा।

इसके बाद अधिवेशन के अध्यक्ष आर. बी. सिरदा का भाषण हुआ।

अध्यक्ष के भाषण का सार

आज संसार में विज्ञान ने काफी प्रगति की है। आज ऐसी बहुतसी चीजें हैं कि जो सौ वर्ष पहिले कल्पना में भी न आसकती थीं। बटन दबाने से ही आज हजारों मील प्रकाश फैलाया जासकता है, रेडियो से हजारों मील का संवाद सुना जासकता है। लेकिन इन सब से मनुष्य सुखी होने के बदले दुखी हुआ है। धनवान पैसा बढ़ाने की चिन्ता से और गरीब रोटी कमाने की चिन्ता से ऊपर उठता ही नहीं। चारों तरफ बीमारी और परेशानी है।

दुनियाभर की इन मुसीबतों को दूर करने के लिये स्वामी सत्यभक्त

जी ने एक नई आवाज उठाई है और उसके अनुसार जिला में कुछ लोग, जिनकी गिनती इस दुनिया की गिनती में अभी बूंद बराबर ही है, इस बात का विचार करने के लिये बैठे हैं कि वे दुख किस तरह दूर किये जासकें।

विचार होता है कि ऐसा महाभारत काम मुट्ठीभर लोग किस तरह पूरा कर सकते हैं? परन्तु दुनिया का इतिहास इस बात का गवाह है कि जगत के बड़े बड़े कामों के आरम्भ में मुट्ठीभर लोग ही थे। इसलिये उसमें निराश होने का कोई कारण नहीं है।

आज पहलेके समान दुनिया छोटी नहीं रही है। पहले तो एक देश से दूसरे देश जाने में बड़ी बड़ी तैयारियां करनी पड़ती थीं जब कि आज सरलता से सब जगह जासकते हैं। और जाने के बाद वहां वे स्थायी निवासी भी बन सकते हैं। हम लोग भी सब इसी तरह से यहां आये हैं। परन्तु देश से हजारों मील दूर आकर के भी परस्पर में जैसा चाहिये प्रेम और सहयोग नहीं कर पाए।

स्वामी जी का मुख्य सन्देश परस्पर में ही नहीं किन्तु इस देश के रहनेवालों के प्रति भी प्रेम रखने का है।

एक दूसरे के धर्मों का आदर करने से अपना भी आदर होता है और झगड़े दूर होते हैं। जब कि हम एक दूसरे के धर्म के नाश की बातें करते रहते हैं तब इससे संघर्ष और अशान्ति ही बढ़ती है। अगर समभाव से काम लिया जाय तो धर्मों के सारे वैर विरोध दूर होसकते हैं। इसमें कठिनाई कुछ नहीं है।

हर एक धर्म ने दुनिया के लिये किसी न किसी अच्छे विचार की भेंट दी है। जैसा कि ईसा मसीह ने बताया है कि सब मनुष्य बराबर हैं, सब में ईश्वर का अंश है। इसलिये क्रॉसपर चढ़ाते समय भी उनने किसी को शाप नहीं दिया। उनने गरीब अमीर के अन्तर को मिटाने की कोशिश की और कहा कि जिसके दिल में गरीबों पर मुहब्बत है वही स्वर्ग पासकता है। अमीरी

को इसने कोई महत्त्व नहीं दिया। बल्कि यहां तक कहा कि सुई के छिद्र में से यदि ऊंट निकल जाय तो अमीर भी स्वर्ग के दरवाजे में से निकल सकता है। इसप्रकार ईसाई धर्म में ऐसी कोई बात नहीं है जिससे हम उस धर्म की निन्दा करें। जिसने दुनिया की भलाई के लिये अपनी जान दी उसे हम किस प्रकार खराब कह सकते हैं?

मुसलमानों को देखिये, उनकी नमाज में किसी भी तरह के ऊंच नीच का भाव नहीं होता। नमाज पढ़ते समय गरीब से गरीब मुसलमान के पीछे शाहंशाह को भी खड़ा होना पड़ता है। और झुकते समय शाहंशाह का भी सिर अपने आगे खड़े हुए किसी गरीब के पैरोंपर होता है। इस तरह इस-लाम ने मनुष्य मात्र की बराबरी का सुन्दर पाठ पढ़ाया।

आर्य समाज ने जातिपांति तोड़ने में और अनेक कुरूढ़ियों से हिन्दू समाज को मुक्त करने में काफी काम किया है।

हिन्दू धर्म अपनी विशालता और सहिष्णुता के लिये बेजोड़ ही है। इसकी उदारता ने इसके भीतर लाखों विधर्मियों को समालिया। अपनी बातों को न माननेवाले बुद्ध को भी इसने ईश्वर का अवतार कहा, इसप्रकार इसकी उदारता असाधारण है।

सिक्ख धर्म पंजाब में शुरु हुआ। हिंदू मुसलमान दोनों का समन्वय किया। नानक जी ने सब देशों में भ्रमण करके मानवता का सन्देश किया। सार बात यह है कि कोई धर्म किसी का नुकसान नहीं करता और न नुक-सान करने की शिक्षा देता है। हर एक धर्म ने अपने अपने समय में लोगों का भला ही किया है।

जिंजा का यह सद्भाग्य है कि स्वामीजी जैसे महापुरुष आफ्रिका में आए और सब धर्मों को मिलाने का झण्डा खड़ा किया। और आफ्रिका में भी जिंजा को ही उनने पसंदगी दी, इसे मैं जिंजा का बड़ा से बड़ा भाग्य मानता हूं।

स्वामीजी का मुख्य सन्देश यही है कि सब धर्मों का आदर कर और सब हिल मिलकर रहो। और यही सन्देश फैलाने के लिये स्वामीजी

अपना सर्वस्व न्यौछावर कर चुके हैं। अनेक कठिनाईयां इस रास्ते में होने पर भी उनने अपना प्रयास छोड़ा नहीं है।

स्वामीजी का दूसरा सन्देश है जातपांत तोड़ने का। यदि हम जात पांत के बाड़ों को तोड़कर सब में मेलजोल न कर सकें और आफ्रिकनों के के साथ भी पूरे दिल से हिलमिल न सकें तो शीघ्र ही बिस्तर बांधकर चले आने का समय आजायगा। यहां के सब लोगों के लिये तो सत्यसमाज बहुत ही जरूरी चीज है क्योंकि यह सब को सब तरह से जोड़ने की कड़ी है। आशा है आप सत्यसमाज को यहां फैलाकर इसका पूरी तरह लाभ लेंगे।

अन्त में स्वामीजी का अन्तःकरण से आभार मानता हूँ कि उन्होंने जिंजा को अपने ज्ञान और सेवा का खूब लाभ दिया।

प्रस्ताव और भाषण

अधिवेशन में कुल छह प्रस्ताव हुए थे। एक था रंग राष्ट्र जाति के भेद मिटाकर संसार में एक सामाजिकता के प्रचार करने का। दूसरा था आफ्रिका में जगह जगह धर्म समभावी मन्दिर बनवाने का। तीसरा था आफ्रिका में ऐसे ही प्रचारकों को प्रोत्साहन देने का, जो वहां की समस्याओं को हल करने में मददगार हों। चौथा था सत्यसमाज का साहित्य भिन्न भिन्न भाषाओं में लेजाने का। पांचवां था आफ्रिकन जनता को सत्यसमाज में आने का अनुरोध करने का। छट्ठा था नई प्रबन्धकारिणी के चुनाव का।

प्रस्तावों पर प्रस्तावकों और समर्थकों के भाषण तो हुए ही, साथ ही दो विशेष भाषण भी हुए। एक मेरा भाषण सत्यमंदिर के बारे में हुआ।

सत्यमन्दिर पर मेरा भाषण

सत्यमंदिर के प्रस्ताव के समय बैरिष्टर भट्ट जी ने दो शंकाएं उपस्थित की हैं।

१— अयोध्या से आये हुए एक संस्कृत संदेश में कहा गया है कि "स्वामी सत्यभक्तजी महाराज आफ्रिका की दलित और मानवता के अधिकारों

से वंचित, जनता को अपने सत्योपदेशामृत से जीवनदान देने में समर्थ होंगे ऐसी शुभकामना करता हूँ। " यहां आफ्रिका की जनता को दलित कहना क्या ठीक हैं ?

२— सत्यमंदिर की यहां जरूरत क्या है ? काम चलाने के लिये यहां जगह है ही, फिर और आडम्बर क्यों बढ़ाना ?

उत्तर १– मैंने आफ्रिका को मानवता का संगम तीर्थ कहा है क्योंकि यहां पर आफ्रिका एशिया और यूरोप की तीन मानवधाराओं का सम्मेलन हुआ हैं। मैं इन तीनों धाराओं को आदर की दृष्टि से देखता हूं और उनके समन्वय से ही आफ्रिका को तीर्थ समान मानता हूँ। मेरी या सत्यसमाज की दृष्टि में रंग के कारण कोई ऊंच-नीचता का भाव नहीं है। आफ्रिकनों के बीच में आकर के तो मैंने यहां तक कहा कि भारत काले रंग के कारण किसी को छोटा नहीं समझता। भारत ने तो अपने विष्णु भगवान को भी काला माना है इसलिये काले रंग से घृणा करने का सवाल ही नहीं रहता। हां ! यह बात जरूर है कि यहां की मूल निवासी जनता दुनिया के संपर्क में न आने से बहुतसी बातों में पिछड़ गई इसलिये जब वह दुनिया के संपर्क में आई तब शुरु शुरु में वह पीड़ित या दलित के समान हुई। यह स्वाभाविक था। उसको उस अवस्था से उठाना सत्यसमाज अपना परम कर्तव्य समझता है। इसमें न तो कोई अपमान की बात है और न अपमान की दृष्टि से अयोध्या के विद्वान भाई ने यह संदेश भेजा है।

उत्तर २– सत्यमन्दिर के बारे में विवेचन करते हुए कहा कि-सत्य-मन्दिर की उपयोगिता सिर्फ जगह में नहीं है किन्तु धर्म समभाव का वह पाठ पढ़ाने में है जो बड़े बड़े विद्वान लोग भी बोल बोल करके भी नहीं पढ़ पाते। समभाव अच्छी चीज है यह मानकर के भी एक मुसलमान राम के सामने नहीं झुकपाता। उसी प्रकार एक हिन्दू मुहम्मद के नामपर नहीं झुकपाता, न मसजिद में जा पाता है। हर धर्मवाले के दिल में एक तरह की झिझक पाई जाती है कि जहां अपने देव नहीं है वहां कैसे जाया जाय ? सत्यमन्दिर

इस झिझक को दूर करके समभाव को व्यावहारिक बनाता है। सत्यमन्दिर में एक ही वेदी पर सब धर्मों की मूर्तियां या प्रतीक हैं।

हर धर्मवाला वहां अपने देव के दर्शन के लिये जाता है और उसी के बगल में बैठे हुए दूसरे धर्म के देवों के सामने भी झुकना सीख जाता है। इसप्रकार उसके मनमें जो झिझक और संकोच होता है वह धीरे धीरे इससे दूर होजाता है। वहां जाकर लोग यह भी सीख जाते हैं कि सब धर्मों का श्रोत एक ही है और सब धर्मों के पैगम्बर मनुष्य समाज का भला करने वाले हैं। इसलिये उन सब के प्रति हमें नम्रता कृतज्ञता आदि बताना चाहिये। पंडित लोग जो समभाव की बातें करते हैं उससे जनता के जीवन में तब तक कोई फर्क नहीं हो पाता जब तक वह अपनी चमड़े की आंखों से देखने लायक कोई समभाव का कार्यक्रम नहीं देखती।

यों तो सभी धर्मों में समभाव का संदेश है पर समभाव का कोई स्थूल कार्यक्रम न होने से गाड़ी अड़ी हुई है। भूत काल में आर्य अनार्यों का संघर्ष सिर्फ पंडितों की एकता के लेक्चरों से दूर नहीं हुआ। किन्तु जब शिव तथा विष्णुके सम्मिलित मंदिर बनाये गये तब वह द्वंद समाप्त हुआ। सत्यमंदिर को दुनिया के सब धर्मों के संघर्ष इसी तरह दूर करना है और उनका व्यावहारिक कार्यक्रम जनता के जीवन में उतारना है। इसलिये सत्यसमाज का सत्य-मंदिर सब जगह जरूरी है।

बहुत से लोग मूर्ति के नामसे घबराते हैं, वे समझते हैं कि वह मूर्खता की निशानी है। पहले तो यह गलत है, अगर ठीक भी हो तो भी निशानी उड़ा देने से मूर्खता नहीं उड़ जाती। मुसलमानों में मूर्ति का उपयोग नहीं होता पर इसीलिये मूर्ति का उपयोग करनेवालों की अपेक्षा क्या उनका धार्मिक विकास अधिक है?

मूर्तिपूजकों में भी तत्वज्ञानियों की बहुलता मिल सकती है और मूर्तिविरोधियों में भी तत्वज्ञानियों की कमी होसकती है।

बहुत से लोग इस तरह का गलत तर्क लगाया करते हैं कि आदर्श

के सींग नहीं होता इसलिये यदि बैल का सींग तोड़ दिया जाय तो बैल आदमी बन जाय । यह तर्क बिलकुल गलत है । खिलौना छुड़ा लेने से बच्चा जवान नहीं हो जाता । वह तो जवान होनेपर अपने आप छूट जाता है । यही बात मूर्ति के बारे में भी है । जब मनुष्य बहुत ऊंचे दर्जे का तत्वज्ञ भी हो जाता है तब मूर्ति का उपयोग करने में शिथिल होजाता है । पर इससे जन साधारण के सामने मूर्ति का कार्यक्रम न रखा जाय तो वह और भी किसी बुरी योजना को अपना लेगा ।

मुसलमान लोग मूर्ति नहीं रखते पर इससे वह मूर्तिपूजा छोड़ न सके । संगे असवद या काबा के अन्य स्थानों को तो वे पवित्र मानते ही हैं किन्तु कब्र, ताजिया आदि न जाने कितने रूपों को उन्होंने अपना लिया है । इसलिये सत्यसमाज यह कहता है कि मूर्तिपूजाके दोष मूर्ति के हटाने से न जायँगे किन्तु उस का ठीक ढंग से उपयोग करने से ही जायँगे ।

एक बार मेरे यहाँ एक बहुत बड़े नेता आये । समभाव के कार्यक्रम की तारीफ करने के बाद भी उनने मूर्ति आदि के बारे में कुछ इतराज किया । मैंने उनसे कहा कि क्या इस मामले में आप लोगों के हृदयों को वेक्यूम (बिलकुल खाली) कर सकते हैं ? वे थोड़ी देर रुके, फिर सोचकर बोले— नहीं, ऐसा नहीं किया जासकता । तब मैंने कहा, तो आप उन्हें और रद्दी चीज को अपनाने के लिये विवश करते हैं । प्यासे आदमी को अगर आप साफ पानी नहीं पिला सकते तो इसका अर्थ यह है कि वह गंदा पानी पिये । जनता में जब भावनाएँ हैं और जब वह किसी प्रतीक या चिन्ह से प्रभावित होती है तब उसके सामने प्रतीक उठा देने की अपेक्षा सुधरा हुआ प्रतीक ही रख देना ठीक है, तभी वह मूर्तिपूजा के दोषों से बच सकेगा ।

सत्यमन्दिर में मूर्तिपूजा का कोई आडम्बर नहीं होता, और न वहाँ कोई बंधा हुआ कार्यक्रम होता है । न वहाँ कुछ चढ़ाया जाता है, न चढ़ाने से किसी को रोका जाता है, सिर्फ गंदगी या अन्य प्रकार की नुकसानी का बचाव ही किया जाता है, प्रार्थना करनेवाले वहाँ प्रार्थना करते हैं । नमस्कार करने-



सर्वधर्म समभावी सत्यमन्दिर की वेदी (सत्याश्रम वर्धा)

वाले नमस्कार करते हैं। कुछ भी न करना चाहें वे भी समभाव का पाठ पढ़कर चले जाते हैं। भगवान को खिलाना, सुलाना, जगाना, आदि आडम्बर यहाँ नहीं है। भावनाओं को प्रेरणा यहाँ कैसे मिले इसी दृष्टि से सब मूर्तियों को एक वेदी पर रखा गया है। इसीलिये तो एक भाई को उत्तर देते हुए मैंने कहा था कि मैंने मूर्तिपूजा दूर करने के लिये ही मूर्तियाँ रक्खी हैं। बहुत से लोग आज मूर्ति की ही पूजा करते हैं। मेरा कहना है कि मूर्ति की पूजा न करो, मूर्ति से पूजा करो। मूर्ति से ईश्वर की याद करो और कुछ उसके गुण ग्रहण करो। इस तरह सत्यमन्दिर मूर्तिका सदुपयोग करना सिखाता है और समभाव का पाठ तो पढ़ाता ही है। इन दोनों दृष्टियों से जगह जगह सत्य-मन्दिर बनाना जरूरी है।

२—श्री द्वारिकादास जी (ममूभाई)

(ये जिजा के बड़े बहुश्रुत विद्वान हैं। इतिहास पुरातत्त्व दर्शन आदि के अच्छे ज्ञाता हैं। आपने तीसरे प्रस्ताव पर एक लिखित वक्तव्य दिया था। उसका हिन्दी अनुवाद यहां दिया जाता है—)

"यह महत्वपूर्ण प्रस्ताव उपस्थित करके मैं विशेष रूप में दो शब्द बोलना चाहता हूँ। क्योंकि संस्कृति और धर्म प्रचार के नाम से पिछले पांच वर्षों में यहां जो कुछ प्रचार किया गया है उसका आघात प्रत्याघात और आर्थिक धार्मिक सामाजिक जीवन पर जो असर पड़ा है वह मैं देख सका हूं और अमुक अंश में अनुभव भी कर सका हूँ। आर्थिक दृष्टि से देखें तो साधारण स्थिति के मनुष्य पर इसका भारी बोझ पड़ा है। यह सब लोग अच्छी तरह अनुभव भी कर चुके हैं। पर अपने सारे सामाजिक जीवन पर जो गम्भीर असर पड़ा है इसका खयाल कदाचित बहुत थोड़े व्यक्तियों को होगा। कुछ को खयाल आया भी हो तो भी इसको उचित महत्व दिया हो ऐसा नहीं मालूम होता।

कुछ दिन पहिले केन्या के एक दैनिक पत्र ने भिक्षुकों के वे अंक प्रगट किये थे जो प्रचार कार्य के नाम पर पूर्व आफ्रिका की भारतीय जनता से

मुट्ठी में से खिसका लिये गये हैं। वे अंक चौंकानेवाले थे और लाखों की संख्याओं में थे। इस पैसे का क्या हुआ यह भी हम नहीं जानते। जब कि दूसरी तरफ हम देखते हैं कि यहां की कितनी ही उपयोगी संस्थाएं पैसे तथा साधनों के अभाव में ऊर्ध्व श्वास लेरही हैं। क्या शहर और क्या गांव ? जहां देखो वहां अपनी संस्थाएं मुख्य रूपमें धन के अभाव से मरती मरती या मौत के किनारे बैठी बैठी जी रही हैं। भले ही वह इंडियन एसोसियेशन हो, मन्दिर हो, लायब्रेरी हो या कोई शिक्षण संस्था हो। सभी की करीब करीब सरीखी दुर्दशा है। किसी भी एक गांव का उदाहरण लें— बाहर से आया कैसा भी प्रचारक धर्म के या ऐसे ही किसी दूसरे प्रचार के बहाने गांव की हैसियत से भी अधिक रकम सरलता से इकट्ठी कर लेगा। चिमटा बजाते ही चौदह या चालीस हजार इकट्ठे कर झोली भर लेगा। परन्तु उसी गांव में यदि एकाध खास मन्दिर हो, छोटीसी पाठशाला हो जिसे पैसे की जरूरत हो तो उसके लिये वार्षिक खर्चे के लिये व्यवस्थापकों को फां फां मारना पड़ता है। अरे ! देश में से कोई एकाध दुआ गानेवाला भाट आया हो तो वह भी चादर बांधकर पैसे लेजायगा। पर गांव की शिक्षण संस्था को पैसा के अभाव में बन्द करना पड़ेगा। कोई छोटे गांवों की शिक्षण संस्थाओं की शोचनीय दशा मैंने अपनी आंखों देखी है। जब कि हमारे परलोक के प्रतिनिधि तो ऐसे स्थानों पर भी खूब सफल होते हैं।

१९४७ में भारत को स्वतंत्रता मिली कि तुरंत ही आफ्रिका की गमार भारतीय जनता का उद्धार कर डालने के लिये संस्कृति और धर्म प्रचारकों के टोले के टोले आफ्रिका पर टूट पड़े। वे सब रंग ढंग के पाठ पढ़ाते आये। इनमें ललित कला का ज्ञान देनेवाली डांसिंग पार्टियों ने घुंघरू झनझनाते हुए भूतकाल का झनझनाता हुआ लोकसाहित्य दिया, तलवार घुमाते हुए तपस्वी आये, और मोटी मोटी दाढ़ीवाले मौलवी भी आये। ये सब महानुभाव देगये थोड़ा और लेगये बहुत। अपने पास से धन लेते गये और संकुचित साम्प्रदायिकता, धर्मान्धता और झूठी प्रान्तीयता देते गये। बेशक, कुछ सच्चे अद्वैतवादी, एकता के पोषक, समभावी, समदर्शी प्रचारक भी आये पर

नक्कारखाने में तूती की आवाज की तरह साम्प्रदायिकता के शोरगुल में उनकी आवाज दब गई ।

वे सब आये, अपने बीचमें रहे, थोड़ी बहुत अपनी स्थिति भी देखी, पर उनमें से किसी ने अपनी कठिनाइयों में भाग नहीं लिया. अपने यहां के सामाजिक जीवन में एक बूंद बराबर भी रस न लिया। धार्मिक भावना का सामाजिक जीवन पर प्रभाव न पड़े तो वह हितकारक अथवा रक्षक तो नहीं कही जासकती। अपनी धार्मिक भावनाओं को अमुक रास्ते लेजाने का उनने प्रयास किया परन्तु उसका अच्छा असर अपने सामाजिक जीवन पर जराभी नहीं पड़ा। अपनी सामाजिक समस्याएं अभी ज्यों की त्यों खड़ी हैं। खुद भारत अपनी जूनी पुरानी धार्मिक भावनाओं को छुट्टी देकर युग के अनुरूप परिवर्तन करने के लिये प्रयास कर रहा है, जबकि वहीं से आनेवाले अपने ये प्रचारक यहां अपने को अपनाकर भी अपने में थोड़ी सी जागृति नहीं लासके। बल्कि धार्मिक क्षेत्र में तो हम अधिक संकुचित बनगये हैं। यह अभी कल की ही बात है कि एक साम्प्रदायिक धर्म प्रचारक ने अपने अनुयायियों को खुल्लमखुल्ला यह आदेश दिया था कि जो अपने सम्प्रदाय के न हों वे कितने भी निकट के कुटुम्बी और रिश्तेदार हों उनसे किसी भी तरह का सामाजिक सम्बन्ध न रखना चाहिये। बाद में उस सम्प्रदायवालों ने इस आदेश का पालन करके भी बतादिया। ऐसी धार्मिक असहिष्णुता किसी एक ही कौम या वर्ग में हो ऐसी बात नहीं है, न्यूनाधिक रूपमें हिन्दू मुसलमान ईसाई आदि सभी भारतीय कौमों में है। बाहरी रूप कदाचित् कुछ भिन्न होगा। ऐसी संकुचितता फैलाने में प्रचारकों का हिस्सा काफी है।

जो प्रचार ऐसी संकुचितता के तर्क से समाज को बाहर निकालकर ठीक रास्ते पर न लासकें बल्कि उल्टे कूपमंडूक बनावें ऐसे प्रचारकों से अपने को क्या लेना देना है? हमको ऐसे धर्म प्रचारक नहीं चाहिये, इसकी अपेक्षा तो अपन यों ही ठीक हैं। क्योंकि भोजा भगत के शब्दों के अनुसार धर्मगुरु "धनहरै चीर धोखा करे"

हर एक मनुष्य में थोड़ी बहुत धर्मभावना या धार्मिक वृत्ति होती ही

है। पशुवृत्ति के मनुष्य के भीतर भी किसी गहरे कोने में वह धर्म भावना छुपी हुई सुषुप्त अवस्था में पड़ी रहती है। इसे जगानेवाला कोई दूसरा चाहिये। इसी तरह साधारणतः धार्मिक वृत्तवाले मनुष्यको भी कभी कभी धर्मोपदेश की जरूरत होती है। नहीं तो संयोगवश वह धार्मिक वृति ढीली होजाती है। इसलिये यह तो कोई नहीं कह सकता कि यहां धर्मोपदेशकों की जरूरत नहीं है। अपने को यहां ऐसे सच्चे धर्मोपदेशकों की जरूरत है कि जो अपनी सच्ची धार्मिक भूख जगावें। ऐसी सच्ची भूख समभाव को अच्छी तरह पचा सकती है। यहां इस देश में अपने को ज्यादा से ज्यादा जरूरत यदि किसी चीज की है तो समभाव की है। इसके बिना अपन यहां सुख शांति से नहीं रह सकते, जिन्दे भी नहीं रह सकते। सहिष्णुता के बिना सच्चा सामाजिक जीवन अपन कभी नहीं रख सकते। इसलिये अपने को सच्चे प्रचारकों को ही प्रोत्साहन देना चाहिये।

सर्वधर्म सम्मेलन

ता. २३ को सायंकाल ४-३० से सर्वधर्म सम्मेलन के प्रारंभ में लाडकी भाई ने सर्वधर्म समभावी प्रार्थना गाई। इसके बाद अध्यक्ष ने आज के नियोजित वक्ताओं से निवेदन किया कि आप लोग अपने अपने धर्मों का विवेचन करते हुये सत्यसमाज की मर्यादा का अवश्य ख्याल रक्खें। सत्य-समाज सब धर्मों के गुणों को लेकर सब में समन्वय करना चाहता है इसलिये इस सम्मेलन में अपने धर्मों की प्रशंसा करते हुये इस बात का ख्याल रक्खें जिससे दूसरे धर्मों की निन्दा न हो। इसके बाद विभिन्न धर्मों के नियोजित वक्ताओं के भाषण हुये। हर एक को बीस से पच्चीस मिनिट तक का समय दिया गया था।

हिन्दूधर्म– श्री जे. एच. भट्ट बैरिष्टर

आपने हिन्दू धर्म की प्राचीनता और विशालता का विवेचन करते हुये श्री शंकराचार्य के अद्वैत दर्शनका विशेष रूपसे उल्लेख किया। आपका व्याख्यान पांडित्य-पूर्ण दार्शनिकता-प्रधान था।

सिक्ख धर्म— श्री बाबासिंह जी,

आपने सिक्ख शब्द की व्याख्या बताते हुये शिक्षा प्राप्त करने पर जोर दिया। गुरु नानक के प्रेम और एकता की शिक्षाओं का विवेचन किया।

इसलाम— मौलवी मोहम्मद इब्राहीम

आपने जीवन शुद्धि और समाज की व्यवस्था के बारेमें कुरान शरीफ की खास खास शिक्षाओं का विवेचन किया। साथ ही इस बातपर भी जोर दिया कि कुरान ने हर मुल्क और हर कौम के पैगम्बरों को मानकर के मजहबी एकता का कैसा अच्छा पाठ पढ़ाया है।

आर्य धर्म— श्री टी. पी. सुबाक

आपने आर्य धर्म और हिन्दू-धर्म की एकताका प्रतिपादन करते हुये ऐतिहासिक सिंहावलोकन किया।

ईसाई धर्म श्री- रेवरेन्ड व्याख्यान

आपका व्याख्यान विशेष कलापूर्ण था। आपने ईसा मसीह के प्रेम, सेवा, आदि गुणोंका विवेचन करते हुए दृढ़ विश्वास से कर्तव्य करने की प्रेरणा की।

जैन धर्म-श्री नटवरलालजी पारीख

आपने जैन धर्म के अनेकान्त सिद्धांत का विवेचन करते हुये बताया कि जैनधर्म ने अपने युग के दार्शनिक झगड़ों को मिटाकर किस प्रकार दार्शनिक समन्वय का कार्य किया। आपने अहिंसा सिद्धांत के द्वारा भारत पर किस प्रकार अहिंसा की छाप मारी। आज भारत में करोड़ों आदमी जो मांस नहीं खाते हैं वह सब जैनधर्म के प्रभाव का ही परिणाम है।

सर्व धर्म सम्मेलन का कार्यक्रम समाप्त हो चुका था परन्तु कुछ लोगों के अनुरोध से मुझे भी कुछ बोलना पड़ा मैंने। कहा—

आपने आज सब धर्मों के व्याख्यान सुनें। उससे आपको मालूम हुआ होगा कि सभी धर्म मानवता का विकास और प्रेम चाहते हैं। हम एक दूसरे के धर्म को न जानकर व्यर्थ ही झगड़े कर लिया करते हैं जब कि सब धर्म मनुष्य को जोड़ते हैं। यह दुर्भाग्य है कि मनुष्य ने धर्मों को भी झगड़े की जड़ बना लिया है। जो धर्म पापों की आगों को बुझाने के लिये था वह आज स्वयं जल रहा है। दुर्भाग्य से जिंजा में लगी आग किसी तरह बर्दाश्त की जासकती है लेकिन आपकी नील नदीमें लगी हुई आग बर्दाश्त नहीं की जा सकती, क्यों कि उससे आग बुझाने की आशा ही नष्ट हो जायगी। आशा है इस सर्व धर्म-सम्मेलन से आप सर्व धर्म समभाव का पाठ पढ़ेंगे। अन्तमें लालजी भाई ने सम्मेलन गीत गाया।

अधिवेशन के बाद कई श्रोताओं ने अपना उद्गार प्रगट किया कि भिन्न भिन्न धर्मवालों के बीच इस प्रकार का प्रेम-मिलन हमने जिन्दगी में पहिली बार ही देखा।

जिंजा– २४ मार्च १९५२

अन्तिम दिन का कार्यक्रम

आज का कार्यक्रम प्रारंभ होने के पहिले सत्यसमाजियों और मेह-मानों का एक फोटो लिया गया।

आज का मुख्य कार्यक्रम मेरा आखरी संदेश था। प्रारंभ में सौ. वीणादेवी सत्यभक्त ने एक छोटासा व्याख्यान दिया जिसमें विवेचन किया गया था कि सत्यसमाज एक सामाजिक क्रान्ति है। सामाजिक क्रांति तब तक नहीं हो सकती जब तक उसका असर घर घर न पड़े। घरों में स्त्रियों का राज्य होता है। जब तक स्त्रियाँ सत्यसमाज को न समझें तब तक आप लोग कितनी भी बातें करें यह कार्य रूपमें परिणत नहीं कर सकते। इसके बाद आपने सत्यसमाज के नरनारी समभाव आदि का विवेचन किया।

इसके बाद मैंने प्रवचन प्रारम्भ किया। प्रारम्भ में राम, कृष्ण, महावीर, ईसा, मुहम्मद आदि की प्रार्थनाएं पढ़ीं। इसके बाद कहा—

सर्वधर्म समभाव के क्या लाभ हैं और किस प्रकार आप सब धर्मों के महात्माओं से जीवन के लिये उपयोगी सामग्री ले सकते हैं यह बात आप इन प्रार्थनाओं से समझ सकते हैं।

ईश्वर की इन मुनिश्चलितियों से आप काफी ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं कि महामानवों के जीवन की क्या उपयोगिता है और वास्तव में उनकी महत्ता क्या है? महामानव बहुत निकट से पहिचान में नहीं आते इसलिये उस जमाने की दुनिया उनको बहुत कम पहिचान पाती है।

रामजी को आज भले ही हम भगवान कहते हों परन्तु वे ही रामजी १४ वर्ष के लिये जंगल में भेज दिये गये थे और वहां भी उनकी धर्मपत्नी सीताजी का अपहरण हुआ था। और, इतना भी होता तो किसी तरह सहन कर लिया जासकता था, लेकिन दुःख और शर्म की बात तो यह है कि जगत की महासती सीताजी को भी लोगों ने घर में नहीं रहने दिया। जिन्दगी के अंत तक जनता राम और सीता को कोसती रही। आज वे भगवान हैं।

श्रीकृष्ण जी की दुर्दशा भी क्या कम हुई? उन्हें कैद करने की कोशिश की गई और सभा में सैकड़ों अपशब्द कहे गये। जिन्दगी के बड़े से बड़े और छोटे से छोटे काम उन्होंने किये, पर जनता ने उन्हें जाने के बाद ही पहिचाना।

महावीर और बुद्ध का जीवन भी विरोध और अपमान की घटनाओं से भरापड़ा है। ईसा मसीह को तो जनता ने क्रॉस पर ही लटका कर तड़पा तड़पा कर मार डाला।

मुहम्मद साहेब की जान के तो अन्त तक लोग गाहक बने हुए थे। उन्हें किसी एक जगह रहने भी नहीं दिया गया था। इस तरह से महासेवकों को लोग सदा सताते ही रहते हैं और उन्हें समझ पाते हैं तब, जब वे चले जाते हैं। इन सब की महत्ता यही है कि वे जनहित के मार्गों में आनेवाली कठिनाइयों से कभी नहीं घबराते। वे जनमत की पर्वाह नहीं करते, वे जनहित की पर्वाह करते हैं। और दुःख यह है कि लोग उनकी इस महत्ता को

महत्व नहीं देते, वे झूठे चमत्कारों या सामन्तशाही वैभवों को ही महत्व देते हैं जब कि उनके जीवन की वास्तविक महत्ता यह नहीं है और न इन महत्ताओं से हम कोई लाभ उठा सकते हैं।

महामानवों का जीवन तो जीवन का सन्देश पाने के लिये है, इसके बिना उनकी सिर्फ पूजा ही कर डालने से न उन्हें कोई लाभ है, न हमें कोई लाभ, इसीलिये सत्यसमाज का दृष्टिकोण महामानवों के जीवन को बिलकुल सत्य रूप में दुनिया के सामने पेश करने का है। जैसा कि आप इन प्रार्थनाओं में सुन चुके हैं।

सत्यसमाज के धर्म समन्वय और जाति समभाव का आफ्रिका में विशेष उपयोग है। आफ्रिका जिन लोगों का मूल निवास स्थान है वे लोग अभी थोड़े तक कोरे कागज के समान थे। अब उन लोगों के गुण दोषों का विकास होना शुरू हुआ है। और इस बात का असर आप लोगों पर पड़ता जा रहा है।

एक तरफ आफ्रिकन लोगों के बुद्धि का विकास हुआ है दूसरी तरफ उनके चरित्र का पतन हुआ है। बुद्धि विकास से वह समझने लगा है कि देश हमारा है, विदेशियों ने हमें लूटा है, इसलिये अब आफ्रिकन नेता यू. एन. ओ. तक जाने लगे हैं और अपने राजनैतिक और आर्थिक अधिकारों की मांग करने लगे हैं। इस जागृति का असर आप लोगों पर भी हुआ है। दस पन्द्रह वर्ष पहिले घर के आफ्रिकन नौकर से आप जैसा व्यवहार कर सकते थे वैसा अब नहीं कर सकते। आप इस परिवर्तित परिस्थिति के अनुसार बदले जरूर हैं, पर यह बदलना भयके कारण हुआ है, विवेक के आधार पर नहीं। अब आपके और उनके बीचमें भय का नहीं, प्रेम या वात्सल्य का सम्बन्ध होना जरूरी है।

इधर उनके चरित्र का पतन बहुत अधिक हुआ है। पहिले यहां चोरी का इतना डर न था पर अब तो वे आपकी मोटर का पहिया ले जायं या मोटर ले जायं और आपको पता न लगे। चोरी करने के नये नये विचित्र



सत्येश्वर के संदेशवाहक स्वामी सत्यभक्तजी

और साहसपूर्ण तरीके उनने सीख लिये हैं। चाहे ये चीजें सिनेमा के दृश्यों ने सिखाई हों, चाहे थोड़े बहुत रूप में हम भी निमित्त बने हों, चाहे और कोई कारण हो, पर उनका यह पतन होगया है जरूर। साथ ही अत्यन्त अविश्वासी भी होगये हैं। बिना लिखापढ़ी किये आप उनके साथ एक या मामूली लेनदेन नहीं कर सकते। वेतन की पेशगी भी नहीं देसकते। किसी भी जाति का इतने जल्दी इतना पतन शायद ही कभी हुआ हो। यह पतन उनके लिये भी भयंकर है और आपके लिये भी चिन्ताजनक है। प्रमाणिकता के बिना कोई भी जाति तरक्की नहीं कर सकती, न गौरव पासकती है, और उसकी संगति में रहना किसी भी जातिका दुर्भाग्य कहा जासकता है। इसप्रकार आफ्रिकनों का चरित्रपतन आपका और उनका दोनों का दुर्भाग्य है।

आप कहेंगे कि इसके लिये हम क्या करें? अब उनका सुधरना बहुत कठिन है। मैं भी कहता हूं कि काम काफी कठिन है। पर इतना कठिन नहीं जितना आप समझते हैं। असली बात यह है कि आपने इस तरफ अभी तक ठीक तरह से ध्यान नहीं दिया है। अन्यथा इन्हें फरिश्ता भी बनाया जासकता है। एक यूरोपियन पादरी ने इन लोगों को फरिश्ता बनाने का बीड़ा उठाया है। वह इन्हें पूरा ईमानदार बना रहा है। उन ईमानदारों का एक संगठन बनगया है जिसे मरोकवे कहा जाता है। ये लोग चोरी या विश्वासघात नहीं करते, दुर्व्यसनों का भी त्याग करते हैं। मरोकवे सम्प्रदाय में दीक्षा लेते समय पहिले कभी कीगई चोरी के दाम भी वापिस किये जाते हैं। म्वारारा में एक भारतीय को पन्द्रह शिलिंग वापिस मिले। पन्द्रह वर्ष पहिले ये चोरी गये थे जिसे वह भूल चुका था। इसीप्रकार एक को नव शिलिंग वापिस मिले। दो वर्ष पहिले चोरी गया हुआ एक फाउन्टेनपेन भी एक भारतीय को वापिस मिला।

म्वारारा में जो मरोकवे मुझसे मिलने आये, उनके साथ बातचीत करने के लिये एक भारतीय भाई दुभाषिये का काम कर रहे थे और सिगरेट पीते जाते थे। स्मोकिंग को मैं सख्त नापसन्द करता हूँ, यदि कोई स्मोकिंग बन्द करदे तो मन ही मन प्रसन्नता का अनुभव करता हूं। पर आपकी सुविधा।

या विनय के लिये किसी से स्मोकिंग बन्द करनेके लिये नहीं कहता, इसलिये उस भाई को भी नहीं कहा। पर उस मरोकने ने बातचीत शुरु करने के पहिले स्मोकिंग बन्द करने को कहा। कहने में उद्दंडता नहीं थी, पर नम्रता भी नहीं थी, और दृढ़ता पूरी थी। इस तरह जिन्हें आप जानवर के समान समझते हैं वे निर्व्यसनता में और ईमानदारी में आपसे भी आगे बढ़गये हैं इसलिये आफ्रिकनों का जो चरित्र सम्बन्धी पतन हुआ है उसे हटाने में निराशा का कोई कारण नहीं है।

पर इसके लिये आपको दो कार्य करना पड़ेंगे। एक तो अपने चरित्र को काफी ऊंचा बनाना, दूसरा यहां के लिये मिशनरी साधुओं का निर्माण।

एक यूरोपियन पादरी ने सैकड़ों को सिखाया, आप दो चार इस तरह के साधु निर्माण करें तो आपके द्वारा भी यह स्वपर कल्याणकारी सेवा होसकती है। सत्यसमाज सम्मेलन में आपने प्रचारकों के बारे में एक प्रस्ताव पास किया भी है, बेरिस्टर भट्ट जी ने भी इसके लिये अनुरोध किया है, यदि इस तरफ आपने ध्यान दिया तो इस कार्य में अच्छी प्रगति होसकती है। आप जैसे आदमी की कद्र करेंगे उसी तरीके के आदमी तैयार होने लगेंगे या आने लगेंगे। आप जीवन के कल्याणकारी कार्यों की पर्वाह न करें किन्तु ईश्वर भक्ति आदि के नाम पर अकर्मण्यों को आप साधु मानें तो कर्मठ बनने को कौन तैयार होगा, यदि एकाध कोई हुआ भी तो उसकी पहुंच आप तक या आपकी पहुंच उस तक होना काफी कठिन है।

यदि आपने आफ्रिकन जनता की सेवा करने और विकास करने का काम किया तो इससे उनका भी कल्याण होगा और आपका भी कल्याण होगा।

पर मेरे कहने का यह मतलब नहीं है कि आपको उन्हें सिखाना ही सिखाना है। नहीं, आपको उनसे सीखना भी है। एक तरफ जहां आप उनके गुरु बने हैं और बनेंगे दूसरी तरफ उनके चेले भी बनना है। आपने

धर्म के भेद से देश के टुकड़े कर डाले, पर वे लोग ईसाई और मुसलमान बन जाने पर भी एक समाज बने हुए हैं। उस दिन श्री कादरभाई ने मुझसे कहा कि कम्पाला में झगड़े के समय आफ्रिकनों ने पादरी से कहदिया था कि आपका गुरुत्व चर्च में है पर राजनैतिक मामलों में हम सब काले काले एक हैं। इसी प्रकार उनने मौलवी से कहदिया था कि आपका मौलवीपन मसजिद में है, बाहर हम काले काले एक हैं। पर इस विषय में आप उनके सामने शिशुवर्ग के विद्यार्थी मालूम होते हैं। हिन्द में धर्मभेद से देश के टुकड़े हुए तो हिन्दी लोग यहां कोई कारण न होने पर भी टुकड़े बना बैठे। इस लिये मैं कहता हूं कि इस विषय में आप आफ्रिकनों को गुरु बनावें।

यहां की परिस्थितियाँ दिनदिन बड़े वेगसे बदल रही हैं। आप उन-पर नजर न डालें तो इसीलिये संकट टल न जायगा। शिकार आंख बन्द करके बैठजाय तो उसे शिकारी न दिखेगा, पर इसीलिये शिकारी मर न जायगा। आंखें खोलकर के आप बदलती परिस्थिति को समझें, और जितनी समझ चुके हैं उसका इलाज करें। इसके लिये मिलजुलकर उपाय सोचें। 'क्या करें क्या करें" कहकर कभी कभी उड़ती चर्चा करने से काम न चलेगा। पादरी यदि उन्हें मरेकड़े बना सकते हैं तो क्या आप उन्हें संगठित होकर इतना भी नहीं बनासकते कि वे रातमें मिलने पर आपको नंगा करके तो न भगावें, नगर में या नगर के बाहर रातमें रास्ता चलना खतरनाक तो न रहजाय।

आपके सामने जो विकट परिस्थिति है उसे मैं मामूली नहीं कहना चाहता। आपकी कठिनाई को मैं काफी समझता हूं। आज आफ्रिकनों का यह नारा है कि आफ्रिका आफ्रिकनों के लिये है। यहां तक कि वे आपकी जायदाद को भी अपनी समझते हैं। म्वारारा में एक इंजीनियर मेरे पास आये। उनने कहा कि मैंने काम करते हुए मजदूरों को आपस में बात करते सुना है। वे मजदूरी करते हुए कहते हैं— आखिर एक दिन हम ही तो इन बंगलों में रहेंगे। वे सिर्फ सरकारी इमारतों के बारे में ही ऐसी बातें नहीं करते किन्तु आप लोगों के व्यक्तिगत मकानों के बारे में भी ऐसा कहते हैं। इसप्रकार उनमें

एक तरह की महत्वाकांक्षा अनुचित नहीं है किन्तु उसमें न्याय अन्याय की मर्यादा भूलजाना अनुचित है। इससमय उनमें भावना का विस्फोट होरहा है। धीरे धीरे उसे न्याय की मर्यादा में लाना है। यह सब उन्हें समझा बुझाकर विवेक के जरिये ही हो सकेगा।

आज दुनिया का जैसा परस्पर सम्बन्ध होगया है उसे देखते हुए अब जनसंख्या का समीकरण भी करना होगा। यह नहीं होसकता कि भारत में प्रतिमील २९६ के हिसाब से ३६ करोड़ आदमी रहें और भारत से भी दूने आष्ट्रेलिया में सिर्फ ५०–६० लाख। आफ्रिका, अमेरिका और आष्ट्रेलिया में एशिया और यूरोप से आदमी आयँगे और बसेंगे तभी संसार में जनसंख्या की तात्कालिक समस्या हल होगी और आफ्रिका आदि पिछड़े देशों का विकास होगा। अगर यहां आप लोग न आये होते तो आफ्रिका आज भी पूरा जंगल होता, आफ्रिकन जनता नंगी होती, बढ़ई लुहार आदि के काम भी वह न सीख पाई होती, इन रेलों और सड़कों का यातायात दुर्लभ होता।

मतलब यह कि आपने आफ्रिका को बहुत कुछ दिया है, उसका कायाकल्प किया है। हां! उससे खुद भी लाभ उठाया है और यहां की जनता को भी लाभ दिया है। ऐसी हालतमें यह देश आपका भी उतना ही है जितना कि आफ्रिकनों का कहा जाता है। हां! आपको पूरी तरह इस देश के हित में अपने को मिला देना है। अधिकांश ने मिला भी दिया है। भारत के साथ आपका सम्बन्ध सांस्कृतिक या धार्मिक है, आनुवंशिक भी है, परन्तु राजनैतिक और आर्थिक सम्बन्ध तो आफ्रिका से ही है। ऐसी हालत में इस देश पर आप का भी पूरा अधिकार है। समझदार आफ्रिकन इस बात को मानते भी हैं। उनके और आपके परस्पर सहयोग से ही इस देश की तरक्की है।

आप यहां व्यापारी की हैसियत से आये और उसी हैसियत से हैं। न आपने आफ्रिकनों की राजनैतिक सत्ता ली, न बेकार में उनकी जमीनें दबाईं। विनिमय के द्वारा कुछ लिया, कुछ दिया और सिखाया। ऐसी

हालत में समझदार आफ्रिकन जनता आपके प्रति कृतज्ञता ही प्रगट करेगी। दोनों के सहयोग में ही दोनों का भला है। यह बात उचित तरीके से आफ्रिकनों को समझाना है और यह कठिन नहीं है।

आफ्रिका में अभी जनसंख्या का सवाल नहीं है। अभी यहां काफी जंगल और मैदान खाली पड़े हैं जिनमें आदमी के लिये बहुत काम है। यहां के तो पहाड़ भी खेती के लिये उपयुक्त होते हैं। कबाले तरफ मैंने देखा है कि प्रायः सभी पहाड़ जनबस्तियों से भरे पड़े हैं और नीचे से लेकर चोटी तक छोटे छोटे खेत बने हुए हैं। खेतों का ढाल इतना अधिक है कि खेत बिलकुल खड़े मालूम होते हैं। सम्भवतः उनमें ऊंचाई की ओर ७५, ८०, का एंगिल होगा। ऐसे खड़े खेतों में भी यहां खेती होसकती है। ऐसी हालत में अभी यहां काफी जनसंख्या समा सकती है। और यहां की खनिज सम्पत्ति से भी औद्योगिक विकास काफी होसकता है। यहां की मिट्टी में लोहा बेशुमार मालूम होता है। मुझे तो नील नदी के किनारे पड़ी हुई चट्टानों में भी लोहा आदि धातुओं का काफी मिश्रण मालूम हुआ है। मतलब यह कि यहां की जमीन खनिज तत्वों से भरी हुई है, उर्वर है, खाली है, वर्षा भी ठीक है, इसलिये यहां अभी बहुत आदमी समा सकते हैं। मैंने तो यहां देखा है कि बड़ी बड़ी घास चारों ओर खड़ी है उसे खाने को जानवर नहीं हैं इसलिये उसे जलाना पड़ता है, जब कि भारत में जानवरों को घास नहीं मिलता। ऐसी हालत में एशिया यूरोपवाले यहां आकर बसें तो उनका बोझ हलका हो और आफ्रिका का भी विकास हो।

हां! इस बात का आपको अवश्य खयाल रखना है और अभी तक रक्खा भी है कि किसी के सिरपर नहीं बैठना है। बराबरी से बैठना है, जातीय दृष्टि से ऊंचनीच का भाव नहीं लाना है। हां! व्यक्तिगत गुणों का संयम का, सेवा का, गौरव अगौरव तो होता ही है वह नहीं रोका जासकता।

इसप्रकार न्याय प्रेम समभाव सिखाकर मानव के विकास का इतिहास बताकर उनकी महत्वाकांक्षा को न्याय की सीमा के भीतर लाना है और

सहयोग के उचित तरीकों का निर्माण करना है।

निःसंदेह एक-मानवता के जन्ममें प्रसव-पीड़ा तो होगी ही। उससे घबराना न चाहिये। हां! पूरी सतर्कता रखना चाहिये।

अब एक खास बात और आपसे कहना है। वह यह कि इसप्रकार सांस्कृतिक एकता और सहयोग के लाभ का पाठ पढ़ाने का व्यावहारिक मार्ग क्या हो? घर में चाय को बर्तन मलते और कपड़े धोते समय आप सांस्कृतिक एकता और ज्ञानकी बातें नहीं सिखासकते। वह आर्थिक संघर्ष का अवसर है, उस अवसर पर ज्ञानकी बातों का कोई मूल्य नहीं होता। इसके लिये उपयुक्त स्थान और उपयुक्त संगठन की जरूरत है। सत्यसमाज के संगठन को मैंने इस दृष्टि से भी काम में लाने की कोशिश की है। और जितनी कोशिश होसकी उतनी सफलता भी दिखाई दी है।

म्बरारा में जब शिक्षित और स्वतन्त्रजीवी आफ्रिकनों को सत्यसमाज के सिद्धांत बताये गये तो वे काफी प्रभावित हुए और दो चार स्त्री पुरुष सत्यसमाज के सदस्य भी बने। इगांगा में भी ऐसी ही इच्छा उनने प्रगट की थी। मेरे पास अगर उनके बीच पहुंचने के काफी साधन होते तो इस विषय में काफी सफलता मिलती। अभी तो उनमें सत्यसमाज का प्रचार नाम मात्र का है। पर जब सत्यसमाज के सत्यमंदिर जगह जगह बनजायंगे, उनमें बराबरी के साथ उन्हें जगह मिलेगी, अल्लाह गॉड और मुंगू के नाम से जो उनके समाज कुछ अलग अलग बन रहे हैं उनके बीचमें सत्यसमाज जब एकता की कड़ी बनेगा, तब पता लगेगा कि आफ्रिका की समस्याओं को हल करने में सत्यसमाज का स्थान कितना महत्त्वपूर्ण है और भविष्य के संकटों को दूर करने के लिये यह किसप्रकार समर्थ है। यह बात यदि आप को जँच जाय तो आपको यह प्रयोग अजमाने की पूरी कोशिश करना चाहिये।

सत्यसमाज को समझने में बहुत से लोग अभी तक गड़बड़ाते हैं। एक तरफ उसमें उग्र से उग्र वैज्ञानिकता है दूसरी तरफ श्रद्धा और भावना का पूर भरपूर है। मन्दिर भी है और नास्तिकों को भी जगह है। अभी तक

लोग धर्म को जिस प्रकार संकुचित सीमा में देखते आये हैं उससे यह गड़बड़ी होना स्वाभाविक है। जो मेरा साहित्य पढ़ेंगे उनके ये सारे भ्रम या संशय निकल जायँगे। जिंजा में डेढ़ माह तक मैंने इन सब बातों का काफी स्पष्टीकरण किया है फिर भी साहित्य से और भी अधिक स्पष्टीकरण होगा। डेढ़ माह बोलकर भी मैं उसके एक अंश ही का स्पष्टीकरण कर पाया हूं। यहां तो मैं इतनी ही बात कहना चाहता हूँ कि मनुष्य में भावना और बुद्धि दोनों हैं इसलिये दोनों को खुराक देकर सन्तुष्ट करने से सत्य के सर्वांगपूर्ण दर्शन होते हैं। असली बात मानव का कल्याण है। मानव कल्याण को कसौटी बनाकर हमें विचारों का मूल्य आंकना चाहिये। परम्परागत अमुक मान्यताओं को या जीवन के किसी आंशिक रूप को कसौटी नहीं बनाया जासकता। सत्य-समाज के सत्यवाद का अर्थ कल्याणवाद है। यह मनुष्यमात्र का कल्याण चाहता है, उसका व्यावहारिक रूप पेश करता है। आप इस वाद को पढ़िये, सुनिये, चर्चा कीजिये और फिर इसे जीवन में उतारिये। मुझे विश्वास है कि आफ्रिका के लिये यह अधिक से अधिक उपयुक्त साबित होगा।

अंतमें सम्मेलन के अध्यक्ष श्री आर. बी. सिरदाने अपना भाषण दिया। आपने कहा कि जिंजा के अच्छे भाग्य हैं जो कि स्वामी सत्यभक्तजी ने यहाँ आकरके अपने को एक नया दृष्टिकोण दिया जिसका सम्मेलन आज हम कर रहे हैं। अभी तो यह प्रारम्भ है। आगे अवश्य ही यह एक विशाल रूप धारण करेगा। इस की खूबी ही ऐसी है जिसकी दुनिया को आज जरूरत है। यह हमारी इच्छाओं के अनुकूल हैं। हमें प्रस्तावों को भी अमल में लाना है।

जिंजामें सत्यसमाज के अस्तित्व को कायम रखने के लिये एक स्थान भी बनाना आवश्यक है। यहां आपने सब धर्मों के व्याख्यान सुने, सभी धर्मों के अनुयायी अगर इस तरह से इकट्ठे होने लगें तो धर्मका जनून जल्दी मिट सकता है। हमें इसप्रकार परस्पर मिलते जुलते रहना चाहिये और छूटसे एक दूसरों के धर्मस्थानों का उपयोग करना चाहिये। जैसे चर्च का दरवाजा सब के खुला पड़ा रहता है उसी तरह सब धर्मस्थानों का दरवाजा सब के लिये

खुला रहना चाहिये : इसके बाद आपने सब धर्मों के उपदेशों का सार संक्षिप्त में बताकरके शुभकामना प्रगट की। धन्यवाद आदि के बाद सम्मेलन समाप्त हुआ।

सहभोज

रात्रिमें सम्मेलन के उपलक्ष में जिंजा सत्यसमाज की तरफ से एक विशाल सहभोज हुआ। जिसमें जिंजा के सभी सत्यसमाजी, बाहर से आए हुए प्रतिनिधि और मेहमान, सर्व धर्म सम्मेलन के निमंत्रित वक्ता, तथा नगर के कुछ अन्य व्यक्ति शामिल हुए। सहभोज में हिन्दू मुसलमान, ईसाई, सिक्ख, जैनादि शामिल हुए थे। सहभोज के प्रारम्भ में लालजीभाई ने सत्यसमाज का सहभोजन गीत गाया।

इसप्रकार सम्मेलन का यह अधिवेशन आशातीत प्रभाव के साथ सम्पूर्ण हुआ।

अधिवेशन के बाद

अधिवेशन के पहिले से ही सुधीर काफी बीमार था। उसे गोर (छोटी माता) निकली थी। १०३ डिग्री तक बुखार रहता था। ऐसी अवस्था में प्रवास करना कठिन था। सब ने कहा कि अभी एक सप्ताह तक प्रवास न करना चाहिये। इसलिये एक सप्ताह और रुके। इन दिनों भी चर्चाएं होती रहीं।

मार्क्स और लेनिन, कम्यूनिज्म और सोशलिज्म, रूसकी राजनैतिक और आर्थिक स्थिति, चीन में परिवर्तन, जातिपांति कैसे टूटे, सत्यसमाज की व्यवस्था आदि पर चर्चाएं हुईं। कई चर्चाएं पुनरुक्त भी थीं फिर भी लोग पूछते थे। श्री द्वारकादास जी (समूभाई) का कहना था कि एक ही प्रश्न दुबारा भी आपसे पूछा जाय तो दृष्टिकोण वही होने पर भी कुछ न कुछ नई बात जानने को मिल जाती है। इसलिये प्रश्नों की पुनरुक्ति भी लोग करते थे।

२७- जिंजा में बिदाई समारोह

तीन हजार की थैली भेंट

ता. ३०-३-५२ को सायंकाल ६ बजे आर्य समाज भवन में बिदाई का समारोह हुआ। सभाका अध्यक्ष स्थान श्री सिर्दो जी को दिया गया था। प्रारम्भ में—

श्री जेठाभाई विसाणा बैरिस्टर ने कहा—

हमारे सौभाग्य से स्वामीजी ने अपनी यात्रा दरम्यान अधिक समय जिंजा निवासिओं को दिया। आफ्रिका में अभी तक आए हुए साधुओं में स्वामीजी ने एक नया ही स्थान प्राप्त किया है। स्वामी जी के जिंजा निवास दरम्यान अनेक प्रवचनों चर्चाओं और अन्तमें अधिवेशन द्वारा हम सबको सर्व-धर्म समभाव, आदि अनेक विषयों में एक नूतन समन्वयात्मक दृष्टिकोण मिला है जो हमारे यहां की समस्याओं के लिये भी काफी लाभप्रद साबित होगा।

हर्षके साथ खेद इस बात का है कि कल श्री स्वामीजी यहां से हिन्द लौटने के लिये प्रस्थान कर रहे हैं।

आशा है भविष्य में भी यदाकदा यहां पधारकर आफ्रिका निवासिओं को लाभ देते रहेंगे।

हम सब प्रार्थना करते हैं कि स्वामीजी की यात्रा सकुशल और सुखरूप हो। इसके बाद

बैरिस्टर श्री भट्टजी

ने कहा— आजतक भारत से जितने भी साधु, संन्यासी और प्रचारक आए उनमें आजके ये आदरणीय अतिथि अनोखे ही हैं। इन्हें पहिचानने का सबसे अधिक मौका मुझे मिला है। मैंनेही उनसे कठोर से कठोर और उनके व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्ध रखनेवाले प्रश्न भी किये, लेकिन किसी

अवसर पर मैंने इन्हें क्रुद्ध नहीं पाया । ये बड़ी ही शान्ति के साथ सब उत्तर देते गये । इनका जीवन बिलकुल खुला है । सार्वजनिक जीवन अलग और व्यक्तिगत जीवन अलग, यह इनके जीवन की रीति नहीं है । जबकि बड़े बड़े लोगों में भी अन्तरंग और बहिरंग जीवन में विभिन्नता पाई जाती है ।

और इनके ऐसे खुले जीवन के कारण ही मैं कठोर से कठोर प्रश्न कर सका । यद्यपि मेरी और इनकी विचार धाराओं में काफी अन्तर था फिर भी आज मैं उनके विचारों से ७५-८० फीसदी सहमत हो चुका हूं और भविष्य में १०० फीसदी भी सहमत हो जाऊंगा । आज तक यहां जो साधु आये उन्हें मैं शिष्टाचार की दृष्टि से नमन करता रहा हूं पर आज के आदरणीय अतिथि को मैं मन से नमस्कार करता हूँ ।

मुझे विश्वास है कि सत्यसमाज का भविष्य अत्यन्त उज्वल है और आशा है आप आफ्रिका के साथ सिर्फ मन से ही नहीं, तन से भी सम्बन्ध रखेंगे ।

इसके बाद द्वारकादास जी (मम्मूभाई) ने अपना एक लिखित वक्तव्य गुजराती में दिया ।

श्री द्वारकादास जी (मम्मूभाई)

स्वामीजी जब से यहां आये तब से जो जिज्ञासु मण्डल उनके चारों तरफ एकत्रित हुआ वह यहां भी उपस्थित है । पिछले १॥--२ महीने से बिजली के समान नूतन विचार प्रवाह ने अपने को आकर्षित रखा । उस प्रवाह का वाहक स्वामीजी का आवाज अपन जिज्ञासी कल से न सुन सकेंगे । फिर भी प्रतिदिन शामको पार्क में होनेवाली चर्चाएं अपने को बहुत समय तक याद रहेंगी । लम्बे समय तक हम उन्हें भूल न सकेंगे । कदाचित कुछ लोगों के मनपर थोड़े बहुत रूप में इनका स्थाइ असर भी अवश्य ही रहेगा ।

१॥ मास की स्वामीजी अपने बीच में रहे । इनने अपने को बहुत दिया और व्यक्तिहित पालन करने के लिये अपने से बहुत कुछ लिया भी ।

इसका अर्थ यह है कि भावलीकों की बहुत सी समस्याएं इनने अपने पास से जान ली और अपने 'संगम' पत्र में ब्याज सहित उसे वापस देने का प्रयत्न कर रहे हैं।

जिंजा में इनके धार्मिक प्रवचन तो हुवे ही, साथ ही इनके निवास स्थान पर प्रतिदिन शंकासमाधान की चर्चाएं भी हुईं, फिर भी जिंजा की बहुत सी जनता इनका पूरा लाभ न उठा सकी। इसके कितने ही कारण स्पष्ट हैं जिन्हें हम सब जानते हैं उनके पिष्ट पेषण की यहां जरूरत नहीं है।

किसी भी कार्य में पत्थर फेंकने की ईर्षा वृत्ति, पक्षापक्षी, विद्वत्ता का और धार्मिकता का झूठा घमण्ड, धनके कारण बने हुए वर्गभेद, और अन्धश्रद्धा-पूर्ण धार्मिक मान्यताएं इसके कारण रूप हैं। फिर भी स्वामीजी के कथनानुसार उनका काम जहां जहां जाना वहां वहां अपने विचारों और सिद्धान्तों का बीजारोपण करना है, तराजू लेकर ऊपर से दिखाई देनेवाली सफलता असफलता का मापतौल करना नहीं। वे स्वयं इस बात को पूर्ण आत्मविश्वास पूर्वक कहते हैं कि मेरे सिद्धान्त अगर सत्य होंगे तो आज नहीं तो कल समाज को स्वीकारना ही पड़ेंगे। समय ही उन्हें स्वीकार करने के लिये विवश करेगा। युग युग पुरानी सामाजिक और धार्मिक विचारधारा में एकदम ही परिवर्तन हो जाय ऐसी आशा तो कोई भी सुधारक या उपदेशक नहीं रखता। जिंजा में सत्यसमाज की स्थापना स्वामीजी के आत्मविश्वास का एक प्रमाण है।

इसके पहिले भी यहां धार्मिक उपदेशकों के मंडल आए, इनके धार्मिक उपदेशों का कितना असर पड़ा यह तो भगवान जानते हैं और श्रोता बहुत अंश भी जानते हैं, फिर भी साधारण मान्यता यह है कि उन्हें सफलता मिली। जब कि स्वामीजी को जैसी चाहिये वैसी सफलता नहीं मिली। ऊपरी दृष्टि से यह बात स्वीकारना ही पड़ती है क्योंकि स्वामीजी ने किसी की धार्मिक अन्धश्रद्धाओं की भटैती नहीं की। इतना ही नहीं, किन्तु अपनी प्रखर विद्वत्ता, अगाध संचय, प्रबल तार्किक शक्ति और वैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार से धर्म

को सच्चे रूप में प्रगट करने पर कितने ही अन्धविश्वास, अन्धपरम्परागत अवैज्ञानिक मान्यताओं पर प्रहार करने के लिये इन्हें विवश होना पड़ा। इनकी निरर्थकता भी साबित करनी पड़ी। इसलिये इनके भगवा कपड़ा ही देख-कर पास आनेवाले भड़ककर दूर भाग गये। इस रूपमें जरूर ही थोड़े आद-मियों ने इन्हें सुना। श्रोताओं का झुंड ही सफलता असफलता का नाप समझा जाय तो यह कहा जासकता है कि स्वामीजी सफल नहीं हुए। पर यह माप कितना गलत है यह सब जानते हैं, जान सकते हैं।

स्वामीजी के एक दो भाषणोंको ऊपर ऊपरसे सुनकर के चलेजानेवाले तथा कुछ द्वेषी स्वभाववाले मनुष्यों के झूठे प्रचारों के कारण गांव में कहीं कहीं गलतफहमी भी फैली है। कुछ लोगों की उदासीनता का एक कारण यह भी है। कुछ लोगों की ऐसी मान्यता है कि स्वामीजी ईश्वर नहीं मानते। बेशक, शंकराचार्य की तरह स्वामीजी के भी दार्शनिक विचार भगवान के बारे में साधारण आदमी को चक्कर में डाल देते हैं। परंतु जो मनुष्य तत्त्व निरूपण करते समय *'भगवान सिर्फ भावना की वस्तु है'* यहां तक कह डालता है वही मनुष्य भींगे हृदय से विनीत से भी विनीत रूप में, परम श्रद्धा से भग-वान का गुणानुवाद करता है, स्वरचित भावमय भक्ति गीत गाता है तब यह बात तुरंत समझ में आजाती है कि उनके विषय में अपनी मान्यता कितनी भ्रामक है।

थोड़े दिन पहिले का एक चित्र मुझे बराबर याद है, बहुतों को याद होगा। संध्या बीत चुकी थी। अंधेरा होगया था। अपन सब नील नदी के किनारे बड़ासा गोल चक्कर बनाकर बैठे थे। ऊपर आसमान में तारे झिल-मिला रहे थे। एक तरफ नीलोद्गम के प्रपात का नाद गर्ज रहा था दूसरी तरफ स्वामीजी का गम्भीर नाद शांत वातावरण में फैलता हुआ ईश्वर तत्त्व का निरूपण कर रहा था। हजारों वर्ष पहिले गंगा यमुना और सप्तसिंधु के किनारे प्राचीन समय के परम ज्ञानी ऋषिमुनि इसी तरह तारामण्डल के धीमे धीमे उजेले में अपने शिष्य मण्डल को उपदेश देते थे ऐसे वर्णन अनेक धर्म ग्रंथों में अपनने पढ़े हैं। कैसे पवित्र वातावरण में वे ऋषिमुनि ईश्वर की

और प्रकृति की समस्याओं को सुलझाने के लिये तात्विक चर्चाएं करते थे इसकी सुंदर कल्पना अपने को धर्मग्रंथों के वाचन से ही होती है। बराबर ऐसा ही मानसिक चित्र उस दिन मेरे सामने भी खड़ा होगया। स्वामीजी के कुछ विचारों के साथ अपन लोग सहमत नहीं हो पाते अर्थात इनकी कुछ मान्यताएं अपने गले नहीं उतरतीं, परंतु अपने सिद्धान्तों का समर्थन करता हुआ इनका प्रचण्ड वाक्प्रवाह, किसी भी विषय पर बोलते समय इनकी तन्मयता, अपने सिद्धान्तों के विषय में इनका प्रबल आत्म-विश्वास, और इन सब की ओट में झांकती हुई इनकी निरपेक्ष वृत्ति, अपने मनमें इनके प्रति पूज्य भाव प्रगट करती है।

इनके ऐसे अनेक मन्तव्य हैं जो अपने को अपनी वास्तविकता का भान कराते हैं। और चलते समय आकाश तरफ दृष्टि डालने के बदले जमीन तरफ देखने की प्रेरणा करते हैं।

थोड़ी देर के लिये अगर यह भी मान लिया जाय कि इनका वाद नास्तिकवाद है तो भी यह नास्तिकवाद किसी का बुरा नहीं चाहता, यह जगत मात्र की कल्याण भावना का पोषक ही है बाधक नहीं।

इसके बाद अध्यापक श्री

नटवरलाल जी पारिख बी. एस. सी. बी. टी. ने कहा—

मैं साधु सन्यासियों के व्याख्यानों में बहुत कम आता हूं क्योंकि उनमें न नई बात रहती है, और न उनकी बातों का हमारे आज के जीवन से कोई सम्बन्ध रहता है। इसलिये जब एक दिन श्री लालजी भाई पहनी ने स्वामीजी का प्रवचन सुनने के लिये चलने के लिये कहा तो मैंने साफ इन्कार कर दिया। उस दिन मैं सिनेमा जारहा था क्योंकि एक अच्छी फिल्म थी। लेकिन जब पहनी जी ने खासतौरपर आग्रह किया और कहा कि स्वामीजी का लेक्चर हम सब के लिये खास सुनने लायक है तब मैं प्रवचन में गया। वहां मैंने वही बातें सुनी जो मेरे मनकी थीं और जिनको सुनने समझने के लिये मेरी प्यास भी थी। इसके बाद तो स्वामीजी का मैंने एक भी प्रवचन

नहीं छोड़ा, और जितना भी समय मैं प्राप्तकर सका स्वामीजी के ज्ञान का लाभ प्राप्त करने में ही लगाया। आखिर में मैं उनसे इतना प्रभावित हुआ कि मुझे सन्देह होने लगा कि यह मेरी मानसिक कमजोरी तो नहीं है ? तब मैंने अपने अन्यान्य मित्रों द्वारा भी स्वामीजी के प्रवचन के विचार जँचवाये, उन सबको भी स्वामीजी के सम्पर्क में लाया। कुछ मित्रों का वही हाल हुआ जो कि मेरा था। हां, कुछ ने कहा कि स्वामीजी के २४ जीवन सूत्रों में से हम २२ से सहमत हैं। तब मैंने सोचा कि वे यदि २२ से सहमत हो सकते हैं तो मेरा २४ से सहमत होजाना गैरवाजिब नहीं है।

मैं चाहता हूँ कि सत्यसमाज का अधिक से अधिक प्रचार हो, उसका साहित्य हर एक भाषा में पहुँचे। इस दिशा में भी मुझसे जो कुछ भी बनसकेगा जरूर करूंगा। बल्कि मेरी तो यह प्रार्थना है कि भविष्य में सत्यसमाज की सेवा के लिये मैं अपना सर्वस्व न्योछावर कर सारा जीवन ही लगा सकूं।

इसके बाद बेरिस्टर श्री विसाणा जी ने कहा—

स्वामीजी के द्वारा हम सबको कितना लाभ प्राप्त हुआ है, इसका परिचय आज की श्रद्धांजलियों से लगता है। और हम सब को यह मालूम भी है, और यह भी मालूम है कि अपनी सारी यात्रा में स्वामीजी ने कहीं पर भी कोई चन्दा नहीं मांगा और न चन्दा लेने के लिये वे यहां आए ही थे। वे तो यहां हमारी समस्याओं को समझकर हमारे जीवन के लिये कुछ व्यावहारिक सन्देश देने आए थे। वे उनने दिये, और हम सबों ने उनसे काफी लाभ उठाया। उनकी सेवाओं के बदले में तो उन्हें हम क्या दे सकेंगे ? लेकिन आर्गव्यय आदि के कार्य में हिस्सा बटाने के लिये जिंजावासियों की ओरसे 1000) शिलिंग की यह एक छोटी सी थैली 'पत्रम् पुष्पम्' के रूप में भेंट कर रहे हैं। खेद की बात है कि यह विचार बहुत पीछे आया, इसलिये समयाभाव से इसमें हम सब से सहयोग प्राप्त न कर सके। आशा है, स्वामीजी इसे स्वीकार कर अनुगृहीत करेंगे।

इसके बाद अध्यक्ष महोदय श्री सिरहा जी के हाथ से यह थैली भेंट की गई।

इसके बाद मैंने कहा—

इस थैली को स्वीकार करते हुए मुझे हर्ष भी होता है और खेद भी। हर्ष इस बात का कि यह आपके प्रेम की निशानी है, और खेद इस बात का कि किसी न किसी तरह से मेरे नामपर चन्दा होने का पाप हुआ। यहां उपस्थित या अनुपस्थित कोई भाई यह कह सकते हैं कि चन्दा न मांगने की बात तो बार बार कही गई पर किसी न किसी रूप में चन्दा लिया गया जरूर, आगे से नाक न पकड़कर पीछे से नाक पकड़ी, बात एक ही है। यदि चन्दा करना नहीं था तो थैली की योजना मैंने रोकी क्यों नहीं ? थैली लेते समय इन सब बातों का खुलासा कर देना मैं जरूरी समझता हूँ।

यह तो आप सबको मालूम ही है कि सत्यसमाज के प्रचार के लिये सत्याश्रम के नाम से मेरा एक आश्रम है। मैं अपने जीवन में जो कुछ सम्पत्ति कमा सका था उससे आश्रम खड़ा किया था, अब उसके चलाने के लिये समाज के आर्थिक सहयोग की जरूरत तो है ही, फिर भी आज दिन तक किसी से मैंने इसके लिये चन्दा नहीं मांगा। स्वेच्छा से थोड़ी बहुत जो भेंट मिली उसी से काम चलाया। चन्दा ने मुख्य स्थान कभी नहीं लिया। इसलिये अफ्रिका आने के पहिले जब लालजी भाई ने यात्रा का प्रस्ताव रक्खा और कहा कि सत्यप्रचार के साथ वहां आश्रम के लिये बहुतसा चन्दा भी हो जायगा, तब मैंने उन्हें लिखा कि चन्दे के लिये अफ्रिका यात्रा नहीं करना है, मुख्य बात वहां सत्य का प्रचार करने की है, यदि चन्दा हुआ भी तो खर्च से जो बचेगा उसका अधिकांश अफ्रिका में ही लगा दिया जायगा। इसके बाद मुम्बासा के डा. कर्वेजी के पत्र से मालूम हुआ कि अफ्रिका में प्रचार के नाम से आनेवाले लोगों ने एक तरह से लूट ही मचादी है इसलिये प्रचारकों के प्रति यहां एक तरह से घृणा का भाव आगया है। तब मैंने मन में सोचा कि अफ्रिका आनेवाले प्रचारकों के पाप का प्रायश्चित्त मुझे करना चाहिये, इसलिये चन्दा न करने की घोषणा मैंने वहीं से की। मार्ग के खर्चे के लिये लालजी भाई ने सोचा था कि वह व्यवस्था यहीं होजायगी।

इस आफ्रिका यात्रा में लालजी भाई और उनके बड़े भाई जीवन-लालजी ने तन से मन से और धन से पूरी जिम्मेदार उठाई। इतना ही नहीं, सारी आफ्रिका में सब जगह सोनी समाज का ही विशेष सहयोग मिला। उन्हीं के यहां ठहरा, ज्यादातर उन्हीं के यहां खाया, यहां तक कि मोटर यातायात का प्रबन्ध भी उन्होंने ही किया। इन सब बातों से कहीं कहीं मेरी प्रसिद्धि यहां तक होगई कि मैं सोनियों का गुरु हूँ। मैं मन में सोचता था कि मेरी नीति मनुष्यमात्र के कल्याण की है, सब के हित में सोनी समाज का भी हित है, पर खास सोनी समाज के ही हित के लिये मैंने कुछ किया नहीं है। ऐसी हालत में सोनी समाज पर ही यह बोझ क्यों पड़ना चाहिये? उनने जो इस तरह निस्वार्थ दृष्टि से सहयोग दिया उसके लिये आफ्रिका यात्रा का अधिकांश श्रेय उन्हें मिलता ही है, पर उन्हीं पर यह बोझ पड़े यह बात मुझे अनुचित मालूम होती थी और इसमें मुझे आफ्रिका की अन्य जनता का अपमान भी मालूम होता था। इसलिये जब इस थैली की योजना की बात मेरे कानों में पड़ी तब मैं चुप रहा। क्योंकि थैली में से आश्रम को तो मिलने वाला कुछ था ही नहीं, सिर्फ सोनी समाज का अथवा लालजी भाई और जीवनलालजी का कुछ बोझ घटनेवाला था जो कि जरूर था। उनकी तन मन की सेवा भी असाधारण है। कभी कभी इस दृष्टि से जब निराशा-जनक वातावरण हुआ है तब जीवनलालजी ने दृढ़ता के साथ कहा है—कि मेरी दूकान भले ही बिकजाय पर आपका सब कार्यक्रम ठीक ढंगसे ही चलेगा। पर मैं नहीं चाहता कि लालजी भाई या जीवनलालजी पर इस बात का अधिक बोझ पड़े। उनकी आर्थिक स्थिति मैं जानता हूं, उससे कह सकता हूं कि सत्य के विषयमें अधिक भक्ति होने के कारणही वे इतना त्याग कर सके हैं। पर उनका बोझ यथाशक्य कम से कम हो इसलिये थैली लेने का यह पाप स्वीकार करना पड़ा। अब आप समझ गये होंगे कि चन्दा न करने की घोषणा करने पर भी थैली के मामले में मैं चुप क्यों रहा?

थैली के विषय में मैं आपको क्या धन्यवाद या बधाई दे सकता हूँ। हां! आपने लालजी भाई और जीवनलालजी के बोझ में हाथ बटाया

इसके लिये वे आपको धन्यवाद दें, या आफ्रिका यात्रा की जिम्मेदारी उनने ली इसलिये आप उन्हें धन्यवाद दें, यह आप दोनों आपस में ही निपट लें, मैं इस विषय में तटस्थ हूँ।

अब यहां मैं आपकी दान प्रणाली के बारे में भी कुछ कह देना चाहता हूं—

दान करने की यहां आपकी अनेक शैलियाँ हैं, उनमें से तीन मुख्य हैं और तीनों ही ठीक नहीं हैं।

एक शैली नाम बड़ाई का स्वाद लेनेकी है। कुछ लोग सोचते हैं कि धन का भोग तो बहुत किया नहीं जासकता और सबसे बड़ा भोग तो मन का है, जो यश से ही मिलता है इसलिये कुछ पंडितों, प्रचारकों आदि को कुछ देकर अपनी प्रशंसा के लिये भाट तैयार करना चाहिये। ऐसे लोग दान की उपयोगिता का विचार नहीं करते। वे नाम के लोभ से निरर्थक बातों में ही बहुतसा खर्च कर देते हैं और नाम की आशा न हो या कम हो तो उपयोगी कार्य में भी कुछ खर्च न करेंगे। ऐसे लोगों के दान का समाजहित की दृष्टि से तो कोई मूल्य है ही नहीं, पर यश की दृष्टि से भी इसका कोई मूल्य नहीं है। ऐसे लोगों को चापलूस या दम्भी ही मिलते हैं और वे मुंह के पीछे कहा करते हैं कि हमने अमुक तमुक को खूब उल्लू बनाया। दूसरे लोग भी कहते हैं कि यह कैसा दानी, यह तो सिर्फ नाम की दूकानदारी ही करता है। इस तरह ऐसे लोगों के पल्ले सच्चा यश नहीं पड़ता, जनहित भी ठीक नहीं होता, इसलिये यह तरीका ठीक नहीं है।

दूसरे कुछ लोग हैं जो समझते है कि धन कमाने में झूठ सांच का पाप तो बहुत करना ही पड़ता है इसलिये कुछ भगवान के नामपर देदिया जाय तो भगवान इससे जरूर खुश होगा। वे इस बात को भूल जाते हैं कि भगवान इतना भोला नहीं है। उसे दलालों और वकीलों की जरूरत नहीं है। वह घट घट की जानता है इसलिये उसके नामपर उसके किसी दलाल या वकील को कुछ देने से कोई लाभ नहीं।

निःसन्देह ऐसे व्यक्ति कुछ ऊंचे दर्जे के जरूर हैं, क्योंकि वे अपने पाप का अनुभव करते हैं और उसके प्रायश्चित्त के बारे में भी कुछ सोचते रहते हैं। बहुत से लोग तो इतना भी नहीं करते इसलिये ये कुछ ऊंचे हैं। परन्तु विवेक की कमी से इनके मारे प्रयत्न व्यर्थ जाते हैं। आत्मवञ्चना के सिवाय इनके पल्ले और कुछ नहीं पड़ता। इनका दान बेकार के लोग खाजाते हैं या बर्बाद करदेते हैं। समाज-हित नहीं होपाता। इसलिये दान का यह तरीका भी ठीक नहीं।

तीसरी शैली आपस में शिष्टाचार निभाने की है। किसी प्रचारक के लिये या किसी कार्य के लिये एक या कुछ भाइयों ने किसी कारण चन्दा करने का विचार किया और किसी तरह कुछ श्रीमानों ने चन्दा लिखवाया और उसके पीछे गांव के अधिकांश व्यक्तियों ने चन्दा लिखवादिया। इसमें चन्दा लिखानेवाले चन्दे की उपयोगिता का विचार नहीं करते किन्तु यह देखते हैं कि नानजीभाई ने इतनी रकम लिखाई, मूलजीभाई ने इतनी रकम लिखाई, इसलिये हमें इतनी लिखाना चाहिये। दान की यह शैली या क्रम भी बेकार है। इससे आपस में शिष्टाचार जरूर निभता है, एक दूसरे की बात का मुलाहजा रक्खा जाता है, पर दान नहीं होता। दान में विवेक से उपयोगिता का निर्णय करना चाहिये। और जो समाजहितकेलिये जरूरी हो उसकेलिये शक्तिके अनुसार अधिकसे अधिक देना चाहिये। इस विषय में यह सोचना व्यर्थ है कि किसने क्या दिया है। जिसे आप जितना अच्छा और उपयोगी समझें उस काम को अधिक से अधिक दें, जिसे ठीक न समझें उसे न दें। आप खाने पीने में जो चीज जितनी पसन्द करते हैं वह उतनी खाते पीते हैं, यह नहीं सोचते कि अमुक चीज नानजीभाई ने कितनी खाई और मूलजीभाई ने कितनी खाई, उसके अनुसार ही हम खाने की मात्रा निश्चित करें। जैसे आप अन्य सब बातों में विचार और रुचि के अनुसार काम करते हैं उसीप्रकार दान के बारे में भी करें।

दानप्रणाली कई दृष्टियों से जरूरी है परन्तु विवेकहीनता के कारण उससे काफी हानि होती है। यदि आप रूस को नहीं चाहते तो अमेरिका की

दान-प्रणाली का तो अनुकरण करें। मानव की प्रगति और उसके हितका विचारकर दान करें। व्यवस्थित रूपमें विवेक पूर्वक दान किया जाय तो समाज के सैकड़ों रुके हुए काम चल सकते हैं। अमेरिका में बड़ी बड़ी वैज्ञानिक खोजें तक दानसे कराई जाती हैं। देश विदेशों में प्रचार के मिशन चलाये जाते हैं। उस ढंग का काफी काम आप भी कर सकते हैं।

खैर! धनवान अपनी परिस्थितियों से जकड़े हुए हैं। सम्भव है वे दानका धन्धा करने से आगे न बढ़ सकें। पर गरीब आदमी भी अगर विवेक से काम लें तो काफी काम कर सकते हैं। आफ्रिका में गरीब आदमी भी सौ दो सौ शिलिंग मकान भाड़ा देता है, दस बीस शिलिंग की सिगरिट पीडालता है, आधे गरीब सौ पचास शिलिंग की शराब भी यहां पीडालते हैं, इसके अतिरिक्त चालीस पचास शिलिंग नौकर के लिये खर्च करते हैं, दस बीस शिलिंग पहरे के लिये खर्च करते हैं। इसके सिवाय खाने पीने कपड़े आदि का तथा डाक्टर आदि का खर्च तो अनिवार्य है ही। यह यहां के मामूली आदमीका बजट है। ऐसे लोग यहां अपने को गरीब मानते हैं। ये लोग यदि इस बजट में सिर्फ दस शिलिंग मासिक पवित्र दान के लिये रक्खें तो बजट में अन्तर मालूम भी न होगा। मानलीजिये जिंजा के सिर्फ एक हजार गरीब आदमी दस दस शिलिंग इकट्ठा करें तो प्रति मास दस हजार शिलिंग इकट्ठे होंगे, इसप्रकार प्रतिवर्ष एक लाख बीस हजार शिलिंग इकट्ठे कर सकेंगे और समाज की वास्तविक सेवा के बहुत काम कर सकेंगे। फिर आपको यह चिन्ता न रहेगी कि अमुक सेठजी कोई रकम दान करदें तो अमुक काम होजाय। गरीब आदमी दस दस शिलिंग जोड़कर जो रकम निकाल सकते हैं वह सेठों को देना भी कठिन है। साथ ही इस तरह काम करने से गरीबों में स्वाभिमान बढ़ेगा, किसी का मुंह ताकने की दीनता न रहेगी। और रुके हुए बहुत से अच्छे काम होने लगेंगे। धनिक आदमी सौ दो सौ गरीबों के बराबर शिलिंग भले ही देसकें पर उनके दिल नहीं देसकते। दिल तो एक ही होगा, जब कि हजार गरीबों के दिल भी हजार होंगे। दिलकी कीमत शिलिंग से बहुत ज्यादा है। शर्त यह कि उसके मूल्य को समझा जाय।

यदि आप दस दस शिलिंग प्रतिमास इकट्ठे कर विवेक पूर्वक उनका सदुपयोग करें तो आपकी सफलता देखकर धनवान स्वयं आपके पास दौड़ते आयंगे और कहेंगे कि हमारा दान लेकर हमपर दया कीजिये। तभी भगवान का सच्चा रूप दिखाई देगा। तभी हम देख सकेंगे कि लक्ष्मी नारायण की पगचम्पी कर रही है। आज तो हमारी समाज व्यवस्था ऐसी है कि नारायण लक्ष्मी की पगचम्पी कर रहा है। इसप्रकार जब भगवान की भी दुर्दशा है तब समाज की दुर्दशा क्यों न हो? आप अपनी दानप्रणाली में मेरा बताया हुआ सुधार करें तो काफी अंशों में यह दुर्दशा दूर होसकती है। हमें धनवानों से भी सहयोग लेना है, पर सहयोग का तरीका बदलना चाहिये। इसमें धनवानों का, गरीबों का, सब का कल्याण है।

दान प्रणाली को सुधारने के साथ आपको साधुसंस्था में भी सुधार करना है। क्योंकि केवल दान से समाज का काम नहीं चल सकता। जनसेवा के लिये साधु जरूरी है। परन्तु साधु का अर्थ भगवान के नामपर भोजन करनेवाला नहीं है, वह कम से कम लेकर अधिक देनेवाला है। साधु के बारे में आप उसकी इसी सेवा के माप पर ध्यान दें। आप देख रहे हैं कि यूरोपियन मिशनरी बड़े बड़े विद्वान होकर किस प्रकार यहां की जनता की सेवा कर रहे हैं। ऐसे विद्वान और जनसेवी साधुओं की आपको भी जरूरत है। निसंदेह उनका मार्ग कठिन है क्योंकि लोगों के मन में यह दुर्वासना घर किये हुए है कि साधु काम-काज के झंझट में नहीं पड़ता। हमारी पुरानी साधुसंस्था ने राजनीति धर्मनीति समाजनीति की कैसी सेवा की है यह बात लोग भूल गये हैं और अकर्मण्य साधुसंस्था के पुजारी बनगये हैं। इसलिये कर्मठ साधुसंस्था को लोग समझ नहीं पाते। वे उसके वेष तथा बाह्याचार में ही उलझकर रहजाते हैं। मैं चाहता हूँ कि यहां सच्ची साधुसंस्था खड़ी हो। साधुवेषी भिखारियों की यहां जरूरत नहीं है किन्तु पेट के लिये इन्धन लेनेवाला, समाज के ऊपर यथाशक्य कम बोझ डालनेवाला और समाजोपयोगी सेवा करनेवाला साधु चाहिये। साधु की चर्या को आप बोझल न बनायें। मैंने देखा है कि मुझे भोजन का निमन्त्रण देते समय यहां लोग और भी सम्मान

व्यक्तियों को निमन्त्रण देते थे और भोजन सामग्री भी मूल्यवान बनाते थे, इसप्रकार मेरे भोजन के लिये एक भोज देने की तैयारी करना पड़ती थी। पर ऐसी प्रणाली से साधु बोझल होजायगा, और कोई साधु बहुत दिन न टिक पायगा। उसे दूसरी बार बुलाना आपको भी कठिन होजायगा। इसलिये राजपुरुषोचित ठाटबाट की साधु को जरूरत नहीं है। उसकी सेवकता बढ़ाइये। उसे कम बोझल बनाइये और उसका बदला आदर प्रेम भक्ति से चुकाइये।

आप कहेंगे यह भी विचित्र आदमी है। डेढ़ दो माह तक धर्म समाज आदि का पोष्टमार्टम करता रहा और जाते समय जब थैली दी तो उसका भी पोष्टमार्टम करने और इधर उधर की सुनाने बैठगया। सचमुच मेरी आदत ऐसी ही है। भारत में कोई कोई फकीर ऐसा कहा करते हैं कि एक पैसा लूंगा पचास गाली दूंगा। मुझे भी आप कुछ कुछ इसी तरह का समझें। हालांकि जो कुछ मैंने कहा है वह गाली की दृष्टि से नहीं, हितैषिता की दृष्टि से कहा है। मेरी आदत तो आप अब जान हो गये हैं इसलिये मुझे आशा है कि आप बुरा न मानेंगे और जो कुछ सत्प्रेरणा लेसकें लेंगे।

अब एक बात थैली के बारे में और कहता हूं। इसके बाद मेरा वक्तव्य समाप्त होजायगा।

मेरी इच्छा थी कि जो कुछ थैली मिलेगी उसमें से कुछ न कुछ जनसेवा के लिये वापिस किया जायगा। परिस्थिति कुछ ऐसी है कि मैं इसमें से अधिक रकम वापिस नहीं कर सकता। इसमें से सौ शिलिंग म्वान्ज़ा में सत्यमन्दिर के प्रारम्भ के लिये म्वान्ज़ा सत्यसमाज को और सौ शिलिंग जिंजा सत्यसमाज को देता हूँ। रकम की दृष्टि से इन शिलिंगों का कोई मूल्य नहीं, पर ये एक फकीर के दिये शिलिंग हैं इस बात पर ध्यान देने से आप इनका मूल्य समझ जायंगे।

कल मैं यहां से जारहा हूं। जिंजा के साथ मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध होगया है। इसलिये आप लोगों को छोड़ते दुःख होता है, और कर्तव्य की पुकार है इसलिये जारहा हूं इसलिये सुख भी होता है। जिसकी मात्रा अधिक

है, इसका निर्णय मैं नहीं कर पारहा हूं।

इन दिनों मैंने सत्येश्वर के चाकर की हैसियत से जो उचित मालूम हुआ वह सब कहा। मेरी बात से किसको सन्तोष हुआ, किसको बुरा लगा, इसकी पर्वाह मैंने नहीं की। इसप्रकार प्रायः हर एक दिल को मैंने कुछ चोट पहुँचाई है। इतने पर भी आप लोगों ने इतना स्नेह दिखलाया इससे मुझे काफी सन्तोष हुआ है। जो कुछ मैंने कहा है उसमें अप्रियता होसकती है पर अहितैषिता नहीं। आशा है यह बात आप लोग ध्यान में रक्खेंगे। आपका हर तरह कल्याण हो यही अन्तिम शुभाकांक्षा प्रगट कर मैं अपना वक्तव्य समाप्त करता हूँ।

श्री लालजीभाई

पू० स्वामीजी, अध्यक्ष महोदय, तथा बन्धुओं!

आज के इस बिदाई समारोह में जो प्रेम-भाव आप सबने प्रगट किया है उससे मैं भी कृतकृत्य हो रहा हूँ। स्वामीजी को यहाँ लाने के लिये जो भी व्यवस्थाएं की गईं उसमें मैंने या मेरे कुटुम्बी जनों ने किसी भी प्रकार के बोझ का अनुभव न किया है, और न करते हैं, क्योंकि यह कार्य स्वयं-प्रेरित था। स्वामीजी के परिचय के बाद उनका ध्यान आफ्रिका की ओर आकृष्ट कराना इसलिये स्वाभाविक था क्योंकि यहां मेरा अधिकांश कुटुम्ब तथा घर था, इसलिये इस पारमार्थिक कार्य के साथ मेरा स्वार्थ भी सन्नि-हित था।

प्राप्त साधन तथा सुविधानुसार इस दिशा में जितना भी कार्य किया जा सकता था, किया गया। अब तो आप सब भी स्वामीजी से तथा उनके विचारों से भली भांति परिचित हो ही चुके हैं, आवश्यकतानुसार अब भविष्य में आप स्वयं भी स्वामीजी को यहाँ पुनः आने के लिये प्रेरित कर सकते हैं।

इतने दिन वर्तमान युगांडा के प्रायः हर नगर में स्वामीजी ने अपने विचारों का बीजारोपण किया है। उसके फल स्वरूप, जगह जगह सत्यसमाज

की शाखाएं भी स्थापित हुई हैं। आशा है भविष्य में ये फूलेंगी, फलेंगी, और विश्व मानवता के निर्माण में वे हाथ बटायेंगी।

मार्गव्यय आदि के लिये आपने जो प्रेम भेंट दी उसके लिये मैं आप सब जिंजा निवासियों का हार्दिक आभार मानता हूँ।

अध्यक्ष श्री सिरदाजी

इसके बाद अध्यक्ष श्री सिरदाजी ने कहा कि—हम लोग व्यापारी हैं और व्यापारियों का रिवाज है कि जब वे कोई रकम देते हैं तब उसमें से कुछ डिस्काउन्ट लेलेते हैं। इसी प्रकार आज स्वामीजी को थैली दी तो उसमें से भी हम रिवाज के अनुसार डिस्काउन्ट लेने से बाज न आये और तीन हजार शिलिंग में से दो सौ शिलिंग डिस्काउन्ट ले ही लिया।

खैर! लेलिया सो लेलिया, पर इसकी जिम्मेदारी बड़ी है। स्वामीजी के दिये हुए ये शिलिंग सत्यसमाज का स्थान बनाने के लिये फाउन्डेशन स्टोन हैं। स्वामीजी ने फाउन्डेशन स्टोन रखकर काम की शुरूआत करदी है अब इसको पूरा करने की जिम्मेदारी हम आपकी है।

सत्यसमाज इस जमाने के लिये सब से अच्छी चीज है। हमारा फर्ज है कि हम इसे चलाने की पूरी कोशिश करें, और जितनी जल्दी होसके उसका धर्मस्थान भी यहां बनावें। इस से सभी का भला है।

इसके साथ हम स्वामीजी से भी निवेदन करते हैं कि वे हम लोगों के साथ ज्यादा से ज्यादा सम्बन्ध बनाये रक्खें। उनने यहां आकर हम लोगों को जो रास्ता बताया उसके लिये हम उन्हें हृदय से धन्यवाद देते हैं और फिर कहते हैं कि वे हमारे साथ ज्यादा से ज्यादा सम्बन्ध बनाये रक्खेंगे।

इसके बाद मैं लालजी भाई को भी धन्यवाद देता हूँ कि वे स्वामीजी को यहां लाये और उससे यहां के लोगों पर उनने काफी उपकार किया।

अन्त में आप सब लोगों को भी धन्यवाद देता हूँ जो आपने अधिवेशन आदि के सब कार्यों में हर तरह से सहयोग दिया।

२८-प्रस्थान

३१ मार्च ५२ को मैं जिंजा से रवाना हुआ। जिंजा में पौने दो माह रहना पड़ा था। एक तरफ अधिक दिन रहने से ऊबसा गया था। दूसरी तरफ गाढ़ परिचय होने से आत्मीयता भी पैदा होगई थी, इसलिये बिछुड़ते समय दुःख सुख का विचित्र मिश्रण था। ज्यादा दिन नरसीभाई ओझिया के घर रहा। उनने और उनकी पत्नी मुक्ता बहिन ने जिस प्रेम से लम्बे समय तक हमारा बोझ उठाया वह चिरस्मरणीय है।

हम लोगों की विदाई का दिन निश्चित होजाने पर विदा के दो तीन दिन पहिले से ही दोनों पति पत्नी विदा के कारण से खिन्न होगये थे।

विदा के समय बहुत से लोग स्टेशन पर विदा करने आये थे। जब गाड़ी रवाना हुई तब ऐसा मालूम हुआ कि अपने लोगों से बिछुड़ रहा हूं।

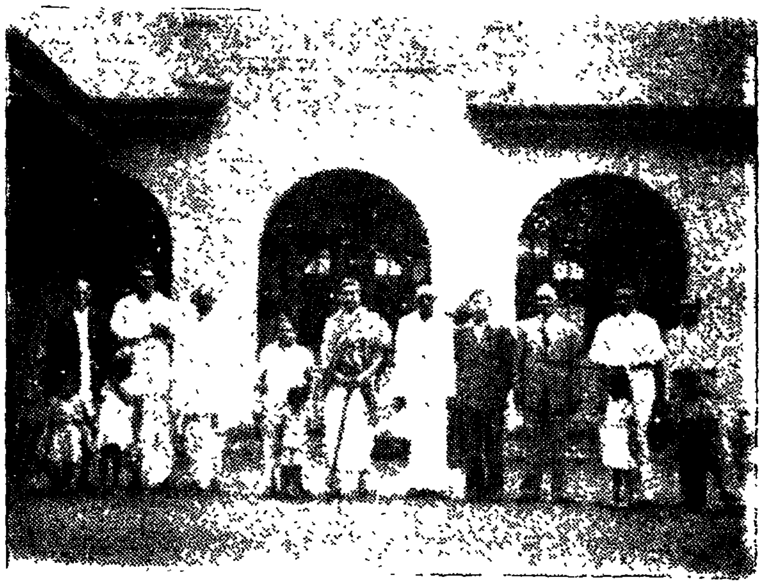
घर की ओर

लौटते समय ज्यादा बातें कहने की नहीं हैं क्योंकि जाते समय सब पर काफी प्रकाश डाल गया हूँ। फिर भी कुछ बातें जो उस समय न लिखी गईं थीं वे अभी लिख रहा हूं।

केन्या में हमारी गाड़ी ९,१४६ फुट की ऊंचाई तक पहुँची थी।

एक स्टेशन का नाम 'ईक्वेटर' (भूमध्य रेखा) था क्योंकि वह भूमध्य रेखा के ऊपर था। स्टेशन से थोड़ी दूर पर रेलवे के किनारे भूमध्य रेखा का खंभा लगा था। साधारणतः भूमध्यरेखा की जगह अधिक से अधिक गर्म होना चाहिये पर ऊंचाई पर होने से वहां गर्मी नहीं थी।

रेलगाड़ी मीटर गेज की होने पर भी सुभीते की है। गाड़ी में आदि से अन्त तक आने जाने का रास्ता होने से काफी सुभीता है। बटन दबाते ही डब्बे के कोन पर घंटी बजती है और किस केबिन में से घंटी बज



जिजा स्टेशन पर विदाई के समय

रही है इसका भी पता लगजाता है। तब रेस्टोरेंटकार का आदमी पूछ जाता है कि क्या चाहिये ? साधारणतः भारत की गाड़ियों में यह सुविधा नहीं होती।

रात में सोते समय मन्द प्रकाश देनेवाली बिजली की बत्ती भी लगी रहती है। भारत के फर्स्ट सेकिण्ड क्लास के कम्पार्टमेंट में या तो बिजली जोर से जलती है या बिलकुल अंधेरा करना पड़ता है।

रास्ते में स्टेशनों के पास ऐसे बहुत से मकान देखने में आये जो हाथ डेढ़ हाथ ऊंचे खंभों पर बनाये गये थे।

संकट के समयमें खींचने की जंजीर यहां भी होती है। अपने यहां लिखा रहता है कि व्यर्थ खींचने से ५०) रु. जुर्माना होगा। यहां वह रकम नहीं लिखी होती। किन्तु लिखा होता है कि जुर्माना या दंड या दोनों होंगे। दंड या जुर्माना की अधिक से अधिक मात्रा क्या है यह नहीं लिखा होता।

युगांडा में फल काफी होते हैं। पर केन्या में फल इतने नहीं होते। इसलिये यहां शाकभाजी महंगी है। यहां के आफ्रिकन युगांडा के आफ्रिकनों के समान अधिक मटोकी नहीं खाते, वे मक्की ज्यादा खाते हैं। केन्या में नारियल भी ज्यादा होते हैं। कुछ सस्ते भी होते हैं। मुंबासा में कच्चे नारियल एक शिलिंग में चार मिलते थे। पर शाकभाजी तब बहुत महँगी होजाती थी जब कोई जहाज रवाना होनेवाला होता था। जहाजवाले शाकभाजी का सारा बाजार ही खरीद लेते थे। इसलिये एक डेढ़ रुपये रतल तक शाक मिलने लगता था। आलू जरूर सस्ता मिलता है, वह एक आने रतल है।

नाई की मजदूरी भी यहां अच्छी है। दाढ़ी कराने के एक शिलिंग और पूरे बाल बनवाने के १॥ शिलिंग देना पड़ते हैं।

किसिमू से हम २१ मार्च ५२ के दुपहर को गाड़ीमें बैठे। बर्थ रिजर्व होगये थे। और कम्पाला से रिजर्व होकर आये थे इसलिये हमें कम्पाला में चार्ज देना पड़ा था। रिजर्वेशन का यहां कुछ नहीं देना पड़ता।

रास्तेमें शामको नकुरु स्टेशन पर एक सज्जन भोजन लेकर आये

थे और १ अप्रैल को नैरोबी स्टेशन पर श्री चेतनलाल जी और सौ. सीतादेवी दोनों पुत्रों के साथ भोजन लेकर आये थे, इससे भोजन का काफी सुभीता रहा। जिंजावालों ने तार द्वारः सूचना कर दी थी इसलिये आराम रहा।

जब मुम्बासा नव मील रह गया तब हमारी गाड़ी रुकगई। क्योंकि आगे रेलवे लाइन पर मालगाड़ी का एक डब्बा टूटा पड़ा था इसलिये हमारी गाड़ी आगे नहीं आसकती थी। मालूम हुआ कि लाइन शाम तक साफ हो पायगी। पर शाम तक यात्रियों को न रुकना पड़े इसलिये मुंबासा से एक एंजिन के साथ थर्ड क्लास के तीन डब्बे भेजदिये गये, उन्हीं तीन डब्बों में फर्स्ट सेकिण्ड क्लास के हम सब पैसेंजर ठुसगये। धूपमें एक डेढ़ फर्लांग पैदल भी चलना पड़ा और कुलियों के द्वारा सामान भी लेजाना पड़ा। आखिर किसी तरह १२ बजे मुंबासा स्टेशन पहुँचे। डाक्टर कर्वे सबेरे लेने आये थे पर गाड़ी समयपर न आनेसे वापिस चले गये थे। इसके बाद उनने एक सज्जन को भेजदिया जो दो तीन बार चक्कर मार गये। अन्त में गाड़ी आई और उनने हमारी सब व्यवस्था की। ठहरने आदि का सब इन्तजाम पहले की तरह होगया।

मुंबासा में

मुंबासा में जहाज पकड़ने के लिये हमें पांच छः दिन रुकना था। डा. कर्वे को पहिले से लिख दिया था कि सेकिण्ड क्लास के दो बर्थ रिजर्व करालें। उनने कोशिश की, पर मिल न सके, क्योंकि सारे बर्थ बहुत पहिले ही भर गये थे। हां! आकस्मिक रूपमें कोई आदमी न आये तो एकाध बर्थ मौके पर खाली मिल सकता था, पर इस आशा में रहना हमने ठीक न समझा। इसलिये साढ़े तीन टिकिट थर्ड क्लास के ही लेलिये। आते समय सुधीर का पाव टिकिट लगा था क्योंकि वह तीन वर्ष से कम था। लौटते समय तीन वर्ष से कुछ माह अधिक होगये थे इसलिये आधा टिकिट लगा। [illegible]

मुंबासा में जहां हम ठहरे थे उसी के बगल में दो साधु और ठहरे थे, जो शिलिंग इकट्ठा करने आये थे। एक साल से आफ्रिका में घूम रहे थे

पर जैसा चाहिये वैसा चंदा नहीं मिल रहा था। उन में से एक साधु मेरे पास भी आया करता था। वे लोग मेरे नाम से और मेरे काम से काफी दिनों से परिचित थे, इसलिये वे भाई बोले :— "हमारी भी रोटी चलने दीजिये" इस पर मैंने कहा :— "दुनिया में अभी इतने भोले आदमी पड़े हुए हैं कि आप लोगों की जिन्दगी के बाद तक आप सरीखे लोगों की रोटी चलती रहेगी, इस दृष्टि से मेरे वक्तव्यों से आप लोगों को डरने की आवश्यकता नहीं है"।

श्रीयुत झवेरी जी और हीर जी लालाजी मिलने आये। इन लोगों ने काफी सेवा तथा अपना सहयोग दिया।

दिनांक ४ को शामको छः से सात बजे तक प्रवचन हुआ, जिसमें मैंने धर्म और धर्म के नाम पर चलनेवाले आडम्बरों का भेद बताते हुए मानव-सेवा ही भगवान की भक्ति है, इस बात पर जोर दिया। इस देश में बसनेवाले भारतीयों की समस्याओं का हल भी बताया तथा इससे सम्बन्धित और भी अनेक बातें बतलाईं। प्रवचन एक ही दिन के लिये रक्खा गया था, किन्तु पहिला प्रवचन सुनने के बाद जनता की यह इच्छा हुई कि जब तक मैं मुम्बासा में रहूं, तब तक नित्य प्रवचन करूं।

दिनांक ५ को छात्राओं के सामने 'कर्मयोग' पर वक्तव्य दिया और गीता के अध्ययन की उपयोगिता समझाई। इसके बाद जनता के सामने प्रवचन हुआ। आज साधुसंस्था के नवनिर्माण पर, आफ्रिका के लिये कैसे साधुओं की आवश्यकता है— इस बात पर तथा सत्यसमाज पर विस्तार से प्रकाश डाला।

आज रात को श्री लालजी भाई का संगीत कार्यक्रम भी रहा।

दिनांक ६ को रविवार था। रविवार को लोग घूमने-फिरने में समय अधिक बिताते हैं, इसलिये प्रवचन का आयोजन नहीं रक्खा गया। एक भाई शामको मोटर में हमें समुद्र तट पर घुमाने लेगये थे। वहाँ एक सुन्दर

पार्क था, जो था तो एक अंग्रेज-कंपनी का, परन्तु उसमें सभी लोग घूमने जाया करते थे। किन्तु भारतीय वहाँ काफी गन्दगी फैला देते थे, इसलिये वहाँ उनका प्रवेश निषिद्ध था। इसमें रंगभेद की भावना भी काम करती होगी। यहाँ समुद्र-तट एक नदी के समान दिखाई पड़ता था। मुम्बासा बन्दरगाह का यह एक छोटा सा द्वार था। सब जहाज इस छोटे द्वार में से ही आकर भीतर झील के समान चौड़े समुद्रमें प्रवेश करते थे। इससे अधिक सुरक्षित बन्दरगाह की कल्पना भी नहीं की जासकती थी।

यहाँ ऐसे मोटे मोटे झाड़ थे जैसे मैंने पहिले कभी नहीं देखे थे। एक झाड़ के स्कन्ध (पींड या धड़) का घेरा १७ फुट था। उसमें एक खोह भी थी जिससे एक आदमी के लिये छोटी सी कोठरी का काम चलाया जासकता था।

आज रातमें रामजीवन भाई के यहाँ श्री लालजी भाई का संगीत का कार्यक्रम था, जिसमें कुछ खलासी भी आये थे। उन लोगों का परिचय जहाज में जगह पाने आदि की दृष्टि से काफी लाभप्रद रहा।

दिनांक ७ को फिर एक प्रवचन हुआ, जिसमें विवेक पर सविस्तार समझाया तथा यहां की अन्य सभी समस्याओं पर भी प्रकाश डाला। अध्यक्ष ने कहा कि आप सरीखे साधुकी यहां सख्त जरूरत है। आप यहां पधारिये, काम कीजिये। जितने शिलिंग की जरूरत आप बतायेंगे, हम पूरी करेंगे। अन्य लोगों ने भी फिर आने का आग्रह करके काफी प्रसन्नता व्यक्त की।

दिनांक ८ को प्रातःकाल जहाज में बैठने के लिये रवाना हुए। श्री हीरजी लखाजी ने काफी सहयोग दिया। खान-पान की बहुत सी सामग्री भी खरीद कर दी और उसका बिल भी न लिया। जहाज में चढ़ने में यहां बहुत दिक्कत नहीं थी, क्योंकि यहां पर सामान नहीं दिखाना पड़ता। यलो फीवर (पीतज्वर) का इंजेक्शन जरूरी होता है जो हमने किंजा से रवाना होने के पहिले ले लिया था। हमारा सामान कस्टम हाउस् के कम्पनी की मोटरों में भरकर जहाज में लेजाया गया था। कुली लोग जहाज में सामान

जहां चाहे डाल देते हैं। इसलिये कोई चीज कहीं और कोई चीज कहीं पड़ जाती है जिसे ढूंढनेमें घंटों निकल जाते हैं। सामान गुमता तो नहीं है, पर टूट फूट जरूर जाता है। यह तरीका ठीक नहीं। इससे अच्छा तो बम्बई का तरीका है, जहाँ कुलियों के सिर पर रखवा कर सामान साथ में लेजाया जाता है। खैर! हम सीसीहर तक जहाज में यथास्थान जमगये।

जहाज में

हमारे जहाज का नाम था कामरा। यह जाते समय के करंजा जहाज से कुछ छोटा था, पुराना भी था, और सुविधा भी कुछ कम थी। स्नानागार में मीठे पानी की नल था ही नहीं, संडास भी अच्छे नहीं थे। रसोई घर छोटासा और एक ही था। तलघर में रहनेवालों के लिये हवा का भी ठीक प्रबन्ध नहीं था; भोजनालय का स्थान भी अच्छा नहीं था।

लौटते समय जगह भी पर्याप्त नहीं मिल पाई थी इसलिये श्री लालजी भाई ने एक खाट किराये से लेली थी, जिसका पांच दिन का किराया १०) देना पड़ा, इतनी कीमत भी शायद उस पुरानी खाट की नहीं थी। अच्छा तो यह हो कि कंपनी कुछ लोहे के पलंग रक्खे और उन्हें किराये से दिया करे। ऐसा करने में कंपनी को भी लाभ और यात्रियों को भी सुविधा होजाय।

हमारा जहाज १७ मील की रफ्तार से चलरहा था। समुद्र बिल्कुल शान्त था। बीच के दो-तीन दिनों तक तो इतना अधिक शान्त रहा मानो कोई छोटासा सरोवर हो। वर्षा दो बजगिर्द पोरबन्दर के आसपास हुई। खैर, हम दिनांक १५ को बम्बई आगये। एक दिन पहिले ही आगये इसलिये बन्दर-गाह पर कोई उपस्थित नहीं दिखा, क्योंकि सबको यही मालूम था कि हम दिनांक १६ को आनेवाले हैं।

भारत में

श्री प्रेमी जी के यहां तीन दिन तक मेहमान रहे, मिलना-जुलना चर्चा आदि होती रहे।

दिनांक १८ की शाम को वहां से रवाना होकर दिनांक १ को वर्धा आये। श्री चिरंजीलाल जी आदि ने स्वागत की योजना अच्छी बनाई थी।

दिनांक २८ को म्युनिसिपल हॉल में जनता की विविध संस्थाओं की ओर से जो स्वागत समारोह किया गया था, उसमें आफ्रिका की परिस्थिति तथा वहां की अन्य सभी बातों पर मैंने विस्तार से विवेचन किया।

मैं 'मानवराष्ट्र' या 'पृथ्वीराष्ट्र' का प्रतिपादक हूं, इसलिये भारत के समान आफ्रिका से भी मेरी आत्मीयता है। परन्तु यदि इतनी उदारता न होती, तो भी आफ्रिका के साथ भारत की आत्मीयता रहती ही है, क्योंकि वहां लाखों भारतीय बसे हुए हैं, जो कि भाषा, धर्म, नस्ल आदि अनेक दृष्टियों से आज भी भारतीय हैं।

भारत के साथ उनकी यह आत्मीयता किसी न किसी रूपमें बनी रहे, और वे आफ्रिका के प्रति भी पूरे वफादार रहें, वहां की जनता के साथ वे पूरी आत्मीयता बता सकें, और परस्पर अच्छे सम्बन्ध कायम रख सकें, इस बात की सख्त जरूरत है। मेरी आफ्रिकायात्रा इसी समस्या को समझने के लिये और उसका उपाय बताने के लिये हुई थी। साथ ही यह भी जानना था कि 'सत्यसमाज' की योजना का वहां क्या उपयोग होसकता है? इस दृष्टि से कहाजासकता है कि यह यात्रा पर्याप्त सफल रही।

२९- विशेष सन्देश

आफ्रिकनों से

आफ्रिकन भाइयो और बहिनो!

मैं एक ऐसा व्यक्ति हूँ जो मानता हूं कि दुनिया में एक दिन मनुष्य-मात्र की एक जाति होगी, उसमें काले गोरे पीले लाल आदि का कोई भेद-भाव न होगा, दुनिया भर का एक धर्म होगा, वर्तमान धर्मों का सार लेनेवाला

जाति और धर्म के नाम से जो मनुष्य जाति के टुकड़े हैं वे मिट जायँगे, सब देशों का एक राज्य होगा । इस तरह हर आदमी सारी दुनिया का नाग-रिक होगा, सब मनुष्य मिलकर प्रकृति के कष्टों से या मन में घुसी हुई हैवानियत शैतानियत के अवशेषों से लड़ेंगे । मनुष्य आपस में न लड़ेंगे, जब ऐसा नया संसार बनजायगा तब दुनिया के सब नरनारी देव देवियों के समान सम्पन्न, शांत और सुखी होंगे ।

मनुष्य इसी रास्ते में आगे बढ़ें और इसके लिये जरूरी सब बातें समझें, उन्हें अमल में लायें इसके लिये सन् १९३४ में मैंने सत्यसमाज की स्थापना की और उसी का सन्देश देने के लिये मैं दिसम्बर १९५१ में आफ्रिका आया, जहां मैं अप्रेल १९५२ तक रहा । मैं जंगलों में आप लोगों के बीच भी गया, शहरों में आप लोगों से मिला, आप लोगों के सुख दुख गुण दोष समझे और मुझे इनसे काफी प्रसन्नता हुई ।

शरीर का रंग तो वंशपरम्परा तथा जलवायु के कारण कैसा भी होजाता है, चमड़े के रंग से मानवता का कोई सम्बन्ध नहीं । मानवता तो अपने विशेष गुणों के आधार पर टिकती है, और ऐसे गुण आप लोगों में काफी हैं । आफ्रिका आकर मैं जो आप लोगों को समझ सका उसका सार यह है—

१— आप लोग बहुत आनन्दी स्वभाव के हैं । हर हालत में खुश रहना-मस्त रहना आपकी विशेषता है ।

२— आप लोगों की आवश्यकताएं बहुत कम हैं । पहिले आप लोग नंगे तक रहते थे ।

३— आप लोगों का जातीय संगठन बहुत अच्छा है, सब एक दूसरे के काम आते हैं ।

४— यद्यपि आप लोगों में कुछ आदमी ऐसे भी थे और थोड़े बहुत अभी भी हैं जो मनुष्य का मांस खाते थे और इसके लिये हत्या भी कर डालते थे । पर अब यह दोष काफी दूर होगया है ।

५— चोरी आदि दोष आप लोगों में बहुत कम थे पर बाहर के लोगों की संगति से तथा सिनेमा के दृश्यों से यह दोष बहुत बढ़गया है।

६— शराब का व्यसन भी आप लोगों में काफी बढ़गया है।

७— पहिले आप धर्म की जटिलताओं से दूर थे, अब अधिकांश लोग ईसाई बनगये हैं, कुछ लोग मुसलमान बनगये हैं।

८— आप लोगों में कुछ लोग अज्ञातरूप में ईमानदार सत्यवादी विद्रोही बनगये हैं, जिन्हें 'माओमाओ' कहते हैं।

९— आप में से कुछ लोगों को बाहर के लोग खटकने लगे हैं।

१०— आप लोगों ने बाहर के लोगों से, खासकर हिन्दुस्थानियों से, बढ़ई लुहार आदि के काम बहुत सीख लिये हैं और बहुतसे लोग पढ़ना लिखना भी सीख गये हैं।

११— आप लोगों के देश में आपका शासन नहीं है, यह बात आप लोगों को खटकती है, जो उचित है।

१२— केन्या के अनेक भागों में यूरोपियन लोगों ने इतनी जमीन लेली है कि आप लोगों को जमीन की तकलीफ होने लगी है।

१३— यद्यपि आफ्रिकन स्त्रियों की शादी बाहरवालों के साथ हुई है और उनसे बहुतों के सन्तान भी हुई है पर अभी तक बाहरवालों के साथ सामाजिक सम्बन्ध कायम नहीं हुआ है।

१४— आप लोगों की बस्तियाँ बाहरवालों से अलग हैं।

आप लोगों के बारे में जो कुछ मैंने यहां देखा उसकी खास खास बातें मैंने यहां लिखी हैं।

अब आप लोगों के बारे में मेरी इच्छा क्या है यह भी बताऊँ

१— आप लोग सम्पत्तिमान बनें। आपके अच्छे पक्के मकान हों, साफ हों, घर में गृहस्थोपयोगी बर्तन आदि फर्नीचर आदि हों। खेती के लिये



आमरा जहाज से उतरते हुए स्वामीजी माताजी तथा सुधीर



जिंजा में ८ वें अधिवेशन का दृश्य

काफी जमीन हो।

२—आप लोगों की राजनीतिक गुलामी दूर हो। आफ्रिका का राज्यशासन आफ्रिका में बसनेवाले सभी लोगों की सलाह से हो, सबको नाग-रिकता के समान अधिकार हों।

३—चोरी आदि की जो बातें विशेष मात्रामें आप लोगों में आगई हैं, वे छूट जायँ। जिससे आप लोग अधिक विश्वसनीय बनसकें।

४—शराब आदि के जो व्यसन आप लोगों में बढ़गये हैं, वे दूर होजायँ, और उससे बचा हुआ धन आप लोगों की समृद्धि में लगने लगे।

५—बाहर से आकर बसे हुए लोगों के साथ आपका सामाजिक सम्बन्ध कायम हो।

६—धर्म के कारण कोई भेदभाव आपके भीतर पैदा न होने पाये।

७—आफ्रिकनों, एशियाइयों और यूरोपियनों के परस्पर सम्मि-लन से आफ्रिका मानवता का संगमतीर्थ बने और सभी सभ्यताओं के मिलन से सभी के गुण उनमें चमकें।

८—आफ्रिका में सब सब की मिली जुली बस्तियाँ हों।

९—रंगभेद या जातिभेद के कारण कोई ऊंच नीच की भावना न रहे। हां! गुण योग्यता के अनुसार उचित शिष्टाचार सहयोग आदि अवश्य रहे।

१०—आप लोगों का जो आनन्दी स्वभाव है, हर हालत में मस्त रहने की जो वृत्ति है वह एशियाई और यूरोपीय भी सीखें। एक दूसरे की अच्छी बातों का खूब आदान प्रदान हो।

ऊपर की दस बातें कैसे हों और अपने और जगत के कल्याण के लिये आप क्या क्या करें—इस विषय में मेरे जो सन्देश हैं उन्हें भी आप लोगों के सामने उपस्थित करता हूं :—

१– आप लोगों में शराब आदि की जो आदतें आगई हैं उन्हें छोड़ें और उनका बचा हुआ पैसा पूंजी में, मकान आदि बनाने में, तथा शिक्षण पाने में लगायें।

२– सब से शिष्टाचार तथा नम्रता का व्यवहार करते हुए भी दीनता का भाव छोड़ें। न घमण्ड करें, न दीनता। ईमानदारी आदि में बढ़-कर कुछ अधिक गौरवशाली बनें।

३– दूसरे लोगों ने पहिले आप लोगों को ठगा है, ईमानदारी का परिचय नहीं दिया है, परन्तु बदले में आप भी अगर ऐसा ही करेंगे तो इससे न तो आप उन्नति कर सकेंगे, न दूसरों की बेईमानी ठगी आदि रोक सकेंगे। इसलिये आप लोग बेईमानी ठगी आदि के विरोधी बनिये। किसी भी तरह की चोरी ठगी बेईमानी न आप कीजिये, न अपने भाइयों को करने दीजिये, न गैरआफ्रिकनों को करने दीजिये। इस प्रकार की बुराई कहीं भी हो आप उसका वैधानिक तरीके से विरोध कीजिये और इसके विरोध में आवाज उठाइये।

४– आप लोगों में से जो लोग ईसाई होगये हैं वे ईसाई बने रहें, जो मुसलमान होगये हैं, वे मुसलमान बने रहें। दुनिया का परमात्मा या मुंगू एक है। सब धर्म संयम प्रेम ईमानदारी का पाठ पढ़ाने के लिये हैं। इसलिये वे गुण जहां से भी सीखने को मिलें, सीखना चाहिये। किसी धर्म से द्वेष न करना चाहिये। जगत में ईसा मुहम्मद राम कृष्ण महावीर बुद्ध जरथुस्त कन्फ्यूशियस आदि अनेक महामानव होगये हैं, सभी का आदर कीजिये, सभी के जीवन से और उपदेशों से लाभ उठाइये। इससे आपका सांस्कृतिक सम्बन्ध सभी लोगों से होगा। चर्च और मसजिद में जाते रहिये पर ऐसे धर्मस्थान भी बनाइये या बनवाइये जिसमें सभी धर्मों के निशान या प्रतीक हों। जहां ऐसे धर्मस्थान हों वहां नियम से आना जाना शुरू करदीजिये।

५— बाहर के लोगों के आने से जहां आपकी कुछ परेशानियां बढ़ी हैं, वहां आपने बहुत कुछ सीखा भी है, बहुत कुछ विकास भी किया है।

वे न आते तो आफ्रिका खंड सैकड़ों वर्ष तक पुरानी हालत में पड़ा रहता, इसलिये इस बात से दुखी न होइये कि ये लोग क्यों आये। सारी दुनिया एक परमात्मा की है और सब उसी के बच्चे हैं, इसलिये जहां भी जिसे जगह मिले, वहीं उसे सब से मिलकर रहना चाहिये। अब रेल, जहाज, हवाई जहाज, रेडियो तार, टेलिफोन आदि से सारी दुनिया एक होगई है, इसलिये सब देशों और सब जातियों के लोगों में भाईचारे की जरूरत है। इसलिये मैं चाहता हूँ कि आफ्रिका में रहनेवाले सभी जातियों के मनुष्य हिलमिलकर एक बनें और धीरे धीरे एक समाज बनावें। इसके लिये आप लोग भी पूरी कोशिश करें।

६- आफ्रिकन स्त्रियों से गैरआफ्रिकन लोगों के साथ जो सम्बन्ध हुए हैं, उन्हें वैधानिक और सांस्कृतिक रूप देना चाहिये। उनसे पैदा होने-वाली सन्तान में दोनों समाजों के गुण का विकास हो और वह दोनों समाजों को मिलाने के लिये पुल का काम दे ऐसी कोशिश होना चाहिये।

७- आप लोग यूरोपियनों की अंग्रेजी तो सीखते ही हैं, पर भारत की हिन्दी या गुजराती भी सीखिये। इससे आपका सांस्कृतिक सम्बन्ध भी बढ़ेगा और बहुत सी नई बातें भी जानने को मिलेंगी। आफ्रिका में बसे हुए भारतीयों को आप प्रेरित कीजिये जिससे ऐसे स्कूल या रात्रिशालाएँ खुल सकें, जिनमें आफ्रिकन भाषा के जरिये हिन्दी या गुजराती सिखाई जाती हो।

८- कुछ ऐसे त्यौहार भी बनाइये और मनाइये जिनमें आफ्रिकन और गैरआफ्रिकन मिल जुलकर भागलें।

९— आप किसी भी धर्म के रहते हुए भी सत्यसमाज के मेम्बर बनिये। सत्यसमाज में सभी धर्मों का आदर किया जाता है, धर्म को साइंस से मिलाकर चलाया जाता है, काले गोरे का तथा और किसी तरह का भेद नहीं माना जाता, ऐसी कोई रूढ़ि नहीं रक्खी जाती जिससे मनुष्य समाज को कोई लाभ न हो, सब का एक राज्य हो और उसमें सब बराबरी से रहें इसकी प्रेरणा दी जाती है, स्त्री पुरुषों को बराबर समझा जाता है, ईमानदारी पर

ओर दिया जाता है, दुनिया को हर तरह से सुखी सम्पन्न और मिली-जुली बनाने की कोशिश की जाती है। सत्यसमाज के चौबीस जीवन सूत्र हैं, उनसे यही दुनियां स्वर्ग के समान ज्ञानमय प्रेममय और सुखमय बनाई जासकती है। आप लोग अपने धर्म में बने रहें पर आज की सर्वांगीण उन्नति करने के लिये, सब को एक बनाने के लिये, "सत्यसमाज" के मेंबर अवश्य बनें।

१०— आफ्रिकन और गैरआफ्रिकन, सत्यसमाजी बनने पर निम्न-लिखित कार्य या नियम अवश्य पालें।

क— आपस में पूरी तरह ईमानदारी का व्यवहार करें।

ख— व्यक्तिगत योग्यता और पद आदि के शिष्टाचार का पालन करते हुए भी व्यवहार में जाति भेद की उच्चनीचता का व्यवहार न करें, एक जातीयता को मानकर व्यवहार करें।

ग— सात दिनमें किसी एक नियत दिनपर सब (आफ्रिकन गैर-आफ्रिकन) मिलकर सामूहिक प्रार्थना आदि का कार्यक्रम करें।

घ— जातीय भेदभाव छोड़कर एक दूसरे के सुख दुःख में काम आवें और परस्पर सहयोग करें।

आप लोगों के विषय में समभाव रखनेवाला

आप सब का हितैषी :—

सत्यभक्त।

३०— समस्याओं का समाधान

पूर्व आफ्रिका में मुझसे यह प्रश्न बार बार पूछा गया कि यहां भारतीय रह सकेंगे या नहीं? इस विषय में मैंने व्याख्यान भी दिये, विस्तार से प्रश्नोत्तर भी किये। यहां प्रश्नोत्तर के रूप में सारी चर्चा का सार देरहा हूँ—

प्रश्न १— आज जिसे पाकिस्तान कहते हैं वह एक दिन हमारा घर था, पर वहां से हमें भागना पड़ा, तब यहां आफ्रिका से भी क्यों न भागना पड़ेगा?

उत्तर— जब दो भाइयों में झगड़ा होता है तब वे एक साथ नहीं रह सकते, किसी एक को घर छोड़कर पड़ोस में या और दूर रहना पड़ता है। अब वह यह सोचे कि जब मैं अपने बाप के घर में नहीं रहपाया तो अन्यत्र कहां रह पाऊंगा? तो क्या वह कहीं नहीं रह पायगा? क्या घर में भी न रहपाने से लोग पड़ोस में जिन्दगी नहीं गुजार देते? यदि हां! तो पाकिस्तान में न रहपानेवाले लोग आफ्रिका में रह सकते हैं। अपने घर हिन्द में जो लोग रोटी नहीं कमापाये वे यहां आकर श्रीमान बनगये। तब रहना कौन बड़ी बात है? पर हां, पाकिस्तान में हिन्दू मुसलमानों में जो भेदभाव पैदा हुआ वह अगर आफ्रिकनों में और हिन्दुस्थानियों में पैदा होजाय तो सचमुच आप यहां नहीं रह सकते। ऐसी हालत पैदा न होने देना यह आपके हाथ में है। और यह कठिन नहीं है आफ्रिकनों के साथ सांस्कृतिक तथा अमुक अंश में कौटुम्बिक सम्बन्ध स्थापित करना चाहिये जिससे आत्मीयता पैदा हो।

प्रश्न २– आफ्रिकन लोग चोर और विश्वासघाती हैं। कितने ही वर्ष तक वे अपने पास रहें पर ये जब जायंगे तब विश्वासघात करके जायंगे। चोर ऐसे हैं कि नहाने का साबुन तक नहीं छोड़ते। कभी कभी तो राह चलते आदमी को इस तरह लूट लेते हैं कि उसके शरीर पर धोती भी नहीं रहने देते, बिलकुल नंगा करके भगाते हैं। और ठगी भी करते हैं।

उत्तर— क– आज से दस बीस वर्ष पहिले आफिरकन लोग न तो ऐसी चोरी करते थे, न ऐसी झूठ बोलते थे, न ऐसे विश्वासघाती थे, हमारे सम्पर्क से यदि वे ऐसे होगये तो इसका दोष उनपर नहीं मढ़ा जासकता। हमने जैसा उन्हें बनाया वैसे वे बनगये। अब उन्हें कोसने का हमें क्या अधिकार है? भारतीयों में बहुत से ऐसे आदमी हैं जो चोरी का माल खरीदते हैं, इसलिये आफ्रिकनों को चोरी की तरकीबें भी बताते हैं। ऐसी हालत में वे चोर बनजायं तो उनका बहुत कसूर नहीं कहा जासकता।

ख– वे अपनी लियाकत और ताकत के अनुसार चोरी करते हैं पर भारतीय भी लियाकत और ताकत के अनुसार वही कार्य करते हैं। आफ्रि-

कन चोरी आदि के मामले में आपस में मिलजाते हैं, भारतीय भी ऐसे मामलों में संगठित होजाते हैं। कपास के धन्धे की चोरियों से हम में से कौन अनजान है? तौल में दिन दहाड़े लूटपी कर डालते हैं, माल में भी कर जाते हैं। अपने इन कार्यों में आफ्रिकन नौकरों से भी मदद लेते हैं। ऐसी हालत में वे हमसे सीखकर अपनी परिस्थिति के अनुसार चोरी आदि करने लगें तो यह स्वाभाविक है। यह बुरी बात होने पर भी कम से कम हम उन्हें उलहना देने की पात्रता नहीं रखते।

माना कि हम में ये बुराइयां कम होरही हैं या कम करना पड़ी हैं, फिर भी ये निःशेष नहीं हुई हैं। अगर निःशेष हो भी जाएं तो भी जो विष-बीज बोया जाचुका उसका फल चखना पड़ रहा है, इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। अब हमें स्वयं ईमानदार बनाने की कोशिश करना पड़ेगी। फिर भी सफलता देर से मिलेगी, क्योंकि किसी वस्तु को बिगाड़ने की अपेक्षा उसे सुधारना कठिन है। इस विषय में हमें आत्मनिरीक्षक और धैर्यशील बनने की जरूरत है।

ग- चोरी और ठगी हर देश में होती है। भारत में शहरों में और तीर्थस्थानों पर जो चोरी ठगी आदि की जाती है उसके आगे यहां की चोरियां चौथाई भी नहीं हैं। इसलिये इन लोगों को सामूहिक रूप में चोर ठग आदि मानना भूल है।

घ- यहां जो लोग चाय आदि के द्वारा साबुन आदि की चोरीकी जो बात करते हैं वे भारत में नहीं रहे हैं, या रहे हैं तो उन्हें वहां नौकर रखने के अवसर नहीं मिले हैं। अगर मिले होते तो उन्हें पता होता कि ऐसी चोरियों में वहां के नौकर यहां के नौकर से कम नहीं हैं। विश्वासघात करने और भगजाने में भी ऐसी ही बेजिम्मेदारी का परिचय वहां के लोग भी देते हैं। मुझे भी पन्द्रह वर्ष के ऐसे ही अनुभव हैं। निःसन्देह यह बहुत बुरी बात है और हमें इसे दूर हटाने की कोशिश करना है, पर इस बुराई की ठेकेदारी आफ्रिकनों ने नहीं ली है। यह भारत में भी है, अन्य देशों में भी है।

क– वर्णभेद या जातिभेद की भावना जब दो समूहों में काफी तीव्र रहती है तब ईमान की सीमा अमुक-समूह तक ही सीमित होजाती है। पुराने इस्राइलियों में सत्य ईमान आदि के नियम अपनी जाति तक ही सीमित थे और अच्छी तरह उनका पालन किया जाता था, पर गैरइस्राइलियों को लूटने मारने घर जलाने आदि में भी पाप नहीं समझा जाता था। श्रीकृष्ण आदि ने भी खांडव वन जलाकर अनार्यों को जला दिया था। इन आफ्रिकनों को भी गोरे लोगों ने जिस प्रकार लूटा मारा पकड़ा, नृशंसता से हत्या की, बाजारों में बेचा आदि बातों से ये लोग अगर गैरआफ्रिकनों को पराया समझें, और उनके विषय में नैतिक नियमों की पर्वाह न करें तो इसमें आश्चर्य नहीं किया जासकता। इसका उपाय इनके साथ सामाजिकता बढ़ाना है।

ख– यह ठीक है कि इनमें चोर डकैत आदि सभी तरह के लोग पैदा होगये हैं, पर यह न भूलना चाहिये कि घोर जंगल में इन लोगों के बीच एक एक दो दो भारतीय जाकर बसगये हैं और अच्छी तरह धन्धा करते हैं। अगर ये लोग ईमानदार न होते तो एक दो भारतीय वहां रहकर व्यापार न कर सकते। बहुत से व्यापारियों ने तो अपनी दूकानें इन्हीं के जिम्मे छोड़ दी हैं। और वे दूकानें मजे से चलरही हैं। कोकुंजरो सरीखे भीतरी भागों में मैंने भारतीयों से पूछा तो उनने कहा कि आसपास के आफ्रिकन लोग काफी अच्छे हैं। बल्कि अपने लोगों से भी अच्छे हैं। ऐसी हालत में व्यवहार के मामले में इनकी निन्दा करने का कोई अर्थ नहीं। इनके साथ निभने में इस दृष्टि से विशेष दिक्कत न होना चाहिये।

ग– इन लोगों में जो अभी अभी असंयम बढ़ा है उसकी कुछ जिम्मेदारी शासन पर भी है। आफ्रिकन अपराधियों को अपराध करने पर भी कभी कभी नामुनासिब के बहाने से छोड़ दिया जाता है। इससे भारतीयों को परेशान करने का कुछ अवसर मिल जाता है पर आफ्रिकनों के चरित्र निर्माण में भी असर मिलती है। बेलजियम कांगों में बात उल्टी है। वहां शासन काफी कड़ाई से काम लेता है इसलिये वहां के आफ्रिकन काफी विश्वसनीय

और ईमानदार हैं। यद्यपि इतनी कढ़ाई की जरूरत नहीं है फिर भी शासन में निष्पक्षता और सतर्कता से काम लिया जाय तो यह चारित्र-पतन काफी अंशों में रोका जासकता है। खैर! इससे इस बात का पता तो लगता ही है कि इनका असंयम न स्वाभाविक है, न पुराना, न असाधारण, न असाध्य।

ज- अभी अभी एक यूरोपीयन पादरी ने इन लोगों में एक सम्प्रदाय खड़ा किया है जिसका नाम है 'मरोकई'। इस सम्प्रदाय में जो आफ्रिकन आजाते हैं वे बिलकुल चोरी नहीं करते, यहाँ तक कि जिनने कभी चोरी की थी वे पुराना माल तक वापिस कर आते हैं, म्बरारा में एक जगह ९ शिलिंग एक जगह १५ शिलिंग वापिस किये जाने की बात भारतीयों ने मुझसे कही भी थी। ये शराब आदि व्यसनों से दूर रहते हैं, हर हालत में ऋण चुकाते हैं आदि। इन बातों से पता लगता है कि इन लोगों में पवित्र और ईमानदार बनने की अधिक से अधिक पात्रता है, और उसका प्रयोग इतना सफल हुआ है कि उतना दूसरों में सफल नहीं हुआ।

इन सब बातों से इस बात का पता लगता है कि इस दृष्टि से निराश होने का कोई कारण नहीं है। इनमें जो दोष आगये हैं उन्हें सुधारा जासकता है, सुधारना चाहिये, और इसके लिये सुधारक बनने की पात्रता आपने में भी पैदा करना चाहिये।

प्रश्न ३- आफ्रिकन लोग इतने मूर्ख हैं कि इनका विकास हो ही नहीं सकता। इनमें किसी तरह की जागृति आना असम्भव है।

उत्तर— क- हर एक जाति में जैसे साधारण बुद्धिमान और असाधारण बुद्धिमान होते हैं उसी प्रकार आफ्रिकन लोगों में भी हैं। जो लोग आफ्रिकन बालकों को शिक्षण देने का काम करते हैं ऐसे शिक्षण-शास्त्रियों का कहना है कि कई आफ्रिकन बालक असाधारण प्रतिभाशाली होते हैं।

ख- अमेरिका में लाखों की संख्या में आफ्रिकन बसे हुए हैं। उनमें एक से एक बढ़कर डाक्टर वकील शिक्षक लेखक कवि तथा विविध शास्त्रों के

जैसा विद्वान है। इससे मालूम होता है कि अगर उन्हें अवसर मिले तो वे किसी भी कौम के व्यक्तियों से कम साबित नहीं होते।

ग– यहां (युगांडा में) भी अनेक आफ्रिकन इंगलैण्ड जाकर उच्च परीक्षाएँ पासकर यहां मजिस्ट्रेट आदि पदों पर पहुंचे हैं और योग्यता से काम करते हैं। इससे भी पता लगता है कि वे स्वाभाविक रूप में अयोग्य नहीं होते।

घ– आफ्रिकन लोगों में भी ठग होगये हैं। उनकी ठगी की कहानियां सुनकर यह कहना ही पड़ता है कि वे ठगने के नये नये उपाय निकालते रहते हैं। इससे पता लगता है कि उनमें काफी प्रतिभाशाली व्यक्ति होते हैं। यह दूसरी बात है कि ठग लोग अपनी प्रतिभा का उपयोग शैतानियत की राह में करते हैं, परन्तु इससे उनकी बुद्धिमत्ता तो मालूम होती ही है।

ङ— आफ्रिकनों में अगर अनुपात से कम बुद्धिमान दिखते भी हों तो उसका कारण यही है कि वे नये सुधरे हुए संसार की संगति में अधिक नहीं आपाये। उनको कौटुम्बिक वातावरण भी इतना विकसित नहीं मिलता जितना एक भारतीय या यूरोपीय को मिलता है। पर एक दो पीढ़ी में यह परिस्थिति बदल जायगी। तब जो कुछ कमी अभी मालूम होती है वह भी न मालूम होगी।

च– आफ्रिकनों के बारे में अधिकांश भारतीयों के अनुभव घर के नौकर आदि के बारे में ही अधिक हैं, जो बिलकुल अशिक्षित होते हैं। इस श्रेणी के आदमी भारत में भी बुद्धिमान साबित नहीं होते। इसके सिवाय हर एक मालिक के आगे हर एक नौकर मूर्ख ही साबित होता है। क्योंकि मालिक को अपनी इच्छा और रुचि के अनुसार काम कराना होता है किन्तु जब वह नहीं होता तब नौकर मूर्ख मानलिया जाता है। अगर मालिक को नौकर की रुचि के अनुसार काम करना पड़े तब मालूम होगा कि मालिक भी मूर्ख है। मतलब यह कि हमारी जांच परख का आधार उचित नहीं है। समान साधन समान परिस्थिति और समान पोजीशन में बुद्धिमत्ता की ठीक जांच होती है।

छ- आफ्रिकनों में जागृति जैसी आरही है वह आश्चर्यजनक है। जिन्हें कल तक जानवर के समान समझा जाता था वे आज अनुभव करने लगे हैं कि आफ्रिका के असली मालिक हम हैं। अभी अभी केन्या के दो आफ्रिकन नेता यूनो में गये हैं और दुनिया के रंगमंच पर अपनी आवाज बुलन्द करने लगे हैं, इससे उनकी जागृति का पता लगता है। एक ओवरसियर मुझसे कह रहे थे कि जब मैं सरकारी बंगलों का काम कर रहा था तब आफ्रिकन मजदूर आपस में बात कर रहे थे कि आज ये अच्छे अच्छे बंगले हम दूसरों के लिये बना रहे हैं लेकिन आखिर इनमें हमीं को रहना है। एक दिन राज्य हमारा ही होगा। जिस जाति का मजदूर यह सोचने लगा हो उस जाति की जागृति को कम समझना बड़ा भारी भ्रम है।

ज - मैं आफ्रिकनों के बीच में गया हूं। उनने जो सभ्य व्यवहार किया, मुझसे जो प्रश्न पूछे, उससे उनकी सभ्यता जागृति और बुद्धिमत्ता तीनों का पता लगा है।

झ- यदि मान भी लिया जाय कि उनमें कुछ कमी रही भी, तो भी वह अन्तर उन्नीस बीस के समान ही होगा, पर वह अन्तर रोजमर्रे के व्यवहार में दिखाई नहीं देसकता। इस अन्तर के कारण न तो उन्हें दबाकर रक्खा जासकता है, न उनपर उपेक्षा की जासकती है। न उन्हें अपने देश के शासक होने से रोका जासकता है। इस बात को न समझकर जो गफलत में रहेंगे वे अन्त में धोखा खायँगे।

प्रश्न ४ – हिन्दू धर्म पालना बहुत कठिन है, तब आफ्रिकन हिन्दू कैसे होसकते हैं ?

उत्तर— अब नहीं होसकते, परन्तु इसका कारण हिन्दुओं की लापर्वाही ही है, हिन्दू धर्म की कठिनता नहीं। समझा जाता है कि हिन्दू मांस नहीं खाते, शराब नहीं पीते, इसलिये हिन्दू धर्म कठिन है। पर यह गलत है। भारत के पचहत्तर फीसदी हिन्दू मांस खाते हैं और कानून की बाधा न हो तो शराब का भी उन्हें त्याग नहीं है। आफ्रिका के हिन्दुओं में

तो मांस और शराब सेवन करनेवालों का अनुपात और भी अधिक है, इसलिये यह कठिनाई बताना व्यर्थ है। जातिपांति का पचड़ा जरूर है पर यह हिन्दू धर्म की कठिनाई नहीं, हिन्दुओं की मूर्खता है। यही एक बाधा है जिससे आफ्रिकन क्या, कोई भी दूसरा हिन्दू नहीं बनपाता। हिन्दू इस विषय में काफी लापर्वाह और अविवेकी रहे। यही कारण है कि आफ्रिका में अधिकांश आफ्रिकन ईसाई और मुसलमान बने पर हिन्दू कोई भी नहीं। पहिले आफ्रिकन लोग धर्म के मामले में कोरे कागज के समान थे, तब हिन्दू लोग उनके हृदयों पर हिन्दू धर्म न लिख सके, अब क्या लिख सकेंगे? अब तो उनके हृदयों पर इसलाम और क्रिश्चियानिटी लिख गई है। खैर! जो हुआ सो ठीक हुआ, अब उन्हें हिन्दू बनाना न सम्भव है न उपयोगी। आफ्रिका की समस्याओं को हल करने की चाबी हिन्दू धर्म के हाथ में नहीं है।

प्रश्न ५ - तब उनके साथ सांस्कृतिक एकता कैसे की जाय?

उत्तर — सांस्कृतिक एकता कुछ देने से और कुछ लेने से होती है। इसके लिये दोनों पक्षों को कुछ बदलना पड़ता है। आफ्रिकन लोग आज मुंगु ईसा मुहम्मद के उपासक बने हैं, अब भारतीयों को उनके उपास्य अपनाने पड़ेंगे और इसी तरह वे अपने राम कृष्ण बुद्ध महावीर का नाम उन तक पहुँचा सकेंगे। इसके लिये उनमें सत्यसमाज का प्रचार और जगह जगह सर्वधर्म-समभावी सत्यमन्दिर की योजना आवश्यक है। जो आफ्रिकन सत्यसमाजी बनजायँगे वे मुंगु गॉड आदि की तरह ईश्वर आदि बोलना भी शुरू करेंगे। सत्यमन्दिर में सम्पर्क में आयँगे। घर में नौकर मालिक की हैसियत से मिला जाता है और व्यापार में पैसे का लेनदेन होता है, पर सत्यमन्दिर में सिर्फ सांस्कृतिक दृष्टि से मिलेंगे, और वहां उच्च श्रेणी के आफ्रिकन, (कबाका राजा चीफ तथा शिक्षित वर्ग के आफ्रिकन) मिलेंगे। यह मिलन परस्पर में सहानुभूति पैदा करेगा। सत्यसमाजी होने में उन्हें अपने देव छोड़ना नहीं पड़ते सिर्फ कुछ अपनाना पड़ते हैं। आदमी अपने देव छोड़ने में हिचकता है, अपनाने में नहीं। सत्यमन्दिर में ईसा के बहाने वे लोग आयँगे और रामकृष्ण तक पहुँच जायँगे। यह सांस्कृतिक एकता का एक बड़ा उपाय [illegible] है और

इसी में सभी का हित है।

प्रश्न ६– क्या आप आफ्रिकन स्त्रियों के साथ शादी करने के लिये प्रोत्साहन देते हैं ?

उत्तर— आफ्रिकन स्त्रियों के सौन्दर्य से जो सन्तुष्ट रह सकते हों और उनके साथ निभ सकते हों वे जरूर ऐसा करें, ऐसी मेरी इच्छा है। पर यह अपनी अपनी रुचि पर निर्भर है।

इसप्रकार की मिश्र सन्तान के सिर के बाल कुछ लम्बे होजाते हैं और चेहरे की बनावट भी अच्छी होजाती है, रंग में भी कुछ उजलापन आता है। ऐसे मिश्रित लोगों की जो सन्तान होती है वह काफी सुन्दर होजाती है। और बाल तो इतने सुन्दर होजाते हैं जो दूसरों को मिल नहीं सकते। लम्बे घुंघराले लहराते बाल देखने लायक होजाते हैं। इसप्रकार मिश्र सन्तान से शारीरिक तथा मानसिक दृष्टि से विकास ही होगा।

इसप्रकार के विवाहों के कारण आत्मीयता में फर्क न आना चाहिये और उनके साथ सामाजिक सम्बन्ध बराबर रखना चाहिये और मिश्र संतान को तो वैवाहिक सूत्रों में भी बांधने की अधिकाधिक कोशिश करना चाहिये।

इसप्रकार की मिश्र सन्तान दोनों जातियों के बीच में पुल का काम देगी और भविष्यमें दोनों जातियों के बीच लड़ाई अटकाने में मददगार होगी। और अगर लड़ाई हो भी जायगी तो भारतीयों को उस अवसर पर इनसे काफी मदद मिलेगी। पर यह सब होसकता है तभी, जब उन्हें अपनाया जाय। अगर उन्हें दुरदुराया जायगा तो उनमें ऐसी प्रतिक्रिया होगी जिसका भयंकर दंड भोगना पड़ेगा।

मनुष्यमात्र में एक जातीयता का भाव बढ़ाने के लिये इस तरह के मिश्र विवाह आवश्यक हैं।

मुझसे कहा गया है कि इसप्रकार के मिश्र विवाह ऐसे लोगों ने किये हैं जो प्रतिष्ठित नहीं हैं, जिन्हें कहीं लड़की नहीं मिली। उनकी इज्जत कैसे की जाय ? और ऐसे लोगों के कार्य को ठीक कैसे समझा जाय ?

भारत में जो लोग रोटी नहीं कमा सके वे आफ्रिका में आये, पर इसीलिये आफ्रिका में आनेवालों की इज्जत कम नहीं की जासकती। यदि भारतीयों में लड़की की संख्या कम होने से, या भारत में आकर विवाह करने योग्य परिस्थिति न होने से, या अपेक्षाकृत गरीबी होने से यदि किसी की शादी भारतीय लड़की से नहीं हो पाती तो आफ्रिकन लड़की से शादी कर लेना ठीक ही है। क्योंकि ब्रह्मचर्य पालन करने की क्षमता न होने से [illegible] व्यक्ति व्यभिचार की ओर ही झुकेगा, इसप्रकार वह अपने चरित्र बिगाड़ने के साथ दूसरों का चरित्र भी बिगाड़ेगा।

भारतीय लड़की से विवाह करने की आर्थिक क्षमता न होने से किसी से घृणा करना बहुत बुरी बात है। सिर्फ इस कारण से किसी को पराया न समझना चाहिये।

यहां एक प्रश्न और खड़ा होता है कि आफ्रिकन लोग यह कह सकते हैं कि हमारी लड़कियों से भारतीय लोग शादी करते हैं तो भारतीय लड़कियां आफ्रिकन युवकों से शादी क्यों नहीं करतीं?

इसका उत्तर कठिन नहीं है।

क— विवाह में जबर्दस्ती नहीं की जासकती, जो आफ्रिकन स्त्री यह समझती है कि भारतीय के साथ शादी करने से उसका पद वैभव सुख आदि बढ़ेगा, वही भारतीय के साथ शादी करती है। अगर आफ्रिकनों की आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थिति ऐसी होजाय कि भारतीय कन्याएं उनके भीतर रहकर सुख-शान्ति का अनुभव कर सकें तो इसप्रकार के सम्बन्ध भी होने लगेंगे। यह तो दोनों की राजी राजी का सौदा है।

ख— विवाह में सौन्दर्य भी देखा जाता है और इस दृष्टि से भारतीयों और आफ्रिकानिवासियों में काफी फर्क है। भारतीय पुरुष जो आफ्रिकन स्त्री से शादी कर लेता है इसका कारण कौटुम्बिक निश्चिन्तता है, पर भारतीय कन्या के सामने यह निश्चिन्तता नहीं है; इसलिये सौन्दर्य की विषमता भारतीय कन्या के लिये बाधक बनजाती है। जिसे यह बाधा न होजाय [illegible]

ग— बहुत सी जगह पर धर्मभेद (साम्प्रदायिक भेद) भी ऐसे सम्बन्धों में बाधक बन जाया करता है। सर्वधर्म समभाव के प्रचार होने पर यह बाधा भी हट सकती है। इसलिये इसका प्रचार करना चाहिये।

घ— खानपान के तरीकों और आदतों में काफी फर्क है। आफ्रिकन जिसप्रकार मटोकी खाकर रह सकते हैं उसप्रकार भारतीय कन्या नहीं रह-सकती, धीरे धीरे भोजन आदि का भेद भी हटाना है।

मतलब यह कि विवाह में जातिपांति का विचार तो नहीं करना है, पर १ सदाचार, २ सत्संगति, ३ योग्य उम्र, ४ भोजन, ५ विचारों का मेल, ६ उचित जीविका, ७ स्वस्थता, ८ धन, ९ योग्य शिक्षा, १० शिष्टाचार आदि के योग्य तरीके, ११ एक दूसरे की भाषा समझने बोलने की योग्यता, १२ सुन्दरता, १३ योग्य घर, १४ आने जाने के ठीक साधन, १५ कर्मशीलता, १६ परस्पर प्रेम, इन गुणों का विचार विवाह में करना जरूरी है। भारतीय कन्या को आफ्रिकन युवक के साथ विवाह करने में जब इन बातों में सन्तोष होने लगेगा तभी इनमें परस्पर विवाह करना सम्भव या उचित होगा। आशा है कि कभी न कभी यह सम्भव होगा ही। इस विषय की हमें तैयारी करना चाहिये और जब तक तैयारी नहीं हुई तब तक धीरज रखना चाहिये।

प्रश्न ७— क्या हम कालों में मिलकर काले न हो जायँगे ?

उत्तर— काले रंग से इतनी तीव्र घृणा न करना चाहिये। काले तो भगवान विष्णु भी माने गये हैं और उनके अवतार राम कृष्ण भी। पर यहाँ यह भी न होगा। क्योंकि दोनों जातियों के मेल से बीच के रंग की सन्तान होती है। मिश्र सन्तान आफ्रिकनों सरीखी काली या चिना बाल की नहीं होती।

यदि यह कालापन जलवायु की देन है तब तो कुछ पीढ़ियों में काफी कालापन। इन कालों के सम्पर्क में आप रहें चाहें न रहें यह जलवायु आपके शरीरों में अन्तर कर ही देगी। जैसे यूरोप के लोग अमेरिका में बसने

से लाल होगये, नाक की आकृति भी कुछ बदलगई, राजपूताने के [illegible] नेपाल में आकर आकृति और रंग में बदलगये, उसी प्रकार यहाँ के लोग भी कुछ न कुछ बदल ही जायँगे। इसकी चिन्ता न करना चाहिये। रंग, आकृति आदि में मनुष्यता नहीं है, सुख-शान्ति भी नहीं है। वह तो दिल में है, प्रेम और सहयोग में है। इसी की हमें चिन्ता करना चाहिये। मिलने जुलने और प्रेम करने से ही शरीर का रंग नहीं बदलता। उसमें तो हमें आपत्ति होना ही न चाहिये।

प्रश्न ८– अँगरेज हमें उखाड़ना चाहते हैं। वे अपनी धर्म संस्थाओं के द्वारा, शासन-संस्था के द्वारा तथा चालाकी से हमारे मार्ग में रोड़े अटकाते हैं। ऐसी हालत में हम यहां कैसे रह सकते हैं?

उत्तर– इन बातों से कठिनाइयाँ तो काफी हैं, परन्तु वे ऐसी नहीं हैं जिनपर विजय न पाई जासके। हां, थोड़ा स्वार्थत्याग करना पड़ेगा। दूरदर्शी बनकर विवेक से भी काम लेना पड़ेगा। धर्म के मामले में आप सचमुच पीछे पड़गये। आफ्रिकन जनता का सम्बन्ध जितना 'ईसाईधर्म' से हुआ, उसका सौवां या हजारवां हिस्सा भी 'हिन्दू धर्म' से नहीं हुआ। सामाजिकता की दृष्टि से यह एक जरूरी कर्तव्य था, पर अवसर चूक गया। अब एक ही तरीका है, जिससे आप यह सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं, वह है "सत्य-समाज" का विस्तार। "सत्यसमाज" एक ऐसा कार्यक्रम है, जिससे मनुष्य अपने धर्म में रहते हुए भी दूसरे धर्मों के अच्छे सम्पर्क में आसकता है। आफ्रिकन लोग ईसाई बने रहकर "सत्यसमाजी" बनने पर सर्वधर्म-समभावी के नाते हिन्दू, मुसलिम आदि सभी धर्मों से सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं। आफ्रिकन लोगों में मैं जहां-जहां गया, वहां-वहां उनने सर्वधर्म समभाव की बात को काफी पसन्द किया। "म्वारा" में तो कुछ शिक्षित आफ्रिकन भी "सत्यसमाजी" बने। इस दिशा में जितना भी प्रयत्न किया जाय, उतना हर तरह फायदेमन्द होगा।

शासनसत्ता के दुरुपयोग की परेशानियाँ [illegible] हैं, फिर भी वे [illegible] नहीं हैं कि आप उन्हें सह न सकें। आप [illegible]

शासकों को भी यह समझना पड़ेगा कि शासन नीति में इस प्रकार का पक्षपात अन्त में उन्हीं के लिये घातक होगा, यों इससे सभी का नुकसान है। आफ्रिकन जनता की भी अनैतिकता बढ़ती है। यदि उन्हें हम यह बात समझा सकें तो इसका विष कुछ न कुछ कम हो ही सकता है। राजनैतिक मामलों में मानवता के नाते हम आफ्रिकन जनता से कुछ सहानुभूति रक्खें तो भी कुछ लाभ हो ही सकता है।

इसमें सन्देह नहीं कि आफ्रिकनों को अनेक तरह से आपके विरुद्ध भड़काया जाता है। फिर भी यह भड़काना बहुत सफल नहीं हुआ। आफ्रिकनों में ऐसे लोग आधे से कुछ अधिक ही होंगे जो अंग्रेजों की अपेक्षा आपको कुछ अधिक ही ठीक समझते हैं। इस स्थिति को अब सम्हालकर रखना है। कुछ अपने दोषों को कम करके और कुछ परोपकार की मात्रा बढ़ाकर यह कार्य भी किया जा सकता है।

आफ्रिका में अंग्रेजों की अपेक्षा भारतीयों की स्थिति अधिक मजबूत है। अंग्रेज सिर्फ शासनसत्ता के सहारे वहां लदे हुए हैं, जब कि भारतीय अपनी उपयोगिता के सहारे वहां जड़ जमाये हुए हैं। ऐसी हालत में यदि आप अपने दोषों के कारण स्वयं न उखड़ जायं, अंग्रेज आपको नहीं उखाड़ सकेंगे।

प्रश्न ९– आफ्रिकन लोग अब हमसे कहने लगे हैं कि 'हमें तुमसे जो कुछ सीखना था वह सीख चुके। अब तुम लोग अपने घर जाओ, तो क्या हम यहां से चले जायं?

उत्तर– नहीं, आफ्रिकनों को यह सिखाने की आवश्यकता है कि आवश्यकता गुरु-दक्षिणा का रूप नहीं है। हमने घर और देश छोड़कर आफ्रिका को अपनाया है। यहां के जल-वायु के अनुसार हमारी प्रकृति भी बन गई है। बहुतों का तो जन्म भी यहीं हुआ है। ऐसी हालत में इस देश को छोड़ने का सवाल ही पैदा नहीं होता। दूसरी बात यह है कि दुनिया के जिन भागों में काफी जमीन पड़ी है या आबादी विरल है, वहां वहां आबाद

वाले देशों के लोगों को बसना बसाना ही चाहिये । हां, उन्हें उस भूमि के हिताहित के साथ अपने स्वार्थ मिला देना चाहिए । हम लोग आफ्रिका का हित पूरी तरह से चाहते हैं । अगर सारी दुनिया का इस प्रकार समन्वय नहीं किया जायगा तो मनुष्य का विकास रुक जायगा । ”

इन बातों को अगर ढंग से समझाया जाय तो आफ्रिकन लोग समझ सकेंगे ।

प्रश्न १०– यदि समझाते हुए भी आफ्रिकन लोग न मानें, तो वहां हमारा रहना कठिन होगा । ऐसी हालत में हम कहां के नागरिक बनें ?

उत्तर– आफ्रिका के । जब आपको यहीं जीवन व्यतीत करना है, तब विदेशी बनकर रहने का क्या अर्थ ?

विदेशी बनकर रहेंगे, तो किसी भी दिन विदेशी प्रवासी समझ कर आप लोगों को निर्वासित कर दिया जायगा, साथ ही इस परिस्थिति में उन्हें कानून बनाने का भी अच्छा मौका मिल जायगा । आफ्रिका के नागरिक बन जाने से भारत के साथ सांस्कृतिक या धार्मिक सम्बन्ध नहीं टूटता । ईसाई लोग जेरूसलम को अपना पवित्र-स्थान मानते हैं, इसका यह मतलब नहीं है कि वे वहीं के नागरिक हैं । नागरिकता का मुख्य आधार राजनैतिक है, सांस्कृतिक या धार्मिक नहीं । कदाचित् आपको यह भय हो कि यहां के नागरिक बन जाने पर संकट में भारत आपको मदद नहीं करेगा, तो यह भय व्यर्थ है । भारत ने तो उन पारसियों को भी संकट में सहारा दिया था जिनका कि भारत से कोई सम्बन्ध नहीं था । फिर यहां के भारतीय तो भारत के ही सन्तान हैं । ससुराल चली जाने पर लड़की का घर माता-पिता से अलग होजाता है, परन्तु प्रेम नष्ट नहीं होता । और संकट में उसे समय-समय पर सहारा भी मिलता ही रहता है । इसलिये संकट में भारत की जनता पूरी तरह काम आयेगी ।

प्रश्न ११– भविष्य में हमारी आर्थिक व्यवस्था कैसी रहेगी ?

उत्तर— आज जैसी है वैसी नहीं रह सकेगी । इसका [illegible]

संसारव्यापी मन्दी तो होगा ही, साथ ही आफ्रिकन लोगों की प्रतिस्पर्द्धा भी आरम्भ होगी। कई वर्षों तक तो प्रतिस्पर्द्धा का विशेष प्रभाव मालूम नहीं पड़ेगा, क्योंकि आपकी पूंजी और अनुभव आपको विजयी बनायेंगे। हां, इसके बाद गरीबी आसकती है, फिर भी वह इतनी नहीं होगी, जितनी कि अभी भारतवर्ष में है। भारत में जनसंख्या काफी है, उसके अनुपात में उत्पादन कम है ऐसी हालत में आप वहां जायंगे तो काफी आर्थिक संकट में पड़ जायंगे। यहां अभी जनसंख्या कम है और उत्पादन की गुंजाइश अधिक है, ऐसी हालत में यहां अधिक सम्पन्न रहेंगे। भले ही आज आप में और आफ्रिकनों में जो अन्तर है वह न रहे। मतलब यह कि आर्थिक दृष्टि से भी आपको यहीं रहना चाहिये।

अन्त में कुछ बातों पर संक्षेप में ध्यान दिलाना चाहता हूं।

१ — शराब की आदत छोड़िये। इससे स्वास्थ्य तथा नीति का नाश तो होता ही है, पर धनका भी नाश होता है। आज कदाचित् आप इतना धननाश सहन कर पाते होंगे परन्तु कल सहन न कर पायंगे। अंग्रेजी सभ्यता के सम्पर्क में या अंग्रेज बनने के लिये आपने शराब शुरू की, पर इससे आपका पद न बढ़ा, पर घर हरतरह लुट गया। इसलिये धीरे धीरे इसे कम कीजिये और अपनी सन्तान में इस दुर्व्यसन को बिलकुल न आने दीजिये।

२— सिगरेट का भी त्याग कीजिये। इससे पेट नहीं भरता, स्वास्थ्य नहीं सुधरता, बल्कि कलेजे को काफी नुकसान होता है। जो सिगरेट नहीं पीते उन्हें परेशान करना तथा असभ्यता दिखाना तो है ही, हवा को दूषित करना और अनजान में आग लगाना भी है।

कुछ लोग इस विषय में एक झूठा अर्थशास्त्र रखते हैं कि हम सिगरेट पीते हैं इसलिये सिगरेट के मजदूरों को धन्धा मिलता है और उन्हें धन्धा मिलता है इसलिये वे हमारे यहां खरीदने आते हैं इसलिये हमें भी धन्धा मिलता है।

यह अर्थशास्त्र निम्नलिखित कारणों से झूठा है।

क– जितनी सिगरेट आप पीते हैं उसकी सारी रकम लौटकर आप के पास नहीं आसकती, वह दूसरी जगह भी बटती है। बहुतसी रकम विदेश में चली जाती है।

ख– सब की सब रकम वापिस भी आजाय तो उससे क्या फायदा? क्योंकि वह आपने फूंक दी तो इससे क्या मिला? बीस शिलिंग की आपकी बिक्री बढ़े और बीस शिलिंग आप धुआं उड़ाकर फूंक दें तो आपके कल्ले क्या पड़ा? मुफ्त की मिहनत और चीजों की लागत ही व्यर्थ गई।

ग– तम्बाकू वगैरह के उत्पादन में जो जमीन तथा मजदूरों की शक्ति व्यर्थ जाती है वह शक्ति खाद्य सामग्री के उत्पादन में जाय तो सभी का लाभ हो, बीमारी आदि में दवा के रूप में जितनी तम्बाकू जरूरी है उससे अधिक फूंकने के लिये तम्बाकू पैदा करना देश की या दुनिया की आर्थिक हानि ही है।

इन सब कारणों से तम्बाकू छोड़ना चाहिये।

३– आपस में संगठित और शक्तिमान और काफी ईमानदारी का परिचय दें हर तरह विश्वसनीय बनें।

४– जातिपांति का भेदभाव तोड़ें। गुजरात और काठियावाड़, हिन्दी और गुजराती के भेदभाव भी नष्ट करें। मुट्ठीभर आदमी इस तरह विभक्त रहेंगे तो पिस जायेंगे। यहां सब का रहन सहन मिलता जुलता है तब भेदभाव का बाहरी कारण भी नहीं है।

५– धार्मिक अन्धविश्वास नष्ट करें, विवेकी बनें।

६– आफ्रिकनों के साथ सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित करें। उन्हें सत्यसमाजी बनाकर व्यावहारिक सर्वधर्म समभावी बनावें जिससे वे अपने धर्म के साथ साथ आपके धर्म के सम्पर्क में भी आवें।

७– दूरदर्शिता से काम लें। किसी नीति का अवलम्बन करते समय यह भी सोचें कि इसका अन्तिम परिणाम क्या होगा?

दूर थामा [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible]

सत्यभक्त साहित्य

सत्यामृत (मानवधर्मशास्त्र)
१ ,, दृष्टिकांड ५)
२ ,, आचार कांड २॥)
३ ,, व्यवहार कांड २)
४ सत्येश्वर गीता १॥)
५ नया संसार १॥)
६ जीवन-सूत्र ॥)
७ ईमान ॥)
८ सत्यलोक यात्रा १॥)
९ गागरमें सागर (चुटकिले) ।॥)
१० मन्दिरका चबूतरा (उप.) ।॥)
११ अग्नि परीक्षा (कहानियाँ) ॥।)
१२ सुख की खोज ,, १)
१३ नागयज्ञ (नाटक) १)
१४ आत्मकथा २)
१५ निरतिवाद (राजनीति) ।॥)
१६ न्यायप्रदीप १)
१७ चतुर महावीर (कहानियाँ) १)

जैनधर्ममीमांसा—
१८ ,, इतिहास और सम्यक्त्व १॥)
१९ ,, ज्ञानमीमांसा २)
२० ,, आचारमीमांसा २)
२१ बुद्ध हृदय (जीवनकथा) ॥)
२२ कृष्णगीता १)
२३ संस्कृति समस्या १॥)
२४ [illegible] (गीत) ॥=)
२५ [illegible] ,, ॥)
२६ [illegible] ,, ॥)
२७ [illegible] (नई भाषा) २)
२८ [illegible] समस्या ।)
२९ क्या संसार दुःखमय है ? ।)
३० सुलझी गुत्थियाँ ।=)
३१ म. राम ([illegible]) ।)
३२ ईसाई धर्म ।-)
३३ [illegible] ।=)
३४ हिन्दू भाइयों से =)॥
३५ मुसलिम भाइयों से =)
३६ [illegible] ।॥=)
३७ क्यों सकाम करूँ [illegible])
३८ हिन्दू मुसलिम मेल [illegible])
३९ हिन्दू मुसलिम इत्तहाद [illegible])
४० [illegible] ।)
४१ शीलवती (वेश्यासुधार) =॥
४२ सत्यसमाज और विश्वशान्ति =)
४३ सत्यभक्त सन्देश =)
४४ भावनागीत =)॥
४५ सत्यसमाज ।=)
४६ विवाह पद्धति =)
४७ धर्मसमभाव ।॥)
४८ विस्मृत सिन्धु [मराठी] ।॥)
४९ कुरान की कसौटी ।)
५० [illegible] =)
५१ सुराज्य की राह [illegible])
५२ राजनीति समस्या ॥।=)
५३ महावीर का अन्तस्तल [illegible])
५४ मार्क्सवादमीमांसा १।)
५५ निरतिवादी अर्थशास्त्र. १॥)
५६ स्वामी सत्यभक्त [illegible])
५७ मेरी [illegible] ३।)
मासिक पत्र संगम वार्षिक मूल्य ३)

व्यवस्थापक—सत्याश्रम वर्धा